हिंदी प्रेमगाथाकाव्य-संग्रह

हिंदी के कवि और काव्य—२

हिंदी प्रेमगाथाकाव्य-संग्रह

संपादक

श्री गणेशप्रसाद द्विवेदी

श्री गुलाबराय

द्वारा संशोधित तथा परिवर्द्धित

१९५३

हिंदुस्तानी एकेडेमी

उत्तरप्रदेश, इलाहाबाद

प्रथम संस्करण : १६४१
द्वितीय संस्करण : १६५३

मूल्य ६॥)

मुद्रक—पी० सी० मेहरा, न्यू ईरा प्रेस, प्रयाग

प्रकाशकीय

हिंदी काव्यधारा की विशिष्ट परंपराओं को आधार मानते हुए कई भागों में हिंदी कविता के विस्तृत संकलन प्रकाशित करने की एक योजना हिंदुस्तानी एकेडेमी की थी। इस योजना के अंतर्गत 'हिंदी के कवि और काव्य' शीर्षक से तीन भागों में काव्य-संकलन प्रकाशित भी हुए थे। ये सभी संकलन स्वर्गीय श्री गणेशप्रसाद द्विवेदी ने प्रस्तुत किये थे।

'हिंदी के कवि और काव्य', भाग ३, में प्रेमाश्रयी शाखा के हिंदी सूफ़ी कवियों की प्रेमगाथाओं से संकलन प्रस्तुत हुए थे। इस संग्रह का अच्छा स्वागत हुआ और कुछ ही वर्षों में उसका प्रथम संस्करण समाप्त हो गया।

इधर इस क्षेत्र का अध्ययन काफी आगे बढ़ा है और नवीन सामग्री भी प्रकाश में आई है। अतएव नवीन संस्करण निकालने के पूर्व इसका पुनः संपादन और संशोधन करा लेना आवश्यक था। हमारे वयोवृद्ध साहित्य-सेवी बाबू गुलाबराय ने इस कार्य को संपन्न किया है और हमें आशा है कि यह नवीन संस्करण जो 'हिंदी प्रेमगाथाकाव्य-संग्रह' के शीर्षक से प्रकाशित हो रहा है पहले से भी अधिक उपयोगी सिद्ध होगा।

धीरेन्द्र वर्मा
मंत्री तथा कोषाध्यक्ष
हिंदुस्तानी एकेडेमी

२९-७-५१
इलाहाबाद

द्वितीय संस्करण की प्रस्तावना

हिंदी साहित्य मे भाव और शैली दोनों ही दृष्टियों से प्रेममार्गी कवियों का एक अपना विशिष्ट स्थान है। उनके महत्त्वपूर्ण योग की उपेक्षा नहीं की जा सकती, पर यह दुःख का विषय है कि अभी तक इस धारा के प्रमुख कवियों की कृतियाँ सुसंपादित रूप मे हमारे समक्ष नही आ सकी है।

इसी कमी को ध्यान मे रखकर संक्षेप मे इस धारा के परिचय के लिए हिंदुस्तानी एकेडेमी ने आज से ११-१२ वर्ष पूर्व इसके प्रमुख पाँच कवियों की कृतियों का संक्षिप्त सग्रह 'हिंदी के कवि और काव्य', भाग ३, नाम से प्रकाशित किया था। पुस्तक के आरंभ मे एक छोटी सी भूमिका भी थी जिसमे इन कवियों की संक्षिप्त जीवनियाँ तथा समीक्षाएँ थी। हिंदी संसार ने पुस्तक का उचित स्वागत किया और कुछ ही वर्षो मे उसका सस्करण समाप्त हो गया।

पुस्तक के संपादक श्री गणेशप्रसाद जी द्विवेदी का देहावसान हो जाने के कारण इसका दूसरा संस्करण तैयार करने का भार मेरे दुर्बल कंधों पर रक्खा गया था। अब यह दूसरा सस्करण हिंदी संसार के समक्ष जा रहा है।

पहले संस्करण मे आरंभ के संग्रह मे आनेवाले कवियों की संक्षिप्त आलोचनाएँ तो थीं पर इस काव्यधारा के विषय में कुछ नहीं दिया गया था। इस संस्करण मे एक भूमिका जोड़ दी गई है जिसमें सूफी संप्रदाय के नाम, उसके विकास एवं सिद्धांत आदि पर प्रकाश

डाला गया है और इस काव्यधारा की संक्षिप्त समीक्षा भी की गई है।

पहले संस्करण के आरभ मे दी गई कवियों की जीवनियाँ और समीक्षाएँ इस संस्करण मे कुछ परिवर्तन और परिवर्धन के साथ अलग-अलग संकलनों के साथ रक्खी गई है। पाठकों के लिए यह परिवर्तन अधिक सुविधाजनक होगा।

पहले संस्करण मे जायसी, नूर मुहम्मद, उसमान, आलम और फिर शेख निसार का क्रम था। कालक्रम की दृष्टि से यह त्रुटिपूर्ण था अतः नवीन संस्करण मे क्रम परिवर्तित करके जायसी, उसमान, आलम, नूर मुहम्मद और शेख निसार कर दिया गया है।

पाठ की दृष्टि से इस सस्करण मे कुछ बड़े महत्त्वपूर्ण परिवर्तन किये गये है। इधर डॉ० माताप्रसाद गुप्त ने कई वर्षों के परिश्रम के उपरात अपनी पुस्तक 'जायसी ग्रंथावली' प्रकाशित की है जिसका पाठ अब तक के प्राप्त पाठों से अधिक प्रामाणिक है। इस संस्करण मे 'पदमावत' से संगृहीत भाग का पाठ उक्त डॉ० गुप्त की ग्रंथावली के अनुसार ही रक्खा गया है। लेखक ने डॉ० गुप्त के परिश्रम से लाभ उठाया है जिसके लिए उनका हृदय से कृतज्ञ है।

इस पुस्तक के प्रथम संस्करण मे 'माधवानलकामकंदला' का पाठ बहुत भ्रष्ट था, स्थान-स्थान पर बिंदु देकर रिक्त स्थान भी छोड़ दिये गये थे। हिंदुस्तानी एकेडेमी के सहायक मंत्री श्री रामचंद्र टंडन ने कई प्रतियों के आधार पर इसका एक अच्छा संस्करण तैयार किया है जो अभी अप्रकाशित है। टंडन जी की पांडुलिपि के आधार पर इसके रिक्त स्थानों की पूर्ति कर दी गई है तथा स्थान-स्थान पर पाठ मे भी कुछ सुधार कर दिये गये है।

शेष तीन पुस्तकों—'इंद्रावती', 'चित्रावली' और 'यूसुफ-जुलेखा'—के पाठों मे साधारण परिवर्तन यत्र-तत्र कर दिये गये है। प्रामाणिक संस्करणों के अभाव मे इन तीनों के पाठ मे अपेक्षित परिवर्तन नहीं किया जा सका है।

इधर सूफी काव्यधारा की कुछ और महत्त्वपूर्ण सामग्री भी प्रकाश मे आ चुकी है जिसमे शेख़ कुतुबन की 'मृगावति', मंझन की 'मधुमालति' जान कवि की 'कनकावति', 'कामलता', 'छीता' और 'मधुकर मालति' आदि कासिमशाह का 'हंस-जवाहिर', नूर मुहम्मद की 'अनुराग बाँसुरी', ख्वाजा अहमद की 'नूरजहाँ' तथा कवि नसीर का 'प्रेमदर्पण' आदि प्रेमगाथाएँ; एवं ख़ुसरो, जायसी, शेख फरीद, यारीसाहब, बुल्लेशाह, नजीर, हाजी वली तथा वजहन आदि के फुटकर दोहे, पद और कुडलियाँ आदि प्रधान है। इनमे से भी बानगी के लिए कुछ चीजे जोड़ने का मेरा विचार था पर पुस्तक के बडी हो जाने के भय से ऐसा न कर सका। इस नवीन सामग्री के कुछ प्रमुख ग्रथों के नाम पाठकों की सुविधा के लिए सहायक ग्रंथ की सूची मे जोड़ दिये गये हैं।

आशा है यह नवीन संस्करण अधिक उपयोगी सिद्ध होगा।

गोमती निवास
दिल्ली-दरवाजा, आगरा
आषाढ़ शुक्ल ५
सं० २०१०

विनीत
गुलाबराय

सहायक ग्रंथ

मूल पाठ

हस्तलिखित

१—माधवानलकामकंदला (हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग तथा काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी)
२—यूसुफ-जुलेखा (हिंदुस्तानी एकेडेमी, प्रयाग तथा श्री गोपालचंद्र सिंह, लखनऊ)
३—मृगावति (भारत कलाभवन, काशी)
४—जान-ग्रंथावली (हिंदुस्तानी एकेडेमी, प्रयाग)
५—रतनावति, जान-कृत (कुँवर संग्राम सिंह, नवलगढ़)
६—मधुमालति (श्री गोपालचंद्र सिंह, लखनऊ)
७—मधुकरमालति (हिन्दुस्तानी एकेडेमी, प्रयाग)

प्रकाशित

१—जायसी-ग्रंथावली (हिंदुस्तानी एकेडेमी, प्रयाग)
२—जायसी ग्रंथावली (काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी)
३—चित्रावली (का० ना० प्र० सभा, काशी)
४—इंद्रावती (का० ना० प्र० सभा, काशी)
५—अनुरागबाँसुरी (हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग)
६—हंस-जवाहिर (नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ)
७—मज-मूआ बर राहे हक (नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ)

समीक्षा

१—डॉ० जे० ए० सुबहान : सूफिज्म-इट्स सेंट्स ऐंड श्राइन्स (लखनऊ १९३८)

२—डॉ० ए० जे० अर्बरी : एन इंट्रोडक्शन टू द हिस्ट्री अव् सूफिज्म (लंदन, १९४२)

३—पं० चंद्रवली पांडे : तसव्वुफ अथवा सूफी मत (बनारस, १९४५ ई०)

४—बाँकेबिहारी लाल : ईरान के सूफी कवि (इलाहाबाद सं० १९९६)

५—प० परशुराम चतुर्वेदी : सूफी-काव्य-संग्रह (इलाहाबाद १९५१ ई०)

विषय-सूची

मलिक मुहम्मद जायसी

प्रेममार्गी कवि

समझौते की वृत्ति

जायसी से क़रीब सौ-सवा सौ वर्ष पहले ही हिंदू और मुसलमान जनता साम्प्रदायिक विद्वेष को बहुत कुछ किनारे कर एक-दूसरे की संस्कृति, उपासना-पद्धति और विचार-परम्परा आदि को सहानुभूतिपूर्वक समझने और पारस्परिक आदान-प्रदान की ओर रुचि करने लगी थी। यद्यपि तत्कालीन मुसलमान शासकों का भाव हिंदू प्रजा के प्रति उतना सहानुभूतिपूर्ण नहीं था, तथापि हिंदू और मुसलमान प्रजा में एक प्रकार का भ्रातृभाव स्थापित हो चला था और वह उत्तरोत्तर दृढ़ से दृढ़तर होता चला जा रहा था। मुसलमान प्रजा यह समझने लगी थी कि यदि हमें हिंदुस्तान में रहना ही है तो हिंदुओं के विश्वास, संस्कृति तथा साहित्य आदि के प्रति छत्तीस होकर रहना असंभव है। शायद यही कारण था कि तत्कालीन कुछ मुसलमान विचारक, फकीर और कवि हिंदुओं के साहित्य और संस्कृति के अध्ययन की ओर तो झुके ही पर कुछने हिंदुओं की तत्कालीन काव्यभाषा में साहित्य निर्माण का भी श्रीगणेश किया। इन लोगों ने इस बात को ठीक-ठीक समझ लिया था कि दोनों सम्प्रदायों के लोगों में एक-दूसरे की संस्कृति और साहित्य के प्रचार और उनको लोकप्रिय बनाने से बढ़कर आपस में घनिष्ठता और सौहार्द्र स्थापित करने का दूसरा उपाय नहीं हो सकता। इसी विचार से प्रेरित होकर ख़ुसरो, कबीर और जायसी आदि कुछ दूरदर्शी कवियों ने इस दिशा की ओर पैर बढ़ाया और इसमें उन्हें अच्छी सफलता भी मिली।

सबसे पहले ख़ुसरो ही इस कार्य में अग्रसर हुए। ख़ुसरो की कविता का एक बहुत बड़ा भाग लुप्त हो गया है, तो भी जो प्राप्त है उससे उनकी हिंदुओं के धर्मग्रंथ, संस्कृति तथा साहित्य आदि के प्रति

पूरी श्रद्धा और सहानुभूति स्पष्ट है। कबीर का मार्ग सबसे निराला था। इन्होंने दोनों की बुराइयों का खण्डन करते हुए ('इन दोउन राह न पाई') एक-दूसरे से पृथक् रखनेवाली गर्व की भावना को दूर करने का प्रयत्न करते हुए जनता को प्रेम के साधारण सूत्र में बाँधने की चेष्टा की। कबीर के प्रतिवाद प्रायः इतने तीव्र परंतु सच्चे हुआ करते थे कि दोनों ही सम्प्रदायों के कट्टर और धर्मान्ध लोग इनके घोर विरोधी हो गये। पर इतना होते हुए भी दोनों ही सम्प्रदायों की अधिकाश जनता पर इनकी शिक्षाओं का बड़ा प्रभाव पड़ा और दोनों ही जातियों की अधिकांश जनता, जो धार्मिक कट्टरपन की बहक से बरी थी, कबीर की अनुयायिनी हुई। कबीर की साधारण शिक्षाओं का लोहा मानते हुए भी जनता उनके खंडनात्मक कार्य से प्रसन्न न थी क्योंकि अपनी बुराई सुनना किसी को अभीष्ट नहीं होता। कबीर आदि ने जिनके साथ बहुत हिंदू संत भी थे, ज्ञान को प्रधानता दी और ये लोग ज्ञानाश्रयी शाखा के कवि कहलाये। कबीर यद्यपि मुस्लिम घराने मे पले थे तथापि वे सम्प्रदाय भेद से ऊपर उठे हुए थे। इसके बाद .कुतबन और जायसी आदि का समय आता है। इन लोगों ने हिंदुओं की प्रचलित कथाओं के द्वारा प्रेम-तत्त्व की अभिव्यक्ति की, जिसमें जन-साधारण की वृत्ति अच्छी प्रकार रम सकती थी। यद्यपि इन लोगों का झुकाव मुसलमानी धर्म की ओर कुछ अधिक था तथापि ये खंडनात्मक कार्य से बहुत दूर रहे। कबीर की उद्दंड उक्तियों से जो बात नहीं हुई वह इनकी प्रेमगाथाओं से हुई।

सूफी लोग उदार प्रकृति के थे। इन्होंने प्रेम की पीर को पहचाना और उसे अपनी साधना का प्रमुख अंग बनाया। इस प्रेम में कटुता के लिए स्थान नहीं रहता। ये लोग सूफी सिद्धांत के माननेवाले थे और प्रेममार्गी कवियों के नाम से अभिहित हुए। सूफी लोग साधारण मुसलमानों की अपेक्षा कुछ अधिक मुलायम तबीयत के होते थे। इनको न हिंदुओं से द्वेष था और न हिंदी से। इन्होंने हिंदुओं की भाषा को देश-भाषा और फलतः अपनी भाषा के रूप में अपनाया।

सूफ़ी सम्प्रदाय

व्युत्पत्ति

सूफी शब्द की कई व्युत्पत्तियां बताई जाती हैं। कुछ लोग तो इसका सूफ (सफेद ऊन) से संबंध जोड़ते हैं (ये लोग सादा फकीरी जीवन व्यतीत करने के कारण सफेद ऊन के मोटे कपडे पहनते थे) और कुछ लोग इस शब्द का संबंध सफ (पंक्ति) से जोड़ते है। ये लोग सदाचार के कारण एक पंक्ति में बिठलाये जाने के अधिकारी थे। इनकी बराबरी की भावना के कारण सूफी शब्द इन पर लागू हो सकता है। मदीना शरीफ़ की मसजिद के आगे एक चबूतरा है जिसको सुफ्फा कहते हैं। कुछ लोगों का विचार है कि जो फ़कीर लोग इस चबूतरे पर बैठते थे वे सूफी कहलाते थे। इसकी व्युत्पत्ति यूनानी के 'सोफिया' शब्द से लगाना अधिक ठीक जान पड़ता है। 'सोफिया' का अर्थ है ज्ञान। यह शब्द अँगरेज़ी शब्द फिलासफी के मूल में है। इस अर्थ के लगाने से शब्द में अधिक व्यापकता आ जाती है। यद्यपि सूफ़ियों का संबंध अधिकतर मुसलमान फकीरों से है तथापि सूफी-सिद्धांतों की परम्परा बहुत पुरानी है।

रहस्यवाद की परम्परा

सूफी लोग मर्मी या रहस्यवादियों के अंतर्गत ही माने जाते हैं। परात्पर सत्ता के साथ मनुष्य की निजी और भावात्मक सबधजन्य मिलन और विरह की अनुभूति और उसकी अभिव्यक्ति को रहस्यवाद कहते है। ससीम का असीम से मिलने का आनंद गूँगे के गुड़ की भाँति अव्यक्त रहता हुआ भी कबीर के शब्दों में 'सेना-बेना' और कुछ रूपकों और प्रतीकों द्वारा समझाया जाता है। इसमे दार्शनिक चिंतन की अपेक्षा मनोवेग का प्राधान्य रहता है। मनुष्य में जितनी तीव्रता, मधुरता और कोमलता दाम्पत्य और वात्सल्य-भाव की रहती है उतनी और किसी की नहीं। दाम्पत्य-भाव में एक निजीपन और आनंदपूर्ण रहस्यमयता रहती है। उसी आनंदपूर्ण रहस्यमयता का जब साधक परात्पर सत्ता के सम्बन्ध मेंअनुभव करने लगता है, तभी वह रहस्यवाद

के क्षेत्र में प्रवेश करता है। यह भावात्मक संबंध भगवान के निर्गुण और सगुण दोनों ही रूपों के साथ स्थापित किया जा सकता है। आचार्य शुक्ल जी सगुण रूप के साथ नहीं मानते हैं और वे तो निर्गुण के साथ भी ऐसी संभावना में विश्वास नहीं करते। उनका कथन है कि 'अज्ञेय जिज्ञासा का विषय हो सकता है, प्रेम का नहीं'। यह विवाद का विषय है, इसमें पड़ने का यहाँ स्थान नहीं। किंतु यह दाम्पत्य-भाव का संबध निर्गुण के विषय में कुछ अधिक आया है। श्री चद्रबली पांडे के शब्दों में दाम्पत्य-भाव की अपेक्षा मादन-भाव कहना अधिक ठीक होगा।

ईश्वर और जीव के सबंध मे दाम्पत्य की भावना हमको उपनिषदों[1] में भी मिलती है। ईसाइयों की धर्मपुस्तक के प्राचीन और नवीन 'अहदनामों' ('टेस्टामेंट्स') मे इसकी झलक मिलती है। सुलेमान और दाऊद के गीतों मे ऐसी भावना है। नये अहदनामे में ईसामसीह को दूल्हा और उनमे विश्वास करनेवाले समाज को दुलहिन बतलाया गया है।[2]

यहूदियों का यहोवा अधिकांश में एक शासक के रूप में आता है। उसमें एक जाति-विशेष (इसराइलियों) पर कृपा करने की भावना दिखाई गई है। वह उनका त्राता है। उसके अनुयायियों ने 'बाल' आदि देवताओं की पूजा का निराकरण कर दिया था और भय का साम्राज्य स्थापित कर रक्खा था। ईसाइयों ने भी इस परंपरा को अपनाया किंतु

---

[1] तद्यथा प्रियया स्त्रिया संपरिष्वक्तो न बाह्यं किंचन वेद नांतरं, एवमेवाय पुरुषः प्राज्ञेनात्मना सपरिष्वक्तो न बाह्यं किंचन वेद, नान्तरम्, तद्वा अस्य एतदाप्तकामं आत्मकाम अकामं रूपम्॥ अर्थात् जिस तरह से प्रिया स्त्री द्वारा अच्छी तरह आलिंगन किया हुआ पुरुष न भीतर की किसी वस्तु का ज्ञान रखता है न बाहर का, उसी तरह से यह जीव ज्ञानवान परमात्मा से मिलकर न भीतर का जानता है और न बाहर का, क्योंकि वह आत्मकाम हो जाता है। अर्थात् उसकी सब कामनाएँ पूरी हो जाती हैं। वास्तव में आत्मा की प्राप्ति में किसी चीज़ की प्राप्ति शेष नहीं रहती। बृहदारण्यक, ४। ३। २१

[2] योहन ३-२४

उन्होंने अपने ईश्वर के साथ पिता पुत्र का संबंध स्थापित कर ईश्वर और जीव के संबंध में कोमलता का विधान किया। हज़रत मुहम्मद साहब (सं० ६२८-६८८) के अनुयायी मुसलमान लोगों ने भी उसी भय के संबंध को, जो यहूदियों में था, अपनाया। यहूदियों की अपेक्षा ईसाइयों और मुसलमानों का .खुदा किसी जाति-विशेष के लिए नहीं है वरन् वह उन सब लोगों पर कृपा करता है जो प्रभु ईसामसीह या हज़रत मुहम्मद साहब की शरण मे जाते हैं। ये दोनों ही मत पैग़ंबर या मध्यस्थ के माननेवाले हैं।

भय के संबंध की तथा मूर्तिपूजा-विरोध की प्रतिक्रिया हुई। यहोवा के अनुयायियों इसराइलियों में ही नहीं मुसलमानों में भी यह प्रतिक्रिया हुई। ईसाइयों में प्रेम के लिए अधिक गुंजाइश थी। यूनानी दार्शनिकों और उनके अनुयायियों, विशेषकर प्लोटीनस आदि के विचारों, यूनान की गुप्त टोलियों तथा ईसाइयों के मध्ययुगीन संतों के सम्मिलित प्रभाव से रहस्यवाद को एक दृढ़ आधार-भूमि मिली। हिंदुओं और बौद्धों का प्रभाव मुसलिम देशों में फैल रहा था। अरब से तो भारत का आदान-प्रदान बहुत दिनों से चल रहा था। इन्ही सब प्रभावों से मुसलमानों के सूफी सम्प्रदाय को पोषण मिला। बसरा और बग़दाद उसके दो मुख्य केन्द्र बने।

यद्यपि शुद्ध इसलाम धर्म में प्रेम और मादन-भाव के लिए बहुत कम स्थान है तथापि लोग अपनी-अपनी प्रकृति और प्रवृत्ति के अनुकूल सभी बातों के लिए गुंजाइश निकाल लेते हैं। अरब के लोगों में सभी कठोर और उद्दंड न थे। वहा भी प्रेम और संगीत के उपासकों का अभाव न था। अरब के कवियों में अरबी और फ़ारिज़ ऐसे ही कवि थे। इन्होंने इश्क मजाज़ी से इश्क़ हक़ीक़ी पर जाने का प्रयत्न किया है।

मुस्लिम जगत में प्रेम की पुकार करनेवालों में राबिया (मृ० सं० ८०९) का नाम बड़े आदर से लिया जाता है। यह बसरे की रहनेवाली थी। इसको हम इस्लाम की मीरा कह सकते हैं। प्रारंभ में तो इस्लाम के

कट्टरपंथियों, मुल्लाओं और खलीफाओं का उदार वृत्तिवाले सूफियों से विरोध रहा, क्योंकि ईश्वर से ऐक्यभाव रखने और गाने-बजाने आदि को वे एक प्रकार कुफ्र समझते थे। मंसूर (मृ० ८३१) को जिसका दूसरा नाम हल्लाज था 'अनलहक' अर्थात् 'मैं सचाई हूँ' (अहं ब्रह्मास्मि) कहने के कारण सूली पर चढ़ना पडा था। यह बग़दाद का रहनेवाला था। जितनी खुलकर मसूर ने इस सिद्धांत की घोषणा की थी उतनी स्पष्टता से किसी ने नही की थी। वह मुहम्मद साहब को नबी मानता था, फिर भी उसे कट्टरपंथियों का कोपभाजन बनना पड़ा। इसके बलिदान से सम्प्रदाय को बल मिला। जूलनून, यज़ीद, ज़ुनैन आदि इस्लाम के साथ समझौते का प्रयत्न करते रहे, किंतु पूर्णतया सफल न हो सके। इस्लाम को तसव्वुफ़ की ज़रूरत थी और तसव्वुफ को इस्लाम की। इमाम ग़ज्ज़ाली ने इस समझौते की पूर्ति कर द्वेषभाव को मिटाया। ये संवत् ११०० के करीब थे।

ईरान मे मुस्लिम कट्टरता के कम हो जाने पर सूफी कविता चेती। वहां मौलाना रूम, हाफिज़, अत्तार बड़े ऊँचे दर्जे के कवि हुए। उमर ख़ैयाम ने अपनी रुबाइयों में सुरा और सुन्दरी-प्रेम की प्रतिष्ठा की। ये भाव-प्रतीक रूप से सूफी भावनाओं की पुष्टि करते थे।

हिंदुस्तान में मुहम्मद-बिन-कासिम के साथ आये हुए कुछ अरब सिंध में बस गये। वे हिंदुओं के प्रभाव में आये। यहां के दार्शनिक वातावरण में सूफी सम्प्रदाय ख़ूब पनपा। मुलतान सूफियों का केन्द्र बना। अरबों के पश्चात् और मुसलमान जातिया भी आईं। वे लोग लड़ते-भिड़ते और मारकाट करते रहे किंतु सूफी लोग अपने प्रेम का संदेश प्रसारित करने में तत्पर रहे। यहा के मुसलमानों मे अबुलहसन हुज हज्विरी बहुत प्रसिद्ध सूफी हुए हैं। उनका लिखा हुआ 'कश्फ़ुल महजूब' सूफ़ी सम्प्रदाय का प्रामाणिक ग्रथ माना जाता है। यहां सूफ़ियों के कई सिलसिले चले। उनमें चिश्ती, सुहरावर्दी, क़ादिरी, शुत्तारी और नक़्शबंदी प्रमुख माने जाते हैं। इनमे मुईउद्दीन चिश्ती १२४९ में शाहबुद्दीन ग़ोरी के साथ आये थे। सलीम चिश्ती भी एक मशहूर

फ़क़ीर हो गये हैं। शाहजहां का लड़का दाराशिकोह भी सूफी सम्प्रदाय का पोषक और बड़ी उदार प्रकृति का था। वह क़ादिरिया ख़ानदान का था। ख्वाजा वहीउद्दीन नक़्शबन्दियों में से थे। जायसी ने चिश्ती ख़ानदान का उल्लेख किया है।

सूफी-सिद्धांत

यद्यपि सूफी लोग स्वतत्र प्रकृतिवाले और चितनशील थे तथापि वे इस्लाम के घेरे में ही रहना चाहते थे। वे और धर्मों के प्रति उदार थे, उनका आदर करते थे, किंतु निष्ठा और श्रद्धा इस्लाम में ही थी। जायसी जैसे उदार मुसलमान ने भी इस्लाम धर्म को ही महत्ता दी है ('सो बड़ पथ मुहम्मद केरा।') साधारण मुसलमान मे .कुरान की आज्ञाओं को विधिवाक्य के रूप मे मानने की प्रवृत्ति रहती है। वह उसमे अक़्ल का दख़ल नही चाहता है। सूफी लोगों का मत भावना-प्रधान है, किंतु उसमे स्वतंत्र चिंतन पर्याप्त मात्रा मे है। वे अपने विचारों की पुष्टि के लिए क़ुरान शरीफ का पोषण ढूँढ़ निकालते हैं, ठीक उसी तरह से जिस तरह हमारे यहां के दार्शनिक श्रुति के अधिकार-क्षेत्र से बाहर नहीं जाते। हां शराब को लेकर प्रतीक रूप और कुछ-कुछ वास्तविक रूप से भी शरीयत की अवहेलना की गई है। वह एक आध्यात्मिक मस्ती और स्वतंत्रता का प्रतीक है। इसी प्रकार बुत उनके यहा प्रेमपात्र का प्रतीक है। शराब और बुतपरस्ती को, जो मुसलमानों के यहां वर्ज्य है, प्रतीक-रूप से अपनाकर शरीयत से स्वतंत्र होने का उन्होंने मानसिक तोष प्राप्त किया। वैसे तो दुनिया के दार्शनिक विषय तीन ही हैं—ईश्वर, जीव और जगत। इन तीनों की अन्विति ब्रह्म में हो जाती है। इन तीनों में जीव और ब्रह्म या ईश्वर का संबंध मुख्य है।

मुसलमानों के एकेश्वरवाद में अल्लाह की मुख्यता है, किंतु उसी के साथ मुहम्मद रसूल-अल्लाह को भी प्रधानता दी गई है। .कुरान शरीफ मे अल्लाह का वर्णन कई रूपों में आया है। (१) एक देश-विशेष (स्वर्ग या आसमान) मे रहनेवाले व्यक्तित्व-प्रधान रूप में, जो रसूल से बातचीत भी करता है, और (२) सार्वदेशिक और व्यापक रूप में।

सूफ़ियों ने इस व्यापक रूप को अधिक अपनाया किंतु उसको अपने प्रेम का विषय बनाया। रसूल में व्यक्तित्व का प्राधान्य था। उनको भी उन्होंने अपने प्रेम का विषय बनाया।

जीव या सालिक अथवा साधक का मुख्य लक्ष्य है ईश्वरीय सत्ता के साथ तल्लीनता प्राप्त करना। इसके लिए हमको मनुष्य के चार विभागों को समझ लेना आवश्यक है। वे इस प्रकार हैं :

नफ्स (इंद्रियां और चंचल चित्तवृत्तियां), रूह (आत्मा), क़ल्ब (हृदय, जिस पर ईश्वर का प्रतिबिंब पड़ता है) और अक़्ल (बुद्धि)। नफ्स का निरोध ही साधक का परम लक्ष्य है। योग को भी पतञ्जलि ने चित्त-वृत्ति-निरोध कहा है। 'योगश्चित्तवृत्ति निरोधः'। नफ्स के प्रबल रहते हुए क़ल्ब की शुद्धि नहीं हो पाती। नीचे की पंक्तियों मे जायसी ने इसी शुद्धि और परिमार्जन की ओर संकेत किया है।

तन दरपन कहँ साजु, दरसन देखा जो चहै।
मन सौं लीजिय माँजि, मुहम्मद निरमल होइ हिया।

कल्ब को अंतःकरण की भाँति भौतिक पदार्थ ही माना है, किंतु उसमें अल्लाह की छाया पड़ने से उसका रूप अभौतिक भी हो जाता है। क़ल्ब का एक सूक्ष्मतम अंश है जिसको सिर्र कहते हैं। सिर्र से मनुष्य में निष्कामता और सन्यास की भावना आ जाती है। वह ईश्वरीय जमाल (माधुर्य) का प्रसाद है। क़ल्ब पर पड़े हुए चित्र ही आत्मा में ज्ञान-रूप हो जाते है। क़ल्ब रूह की उन्नति का साधन है।

रूह इन्सान का शुद्धतम अंश है जिसमें अल्लाह की झलक पड़ती है। सूफी लोग अक़्ल को नफ़्स से तो ऊँचा मानते हैं किंतु उसको तथा उसके द्वारा प्राप्त इल्म (ज्ञान) को ईश्वर-प्राप्ति में बाधक समझते है। वे अक़्ल की अपेक्षा 'म्वारिफ़' को अधिक महत्त्व देते हैं। यह म्वारिफ़ 'इंट्यूशन' (प्रातिभज्ञान) के निकट आ जाता है।

सूफ़ी लोग साधक की चार अवस्थाएं मानते हैं :—

शरीयत—अर्थात् धर्मग्रंथों के विधि-निषेध का विधिवत् पालन। इसमें बाहरी कर्मकांड रहता है।

तरीक़त—बाहरी कर्मकांड के विधि-निषेध से परे होकर हृदय की शुद्धता द्वारा उस परमतत्त्व के साक्षात्कार की चेष्टा।

हक़ीक़त—सत्य या तत्त्वदृष्टि की प्राप्ति।

मारफ़त—अर्थात् सिद्धावस्था, जिसमें साधक की आत्मा परमात्मा में लीन हो जाती है और वह प्रेममय हो जाता है।

शरीयत यद्यपि पहली श्रेणी है तथापि सिद्ध लोगों ने उसका तिरस्कार नहीं किया है।

जायसी ने इनको ही चार मुक़ाम के रूप में कहा है—

चारि बसेरे सौं चढ़ै, सत सौ उतरै पार।

'अखरावट' में भी चार बसेरों का उल्लेख है—

बाँक चढाव, सात खँड ऊँचा। चारि बसेरे जाइ पहूँचा।

इसी पुस्तक में इनका नाम भी गिनाया गया है।

कही तरीकत चिसती पीरू। उधरित असरफ औ जहँगीरू।[1]

× × ×

राह हकीकत परै न चूकी। पैठि मारफत मार बुड़की॥

सारांश यह है कि नफ़्स को वश में करके कल्ब की शुद्धि कर रूह को परमात्मा में लीन करना सालिक या साधक का मुख्य कार्य है। इस कार्य में ज़िक्र (स्मरण) और मुराक़बत (ध्यान) मुख्य साधन हैं। नाम-स्मरण का महत्त्व संतों और भक्तों दोनों में ही रहा है। जायसी ने रत्नसेन द्वारा पद्मावती के नाम का जाप कराया है।

बैठि सिंघ छाला होइ तपा। पदमावति पदमावति जपा॥

इससे ख़ुदी का नाश होता है। ख़ुदी का नाश परम मिलन के लिए अनिवार्य है। ध्यान या मुराक़बत द्वारा तल्लीनता आती है। इस तल्लीनता की ही अवस्था को हाल कहते हैं। इस अवस्था में साधक ख़ुदी का त्याग कर आनंद में झूमने लगता है। यह एक प्रकार के आवेश

---

[1] जायसी-ग्रंथावली, पृष्ठ ३२१

की अवस्था होती है। इस दशा का वर्णन जायसी ने इस प्रकार दिया है—

जेहि मद चढ़ा परा तेहि पाले। सुधि न रही ओहि एक पियाले॥
परी कया भुइँ लोटै, कहाँ रे जिउ बलि भीउँ।
को उठाइ बैठारै, बाज पियारे जीउँ॥

इस हाल की अवस्था की दो दशाएं होती हैं। एक फना की जो अभावात्मक है और जिसमें .खुदी का नाश हो जाता है। दूसरी अवस्था बक़ा की है। बक़ा का अर्थ स्थायित्व है। यह भावात्मक परमानन्द की दशा है। व्यक्तित्व का क्या होता है? वह लोहे के गोले और अग्नि की भाँति परमात्मामय हो जाता है अर्थात् अपना व्यक्तित्व बनाये रखता हुआ भी परमात्मा के गुण प्राप्त कर लेता है, अथवा शराब और पानी की तरह मिल जाता है, किंतु अपनी ख़ासियत अलग रखता है (शराब और पानी मिलाकर जलाने से शराब जल जायगी पानी नहीं जलेगा) अथवा जैसे पानी की बूँद समुद्र या दरिया में समा जाती है फिर उसका कोई पृथक् अस्तित्व नहीं रहता है। सूफी फ़कीर पहले दो पक्षों की ओर अधिक झुके हैं। कबीर ने तीसरे पक्ष को अपनाया है।

सूफ़ी लोगों ने सर्वात्मवाद को माना तो है किंतु उसको प्रतिबिंब-वाद से मिलाया है। जगत् के संबंध में कई कल्पनाएं की जा सकती हैं। जगत् विवर्त है अर्थात् उसका कोई पृथक् अस्तित्व नहीं है, जैसे पानी का बुलबुला। जगत् परिणाम है जैसा सांख्यवाले मानते हैं। जगत् ईश्वर का प्रतिबिंब है। प्रतिबिंबवाद का उदाहरण जायसी से दिया जाता है—

नयन जो देखे कँवल भा, निरमल नीर सरीर।
हँसत जो देखे हंस भा दसन जोति नग हीर॥

पद्मावती के नखशिख-वर्णन में भी ऐसी ही बात कही गई है, देखिए—

जेहिं दिन दसन जोति निरमई। बहुतैन्ह जोति-जोति ओहि भई॥

उपनिषदों में भी कहा गया है—'तस्य भासा सर्वमिदं विभाति'।

सर्वात्मवाद के उदाहरणों की भी कमी नहीं है। 'अखरावट' में जायसी लिखते है—

सबै जगत दरपन कै लेखा। आपुहि दरपन आपुहि देखा॥

× × ×

आपुहि फल आपुहि रखवारा। आपुहि सो रस चाखनहारा।

× × ×

आपुहि कागद आप मसि, आपुहि लेखनहार।
आपुहि लेखनी आखर, आपुहि पंडित अपार॥

हिंदी के सूफ़ी कवियों पर भारतीय सर्वात्मवाद के अतिरिक्त हठ-योग का काफी प्रभाव था। जायसी तथा अन्य सूफी कवियों ने हठ-योग के मूल सिद्धांत 'जो पिंड में वही ब्रह्मांड मे है' पूर्णरूपेण माना है। देखिए—

सातौ दीप नवौ खंड, आठौ दिसा जो आहि।
जो बरम्हंड सौ पिंड है, हेरत अंत न जाहि॥

जायसी ने प्राणायाम को भी माना है, देखिए—

चाँद सुरुज दूनौ सुर चलहीं। सेत लिलार नखत झलमलहीं॥

इस प्रकार हम देखते हैं कि ये सूफ़ी कवि भारतीय जीवन में घुल-मिल गये थे। इन्होंने भारतीय कहानियों के साथ भारतीय विचार-धारा और परंपराओं को अपनाया था। साथ ही सच्चे मुसलमान भी बने रहे थे।

प्रेमगाथा-साहित्य

प्रेममार्गी कवियों का लक्ष्य

प्रेममार्गी कवियों ने अपनी प्रेमगाथाओं द्वारा यह सिद्ध कर दिया कि सभी मनुष्यों के हृदय में, चाहे वे हिंदू हों और चाहे मुसलमान अथवा और किसी सम्प्रदाय के, प्रेम-भावना के बीज वर्तमान रहते हैं, जो समय पाकर अंकुरित हो उठते हैं। इन लोगों ने आख्यानक काव्य द्वारा यह दिखलाया कि किसी के रूप गुण से आकर्षित होकर उससे एक होने की

इच्छा करना, इस कार्य की सिद्धि के लिए नाना प्रकार के असह्य कष्ट झेलना, अन्त मे उसकी प्राप्ति से सुख, फिर उसके वियोग के दुख और प्रेम की पीर आदि हृदय के विविध भाव और उसकी तरङ्गे, क्या हिंदू क्या मुसलमान सभी के हृदय में समान रूप से उठती हैं। इन लोगों ने मुसलमान होकर हिंदू घरानों मे प्रचलित प्राचीन प्रेम-कहानियों को उन्हीं की भाषा मे कहा, पर अपने ढंग से; और इस प्रकार यह सिद्धकर दिया कि जहां प्रेम है वहां जाति, सम्प्रदाय या मत-मतांतर का भेद कोई अर्थ नहीं रखता। प्रेमकथाओं की परम्परा तो संस्कृत और अपभ्रंश से चली आ रही थी, वीरगाथा काल में राजाओं की विजय-यात्राओं के अङ्ग रूप प्रेमकथाएं आई हैं। पद्मावती की कथा 'पृथ्वीराजरासो' में भी है। किंतु हिंदी में स्वतत्र रूप से प्रेमगाथाओं को अपनानेवाले मुसलमान कवि ही थे। इस परम्परा मे पहला नाम मुल्ला दाऊद का आता है। ये अला-उद्दीन खिलजी के समय में थे। इनका कविता-काल सं० १३७५ के आस-पास माना जाता है। इन्होंने 'नूरक और चन्दा' नाम की प्रेम-कथा लिखी थी किन्तु वह अब उपलब्ध नहीं है। इस प्रकार की प्रेम-गाथा लिखने-वालों में सबसे पहले कवि जिनकी रचना प्राप्य है, शेख क़ुतुबन हैं। ये चिश्ती वंश के शेख़ बुरहान के शिष्य थे और इनकी रचित 'मृगावती' (निर्माण-काल ९०९ हि० अर्थात् १५५९ वि०) इस प्रकार का पहला आख्यानक-काव्य है। इसमें अवधी बोली में दोहा चौपाइयों में चन्द्रनगर के राजा गणपति देव के राजकुमार और कंचन-नगर के राजा रूपमुरारि की राज्यकन्या मृगावती की प्रेम-कहानी वर्णित है। मृगावती उड़ने की विद्या में निपुण थी। एक दिन राजा को धोखा देकर वह उड़ गई। राजा उसकी खोज में निकल पड़ा। रास्ते में उसने रुक्मिणी नाम की एक रूपवती कन्या को एक राक्षस से बचाया। उसके पिता ने उसका राजकुमार के साथ विवाह कर दिया। किंतु राजकुमार मृगावती की खोज में तत्पर रहा। वह उस नगर में पहुँच गया जहां मृगावती अपने पिता के देहावसान के पश्चात् उसकी गद्दी पर राज कर रही थी। वहां वह बारह वर्ष रहा। राज-कुमार के पिता को खबर लगी तब उसने उसको बुलवाया। राजकमार

मृगावती को तथा रुक्मिणी को साथ लेकर अपने नगर पहुँचा। वहां आखेट मे हाथी से गिरकर उसकी मृत्यु हो गई। इसमें प्रेम-मार्ग की कठिनाइयों का अच्छा दिग्दर्शन कराया गया है और बीच में सूफी सिद्धान्तों की भी झलक दिखाई गई है। इस परम्परा मे मंझन, जायसी, उसमान ('चित्रावली' के रचयिता), नूर मुहम्मद ('इन्द्रावती' और 'अनुराग बाँसुरी' के रचयिता) तथा शेख निसार ('यूसुफ जुलेखा' के रचयिता) आदि कई कवि हुए। कुछ हिन्दुओं, जैसे पंजाबी कवि सूरदास, तथा कुशललाभ आदि ने भी इसी शैली में प्रेमाख्यान लिखे हैं।

गाथाओं की विशेषताएं

हम ऊपर कह चुके है कि कहीं तो इन्होंने हिन्दुओं की कहानिया अपने ढंग से कहीं। ढंग से यहां मतलब है इनकी रचनाओं के ढाँचे और वर्णन-शैली से। भारतीय साहित्य में प्रबंध-काव्यों की जो सर्गबद्ध प्रथा पुरातन काल से चली आ रही थी उससे इन्होंने काम नहीं लिया। इन्होंने फ़ारसी की मसनवियों को आदर्श बनाया। इनमें विस्तार के अनुसार कथा सर्गों या अध्यायों में विभक्त नहीं होती। एक सिरे से इनका क्रम अखड-रूप से बराबर चला जाता है, केवल कहीं-कहीं घटनाओं या प्रसगों का उल्लेख शीर्षकों के रूप में दे दिया जाता है, जैसे—'सात समुद्र खंड', 'राजा गढ़ छेंका खंड', या 'राजा बादशाह युद्ध खड' इत्यादि। मसनवियों की रचना के सबध में कुछ विशेष साहित्यक परम्पराओं के पालन का प्रतिबंध नहीं होता। इनमें केवल इतना ही आवश्यक होता है कि सारी रचना केवल एक ही छंद में हो, पर कथावस्तु के संबंध में एक परम्परा का पालन अवश्य करना पड़ता था। आरंभ में परमेश्वर, नबी और तत्कालीन बादशाह की स्तुति मसनवियों में अनिवार्य समझी जाती थी। प्राय: सभी ने अपने गुरुओं का तथा अपने जन्मस्थान आदि का भी उल्लेख किया है। इस परम्परा का पालन जायसी और कुतुबन आदि सभी प्रेमगाथाकारों ने नियम से किया है। छद भी इन लोगों ने आद्योपांत दोहा-चौपाई ही (सात-सात या कहीं-कहीं नौ-नौ

चौपाइयों के बाद एक-एक दोहा) रक्खा है। जायसी के पूर्व के कवियों ने पाँच-पाँच चौपाइयों के पश्चात् एक दोहा रक्खा है। चौपाइयों की विषम संख्या देख कर यह धारणा होती है कि ये लोग दो ही चरणों से चौपाई पूरी मानते रहे होंगे, पर जैसा कि 'चौपाई' शब्द ही से स्पष्ट है, चारों चरणों मे एक चौपाई पूरी होती है। तुलसीदासजी ने ऐसा ही किया है। ये तो बाहरी विशेषताएं रहीं। सूफ़ियों की प्रेमगाथा की एक आन्तरिक विशेपता यह है कि पुरानी कथाओं मे एक नया अर्थ भरा गया है इस बात को क़ुतबन ने अपनी 'मृगावती' मे लिखा है। 'पुनि हम अरथ खोल सब कहा' यह आध्यात्मिक संकेत ही इनकी विशेषता है। इनमें रूपवर्णन के अन्तर्गत नखशिख-वर्णन बहुत अच्छा हुआ, उसी के साथ ही विरह-निवेदन भी बड़ा मार्मिक हुआ है।

प्रेमगाथाओं का रूप और विषय

सबसे मार्के की बात इन प्रेमगाथाओं के संबंध में यह है कि ये सभी अवधी में और दोहा-चौपाई छंद मे ही लिखी गई हैं। अब तक प्रायः दस प्रेमगाथाओं का पता लग चुका है, पर उनमें के प्रकाशित संस्करण केवल तीन ही हमारे देखने में आये हैं। पर सभी की भाषा, शैली तथा विषय निर्वाह आदि के संबंध में आश्चर्यजनक समानता पाई गई है। यहां तक कि लेखकों के भिन्न-भिन्न नाम यदि न बताये जायँ तो पाठक यही समझेगा कि ये सब एक ही लेखक की लिखी हुई हैं। विषय प्रायः सभों मे कुछ-कुछ इसी ढङ्ग का होता है—कोई राजकुमार किसी राजकुमारी के रूप-गुण की प्रशंसा सुन या प्रत्यक्ष या स्वप्न या चित्र मे देखकर आकर्षित होता है। उधर भी यही हालत होती है। अंत में वह कुछ विश्वस्त साथियों को साथ लेकर उसकी खोज में चल पड़ता है। प्रायः उसे कोई मार्गप्रदर्शक भी मिल जाता है। यह अधिकतर राजकुमारी का भेजा हुआ कोई दूत अथवा दूत का काम करनेवाला कोई पक्षी या तोता हुआ करता है। राह में उसे बड़ी विघ्न-बाधाओं का सामना करना पड़ता है। कई बार फलागम होते-होते कोई ऐसा विघ्न आ जाता है या उससे कोई ऐसी भूल हो जाती है जिससे

उसकी उद्देश्य सिद्धि फिर एक अनिश्चित काल तक के लिए रुक जाती है। वर्णन भी इन आख्यायिकाओं का एक आवश्यक अंग होता है। इनके सबध में यह सदा स्मरण रखना चाहिए कि इन कहानियों का आधार प्रायः ऐतिहासिक होता है और बहुत सी घटनाए भी ऐतिहासिक होती हैं, यद्यपि कवि उसमे अपनी आवश्यकतानुसार हेर-फेर किए रहता है। पर इन इतिहासमूलक कथानकों के अतिरिक्त कवि अपनी इच्छा या आवश्यकता के अनुसार एक या अधिक काल्पनिक कथानक भी मिला देता है। यह प्रायः चरितनायक के उत्कर्ष को बढाने और कथा मे अलौकिक या आध्यात्मिक पक्ष को स्पष्ट करने के उद्देश्य से होता है।

प्रेमगाथाओं मे रहस्यवाद

इन प्रेमगाथाओं का सबसे महत्त्वपूर्ण वह अश होता है जिसका सबध अध्यात्म या रहस्यवाद से होता है। लौकिक कथा के द्वारा कवि जो परोक्ष की ओर संकेत करता है वही शायद रचना का प्रधान उद्देश्य रहता था। कथा के अंत में कवि स्पष्ट रूप से कह देता है कि वह सारी कथा अन्योक्ति रूप में कही गई है और उसी रूप में कथा को समझने के लिए वह पाठक से अनुरोध करता है। उदाहरणार्थ पद्मावत मे नायक रतनसेन को साधक समझना चाहिए। पद्मावती को प्राप्त करने की इच्छा से जो उसके हृदय मे प्रेम की पीड़ उठती है उसे ईश्वरोन्मुख प्रेम या लगन समझना चाहिए। पद्मावती तक पहुँचने की राह बतानेवाले सुआ को गुरु, राघव दूत को शैतान, रानी नागमती को सांसारिक बंधन, तथा सुलतान अलाउद्दीन को माया का प्रतिनिधि या शैतान बताया गया है। निम्नलिखित चौपाइयां देखिए—

मैं एहि अरथ पंडितन्ह बूझा। कहा कि हम्ह किछु और न सूझा॥
चौदह भुवन जो तर उपराही। ते सब मानुष के घट माही॥
तन चितउर मन राजा कीन्हा। हिय सिघल बुधि पदमिनि चीन्हा॥
गुरू सुआ जेइ पथ देखावा। बिन गुरु जगत को निरगुन पावा?
नागमती यह दुनिया-धंधा। बाँचा सोइ न एहि चित बंधा॥

राघव दूत सोइ सैतानू । माया अलाउद्दीन सुलतानू ॥
प्रेम-कथा एहि भँति बिचारहु । बूझि लेहु जौ बूझै पारहु ॥

इस प्रकार अंतिम चौपाई में कवि एक प्रकार से चुनौती सी दे देता है कि यदि उक्त रीति से कथा को समझ सको तो समझ लो।

इस रूपक या अन्योक्ति का सब स्थानों में पूरा-पूरा निर्वाह नहीं हुआ है। नागमती दुनिया का धन्धा अप्रस्तुत में चाहे कह लिया जाय प्रस्तुत मे उसका चरित्र बहुत अच्छा है। उसमे स्त्रीसुलभ असूया भाव तो है किंतु उसका विरह बड़ा मार्मिक है और उसमें मानसिक पक्ष की प्रधानता है। उसका त्याग अनुपम है। वह पद्मावती को संदेशा भेजती है—'मोहि भोग सो काज न बारी। सौंह दिस्ट कै चाहनहारी'। ऐसी सती-साध्वी नारी को दुनिया-धन्धा कहना उसके साथ अन्याय करना है।

सुआ को गुरु बनाया यह ठीक है किंतु उसके गुरु बनाने के कारण रत्नसेन के प्रारम्भिक प्रेम मे कुछ अस्वाभाविकता आ गई है जिसके कारण आचार्य शुक्लजी ने उसे प्रेम न कहकर लोभ कहा है। गुरु का उपदेश मौखिक ही होता है। भौतिक पक्ष मे केवल वर्णन सुन कर बेहोश हो जाना अस्वाभाविक अवश्य है किन्तु आध्यात्मिक पक्ष में यह गुरु की महत्ता का द्योतक होता है।

इनके अतिरिक्त और भी बहुत से भाव जो रहस्यवाद से संबंधित है प्रेमगाथाओं मे मिलते हैं। प्रेममार्गी कवियों पर हठयोग का भी प्रभाव है। यह प्रभाव हमको जायसी के और नूर मुहम्मद के गढ़-वर्णन में मिलते हैं।

जायसी—

नवौ खड नव पँवरी, औ तहँ बज्र केवार।
चार बसेरे सौं चढ़ै, सत सौं उतरै पार॥
नव पौरी पर दसम दुवारा। तेहि पर बाज राज घरियारा।
घरी सो बैठि गनै घरियारी। पहर पहर सो आपन बारी॥
जबहीं घरी पूज तेहि मारा। घरी घरी घरियार पुकारा।

नूरमुहम्मद—

राजै गढ़ नौ खंड बनावा। ऊँच गगन लग ताहि उठावा॥

....

गढ के ऊपर ठीक ही, घड़ियाली घड़ियाल॥

निसिदिन बैठे साधै, घड़ी मुहूरत काल॥

जायसी के उद्धरण में दशम द्वार और अनहद नाद के साथ सूफ़ियों के माने हुए शरीयत आदि चार मुकाम या श्रेणियों का वर्णन आ गया है। नूरमुहम्मद में नौ खडों के ऊपर गढ़ का वर्णन है, वहाँ पर अनहद शब्द होता है और मनुष्य की आयु की ओर भी संकेत है।

सिंहलगढ़ और आगमपुर का वर्णन प्रायः एक सा ही है। आगमपुर भी सिंधु के पार है। यह नाम भी सार्थक है। नूरमुहम्मद ने चंद्र और सूर्य को शरीर के भीतर ही माना है, किंतु उनका क्रम कुछ उलटा है। उन्होंने पहले खंड मे चद्रमा माना है, चौथे मे सूर्य।

नैहर से पतिगृह जाने का रूपक और सरोवर में स्नान की बात भी जायसी और नूरमुहम्मद दोनों ने ही कही है। इसमें भगवान् को पति-रूप से मानने की व्यंजना है।

जायसी—

ऐ रानी मन देखु विचारी। एहि नैहर रहना दिन चारी॥

जौलहि अहे पिता कर राज। खेलि लेहु जो खेलहु आज॥

पुनि सासुर हम गोनब काली। कित हम कित यह सरवर पाली॥

नूरमुहम्मद—

खेलि लेहु नइहर मो, सब मिलि परमद खेल।

पुनि नइहर के छाड़तै, सासुर होब अकेल॥

हम अज्ञात न सासुर चीन्हा। यह नइहर ऊपर चित दीन्हा॥

सूफ़ियों के प्रतिबिंबवाद की भी झलक जायसी, उसमान, नूरमुहम्मद में समान रूप से मिलती है।

जायसी—

बिगसे कुमुद देखि ससिरेखा। मैं तेहि रूप जहां जो देखा॥
पावा रूप-रूप जस चहे। ससिमुख सब दरपन हुइ रहे॥
नैन जो देखे कँवल भए, निरमल नीर सरीर।
हँसत जो देखे हंस भए, दसन जोति नग हीर॥

उसमान—

चित्र देखि...तैं जाना। तामहँ अहा सो नहिं पहिचाना॥
चित्रहि महँ सो आहि चितेरा। निर्मल दिष्टि पाउ सो हेरा॥

चित्र को ससार कहा है और असली .बिंब को परमात्मा। जो चित्र में मन लगाते हैं वे असलियत से दूर रहते हैं।

मूरख सो चित्र मन लावा। सेमर सुआ जैस पछतावा॥

इन आध्यात्मिक व्यंजनाओं के अतिरिक्त पद्मावत की भाँति चित्रावली में भी गुरुमहिमा गाई गई है। वहां भी एक पक्षी ही गुरु का रूप धारण करता है।

कुँअर कहा अब सुनहु परेवा। मैं तोर सीख मोर तैं देवा॥
मैं तजि पथ जात बौराना। तै गहि बांह पंथ पर आना॥
बूड़त मोर नाउ मँझ नीरा। तू खेवक होइ लाइस तीरा॥
सोअत हौं जो अहा सो जागा। मन तजि चित्र चितेरहि लागा॥

नखशिख-वर्णन, बारहमासा और विरह-वर्णन के संबन्ध में सभी में समान भाव पाये जाते हैं। सूफियों की प्रेम की पीर जो विरह-वर्णन का मुख्य अंग है यूसुफ-.जुलेखा और मधुमालती में भी पाई जाती है। इस से इस सग्रह में उनकी सार्थकता है।

मलिक मुहम्मद जायसी

जीवन-वृत्त

निवास-स्थान

हिंदी और संस्कृत के अधिकांश प्राचीन कवियों की भाँति जायसी की भी जन्म-मरण तिथि, जन्मस्थान तथा माता-पिता आदि के सबंध में प्रामाणिक रूप से कुछ ज्ञात नहीं है। इतना तो इनके उपनाम 'जायस' से ही प्रकट है कि ये अवध प्रांत के अंतर्गत 'जायस' नामक स्थान के रहने-वाले थे। प्रकृत मातृभूमि या जन्मस्थान चाहे जायस न रहा हो पर इनके क्रिया-कलाप का केन्द्र यही रहा होगा। पद्मावत मे आई हुई इस पंक्ति से भी यही धारणा पुष्ट होती है—

जायस नगर धरम अस्थानू। तहा आइ कवि कीन्ह बखानू॥

इस पंक्ति से यह स्पष्ट है कि कहीं से आकर ('तहां आइ') यह जायस में बस गये थे;[1] कहाँ से आकर इसका कुछ पता नहीं। कुछ लोग गाजीपुर से आया बतलाते हैं लेकिन यह बात बहुत संदिग्ध मानी गई है। 'आखिरी कलाम' में भी ऐसा ही लिखा है, देखिए—

जायस नगर मोर अस्थानू। नगर नावँ आदि उद्यानू॥

जायस नगर का प्राचीन नाम 'उद्यान' था। इसका सबंध उद्दालक ऋषि से बताया जाता है। संभव है कि नगर की शोभा के कारण भी उसका नाम 'उद्यान' पड़ा हो और फिर उसका ही अनुवाद जायस शुद्ध रूप 'जैश' (पड़ाव) अथवा 'जाए ऐश' (ऐश-आराम की जगह) रख दिया गया हो। मूल में इस नगर का संबध उद्दालक ऋषि से रहा हो फिर इसे 'उद्यान' कहने लगे हों। फिर 'उद्यान' शब्द बगीचे के अर्थ में लिया जाने लगा हो। —

---

[1]ऐसी ही बात 'आखिरी कलाम' में भी कही गई है :—

तहां दिवस दस पहुने आएउं। भा बैराग बहुत सुख पाएउं॥

व्यक्तित्व

इनकी उत्पत्ति के संबंध में यह किंवदंती बहुत दिनों से चली आ रही है कि इनका जन्म गाजीपुर जिले के एक बड़े दरिद्र परिवार में हुआ था। सात वर्ष की अवस्था में इन्हे चेचक की बीमारी हुई, जिसमें इनके प्राण तो बच गये पर इनकी एक आँख जाती रही। कहते हैं इस बीमारी से जायसी की रक्षा करने के लिए इनकी माता ने मकनपुर के पीर मदार शाह की मनौती मानी थी और उन्हीं की दुआ से इनकी जान बची। पर मनौती पूरी करने के पहले ही इनकी माता का स्वर्गवास हो गया और इनके पिता तो पहले ही मर चुके थे। कवि के एकाक्षी होने का प्रमाण पद्मावत की इस पंक्ति से मिलता है—

एक नयन कवि महमद गुनी।

एक दोहे में इस बात का भी उल्लेख मिलता है कि बीमारी में इनकी बाईं आँख तो फूटी थी ही, साथ ही बायां कान भी बहरा हो गया था। वह दोहांश नीचे दिया जाता है—

मुहम्मद बाईं दिसि तजा एक सरवन एक आँखि।

इन किंवदंतियों तथा अन्य ऐतिहासिक वृत्तांतों से यह स्पष्ट हो जाता है कि शीतला देवी ने इनके शरीर और स्वरूप के साथ मनमाना अत्याचार किया था। इनके अत्यंत कुरूप होने का प्रमाण इस कथा से मिलता है। एक बार अवध का कोई राजा जो इन्हे पहचानता नहीं था, इनके कुरूप चेहरे को देखकर हँसा। इस पर जायसी ने इनसे केवल इतना ही कहा "मोंहि का हँसेसि कि कोहरहिं" अर्थात् तू मुझ पर हँसा कि उस कुम्हार (निर्माता, ईश्वर) पर? कहते है कि इस पर वह बड़ा लज्जित हुआ; बाद में इनका परिचय जानने पर बहुत तरह से इनसे क्षमा माँगी।

इनके जीवन-काल का कुछ अनुमान पद्मावत के रचनाकाल से लगता है जो कि इन्होंने उक्त ग्रंथ में दे दिया है—

सन् नव सै सैतालिस अहा। कथा आरंभ बैन कवि कहा॥

रचना-काल

इस ग्रंथ का आरम्भ सन् ९४७[1] हिजरी अथवा तदनुसार संवत् १५९७ में हुआ था। यह शेरशाह का राजत्वकाल था और ग्रंथारंभ में कवि ने इसकी प्रशंसा में भी बहुत से पद्य लिखे हैं। बस इसी से जायसी के आविर्भाव और कविताकाल का स्थूल अनुमान किया जा सकता है।

आचार्य शुक्लजी ने 'आखिरी कलाम' के आधार पर

भा औतार मोर नौ सदी। तीस बरखि ऊपर कवि बदी॥

उनका जन्म ९०० हिजरी के लगभग (अर्थात् संवत् १५५० के लगभग) माना है। नौ सदी का अर्थ जायसी नौ से ही लगाते होंगे। ३०वर्ष की अवस्था में उन्होंने कविता करना आरंभ किया होगा। नौ सौ छत्तीस मे उन्होंने 'आखिरी कलाम' लिखा।

नौ से बरस छत्तीस जो भए। तब ये कविता आखर बए॥

उनके जन्म के बाद कुछ प्राकृतिक उत्पात (भूकंप आदि) भी हुए जिनका उल्लेख जायसी ने 'आखिरी कलाम' में किया है—'भा भूकंप जगत् अकुलाना'। उसी के आस पास सूर्यग्रहण भी पड़ा था।

गा अलोप होइ भा अँधियारा। दीखहि दिनहि सरग मां तारा॥

गुरु-परम्परा

जायसी के गुरु शेख मोहिदी (मुहीउद्दीन) थे। इनकी गुरुपरम्परा का वर्णन जायसी की 'पद्मावत' और 'अखरावट' दोनों में मिलता है। यह परम्परा निजामुद्दीन औलिया से आरंभ होती है। इसकी प्रतिलिपि नीचे दी जाती है—

---

[1]कुछ लोगों ने इसको ६२७ माना है। फ़ारसी अक्षरों में लिखा हुआ नौ सौ सैंतालिस, नौ सौ सत्ताइस भी पढ़ा जा सकता है किंतु नौ सौ सत्ताइस में शेरशाह का शासन काल न था। जो लोग 'पद्मावत' का रचनाकाल ६२७ मानते हैं उनका कहना है कि कथा ६२७ में ही आरंभ की। उसकी भूमिका पुस्तक समाप्त होने पर शेरशाह के समय में लिखी। डाक्टर माताप्रसाद गुप्त ने नौ सौ सैंतालीस ही पाठ दिया है।

निज़ामुद्दीन औलिया (मृत्यु सन् १३२५ ई०)
|
सिराजुद्दीन
|
शेख़ अलाउल हक़
|
- शेख़ क़ुतुब आलम (पंडोई के, सन् १४१५ ई०)
  |
  शेख़ हुशामुद्दीन (मानिकपुर के)
  |
  सैयद राजी हामिद शाह
  |
  शेख़ दानियाल (मृत्यु १४८६ ई०)
  |
  सैयद मुहम्मद
  |
  शेख़ अलहदाद
  |
  शेख़ बुरहान (कालपी के, मृत्यु सन् १५६२ ई०)
  |
  शेख़ मोहिदी (मुहीउद्दीन)
  |
  मलिक मुहम्मद (जायसी)
- सैयद अशरफ़ जहाँगीर
  |
  शेख़ हाजी
  - शेख़ मुबारक
  - शेख़ क़माल

उपर्युक्त परंपरा जायसी के अनुयायी मुसलमानों में अब तक प्रचलित है। 'पद्मावत' में दी हुई वंशावली इससे कुछ भिन्न है। 'अखरावट' में इन्होंने अपनी गुरु-परंपरा का इस प्रकार वर्णन किया है—

पाएउ गुरु मोहदी मीठा। मिला पंथ सो दरसन दीठा॥
नाँव पियार सेख बुरहानू। नगर कालपी हुत गुरु थानू॥

आलोचना

'पद्मावत' की कथा

अब यहां पर पद्मावत की कथा भी सक्षेप से दे देना आवश्यक है। सिहल द्वीप के राजा गंधर्वसेन की पुत्री पद्मावती रूप-गुण में अद्वितीय थी, यहाँ तक कि उसके योग्य वर कहीं नहीं मिलता था। उसके पास हीरामन नाम का एक तोता था जो कि बड़ा विद्वान् और वाक्पटु था। पद्मावती के वर न मिलने के संबंध में वह एक दिन अपने विचार प्रकट कर रहा था पर सयोग से राजा ने उसके विचारों को सुन लिया जिससे उसे बड़ा क्रोध आया और उसने तोते को अपने यहाँ से निकलवा दिया। इधर-उधर कुछ दिनों तक भटकने के बाद हीरामन रतनसेन के यहाँ पहुँचा और उसने उसे अपने यहाँ रख भी लिया। एक दिन जब राजा कहीं शिकार खेलने गया तब उसकी रानी नागमती ने हीरामन से पूछना आरंभ किया 'हे हीरामन तू तो दुनिया में बहुत घूमा-फिरा है, बता तो तूने कही मेरे समान कोई और भी सुदरी देखी है?' हीरामन ने सिंहलद्वीप की राजकुमारी पद्मावती की चर्चा करते हुए कहा कि 'उसमें और तुममे दिन और अँधेरी रात का अतर है।' यह सुनकर रानी ने बड़े क्रोध में आकर उसे मरवा डालने की आज्ञा दे दी। पर चेरियों ने राजा के भय से उसे मारा नहीं, केवल एक जगह छिपाकर रख दिया। शिकार से लौटने पर अपने प्यारे तोते को न पाकर रतनसेन का मिज़ाज बहुत बिगड़ा, यहाँ तक कि अंत में उसके गुस्से से डर कर बाँदियों ने हीरामन को उसके सामने लाकर रख दिया। पूछने पर उसने सब वृत्तात कह सुनाया और प्रसंगवश पद्मावती के सौंदर्य का भी वर्णन किया। राजा के हृदय पर तोते के द्वारा सुनी हुई सुदरता का ही इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि वह मूर्छित होकर गिर ही पड़ा और होश में आने पर योगी-वेश में सिंहलगढ़ की ओर चल पड़ा। उसके साथी सोलह हजार राजकुमार भी योगी का बाना धारण कर उसके साथ हो लिये। इन योगियों की पलटन का नेता और मार्ग-प्रदर्शक वही हीरामन तोता था।

अंत में अनेक विघ्न-बाधाएं झेलते हुए दुर्गम समुद्र पार कर यह विचित्र दल सिंहलद्वीप पहुँचा और रतनसेन ने एक मंदिर में, जहां कभी पद्मावती पूजन करने आया करती थी, पड़ाव डाला और वहीं पद्मावती की मानसिक पूजा में लीन हो गया। कुछ समय के उपरांत श्री पंचमी के पर्व के दिन पद्मावती वहां पूजन के निमित्त आई पर रतनसेन ऐन मौके पर चूक गया। वह उसे देखते ही मूर्छित हो गया। तोते ने महल में जाकर उसकी करुण कहानी पद्मावती को कह सुनाई। पद्मावती ने कहला भेजा कि वक्त पर तो तुम चूक गये अब इस दुर्गम सिंहलद्वीप तक चढ़ो तभी मुझे देख सकते हो। राजा अपने सभी जोगियों सहित किले में घुसा पर गढ़ में पहुँचते पहुँचते सबेरा हो गया और वह वहीं पकड़ा गया। राजा के सामने उसका विचार हुआ और उसे सूली पर चढ़ाने की आज्ञा दी गई। पर यह हाल देखकर उसके साथी योगियों ने गढ़ घेर लिया और उनकी सहायता के लिए शिव, हनुमान आदि सारे देवता भी उनके दल में मिल गये। फल यह हुआ कि गंधर्वसेन की सारी सेना हार गई। उसने जोगियों के बीच जब साक्षात् शिव को लड़ते हुए देखा तो वह दौड़कर उनके पैरों पर गिर पड़ा और बोला, 'महाराज पद्मावती आपकी है जिसे चाहिए उसे दीजिए।' अब रतनसेन के मार्ग में कोई रुकावट न थी। उसका विवाह पद्मावती से हो गया और वह उसे लेकर चित्तौर गढ़ लौट भी आया।

रतनसेन के दरबार में राघवचेतन नामक एक पंडित रहता था। वह बड़ा तांत्रिक था और उसे यक्षिणी सिद्ध थी। उसने अपनी माया से दरबार के अन्य पंडितों को बड़ा नीचा दिखाया। राजा को इस पर बड़ा क्रोध आया और उसने उसे देश-निकाले का दण्ड दे दिया। राघव इस अपमान का बदला लेने की नीयत से दिल्ली के तत्कालीन बादशाह अलाउद्दीन के पास पहुँचा और उससे पद्मावती के रूप की बड़ी प्रशंसा की। अलाउद्दीन ने उसे प्राप्त करने के अनेक उपाय किये, रतनसेन से कई बार युद्ध हुआ पर प्रत्येक बार उसे नीचा देखना पड़ा। अंत में

संधि हुई और धोखे से उसने रतनसेन को पकड़ लिया और कहवा दिया कि जब पद्मावती मेरे पास आएगी तभी रतनसेन छूट सकेंगे। इस पर रानी ने कहलवा दिया कि मैं सात सौ बाँदियों के साथ तुम्हारे पास आ रही हूँ और एक बार राजा से अंतिम साक्षात कर उन्हें चित्तौर रवाना कर तुमसे आ मिलूँगी। इसमें सुलतान ने कोई आपत्ति नहीं की। पर इन सात सौ पालकियों के अंदर और उनके ढोने वाले कहार सब वीर राजपूत योद्धा थे। उन्होंने सुलतान के ख़ेमों में पहुँच कर इधर तो रतनसेन को छुड़ा कर एक घोडे पर बैठा कर वीर बादल के साथ चित्तौर रवाना कर दिया गया और उधर गोरा इन राजपूत वीरों के साथ यवनों को रोके रहा। चित्तौर पहुँचने पर पद्मावती ने कुंभलनेर के राजा देवपाल द्वारा अपने पास दूती भेजी जाने की बात कही। इस पर राजा ने कुंभलनेर जा घेरा और दोनों एक दूसरे से लड़ते हुये वीर गति को प्राप्त हुए। इधर जब नागमती और पद्मावती के पास यह समाचार पहुँचा तो दोनों सहर्ष अपने पति के शव के साथ सती हो गईं। बाद में जब अलाउद्दीन गढ में पहुँचा तो उसे जलती हुई चिताओं को छोड़ कर और कुछ नहीं दिखाई पडा।

इस कहानी का पूर्वार्द्ध तो प्रायः पूरा कल्पित है किन्तु उसका भी बहुत अंश प्रचलित लोक कथाओं पर अवलम्बित है। उत्तरार्द्ध ऐतिहासिक घटनाओं के आधार पर है। इसके नायक-नायिका दोनों ही इतिहास प्रसिद्ध पात्र हैं और जायसी यद्यपि मुख्य-मुख्य स्थलों पर ऐतिहासिक आधार का अनुसरण करते हुये चले हैं तथापि अपनी अपूर्व कल्पना और अनुभूति के सहारे से वे पूरी कथा को एक ऐसा रूप देने में सफल हुये हैं जो जनता के हृदय में परंपरा से अवस्थित था और यही कारण है कि यह कथा इतनी लोकप्रिय हुई।

कथा में कल्पना और इतिहास का सम्मिश्रण

जायसी की भाषा ठेठ अवधी है। अवधी में इतनी बड़ी और व्यापक प्रबध-रचना सबसे पहले इन्हीं की मिलती है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरित मानस की

भाषा

रचना के समय इनकी पद्मावती को बहुत सी बातों में आदर्श बनाया होगा। कम से कम 'मानस' का बाह्य रूप और विशेषतः उसकी भाषा तो पद्मावती से बहुत कुछ मिलती-जुलती है, अंतर केवल इतना ही है कि 'मानस' मे हम अवधी का परिमार्जित, सुसंस्कृत और सर्वथा साहित्यिक रूप देखते हैं पर 'पद्मावत' में यह अपने ठेठ रूप मे है और प्रायः ग्रामीणता लिये हुये है। जायसी उतने काव्यकला-कुशल तो थे नहीं पर साथ ही यह भी मानना पड़ेगा कि जिस भाषा का प्रयोग उन्होंने किया है उस पर उन्हे पूरा अधिकार था। तुलसी की भाषा जो इतनी सुसज्जित या साहित्यिक कही जाती है उसका कारण है उनका संस्कृत का गंभीर पांडित्य। मानस की चौपाइयों का माधुर्य, उनका ओज तथा उनकी साहित्यिकता बहुत कुछ उनमे प्रयुक्त संस्कृत की कोमल-कान्त पदावली पर निर्भर करती है। जायसी में यह कमी है, या यों कहिए कि यही उनकी ख़ूबी है। अवधी का स्वाभाविक माधुर्य जायसी की ही भाषा में प्रस्फुटित हो पाया है। यह कहना कठिन है कि तुलसी ने अपने चुने हुये संस्कृत के तत्सम शब्दों या वाक्यांशों के आभूषण भार से उस की शोभा को सचमुच और प्रदीप्त करके दिखाया है या उस की नैसर्गिक शोभा को ढाँक दिया है।

रस और अलंकार

यों तो जायसी ने अपने काव्य में प्रायः सभी रसों का समावेश किया है पर उनकी स्वाभाविक रुचि विप्रलंभ-शृंगार की ओर जान पड़ती है। संभोग-शृङ्गार, वीर और करुणा मे भी इन्हें अच्छी सफलता मिली है। यद्यपि जायसी का रस-वर्णन भारतीय कवि परंपरा-प्रणाली के अनुसार ही हुआ है, तथापि कुछ बातों मे इनका ढङ्ग सबसे निराला है। उर्दू कवियों के वियोग-वर्णन में प्रायः जो एक प्रकार की वीभत्सता पाई जाती है उसकी प्रचुरता पद्मावत में भी है, और शृंगार के संभोग पक्ष के संबंध में यह भी कहा जा सकता है कि वह बहुत परिष्कृत अथवा कोमल नहीं है। उसमें मिठास या प्रेमनिर्भरता की मात्रा इतनी अधिक हो गई है कि कुछ लोगों को उसमें ग्रामीणता या अश्लीलता की बू भी मिल सकती

है। वीर-रस का वर्णन इनका सर्वत्र शृङ्गार की आड़ लिये हुए है और उसी के आधार पर स्थित जान पड़ता है। वीर के साथ ही उचित अवसरों पर रौद्र, भयानक और वीभत्स भी अपनी-अपनी छटा दिखाते हैं। 'राजा-बादशाह युद्ध खड' मे वीर, और 'लक्ष्मी-समुद्र खंड' मे भयानक रस का बड़ा सुंदर समावेश हुआ है। परतु एक बार फिर कहना पड़ेगा कि ये सभी ग्रथ के स्थायी रस शृङ्गार के आधार पर स्थित हैं। ग्रथ के स्थायी रस पर विचार करते समय एक बात और स्मरण रखनी पड़ेगी। यह सारा ग्रथ एक प्रकार से अन्योक्ति के रूप मे है। कवि ने अंत मे स्पष्ट कर दिया है कि इसमें वर्णित नायक-नायिका के प्रेम को साधारण लौकिक प्रेम न समझकर साधक का ईश्वरोन्मुख प्रेम समझना चाहिए। इस दृष्टि से ग्रथ का स्थायी रस शात मानना पड़ेगा।

'पद्मावत' को अन्योक्ति कहने मे कथा भाग गौण हो जाता है। अन्योक्ति मे व्यंग्यार्थ को महत्ता दी जाती है। 'माली आवत देखि के कलियन करी पुकार' मे अथवा 'बाज पराये पान पर तू पच्छीनु न मार' में माली और कली का इतना महत्त्व नहीं है जितना कि उनसे व्यञ्जित होनेवाले अर्थ का, अर्थात् जीव और मृत्यु का अथवा मुसलमानों के आश्रित होकर हिंदुओं को सताने की बात का। 'पद्मावत' में कथा का भी इतना ही महत्त्व है जितना कि उससे व्यञ्जित होनेवाले आध्यात्मिक अर्थ का। इसीलिए आचार्य शुक्ल जी ने उसे समासोक्ति कहा है। समासोक्ति में प्रस्तुत और अप्रस्तुत दोनों को समान रूप से महत्ता मिलती है।

अन्योक्ति का कही तो बड़ा सुदर निर्वाह हुआ है और कहीं-कहीं इस निर्वाह मे कथा की वस्तु-स्थिति के साथ अन्याय हो जाता है। कथा के सब भागों में यह अन्योक्ति बैठती भी नहीं है किंतु जहाँ बैठती है वहां बहुत ठीक बैठती है।

अलंकारों के संबध मे भी जायसी ने अधिकतर कवि-कुलागत पद्धति का ही अनुसरण किया है। इनके अलंकारों मे सादृश्यमूलक अलंकारों का ही एक प्रकार से साम्राज्य है। यद्यपि अलंकारों के प्रयोग मे इन्होंने अधिकतर

भारतीय काव्य-पद्धति को ही आदर्श माना है तथा स्थान-स्थान पर फ़ारसी कवित्व की भी झलक स्पष्ट है, विशेषकर करुण रस और विरह वर्णन के अवसरों पर। अलङ्कारों का समावेश दो उद्देश्यों से होता है। प्रस्तुत विषय को स्पष्ट करने और भाव को प्रदीप्त करने के लिए। और भी उद्देश्य हो सकते हैं पर मुख्य यही दोनों होते हैं। इसके साथ ही भावुक कवि अलङ्कारों के प्रयोग के समय इस बात का बड़ा ध्यान रखता है कि कहीं उसके द्वारा प्रयुक्त अलंकार से रस के परिपाक में बाधा न पड़े। प्रायः लोग वर्णन को स्पष्ट करने के लिए ऐसी उपमा या उत्प्रेक्षा आदि रख देते है जिससे एक प्रकार से वर्णन तो स्पष्ट हो जाता है पर साथ ही रग मे भंग भी हो जाता है। जायसी भी स्थान स्थान पर इस दोष के भागी हुए हैं। विरह-वर्णन के समय शृंगार को वीभत्स के आधारभूत करना इनके लिये साधारण बात है। नख-सिख वर्णन के समय इनकी उपमा और उत्प्रेक्षाएं, विशेषतः हेतूत्प्रेक्षाएं, भिन्न-भिन्न वर्णनीय अंगों की विशेषताओं का तो बहुत स्पष्ट परिचय देती हैं पर साथ ही हँसी भी आती है। शृंगार रस के लिए अलङ्कार भी वैसे ही होने चाहिए जिनसे सौंदर्य भावना में व्याघात न पड़े। पर जायसी की उड़ान तो कहीं-कहीं उपहासास्पद सी जान पड़ने लगती है। अलङ्कार द्वारा भाव की स्पष्टता और दीप्ति के अतिरिक्त चमत्कार प्रदर्शन की प्रवृत्ति भी जायसी में कम नहीं। जायसी में मुद्रा अलङ्कार के अच्छे उदाहरण मिलते हैं। मुद्रा अलङ्कार वहां होता है जहां किसी चीज के वर्णन में उस वस्तु के संबंध से बाहर के नाम बन जायं। नीचे के उदाहरण चिड़ियों के नाम बन जाते हैं :—

जाहि का होइ पिउकंठ लवा। करै मेराव सोइ गौरवा॥

जाकर जो सँदेसा ले आवे जिससे प्रियतम कंठ लगें। जो मिलाप कराये वही गौरवास्पद है।

कदम सेवती चप चमेली।

इस चरणों की सेवा के वर्णन में कदंब और सेवती फूलों के नाम आ गये हैं।

प्रत्यनीक का एक उदाहरण लीजिए। प्रत्यनीक अलङ्कार वहां होता है जहां बलवान से तो बस न चले परंतु उसकी जाति के लोगों से या उसके साथियों से बदला लिया जाय। बर को पतली कमर के कारण नायिका से हार माननी पड़ती है। नायिका से तो बस नहीं चलता है वह और मनुष्यों को काटती फिरती है :—

बसा लङ्क बरनै जग झीनी। तेहि ते अधिक लङ्क वह खीनी ॥
परिहस पियर भए तेहि बसा। लिये डङ्क लोगन्ह कहं डसा ॥

परिकरांकुर का एक उदाहरण लीजिए। परिकरांकुर अलङ्कार वहां होता है जहां विशेष्य सार्थक होते हैं।

रतन चला भा घर अँधियारा।

यहां पर रतन शब्द सार्थक है क्योंकि रतन से प्रकाश होता है रतनसेन के जाने से घर में अँधियारा होगया।

प्रबंध-कौशल

'पद्मावत' एक वृहत् प्रबध-काव्य है। इसमें कवि को थोड़े से ऐतिहासिक आधार पर एक बहुत बड़ी इमारत खड़ी करनी पड़ी है। किसी भी इमारत का सर्वांग-सुदर बनना असंभव है और फिर जायसी के सामने ऐसे आदमी भी नहीं थे जिनसे वे कोई विशेष लाभ उठा सकते। 'मधुमालती', 'मुग्धावती', 'मृगावती', तथा 'प्रेमावती' आदि कुछ प्रेमगाथाओं का उल्लेख 'पद्मावत' मे मिलता है और इससे यह स्पष्ट है कि जायसी के पहले कुछ कवि इस प्रकार की प्रेमगाथा-काव्यों की रचना कर चुके थे पर इससे यह निष्कर्ष निकालना कि इन्हीं को आदर्श मान कर जायसी ने अपने ग्रंथ की रचना की होगी, भूल है। पहले तो उक्तगाथाओं में से 'मुग्धावती' और 'प्रेमावती' का अभी तक पता ही नहीं लगा। 'मधुमालती' और 'मृगावती' की खंडित प्रतिया नागरी प्रचारिणी सभा को देखने में मिली है। इनका जो भाग देखने में आया है उनसे यह किसी प्रकार सिद्ध नहीं होता कि जायसी ने अपनी प्रबन्ध-कल्पना में इनको आदर्श बनाया होगा। सारांश यह कि इतने विस्तृत और व्यापक रूप से एक प्रबंधकाव्य की रचना में जायसी का प्रयास बहुत

कुछ मौलिक था। अब यहां पर देखना यह है कि इनको इस काम मे कहां तक सफलता मिली है। किसी भी प्रबंध काव्य की सफलता की विवेचना के पहले यह देखना चाहिए कि कवि का दृष्टिकोण क्या रहा है। क्या अपनी कथा के परिणाम द्वारा कवि किसी विशेष आदर्श को स्थापित करना चाहता है अथवा उसका उद्देश्य कथा के रूप में कोई सुंदर वस्तु पाठकों के सामने उपस्थित करना है। यह तो हम तुरंत कह सकते हैं कि इस रचना मे किसी आदर्श विशेष को सामने रखकर उसे स्थापित करने के उद्देश्य से पात्रों के स्वाभाविक विकास अथवा घटनाओं के नैसर्गिक प्रवाह को किसी ख़ास दिशा की ओर नहीं मोड़ा गया है, फिर जायसी और भारतीय काव्य-परम्परा के प्राचीन आदर्श—'अंत भले का भला और बुरे का बुरा',—के भी कायल नहीं थे। इसके प्रमाण में इतना ही कहना यथेष्ट होगा कि इस कथा का अंत बड़ा करुण और अत्यंत दुखांत है, सब आपत्तियों के टलने के बाद नायक नायिका आदि सभी मुख्य पात्र मृत्यु-मुख में पतित होते हैं और सारे फ़साद की जड़ उस राघवचेतन, या अलाउद्दीन ही का, कोई परिणाम-दुखद या सुखद दिखलाना कवि ने आवश्यक नहीं समझा। कथा के इतने करुण अंत को कवि ने उपसंहार में एक विचित्र रूप से शांत रस में परिणत कर दिया है। पर्यवसान के समय कवि इस चातुरी से अपना दृष्टिकोण दार्शनिक बना लेता है जिससे यह स्पष्ट भासित होने लगता है कि मनुष्य के वास्तविक जीवन का वास्तविक अंत दुःखमय नहीं बल्कि सांसारिक माया-मोह से उदासीन और पूर्ण रूप से शांत होना चाहिए। इस धारणा का कारण यही है कि जहां कवि ने कथा के बीच-बीच मे नागमती और पद्मावती को प्रिय-वियोग में अत्यंत खिन्न और विषाद-पूर्ण दिखलाया है वहां प्रिय के निधन के अवसर पर भी विषादपूर्ण करुण क्रंदन अपेक्षित था। पर ऐसा नहीं हुआ। हम देखते हैं कि रतनसेन के मरने पर दोनों महिषियां विलाप में रत न हो शोक से उदासीन होकर एक शांतिमय आनंद के साथ मृतपति के साथ सती हो जाती हैं। यही हाल वीरगति को प्राप्त अन्य पुरुषों की स्त्रियों का भी दिख-

लाया गया है। सब कुछ शेष हो जाने पर अलाउद्दीन जब बड़ी-बड़ी उम्मीदें बाँधता हुआ गढ़ में घुसा तो इसके सामने एक ऐसा दृश्य आया जिसकी उसे स्वप्न में भी आशा न थी। वह दृश्य इस लोक का नहीं था। उसके हृदय पर भी इस दृश्य का गहरा प्रभाव पड़े बिना नहीं रह सका। सतियों की चिताओं की एक मुट्ठी भस्म उसने उठाई और दुनिया को इसी (भस्म) की भाँति झूठी समझा—

छार उठाइ लीन्ह एक मूठी। दीन्ह उठाइ पिरिथिवी झूँठी ॥

पद्मावत

सिंहलद्वीप-वर्णन खंड

सिंघल दीप कथा अब गावौं। औ सो पदुमिनि बरनि सुनावौं।
बरनक दरपन भाँति बिसेखा। जेहिं जस रूप सो तैसेइ देखा।
धनि सो दीप जहँ दीपक नारी। औ सो पदुमिनि दइऔँ अवतारी।
सात दीप बरनहिं सब लोगू। एकौ दीप न ओहि सरि जोगू।
दिया दीप नहिं तस उजियारा। सराँ दीप सरि होइ न पारा।
जंबू दीप कहौं तस नाहीं। पूज न लंक दीप परिछाहीं।
दीप कुसस्थल आरन परा। दीप महुस्थल मानुस हरा।

सब ससार परथमैं आए सातौ दीप।
एकौ दीप न उत्तिम सिंघल दीप समीप॥

गंध्रपसेन सुगध नरेसू। सो राजा यह ताकर देसू।
लंका सुना जो रावन राजू। तेहु चाहि बड़ ताकर साजू।
छप्पन कोटि कटक दर साजा। सबै छत्रपति औरँगन्ह राजा।
सोरह सहस घोर घोरसारा। सावँकरन बालका तुखारा।
सात सहस हस्ती सिंघली। जिमि कबिलास एरापति बली।
असुपति क सिरमौर कहावा। गजपती क आँकुस गज नावा।
नरपति क कहाव नरिंदू। भुअपती क जग दोसर इंदू।

अइस चक्कवै राजा चहूँ खंड भै होइ।
सबै आइ सिर नावहिं सरबरि करै न कोइ॥

जबहि दीप निअरावा जाई। जनु कबिलास निअर भा आई।
घन अँबराउँ लाग चहुँ पासा। उठै पुहुमि हुति लाग अकासा।
तरिवर सबै मलैगिरि लाए। भै जग छाँह रैनि होइ छाए।
मलै समीर सोहाई छाहाँ। जेठ जाड़ लागै तेहि माहाँ।
ओही छाँह रैनि होइ आवै। हरिअर सबै अकास दिखावै॥
पंथिक जौं पहुँचै सहि घामू। दुख बिसरै सुख होइ बिसरामू॥

जिन्ह वह पाई छाँह अनूपा। बहुरि न आइ सही यह धूपा।
अस अगराउँ सघन घन बरनि न पारौं अंत।
फूलै फरै छहूँ रितु जानहु सदा बसंत॥
फरे आँब अति सघन सोहाए। औ जस फरे अधिक सिर नाए।
कटहर डार पीड सो पाके। बडहर सोउ अनूप अति ताके।
खिरनी पाकि खाँड असि मीठी। जाबु जो पाकि भँवर असि डीठी।
नरिअर फरे फरी खुरहुरी। फुरी जानु इद्रासन पुरी।
पुनि महु चुवै सो अधिक मिठासू। मधु जस मीठ पुहुप जस बासू।
और खजहजा आव न नाऊँ। देखा सब रावन अँबराऊँ।
लाग सबै जस अम्रित साखा। रहै लोभाइ सोइ जोइ चाखा।
गुआ सुपारी जायफर सब फर फरे अपूरि।
आस पास घनि इँबिली औ घन तार खजूरि॥
बसहि पंखि बोलहिं बहु भाषा। करहि हुलास देखि कै साखा।
भोर होत बासहिं चुहचुही। बोलहि पाँडुक एकै तुही।
सारौ सुवा सो रहचह करही। गिरहि परेवा औ करबरही।
पिउ पिउ लागै करै पपीहा। तुही तुही कह गुडुरू खीहा।
कुहू कुहू कोइल करि राखा। औ भिगराज बोल बहु भाषा।
दहो दही कै महरि पुकारा। हारिल बिनवै आपनि हारा।
कुहकहि मोर सोहावन लागा। होइ कोराहर बोलहि कागा।
जावँत पंखि कहे सब बैठे भरि अँबराउँ।
आपनि आपनि भाषा लेहि दइअ कर नाउँ॥
पैग पैग पर कुआँ बावरी। साजी बैठक औ पाँवरी।
औरु कुंड बहु ठाँवहि ठाँऊ। सब तीरथ औ तिन्ह के नाऊँ॥
मढ़ मडप चहुँ पास सँवारे। जपा तपा सब आसन मारे।
कोइ रिखेस्वर कोइ सन्यासी। कोई रामजन कोइ मसवासी।
कोई ब्रह्मचर्ज पँथ लागे। कोई दिगबर आछहि नाँगे।
कोइ सरसुती सिद्ध कोइ जोगी। कोइ निरास पँथ बैठ वियोगी।
कोइ महेसुर जंगम जती। कोइ एक परखै देबी सती।

सेवरा खेवरा बानपरस्ती सिद्ध साधक अवधूत।
आसन मारि बैठ सब जारि आतमा भूत॥

मानसरोदक देखिअ काहा। भरा समुँद अस अति अवगाहा।
पानि मोति अस निरमर तासू। अंब्रित बानि कपूर सुबासू।
लंक दीप कै सिला अनाई। बाँधा सरवर घाट बनाई।
खँडखँड सीढ़ी भईं गरेरी। उतरहि चढ़हि लोग चहुँ फेरी।
फूला कँवल रहा होइ राता। सहस सहस पखुरिन्ह कर छाता।
उलथहिं सीप मोंति उतिराहीं। चुगहिं हंस औ केलि कराहीं।
कनक पंखि पैरहि अति लोने। जानहु चित्र सँवारे सोने।

ऊपर पाल चहूँ दिसि अंब्रित फर सब रूख।
देखि रूप सरवर कर गइ पिआस औ भूख॥

पानि भरइ आवहि पनिहारी। रूप सुरूप पदुमिनी नारी।
पदुम गंध तेन्ह अंग बसाहीं। भँवर लागि तेन्ह संग फिराहीं।
लंक सिंघिनी सारँग नैनी। हंसगामिनी कोकिल बैनी।
आवहिं झुंड सो पाँतिहि पाँती। गवन सोहाइ सो भाँतिहि भाँती।
केस मेघावरि सिर ता पाईं। चमकहिं दसन बीज की नाईं।
कनक कलस मुख चंद दिपाहीं। रहस कोड सों आवहिं जाहीं।
जासौं वै हेरहिं चख नारीं। बाँक नैन जनु हनहिं कटारी।

मानहु मैन मुरति सब अछरी बरन अनूप।
जेन्हिकी ये पनिहारी सो रानी केहि रूप॥

ताल तलावरि बरनि न जाहीं। सूझइ वारपार तेन्ह नाहीं।
फूले कुमुद केत उजिआरे। जानहुँ उए गगन महँ तारे।
उतरहि मेघ चढहिं लै पानी। चमकहिं मंछ बीजु की बानी।
पैरहि पंखि सो संगहि संगा। सेत पीत राते बहु रंगा।
चकई चकवा केलि कराहीं। निसि बिछुरहि औ दिनहि मिलाहीं।
कुरलहि सारस भरे हुलासा। जिअन हमार मुअहिं एक पासा।
केंवा सोन ढेक बग लेदी। रहे अपूरि मीन जल भेदी।

सिंहलद्वीप-वर्णन खंड

नग अमोल तेन्ह तालन्ह दिनहि बरहि जनु दीप ।
जो मरजिआ होइ तहँ सो पावइ वह सीप ॥

पुनि जो लाग बहु अंब्रित बारी । फरी अनूप होइ रखवारी ।
नवरँग नीबू सुरँग जँभीरा । औ बादाम बेद अंजीरा ।
गलगल तुरँज सदाफर फरे । नारँग अति राते रस भरे ।
किसमिस सेब फरे नौ पाता । दारिवँ दाख देखि मन राता ।
लागि सोहाई हरपारेउरी । ओनइ रही केरन्ह की घउरी ।
फरे तूत कमरख औ निउँजी । राय करौदा बैरि चिरउँजी ।
संखदराउ छोहारा डींठे । औरु खजहजा खाटे मीठे ।

पानी देहि खँडवानी कुअँहि खाँड बहु मेलि ।
लागी घरी रहट की सींचहि अंब्रित बेलि ॥

पुनि फुलवारी लागि चहुँ पासा । बिरिख बेधि चदन भै बासा ।
बहुत फूल फूली घन बेली । केवरा चंपा कुंद चँबेली ।
सुरँग गुलाल कदम औ कूजा । सुगँध बकौरी गंध्रप पूजा ।
नागेसरि सद बरग नेवारी । औ सिंगारहार फुलवारी ।
सोन जरद फूली सेवती । रूप मजरी औ मालती ।
जाही जूही बकचुन लावा । पुहुप सुदरसन लाग सोहावा ।
बोलसिरी बेइलि औ करना । सबहि फूल फूले बहु बरना ।

तेन्ह सिर फूल चढ़हि वै जेन्ह माथें मनि भागु ।
आछहि सदा सुगध भे जनु बसंत औ फागु ॥

सिघल नगर देखु पुनि बसा । धनि राजा असि जाकरि दसा ।
ऊँची पँवरी ऊँच अवासा । जनु कबिलास इद्र कर बासा ।
राऊ राँक सब घर घर सुखी । जो देखिअ सो हँसता मुखी ।
रचि रचि राखे चदन चौरा । पोते अगर मेद औ केवरा ।
सब चौपारिन्ह चदन खँभा । ओठँघि सभापति बैठे सभा ।
जनहुँ सभा देवतन्ह कै जुरी । परी द्रिस्टि इद्रासन पुरी ।
सबै गुनी पंडित औ ग्याता । संसकिरत सब के मुख बाता ।

औहिक पंथ सवाँरहि जस सिवलोक अनूप।
घर घर नारि पदुमिनी मोहहि दरसन रूप ॥

पुनि देखिअ सिंघल की हाटा। नवौ निद्धि लछिमी सब बाटा।
कनक हाट सब कुँहकुँह लीपी। बैठ महाजन सिंघल दीपी।
रचे हँथौड़ा रूपइँ ढारी। चित्र कटाउ अनेग सँवारी।
रतन पदारथ मानिक मोती। हीर पँवार सो अनबन जोती।
सोन रूप सब भएउ पसारा। धवलसिरी पोतहि घर बारा।
औ कपूर बेना कस्तूरी। चंदन अगर रहा भरिपूरी।
जेइँ न हाट एहि लीन्ह बेसाहा। ताकहँ आन हाट कित लाहा।

कोई करै बेसाहना काहू केर बिकाइ।
कोई चला लाभ सौ कोई मूर गवाँइ ॥

पुनि सिंगार हाट धनि देसा। कइ सिगार तहँ बैठी बेसा।
मुख तँबोर तन चीर कुसुंभी। कानन्ह कनक जराऊ खुभी।
हाथ बीन सुनि मिरिग भुलाही। नर मोहहि सुनि पैगु न जाही।
भौह धनुक तह नैन अहेरी। मारहिं बान सान सौ फेरी।
अलक कपोल डोल हसि देहीं। लाइ कटाख मारि जिउ लेहीं।
कुच कंचुकि जानहुँ जुग सारी। अचल देहि सुभावहिं ढारी।
केत खेलार हारि तेन्ह पासा। हाथ झारि होइ चलहि निरासा।

चेटक लाइ हरहि मन जौ लहि गथ है फेंट।
साँठि नाठि उठि भए बटाऊ ना पहिचान न भेंट ॥

लै लै बैठ फूल फुलहारी। पान अपूरब धरे सँवारी।
सोंधा सबै बैठु लै गाँधी। बहुल कपूर खिरौरी बाँधी।
कतहूँ पंडित पढ़हि पुरानू। धरम पंथ कर करहि बखानू।
कतहूँ कथा कहै कछु कोई। कतहूँ नाच कोड भलि होई।
कतहुँ छरहटा पेखन लावा। कतहूँ पाखँड काठ नचावा।
कतहूँ नाद सबद होइ भला। कतहूँ नाटक चेटक कला।
कतहुँ काहुँ ठग बिद्या लाई। कतहुँ लेहि मानुस बौराई।

चरपट चोर धूत गँठिछोरा मिले रहहि तेहि नाँच।
जो तेहि नाँच सजग भा अगुमन गथ ताकर पै बाँच॥

पुनि आइअ सिघल गढ़ पासा। का बरनौ जस लाग अकासा।
तरहि कुरुँम बासुकि कै पीठी। ऊपर इन्द्रलोक पर डीठी।
परा खोह चहुँ दिसि तस बाँका। काँपै जाँघ जाइ नहिं झाँका।
अगम असूझ देखि डर खाई। परै सो सप्त पतारन्ह जाई।
नव पँवरीं बाँकी नव खडा। नवहुँ जो चढ़ै जाइ ब्रह्मडा।
कंचन कोट जरे नग सीसा। नखतन्ह भरा बीजु अस दीसा।
लंका च हि ऊँच गढ ताका। निरखि न जाइ दिस्टि मन थाका।

हिअ न समाइ दिस्टि नहि पहुँचै जानहु ठाढ सुमेरु।
कहँ लगि कहौ उँचाई ताकरि कहँ लगि बरनौ फेरु॥

निति गढ बाँचि चलै ससि सूरू। नाहि त बाजि होइ रथ चूरू।
पँवरी नवौ बज्र कइ साजी। सहस सहस तहँ बैठे पाजी।
फिरहि पाँच कोटवार सो भँवरी। काँपै पाँय चँपत वै पँवरी।
पँवरिहि पँवरि सिंघ गढि काढ़े। डरपहि राय देखि तेन्ह ठाढ़े।
बहु बनान वै नाहर गढ़े। जनु गाजहि चाहहि सिर चढ़े।
टारहि पूँछि पसारहि जीहा। कुजर डरहि कि गुजरि लीहा।
कनक सिला गढि सीढ़ी लाई। जगमगाहिं गढ़ ऊपर ताईं।

नवौ खड नव पँवरी औ तहँ बज्र केवार।
चारि बसेरें सो चढै सत सौ चढ़ै जो पार॥

नवौं पँवरि पर दसौ दुआरू। तेहि पर बाज राज घरिआरू।
घरी सो बैठि गनै घरिआरी। पहर पहर सो आपनि बारी।
जबहि घरी पूजी वह मारा। घरी घरी घरिआर पुकारा।
परा जो डाँड जगत सब डाँड़ा। का निचित माँटी कर भाँड़ा।
तुम्ह तेहि चाक चढ़े होइ काँचे। आएहु फिरै न थिर होइ बाँचे।
घरी जो भरै घटै तुम आऊ। का निचिंत सोवहि रे बटाऊ।
पहरहि पहर गजर नित होई। हिआ निसोगा जाग न सोई।

मुहमद जीवन जल भरन रहँट घरी की रीति।
घरी सो आई ज्यों भरी ढरी जनम गा बीति ॥

गढ पर नीर खीर दुइ नदी। पानी भरहिं जैसे दुरुपदी।
और कुंड एक मोतीचूरू। पानी अंब्रित कीच कपूरू।
ओहि क पानि राजा पै पिआ। बिरिध होइ नहिं जौलहि जिआ।
कंचन बिरिख एक तेहि पासा। जस कलपतरु इंद्र कबिलासा।
मूल पतार सरग ओहि साखा। अमर बेलि को पाव को चाखा।
चाँद पात औ फूल तराईं। होइ उजिआर नगर जहँ ताईं।
वह फर पावै तपि कै कोई। बिरिध खाइ नव जोबन होई।

राजा भए भिखारी सुनि वह अंब्रित भोग।
जेइँ पावा सो अमर भा ना किछु ब्याधि न रोग ॥

गढ़ पर बसहिं चारि गढपती। असुपति गजपति और नरपती।
सब क धौरहर सोनै साजा। औ अपने अपने घर राजा।
रूपवंत धनवंत सभागे। परस पखान पँवरि तेन्ह लागे।
भोग बेरास सदा सब माना। दुख चिंता कोइ जरम न जाना।
मँदिर मँदिर सबकें चौपारी। बैठि कुँवर सब खेलहिं सारी।
पाँसा ढरै खेल भलि होई। खरग दान सरि पूज न कोई।
भाँट बरनि कहि कीरति भली। पावहिं हस्ति घोर सिंघली।

मँदिर मँदिर फुलवारी चोवा चंदन बास।
निसि दिन रहै बसंत भा छहु रितु बारहु मास ॥

पुनि चलि देखा राज दुआरू। महिं धूँबिअ पाइअ नहि बारू।
हस्ति सिंघली बाँधे बारा। जनु सजीव सब ठाढ़ पहारा।
कवनौ सेत पीत रतनारे। कवनौ हरे धूप औ कारे।
बरनहि बरन गगन जस मेघा। औ तिन्ह गगन पीठ जनु ठेघा।
सिंघल के बरने सिंघली। एकेक चाहि सो एकेक बली।
गिरि पहार पब्बै गहि पेलहि। बिरिख उपारि झारि मुख मेलहिं।
मात निमत सब गरजहि बाँधे। निसि दिन रहहिं महाउत काँधे।

धरती भार न अँगवै पाँव धरत उठ हालि ।
कुरुम टूट फन फाटे तिन्ह हस्तिन्ह की चालि ।

पुनि बाँधे रजबार तुरंगा । का बरनौ जस उन्हके रंगा ।
लील समुंद चाल जग जानै । हाँसुल भँवर किश्राह बखानै ।
हरे कुरंग महुश्र बहु भाँती । गुरं कोकाह बलाह सो पाँती ।
तीख तुखार चाँड़ श्रौ बाँके । तरपहि तबहि तायन बिनु हाँके ।
मन तें श्रगुमन डोलहिं बागा । देत उसास गगन सिर लागा ।
पावहिं साँस समुँद पर धावहि । बूढ़ न पाँव पार होइ श्रावहि ।
थिर न रहहिं रिस लोह चबाही । भाँजहि पूँछि सीस उपराही ।

श्रस तुखार सब देखे जनु मन के रथवाह ।
नैन पलक पहुँचावहि जहँ पहुँचा कोउ चाह ॥

राज सभा पुनि दीख बईठी । इंद्रसभा जनु परि गइ डीठी ।
धनि राजा श्रसि सभा सँवारी । जानहु फूलि रही फुलवारी ।
मुकुट वध सब बैठे राजा । दर निसान नित जेन्ह के बाजा ।
रूपवत मनि दिपै लिलाटा । माँथें छात बैठ सब पाटा ।
मानहु कँवर सरोवर फूलै । सभा क रूप देखि मन भूलै ।
पान कपूर मेद कस्तूरी । सुगँध बास भरि रही श्रपूरी ।
माँझ ऊँच इंद्रासन साजा । गश्रपसेनि बैठ जहँ राजा ।

छत्र गगन लहि ताकर सूर तवै जसु श्रापु ।
सभा कँवल जिमि बिगसै माँथे बड परतापु ॥

साजा राजमँदिर कविलासू । सोने कर सब पुहुमि श्रकासू ।
सात खंड धौराहर साजा । उहै सँवारि सकै श्रस राजा ।
हीरा ईट कपूर गिलावा । श्रौ नग लाइ सरग लै लावा ।
जाँवत सबै उरेह उरेहे । भाँति भाँति नग लाग उबेहे ।
भा कटाव सब श्रनबन भाँती । चित्र होत गा पाँतिहि पाँती ।
लागे खँभ मनि मानिक जरे । जनहु दिया दिन श्राछत बरे ।
देखि धौरहर कर उँजियारा । छपि गे चाँद सूर श्रौ तारा ।

सुने सात बैकुंठ जस तस साजे खँड सात।
बेहर बेहर भाउ तेन्ह खँड खँड ऊपर जात॥
बरनौं राज मँदिर रनिवासू। अछरिन्ह भरा जानु कबिलासू।
सोरह सहस पदुमिनी रानी। एक एक तें रूप बखानी।
अति सुरूप औ अति सुकुवारा। पान फूल के रहहि अधारा।
तिन्ह ऊपर चंपावति रानी। महा सुरूप पाट परधानी।
पाट बैसि रह किए सिंगारू। सब रानी ओहि करहि जोहारू।
निति नव रंग सुरंगम सोई। प्रथमै बैस न सरबरि कोई।
सकल दीप महँ चुनि चुनि आनी। तेन्ह महँ दीपक बारह बानी।
कुअँरि बतीसौ लक्खनी अस सब माँह अनूप।
जाँवत सिंघल दीपइ सबै बखानइ रूप॥

मानसरोदक खंड

एक देवस कौनिउ तिथि आई। मानसरोदक चली अन्हाई।
पदुमावति सब सखीं बोलाईं। जनु फुलवारि सबै चलि आईं।
कोइ चंपा कोइ कुंद सहेलीं। कोइ सुकेत करना रस बेलीं।
कोइ सु गुलाल सुदरसन राती। कोइ बकौरि बकचुन बिहँसाती।
कोइ सु बोलसरि पुहुपावती। कोइ जाही जूही सेवती।
कोइ सोनजरद जेउँ केसरि। कोई सिंगारहार नागेसरि।
कोइ कूजा सदबरग चँबेली। कोइ कदम सुरस रस बेली।
चली सबै मालति संग फूले कँवल कमोद।
बेधि रहे गन गंध्रप बास परिमलामोद॥
खेलत मानसरोवर गईं। जाइ पालि पर ठाढ़ी भईं।
देखि सरोवर रहसहिं केली। पदुमावति सौ कहहि सहेलीं।
ऐ रानी मन देखु बिचारी। एहि नैहर रहना दिन चारी।
जौ लहि अहै पिता कर राजू। खेलि लेहु जौं खेलहु आजू।
पुनि सासुर हम गौनब काली। कित हम कित एह सरवर पाली।

कित आवन पुनि अपने हाथाँ। कित मिलिकै खेलब एक साथाँ।
सासु नँनद बोलिन्ह जिउ लेहीं। दारुन ससुर न आवै देही।
पिउ पिआर सब ऊपर सा पुनि करै दहुँ काह।
कहुँ सुख राखै की दुख दहुँ कस जरम निबाहु।

सरवर तीर पदुमिनीं आईं। खोंपा छोरि केस मोकराईं।
ससि मुख अग मलैगिरि रानी। नागन्ह झाँपि लीन्ह अरधानी।
ओनए मेघ परी जग छाहाँ। ससि की सरन लीन्ह जनु राहाँ।
छपि गै दिनहि भानु कै दसा। लै निसि नखत चाँद परगसा।
भूलि चकोर दिस्टि तहँ लावा। मेघ घटा महँ चाँद देखावा।
दसन दामिनी कोकिल भाषी। भौहैं धनुक गगन लै राखी।
नैन खँजन दुइ केलि करेहीं। कुच नारँग मधुकर रस लेहीं।
सरवर रूप बिमोहा हिएँ हिलोर करेइ।
पाय छुअइ मकु पावौं तेहि मिसु लहरैं देइ॥

धरीं तीर सब छीपक सारी। सरवर महँ पैठी सब बारी।
पाएँ नीर जानु सब बेलीं। हुलसी करहि काम कै केली।
नवल बसंत सँवारहि करीं। होइ परगट चाहहि सर भरीं।
करिल केस बिसहर बिसभरे। लहरैं लेहि कँवल मुख धरे।
उठे कोंप जनु दारिवँ दाखा। भईं ओनंत प्रेम कै साखा।
सरवर नहि समाइ ससारा। चाँद नहाइ पैठ लिए तारा।
धनि सो नीर ससि तरईं उईं। अब कत दिस्टि कँवल औ कुईं।
चकई बिछुरि पुकारै कहाँ मिलहु हो नाँह।
एक चाँद निसि सरग पर दिन दोसर जल माँह॥

लागी केलि करै मँझ नीरा। हंस लजाइ बैठ होइ तीरा।
पदुमावति कौतुक करि राखी। तुम्ह ससि होहु तराइन साखी।
बादि मेलि कै खेल पसारा। हारु देइ जौ खेलत हारा।
सँवरिहि साँवरि गोरिहि गोरी। आपनि-आपनि लीन्हि सो जोरी।
बूझि खेल खेलहु एक साथा। हारु न होइ पराएँ हाथा।

आजुहि खेल बहुरि कित होई। खेल गएँ कत खेलै कोई।
धनि सो खेल खेलहि रस पेमा। रौताई औ कूसल खेमा।
मुहमद बारि परेम की जेउँ भावै तेउँ खेलु।
तीलहि फूलहि सग जेउँ होइ फुलाएल तेल॥

सखी एक तेइँ खेल न जाना। चित अचेत भइ हार गँवाना।
कँवल डार गहि भै बेकरारा। कासौं पुकारौ आपन हारा।
कत खेलै आइउँ एहि साथाँ। हार गँवाइ चलिउँ से हाथाँ।
घर पैठत पूँछब एहि हारू। कौनु उतर पाउबि पैसारू।
नैन सीप आसुन्ह तस भरे। जानहु मोंति गिरहि सब ढरे।
सखिन्ह कहा भोरी कोकिला। कौनु पानि जेहि पौनु न मिला।
हारु गँवाइ सो अैसेहि रोवा। हेरि हेराइ लेहु जौं खोवा।
लागी सब मिलि हेरै बूड़ि बूड़ि एक साथ।
कोई उठी मोंति लै घोंघा काहू हाथ॥

कहा मानसर चहा सो पाई। पारस रूप इहाँ लगि आई।
भा निरमर तेन्ह पायन्ह परसें। पावा रूप रूप के दरसें।
मलै समीर बास तन आई। भा सीतल गै तपनि बुझाई।
न जनौं कौनु पौन ले आवा। बुन्नि दसा भै पाप गँवावा।
ततखन हार बेगि उतिराना। पावा सखिन्ह चंद बिहँसाना।
बिगसे कुमुद देखि ससि रेखा। भै तेहिं रूप जहाँ जो देखा।
पाए रूप-रूप जस चहे। ससि मुख सब दरपन होइ रहे।
नैन जो देखे कँवल भए निरमर नीर सरीर।
हँसत जो देखे हंस भए दसन जोति नग हीर॥

नखशिख खंड

का सिंगार ओहि बरनौ राजा। ओहि क सिगार ओहि पै छाजा।
प्रथम ही सीस कस्तुरी केसा। बलि बासुकि को औरु ननेसा।

भंवर केस वह मालति रानी। बिसहर लुरहिं लेहि अरघानी।
बेनी छोरि झारु जौ बारा। सरग पतार होइ अँधियारा।
कोंवल कुटिल केस नग कारे। लहरन्हि भरे भुअग बिसारे।
बेधे जानु मलैगिरि बासा। सीस चढ़े लोटहि चहुँ पासा।
घुँघुँरवारि अलकें बिख भरी। सिकरी पेम चहहिं गियँ परी।

अस फँदवारे केस वै राजा परा सीस गियँ फाँद।
अस्टौ कुरी नाग ओरगाने भै केसन्हि के बाद॥

बरनौ माँग सीस उपराही। सेंदुर अबहिं चढा तेहि नाहीं।
बिनु सेंदुर अस जानहुँ दिया। उजिअर पंथ रैनि महं किया।
कचन रेख कसौटी कसी। जनु घन महँ दामिनि परगसी।
सुरुज किरिनि जस गगन बिसेखी। जमुना माँझ सरसुती देखी।
खाँडै धार रुहिर जनु भरा। करवत लै बेनी पर धरा।
तेहि पर पूरि धरे जौ मोंती। जमुना माँझ गाँग कै सोती।
करवत तपा लेहि होइ चूरू। मकु सो रुहिर लै देइ सेंदूरू।

कनक आदस बानि होइ चह सोहाग वह माँग।
सेवा करहि नखत औ तरई उअै गगन निसि गाँग॥

कहौ लिलाट दुइजि कै जोती। दुइजिहि जोति कहाँ जग ओती।
सहस कराँ जो सुरुज दिपाई। देखि लिलाट सोउ छपि जाई।
का सरबरि तेहि देउँ मयकू। चाँद कलंकी वह निकलंकू।
औ चाँदहि पुनि राहु गरासा। वह बिनु सदा परगासा।
तेहि लिलाट पर तिलक बईठा। दुइजि पाट जानहुँ धुव डीठा।
कनक पाट जनु बैठेउ राजा। सबै सिगार अत्र लै साजा।
ओहि आगें थिर रहै न कोऊ। दहुँ काकह अस जुरा सँजोऊ।

खरग धनुक औ चक्र बान दुइ जग मारन तिन्ह नाउँ।
सुनि कै परा मुरुछि कै राजा मो कहँ भए एक ठाउँ॥

भौहै स्याम धनुकु जनु ताना। जासौ हेर मार बिख बाना।
उहै धनुक उन्ह भौहन्ह चढ़ा। केइ हतियार काल अस गढ़ा।

उहै धनुक किरसुन पहँ अहा । उहै धनुक राघौ कर गहा ।
उहै धनुक रावन संघारा । उहै धनुक कंसासुर मारा ।
उहै धनुक बेधा हुत राहू । मारा ओही सहस्सर बाहू ।
उहै धनुक मैं ओपहँ चीन्हा । धानुक आपु बेझ जग कीन्हा ।
उन्ह भौहन्हि सरि केउ न जीता । आछरि छपीं छपीं गोपीता ।

भौह धनुक धनि धानुक दोसर सरि न कराइ ।
गगन धनुक जो ऊगवै लाजन्ह सो छपि जाइ ॥

नैन बाँक सरि पूज न कोऊ । मान समुँद अस उलथहिं दोऊ ।
राते कवल करहिं अलि भवाँ । घूमहि माँति चहहि उपसवाँ ।
उठहि तुरग लेहि नहिं बागा । चाहहिं उलथि गगन कहँ लागा ।
पवन झकोरहिं देहि हलोरा । सरग लाइ भुइँ लाइ बहोरा ।
जग डोलै डोलत नैनाहाँ । उलटि अड़ार चाह पल माहाँ ।
जबहिं फिराव गँगन गहि बोरा । अस वै भवर चक्र के जोरा ।
समुद हिंडोर करहिं जनु झूले । खजन लुरहिं मिरिग जनु भूले ।

सुभर समुँद अस नैन दुइ मानिक भरे तरंग ।
आवत तीर जाहिं फिरि काल भवर तेन्ह संग ॥

बरुनी का बरनौ इमि बनी । साँधे बान जानु दुइ अनी ।
जुरी राम रावण कै सैना । बीच समुंद भए दुइ नैना ।
वारहिं पार बनावरि साँधी । जासौ हेर लाग बिख बाधी ।
उन्ह बानन्ह अस को को न मारा । बेधि रहा सगरौं संसारा ।
गँगन नखत जस जाहि न गने । हैं सब बान ओहि के हने ।
धरती बान बेधि सब राखी । साखा ठाढ़ि देहि सब साखी ।
रोवँ रोवँ मानुस तन ठाढ़े । सोतहि सोत बेधि तन काढ़े ।

बरुनि बान सब ओपहँ बेधे रन बन ढख ।
सउजन्ह तन सब रोवाँ पंखिन्ह तन सब पंख ॥

नासिक खरग देउँ केहि जोगू । खरग खीन ओहि बदन सँजोगू ।
नासिक देखि लजानेउ सुआ । सूक आइ बेसरि होइ उआ ।

सुआ सो पिअर हिरामनि लाजा। औरु भाउ का बरनौ राजा।
सुआ सो नाँक कठोर पँवारी। वह कोवँलि तिल पुहुप सँवारी।
पुहुप सुगंध करहि सब आसा। मकु हिरगाइ लेइ हम बासा।
अधर दसन पर नासिक सोभा। दारिवँ देखि सुआ मन लोभा।
खंजन दुहुँ दिसि केलि कराहीं। दहुँ वह रस को पाव को नाहीं।

देखि अमिअ रस अधरन्हि भएउ नासिका कीर।
पवन बास पहुँचावै अस रम छाँड़ न तीर॥

अधर सुरग अमिअ रस भरे। बिंब सुरग लाजि बन फरे।
फूल दुपहरी मानहुँ राता। फूल झरहि जब जब कह बाता।
हीरा गहै सो बिद्रुम धारा। बिहँसत जगत होइ उजिआरा।
भए मँजीठ पानन्ह रंग लागे। कुसुम रग थिर रहा न आगें।
अस कै अधर अमिअ भरि राखे। अबहि अछूत न काहूँ चाखे।
मुख तँबोल रंग धारहि रसा। केहि मुख जोग सो अंब्रित बसा।
राता जगत देखि रँग राते। रुहिर भरे आछहिं बिहँसाते।

अमिअ अधर अस राजा सब जग आस करेइ।
केहि कहँ कँवल बिगासा को मधुकर रस लेइ॥

दसन चौक बैठे जनु हीरा। औ बिच बिच रँग स्याम गँभीरा।
जनु भादौं निसि दामिनि दीसी। चमकि उठी तसि भीनि बतीसी।
वह जो जोति हीरा उपराहीं। हीरा दिपहि सो तेहि परिछाहीं।
जेहि दिन दसन जोति निरमई। बहुतन्ह जोति जोति ओहि भई।
रबि ससि नखत दीन्हि ओहि जोती। रतन पदारथ मानिक मोती।
जहँ जहँ बिहंसि सुभावहि हँसी। तहँ तहँ छिटकि जोति परगसी।
दामिनि दमकि न सरबरि पूजा। पुनि वह जोति औरु को दूजा।

बिहँसत हँसत दसन तस चमके पाहन उठे झरकि।
दारिवँ सरि जो न कै सका फाटेउ हिया दरक्कि॥

रसना कहौ जो कह रस बाता। अंब्रित बचन सुनत मन राता।
हरै सो सुर चात्रिक कोकिला। बीन बंसि वह बैनु न मिला॥

चात्रिक कोकिल रहहिं जो नाहीं । सुनि वह बैन लाजि छपि जाहीं।
भरे पेम मधु बोलै बोला । सुनै सो माति घुर्मि कै डोला ।
चतुर बेद मति सब ओहि पाहा । रिग जजु साम अथर्बन माहा ।
एक एक बोल अरथ चौगुना । इंद्र मोह बरम्हा सिर धुना ।
अमर भारथ पिंगल औ गीता । अरथ जूझ पंडित नहि जीता ।

भावसती ब्याकरन सरसुती पिंगल पाठ पुरान ।
बेद भेद सें बात कह तस जनु लागहिं बान ॥

पुनि बरनौ का सुरँग कपोला । एक नारँग के दुऔ अमोला ।
पुहुप पंक रस अंब्रित साँधे । केइँ ये सुरंग खिरौरा बाँधे ।
तेहि कपोल बाएँ तिल परा । जेइँ तिल देख सो तिल तिल जरा ।
जनु घुंघुची वह तिल करमुहाँ । बिरह बान साँधा सामुहाँ ।
अगिनि बान तिल जानहुँ सूझा । एक कटाख लाख दुइ जूझा ।
सो तिल काल मेटि नहि गएऊ । अब वह गाल काल जग भएऊ ।
देखत नैन परी परिछाहीं । तेहितें रात स्याम उपराहीं ।

सो तिल देखि कपोल पर गँगन रहा धुव गाड़ि ।
खिनहि उठै खिन बूड़ै डोलै नहि तिल छाँड़ि ॥

स्रवन सीप दुइ दीप संवारे । कुंडल कनक रचे उँजिआरे ।
मनि कुंडल चमकहिं अति लोने । जनु कौंधा लौकहि दुहुँ कोने ।
दुहुँ दिसि चाँद सुरुज चमकाहीं । नखतन्ह भरे निरखि नहिं जाहीं ।
तेहि पर खूँट दीप दुइ बारे । दुइ धुव दुऔ खूँट बैसारे ।
पहिरे खुंभी सिंघल दीपी । जानहुँ भरी कचपची सीपी ।
खिन-खिन जबहि चीर सिर गहा । काँपत बीज दुहूँ दिसि रहा ।
डरपहिं देव लोक सिंघला । परै न बीज टूटि एहि कला ।

करहि नखत सब सेवा स्रवन दिपहि अस दोउ ।
चाँद सुरुज अस गहने औरु जगत का कोउ ॥

बरनौं गीवँ कूँज कै रीसी । कंज नार जनु लागेउ सीसी ।
कुंदै फेरि जानु गिउ काढ़ी । हरी पुछारि ठगी जनु ठाढ़ी ।

जनु हिय काढ़ि परेवा ठाढ़ा। तेहि तें अधिक भाउ गिउ बाढा।
चाक चढ़ाइ साँच जनु कीन्हा। बाग तुरंग जानु गहि लीन्हा।
गिउ मँजूर तँवचुर जो हारा। वहै पुकारहि साँझ सँकारा।
पुनि तिहि ठाउँ परी तिरि रेखा। घूँटत पीक लीक सब देखा।
धनि सो गीव दीन्हेउ विधि भाऊ। दहुँ कासौं लै करै मेराऊ।

कठ सिरी मुकुताहल माला सोहै अभरन गीवँ।
को होइ हार कंठ ओहि लागै केइँ तपु साधा जीवँ॥

कनक दंड दुइ भुजा कलाई। जानहुँ फेरि कुँदेरैं भाईं।
कदलि खाँभ की जानहुँ जोरी। औ राती ओहि कँवल हथोरी।
जानहुँ रकत हथोरी बूड़ी। रबि परभात तात वह जूडी।
हिया काढि जनु लीन्हेसि हाथाँ। रकत भरी अँगुरी तेहिं साथाँ।
औ पहिरे नग जरी अँगूठी। जग बिनु जीव-जीव ओहि मूठी।
बाँहू कंगन टाड़ सलोनी। डोलति बाँह भाउ गति लोनी।
जानहुँ गति बेड़िनि देखराई। बाह डोलाइ जीउ लै जाई।

भुज उपमा पँवनारि न पूजी खीन भई तेहि चिंत।
ठाँवहिं ठाँव बेह भे हिरदै ऊभि साँस लेइ नित॥

हिया थार कुच कंचन लाडू। कनक कचोर उठे करि चाडू।
कुंदन बेल साजि जनु कूँदे। अंब्रित भरे रतन दुइ मूँदे।
बेधे भँवर कट केतुकी। चाहहि बेध कीन्ह कँचुकी।
जोबन बान लेहिं नहि बागा। चाहहिं हुलसि हिएँ हठि लागा।
अगिनि बान दुइ जानहु साँधे। जग बेधिहिं जौं होहि न बाँधे।
उतग जँभीर होइ रखवारी। छुइ को सकै राजा कै बारी।
दारिवँ दाख फरे अनचाखे। अस नारग दहुँ का कहँ राखे।

राजा बहुत मुए तपि लाइ-लाइ भुइँ माथ।
काहूँ छुऔ न पारे गए मरोरत हाथ॥

पेट पत्र चँदन जनु लावा। कुंकुह केसरि बरन सोहावा।
खीर अहार न कर सुकुवाँरा। पान फूल के रहै अधारा।

स्याम भुअगिनि रोमावली। नाभी निकसि कँवल कहँ चली।
आइ दुहूँ नारग बिच भई। देखि मँजूर ठमकि रहि गई।
जनहुँ चढ़ी भँवरन्हि कै पाँती। चदन खाँभ बास कै माँती।
कै कालिंद्री बिरह सताई। चलि पयाग अरइल बिच आई।
नाभी कुडर बानारसी। सौंहँ को होइ मीचु तहँ बसी।

सिर करवत तन करसी ले-लै बहुत सीझे तेहि आस।
बहुत धूम घूँटत मैं देखे उतरु न देइ निरास॥

बैरिनि पीठि लीन्ह ओइँ पाछें। जनु फिरि चली अपछरा काछें।
मलयागिरि कै पीठि सँवारी। बेनी नाग चढ़ा जनु कारी।
लहरैं देत पीठि जनु चढ़ा। चीर ओढ़ावा कंचुकि मढ़ा।
दहुँ का कहँ असि बेनी कीन्ही। चदन बास भुअंगन्ह दीन्ही।
किस्न कै करा चढ़ा ओहि माथें। तब सो छूट अब छूट न नाथें।
कारी कँवल गहे मुख, देखा। ससि पाछें जस राहु बिसेखा।
को देखै पावै वह नागू। सो देखै माथें मनि भागू।

पन्नग पकज मुख गहे खंजन तहा बईठ।
जात सिघासन राज धन ता कहँ होइ जो डीठ॥

लंक पुहुमि अस आहि न काहूँ। केहरि कहौं न ओहि सरि ताहूँ।
बसा लक बरनै जग झीनी। तेहि तें अधिक लंक वह खीनी।
परिहँस पिअर भए तेहि बसा। लीन्हे लक लोगन्ह कहँ डँसा।
जानहुँ नलिनि खंड दुइ भई। दुहुँ बिच लक तार रहि गई।
हिय सां मोरि चलै वह तागा। पैग देत कत सहि सक लागा।
छुद्र घंटि मोहहि नर राजा। इंद्र अखार आइ जनु साजा।
मानहुँ बीन गहे कामिनी। रागहि सबे राग रागिनी।

सिंघ न जीता लंक सर हारि लीन्ह बन बासु।
तेहि रिसि रकत पिऐं मनई कर खाइ मारि कै माँसु॥

नाभी कुंडर मलै समीरू। समुँद भँवर जस भंवै गँभीरू।
बहुतै भँवर बौंडरा भए। पहुँचि न सके सरग कहँ गए।

चंदन माँझ कुरगिनि खोजू। दहुँ को पाव को राजा भोजू।
को ओहि लागि हिवंचल सीझा। का कहँ लिखी अैस को रीझा।
तीवइ कँवल सुगध सरीरू। समुँद लहरि सोहै तन चीरू।
झूलहि रतन पाट के झोपा। साजि मदन दहुँ का कहँ कोपा।
अबहि सो आहि कवल कै करी। न जनौं कवन भँवर कहँ धरी।

बेधि रहा जग बासना परिमल मेद सुगन्ध।
देहि अरघानि भँवर सब लुबुधे तजहिं न नीवी बंध॥

बरनौ नितँब लक कै सोभा। औ गज गवन देखि सब लोभा।
जुरे जंघ सोभा अति पाए। केरा खाँभ फेरि जनु लाए।
कँवल चरन अति रात बिसेखे। रहहिं पाट पर पुहुमि न देखे।
देवता हाथ-हाथ पगु लेही। पगु पर जहाँ सीस तहँ देही।
माँथे भाग को दहुँ अस पावा। कँवल चरन लै सीस चढावा।
चूरा चाँद सुरुज उजिआरा। पायल बीच करहि झनकारा।
अनवट बिछिआ नखत तराई। पहुँचि सकै को पावन्हि ताईं।

बरनि सिगार न जानेउँ नखसिख जैस अभोग।
तस जग किछौ न पावौ उपमा देउँ ओहि जोग॥

प्रेम खंड

सुनतहि राजा गा मुरुछाई। जानहुँ लहरि सुरुज कै आई।
पेम घाव दुख जान न कोई। जेहि लागै जानै पै सोई।
परा सो पेम समुंद अपारा। लहरहिं लहर होइ बिसँभारा।
बिरह भँवर होइ भाँवरि देई। खिन खिन जीव हिलोरहि लेई।
खिनहि निसास बूड़ि जिउ जाई। खिनहि उठै निसँसै बौराई।
खिनहि पीत खिन होइ मुख सेता। खिनहि चेत खिन होइ अचेता।
कठिन मरन तें पेम बेवस्था। ना जिअँ जिवन न दसइँ अवस्था।

जनु लेनिहारन्ह लीन्ह जिउ हरहिं तरासहि ताहि।
एतना बोल न आव मुख करहि तराहि तराहि॥

जहँ लगि कुटुंब लोग औ नेगी। राजा राय आए सब बेगी।
जाँवत गुनी गारुरी आए। ओझा बैद सयान बोलाए।
चरचहिं चेष्टा परिखहिं नारी। निअर नाहि ओषद तेहि बारी।
है राजहि लछ्मन कै करा। सकति बान मोहा है परा।
नहि सो राम हनिवँत बड़ि दूरी। को लै आव सजीवनि मूरी।
बिनौ करहि जेते गढपती। का जिउ कीन्ह कवनि मति मती।
कहहु सो पीर काह बिनु खाँगा। समुँद सुमेरु आव तुम्ह माँगा।

धावन तहाँ पठावहु देहिं लाख दस रोक।
है सो बेलि जेहि बारी आनहि सबै बरोक॥

जौ भा चेत उठा बैरागा। बाउर जनहुँ सोइ अस जागा।
आवन जगत बालक जस रोवा। उठा रोइ हा ग्यान सो खोवा।
हौ तो अहा अमरपुर जहाँ। इहाँ मरनपुर आएउँ कहाँ।
केइँ उपकार मरन कर कीन्हा। सकति जगाइ जीउ हरि लीन्हा।
सोवत अहा जहां सुख साखा। कस न तहाँ सोवत बिधि राखा।
अब जिउ तहाँ इहाँ तन सूना। कब लगि रहै परान बिहूना।
जौ जिउ घटिहि काल के हाथाँ। घटन नीक पै जीउ निसाथाँ।

अहुठ हाथ तन सरवर हिया कँवल तेहि माँह।
नैनन्हि जानहु निअरें कर पहुँचत अवगाह॥

सबन्हि कहा मन समझहु राजा। काल सतैं कै जूझि न छाजा।
तासौ जूझि जात जौ जीता। जात न किरसुन तजि गोपीता।
औ नहिं नेहु काहु सौं कीजै। नाउँ मीठ खाएँ जिउ दीजै।
पहिलेहि सुक्ख नेहु जब जोरा। पुनि होइ कठिन निबाहत ओरा।
अहुठ हाथ तन जैस सुमेरू। पहुँचि न जाइ परा तस फेरू।
गगन दिस्टि सौं जाइ पहूँचा। पेम अदिस्ट गँगन सौं ऊँचा।
धुव तें ऊँच पेम धुव उवा। सिर दै पाउ देइ सो छुवा।

तुम्ह राजा औ सुखिआ करहु राज सुख भोग।
एहि रे पंथ सो पहुँचै सहै जो दुक्ख बियोग॥

सुश्रै कहा मन समुझहु राजा । करत पिरीत कठिन है काजा ।
तुम्ह अबही जेईं घर पोईं । कँवल न बैठि बैठ हहु कोईं ।
जानहि भँवर जो तेहि पँथ लूटे । जीउ दीन्ह औ दिएँ न छूटे ।
कठिन आहि सिंघल कर राजू । पाइअ नाहि राज के साजू ।
ओहि पँथ जाइ जो होइ उदासी । जोगी जती तपा सन्यासी ।
भोग जोरि पाइत वह भोगू । तजि सो भोग कोइ करत न जोगू ।
तुम्ह राजा चाहहु सुख पावा । जोगहि भोगहि कत बनि आवा ।

साधन्ह सिद्धि न पाइअ जौ लहि साध न तप्प ।
सोई जानहि बापुरे जो सिर करहि कलप्प ॥

का भा जोग कहानी कथें । निकसै न घिउ बाजु दधि मथें ।
जौ लहि आपु हेराइ न कोई । तौ लहि हेरत पाव न सोई ।
पेम पहार कठिन बिधि गढा । सो पै चढै सीस सौं चढ़ा ।
पंथ सूरिन्ह कर उठा अँकूरू । चोर चढै कि चढ़ै मंसूरू ।
तू राजा का पहिरसि कथा । तोरें घटहि माँह दस पथा ।
काम क्रोध तिस्ना मद माया । पाँचौ चोर न छाड़हिं काया ।
नव सेंधै ओहि घर मझिआरा । घर मूसहिं निसि कै उजिआरा ।

अबहूँ जागु अयाने होत आव निसु भोर ।
पुनि किछु हाथ न लागिहि मूसि जाहिं जब चोर ॥

सुनि सो बात राजा मन जागा । पलक न मार पेम चित लागा ।
नैनन्ह ढरहि मोति औ मूँगा । जस गुर खाइ रहा होइ गूँगा ।
हिएँ की जोति दीप वह सूझा । यह जो दीप अँधिअर भा बूझा ।
उलटि दिस्टि माया सौं रूठी । पलटि न फिरी जानि कै झूठी ।
जौ पै नाही अस्थिर दसा । जग उजार का कीजै बसा ।
गुरू बिरह चिनगी पै मेला । जो सुलगाइ लेइ सो चेला ।
अब कै फनिग भृंगि कै करा । भँवर होउँ जेहि कारन जरा ।

फूल फूल फिरि पूछौ जौ पहुँचौं ओहि केत ।
तन नेवछावर कै मिलौं ज्यौं मधुकर जिउ देत ॥

जोगी खंड

तजा राज राजा भा जोगी । औ किंगरी कर गहे बियोगी ।
तन बिसँभर मन बाउर रटा । अरुझा पेम परी सिर जटा ।
चंद बदन औ चदन देहा । भसम चढाइ कीन्ह तन खेहा ।
मेखल सिंगी चक्र धँधारी । जोगौटा रुद्राख अधारी ।
कथा पहिरि डंड कर गहा । सिद्ध होइ कहँ गोरख कहा ।
मुंद्रा स्रवन कंठ जपमाला । कर उदपान काँध बघछाला ।
पाँवरि पाँव लीन्ह सिर छाता । खप्पर लीन्ह भेस कै राता ।

चला भुगुति माँगै कहँ साजि कया तप जोग ।
सिद्ध होउँ पदुमावति पाएँ हिरदै जेहि क बियोग ॥

गनक कहहि करु गवन आजू । दिन लै चलहि फरै सिधि काजू ।
पेम पंथ दिन घरी न देखा । तब देखै जब होइ सरेखा ।
जेहि तन पेम कहाँ तेहि माँसू । कया न रकत न नयनन्हि आँसू ।
पँडित भुलान न जानै चालू । जीउ लेत दिन पूँछ न कालू ।
सती कि बौरी पूँछै पाँड़े । औ घर पैठि समेटै भाँड़े ।
मरि जो चलै गाँग गति लेई । तेहि दिन घरी कहाँ को देई ।
मैं घर बार कहाँ कर पावा । घर काया पुनि अंत परावा ।

हौ रे पँखेरू पंखी जेहि बन मोर निबाहु ।
खेलि चला तेहि बन कहँ तुम्ह आपन घर जाहु ॥

चहुँ दिसि आन साँटिअन्ह फेरी । भै कटकाई राजा केरी ।
जाँवत अहै सकल ओरगाना । साँबर लेहु दूरि है जाना ।
सिंघल दीप जाइ सब चाहा । मोल न पाउब जहाँ बेसाहा ।
सब निबहिहि तहँ आपनि साँठी । साँठी बिना रहब मुख माँटी ।
राजा चला साजि कै जोगू । साजहु बेगि चलै सब लोगू ।
गरब जो चढ़े तुरै की पीठी । अब सो तजहु सरग सौं डीठी ।
मंत्रा लेहु होहु सँग लागू । गुदरि जाइ सब होइहि आगू ।

का निचिंत रे मनुसे आपनि चिंता आछु।
लेहि सजग होइ अगुमन फिरि पछिताहि न पाछु॥

बिनवै रतनसेनि कै माया। माँथें छत्र पाट निति पाया।
बेरसहु नव लख लच्छि पिआरी। राज छाँड़ि जनि होहु भिखारी।
निति चंदन लागै जेहि देहा। सो तन देखु भरब अब खेहा।
सब दिन रहेउ करत तुम्ह भोगू। सो कैसे साधब तप जोगू।
कैसें धूप सहब बिनु छाहाँ। कैसें नीद परिहि भुइँ माहाँ।
कैसें ओढब काँवरि कंथा। कैसे पाउँ चलब तुम्ह पंथा।
कैसे सहब खिनहि खिन भूखा। कैसें खाएब कुरकुटा रूखा।

राज पाट दर परिगह सब तुम्ह सौं उजिआर।
बैठि भोग रस मानहु कै न चलहु अँधिआर॥

मोहि यह लोभ सुनाउ न माया। काकर सुख काकरि यह काया।
जौं निआन तन होइहि छारा। माँटी पोखि मरै को भारा।
का भूलहु एहि चंदन चोवाँ। बैरी जहाँ आँग के रोवाँ।
हाथ पाउ सरवन औ आँखी। ये सब ही भरिहें पुनि साखी।
सोत-सोत बोलिहि तन दोखू। कहु कैंऽ होइहि गति मोखू।
जौ भल होत राज औ भोगू। गोपिचंद कस साधत जोगू।
ओनहूँ सिस्टि जौ देख परेवा। तजा राज कजरी बन सेवा।

देखु अंत अस होइहि गुरू दीन्ह उपदेस।
सिंघल दीप जाब मैं माता मोर अदेस॥

रोवै नागमती रनिवासू। केइँ तुम्ह कंत दीन्ह बन बासू।
अब को हमहि करिहि भोगिनी। हमहूँ साथ होइब जोगिनी।
कै हम लावहु अपने साथाँ। कै अब मारि चलहु सैं हाथाँ।
तुम्ह अस बिछुरे पीउ पिरीता। जहवाँ राम तहाँ सँग सीता।
जौ लहि जिउ सँग छाड़ न काया। करिहौं सेव पखरिहौं पाया।
भलेहि पदुमिनी रूप अनूपा। हमतें कोइ न आगरि रूपा।
भवै भलेहिं पुरुषन्ह कै डीठी। जिन्ह जाना तिन्ह दीन्हि न पीठी।

देहि असीस सबै मिलि तुम्ह माथे निति छात।
राज करहु गढ़ चितउर राखहु पिय अहिवात॥

तुम्ह तिरिआ मति हीन तुम्हारी। मूरुख सो जो मतै घर नारी।
राघौ जौ सीता सँग लाई। रावन हरी कवन सिधि पाई।
यहु संसार सपन कर लेखा। बिछुरि गए जानहु नहिं देखा।
राजा भरथरि सुनि रे अयानी। जेहि के घर सोरह सै रानी।
कुचन्ह लिहे तरवा सहराईं। भा जोगी कोइ साथ न लाईं।
जोगिहि काह भोग सो काजू। चहै न मेहरी चहै न राजू।
जूड़ कुरकुटा पै भखु चाहा। जोगिहि तात भात दहुँ काहा।

कहा न मानैराजा तजी सबाईं भीर।
चला छाडि सब रोवत फिरि कै देइ न धीर॥

रोवै मता न बहुरै बारा। रतन चला जग भा अँधिआरा।
बार मोर रजियाउर रता। सो लै चला सुवा परवता।
रोवहि रानी तजहि पराना। फोरहि बलय करहि खरिहाना।
चूरहि गिव अभरन औ हारू। अब काकहँ हम करब सिगारू।
जाकहँ कहहिं रहसि कै पीऊ। सोइ चला काकर यहु जीऊ।
मरै चहहिं पै मरै न पावहिं। उठै आग तब लोग बुझावहिं।
घरी एक सुठि भएउ अँदोरा। पुनि पाछें बीता होइ रोरा।

टूट मनै नव मोती फूट मनै दस काँच।
लीन्ह समेटि ओबरिन होइगा दुख कर नाँच॥

निकसा राजा सिंगी पूरी। छाड़ि नगर मेला होइ दूरी।
राय राने सब भए बियोगी। सोरह सहस कुँवर भए जोगी।
माया मोह हरी सैं हाथाँ। देखेन्हि बूझि निआन न साथाँ।
छाडेन्हि लोग कुटुँब घर सोऊ। भे निनार दुख सुख तजि दोऊ।
सँवरै राजा सोइ अकेला। जेहि रे पथ खेलै होइ चेला।
नगर नगर औ गावँहिं गाऊँ। चला छाड़ि सब ठावँहि ठाऊँ।
काकर घर काकर मढ माया। ताकर सब जाकर जिउ काया।

चला कटक जोगिन्ह कर कै गेरुआ सब भेषु ।
कोस बीस चारिहुँ दिसि जानहुँ फूला टेसु ॥

आगें सगुन सगुनिआँ ताका । दहिउ मच्छ रूपे कर टाका ।
भरें कलस तरुनी चलि आई । दहिउ लेहु ग्वालिनि गोहराई ।
मालिनि आउ मौर लै गाँथें । खंजन बैठ नाग के माँथें ।
दहिने मिरिग आइ गौ धाईं । प्रतीहार बोला खर बाईं ।
बिर्ख सँवरिआ दाहिन बोला । बाएँ दिसि गादुर नहिं डोला ।
बाएँ अकासी धोबिनि आई । लोवा दरसन आइ देखाई ।
बाएँ कुरारी दाहिन कूचा । पहुँचै भुगुति जैस मन रूचा ।

जाकहँ होहि सगुन अस औ गवनै जेहि आस ।
अस्टौ महासिद्धि तेहि जस कबि कहा बिआस ॥

भएउ पयान चला पुनि राजा । सिंघनाद जोगिन्ह कर बाजा ।
कहेन्हि आजु कछु थोर पयाना । काल्हि पयान दूरि है जाना ।
ओहि मेलान जब पहुँचिहि कोई । तब हम कहब पुरुष भल सोई ।
एहि आगे परबत की पाटी । बिषम पहार अगम सुठि घाटी ।
बिच बिच खोह नदी औ नारा । ठाँवहिं ठाँव उठहि बटपारा ।
हनिवँत केर सुनब पुनि हाँका । दहुँ को पार होइ को थाका ।
अस मन जानि सँभारहु आगू । पगुआ केर होहु पछलागू ।

करहि पयान भोर उठि नितहि कोस दस जाहिं ।
पंथी पंथाँ जे चलहि ते का रहन ओनाहि ॥

करहु दिस्टि थिर होहु बटाऊ । आगू देखि धरहु भुइँ पाऊ ।
जौ रे ऊबट होइ परे भुलाने । गए मारे पँथ चलै न जाने ।
पावन्ह पहिरि लेहु सब पँवरी । काँट न चुभै न गड़ै अँकरवरी ।
परे आइ अब बनखँड माहाँ । डडक आरन बीझ बनाहाँ ।
सघन ढाँख बन चहुँ दिसि फूला । बहु दुख मिलिहि इहाँ कर भूला ।
झाँखर जहाँ सो छाड़हु पंथा । हिलगि मकोइ न फारहु कंथा ।
दहिने बिदर चँदेरी बाएँ । दहुँ कहँ होब बाट दुहुँ ठाएँ ।

एक बाट गौ सिंघल दोसर लंक समीप।
इहि आगे पंथ दोऊ दहुँ गवनब केहि दीप॥

ततखन बोला सुआ सरेखा। अगुआ सोइ पथ जेइँ देखा।
सो का उड़ै न जेहि तन पाँखू। लै सो परासहि बूड़ै साखू।
जस अंधा अंधे कर संगी। पंथ न पाव होइ सहलगी।
सुनु मति काज चहसि जौ साजा। बीजानगर बिजैगिरि राजा।
पूँछु न जहाँ कुंड और गोला। तजु बाएँ अँधियार खटोला।
दक्खिन दहिने रहै तिलंगा। उत्तर माँझे गढ़ा खटंगा।
माँझ रतनपुर सौंह दुआरा। झारखंड दै बाउँ पहारा।

आगें पाउँ ओड़ैसा बाएँ देहु सो बाट।
दहिनावर्त लाइकै उतरु समुंद्र के घाट॥

होत पयान जाइ दिन केरा। मिरगारन महँ भएउ बसेरा।
कुस साँथरि भै सौर सुपेती। करवट आइ बनी भुइँ सेती।
कया मलै तेहि भसम मलीजा। चलि दस कोस ओस निति भीजा।
ठाँवहि ठाँव सोवहि सब चेला। राजा जागै आपु अकेला।
जेहि कें हिएँ पेम रँग जामा। का तेहि भूख नींद बिसरामा।
बन अँधिआर रैनि अँधियारी। भादौं बिरह भएउ अति भारी।
किंगरी हाथ गहे बैरागी। पाँच ततु धुनि उठै लागी।

नैन लागु तेहिं मारग पदुमावति जेहि दीप।
जैस सेवाती सेवहि बन चातक जल सीप॥

बोहित खंड

सत न डोल देखा गजपती। राजा दत्त सत्त दुहुँ सती।
आपन नाहिं कया पै कथा। जीउ दीन्ह अगुमन तेहि पथा।
निस्चैं चला भरम डर खोई। साहस जहाँ सिद्धि तहँ होई।
निस्चैं चला छाड़ि कै राजू। बोहित दीन्ह दीन्ह नै साजू।

चढ़े बेगि और बोहित पेले। धनि ओइ पुरुष पेम पँथ खेले।
तिन्ह पावा उत्तिम कबिलासू। जहाँ न मीचु सदा सुख बासू।
पेम पंथ जौं पहुँचै पाराँ। बहुरि न आइ मिलै एहि छाराँ।

एहि जीवन कै आस का जस सपना तिल आधु।
मुहमद जिअतहि जे मरहिं तेइ पुरुष कहु साधु॥

जस रथ रेंगि चलै गज ठाटी। बोहित चले समुँद गा पाटी।
धावहि बोहित मन उपराही। सहस कोस एक पल महँ जाहीं।
समुँद अपार सरग जनु लागा। सरग न घालि गनै बैरागा।
ततखन चाल्हा एक देखावा। जनु धौलागिरि परबत आवा।
उठी हिलोर जो चाल्ह नराजी। लहरि अकास लागि भुइँ बाजी।
राजा सेंति कुँवर सब कहही। अस अस मच्छ समुँद महँ रहहीं।
तेहि रे पथ हम चाहहि गवना। होहु सँजूत बहुरि नहिं अवना।

गुरु हमार तुम्ह राजा हम चेला औ नाथ।
जहाँ पाँव गुरु राखै चेला राखै माँथ॥

केवट हँसे सो सुनत गवेंजा। समुँद न जान कुँआ कर मेंजा।
यह तौ चाल्ह न लागै कोहू। काह कहौ जौ देखहु रोहू।
अबहीं तौ तुम्ह देखे नाही। जेहि मुख ऐसे सहस समाहीं।
राज पखि तिन्ह पर मँडराही। सहस कोस जिन्ह की परिछाही।
ते ओइ मच्छ ठोर गहि लेही। सावक मुख चारा ले देही।
गरजै गँगन पखि जौं बोलहिं। डोलै समुँद डहन जौ खोलहिं।
तहाँ न चाँद न सुरुज असूझा। चढ़ै सो जो अस अगुमन बूझा।

दस महँ एक जाइ कोइ करम धरम सत नेम।
बोहित पार होइ जौ तौ कूसल औ खेम॥

राजै कहा कीन्ह सो पेमा। जेहिं रे कहाँ कर कूसल खेमा।
तुम्ह खेवहु खेवै जौ पारहु। जैसें आपु तरहु मोहि तारहु।
मोहिं कूसल कर सोच न ओता। कूसल होत जौ जनम न होता।
धरती सरग जाँत पर दोऊ। जो तेहि बिच जिय राख न कोऊ।

हाँ अब कुसल एक पै माँगौ। पेम पंथ सत बाँधि न खाँगौ।
जौ सत हिएँ तो नैनन्ह दिया। समुँद न डरै पैठि मरजिया।
तहँ लगि हेरौ समुँद ढँढोरी। जहँ लगि रतन पदारथ जोरी।

सप्त पतार खोजि जस काढ़े बेद गरंथ।
सात सरग चढि धावौ पदुमावति जेहि पथ॥

सात समुद्र खंड

सायर तिरै हिएँ सत पूरा। जौ जियँ सत कायर पुनि सूरा।
तेहि सत बोहित पूरि चलाए। जेहिं सत पवन पख जनु लाए।
सत साथी सत कर सहिवारू। सत्त खेइ लै लावै पारू।
सतै ताक सब आगू पाछू। जहँ जहँ मगर मच्छ औ काछू।
उठै लहरि नहि जाइ सँभारा। चढ़ै सरग औ परै पतारा।
डोलहि बोहित लहरं खाहीं। खिन तर खिनहि होहिं उपराहीं।
राजै सो सतु हिरदैं बाँधा। जेहि सत टेकि करै गिरि काँधा।

खार समुँद सो नाँघा आए समुँद जहँ खीर।
मिले समुँद वै सातौ बेहर बेहर नीर॥

खीर समुँद का बरनौ नीरू। सेत सरूप पियत जस खीरू।
उलथहिं मोंती मानिक हीरा। दरब देखि मन धरै न धीरा।
मनुवाँ चहै दरब औ भोगू। पथ भुलाइ बिनासै जोगू।
जोगी मनहि ओहि रिस मारहि। दरब हाथ कै समुँद पबारहिं।
दरब लेइ सो अस्थिर राजा। जो जोगी तेहि के केहि काजा।
पंथहि पंथ दरब रिपु होई। ठग बटवार चोर सँग सोई।
पंथिक सो जो दरब सों रूसै। दरब समेटि बहुत अस मूसै।

खीर समुँद सो नाँघा आए समुँद दधि माँह।
जो इहिं नेह के बाउर ना तिन्ह धूप न छाँह॥

दधि समुँद्र देखत मन डहा। पेम क लुबुध दगध पै सहा।
पेम सौं दाधा धनि वह जीऊ। दही माहिं मथि काढ़ै घीऊ।
दधि एक बूँद जाम सब खीरू। काँजी बुँद बिनसि होइ नीरू।
स्वाँस दहेड़ि मन मँथनी गाढी। हिएँ चोट बिनु फूट न साढ़ी।
जेहि जियँ पेम चँदन तेहि आगी। पेम बिहून फिरहि डरि भागी।
पेम कि आगि जरै जौं कोइ। ताकर दुख न अँबिरथा होई।
जो जानै सत आपुहि जारै। निसत हिएँ सत करै न पारै।

दधि समुँद्र पुनि पार भे पेमहि कहाँ सँभार।
भावै पानी सिर परौ भावै परौ अँगार॥

आए उदधि समुँद अपाराँ। धरती सरग जरै तेहि झाराँ।
आगि जो उपनी ओहि समुदा। लंका जरी ओहि एक बुदा।
बिरह जो उपना वह हुत गाढा। खिन न बुझाइ जगत तस बाढ़ा।
जेहिं सो बिरह तेहि आगि न डीठी। सौंह जरै फिरि देइ न पीठी।
जग महँ कठिन खरग कै धारा। तेहि तें अधिक बिरह कै झारा।
अगम पंथ जौ अैस न होई। साध किएँ पावत सब कोई।
तेहि समुद महँ राजा परा। चहै जरै पै रोवँ न जरा।

तलफै तेल कराह जिम इमि तलफै तेहि नीर।
वह जो मलैगिरि पेम का बुंद समुद समीर॥

सुराँ समुँद पुनि राजा आवा। महुआ मद छाता देखरावा।
जो तेहि पिअै सो भाँवरि लेई। सीस फिरै पँथ पैगु न देई।
पेम सुरा जेहि के जिय माहाँ। कत बैठै महुआ की छाहाँ।
गुरु के पास दाख रस रसा। बैरि बबूर मारि मन कसा।
बिरहैं दगध कीन्ह तन भाठी। हाड़ जराइ दीन्ह जस काठी।
नैन नीर सो पोती किया। तस मद चुआ बरै जनु दिया।
बिरह सरागन्हि भूँजै मासू। गिर गिरि परहि रकत के आँसू।

मुहमद मद जो परेम का किएँ दीप तेहि राख।
सीस न देइ पतंग होइ तब लगि जाइ न चाख॥

पुनि किलकिला समुँद महँ आए। किलकिल उठा देखि डरु खाए।
गा धीरज वह देखि हिलोरा। जनु अकास टूटै चहुँ ओरा।
उठै लहरि परबत की नाईं। होइ फिरै जोजन लख ताईं।
धरती लेत सरग लहि बाढा। सकल समुँद जानहुँ भा ठाढ़ा।
नीर होइ तर ऊपर सोई। महनारंभ समुँद जस होई।
फिरत समुँद जोजन लख ताका। जैसे फिरै कुम्हार क चाका।
भा परलौ निअराएन्हि जबहीं। मरै सो ताकर परलौ तबही।

गै अवसान सबहिं कै देखि समुँद कै बाढि।
निअर होत जनु लीले रहा नैन अस काढ़ि॥

हीरामनि राजा सौं बोला। एही समुँद आइ सत डोला॥
एहि ठाउँ कहँ गुरु सँग कीजै। गुरु सँग होइ पार तौ लीजै।
सिंघल दीप जो नाहि निबाहू। एही ठावँ साँकर सब काहू।
यह किलकिला समुद गँभीरू। जेहि गुन होइ सो पावै तीरू।
एही समुँद पथ मँझधारा। खाँडै कै असि धार निनारा।
तीस सहस्र कोस कै पाटा। अस साँकर चलि सकै न चाँटा।
खाँडै चाहि पैनि पैनाई। बार चाहि पातरि पतराई।

मरन जिअन एही पँथ एही आस निरास।
परा सो गया पतारहि तिरा सो गा कबिलास॥

कोइ बोहित जस पवन उड़ाही। कोई चमकि बीजु बर जाहीं।
कोई भल जस धाव तुखारा। कोई जैस बैल गरिआरा।
कोई हरुव जनहुँ रथ हाँका। कोई गरुव भार तें थाका।
कोई रेंगहिं जानहुँ चाँटी। कोई टूटि होहि सिर माँटी।
कोई खाहिं पवन कर झोला। कोई करहि पात जेउँ दोला।
कोई परहि भँवर जल माहाँ। फिरत रहहि कोइ देहिं न बाहाँ।
राजा कर अगुमन भा खेवा। खेवक आगें सुवा परेवा।

कोइ दिन मिला सबेरे कोइ आवा पछिराति।
जाकर साज जैस हुत सो उतरा तेहि भाँति॥

सतएँ समुँद मानसर आए। सत जो कीन्ह साहस सिध पाए।
देखि मानसर रूप सोहावा। हियँ हुलास पुरइनि होइ छावा।
गा अँधियार रैनि मसि छूटी। भा भिनुसार किरिन रबि फूटी।
अस्तु अस्तु साथी सब बोले। अंध जो अहे नैन बिधि खोले।
कँवल बिगस तहँ बिहँसी देहीं। भँवर दसन होइ होइ रस लेहीं।
हँसहि हंस औ करहि किरीरा। चुनहि रतन मुकताहल हीरा।
जौ अस साधि आव तप जोगू। पूजै आस मान रस भोगू।
भँवर जो मनसा मानसर लीन्ह कँवल रस आइ।
घुन जो हियाव न कै सका झूर काठ तस खाइ॥

पद्मावती-वियोग खंड

पदुमावति तेहि जोग सँजोगाँ। परी पेम बस गहे बियोगाँ।
नींद न परै रैनि जौ आवा। सेज केवाँछ जानु कोइ लावा।
दहै चाँद औ चंदन चीरू। दगध करै तन बिरह गँभीरू।
कलप समान रैनि हठि बाढ़ी। तिल-तिल मरि जुग-जुग बर गाढ़ी।
गहै बीन मकु रैनि बिहाई। ससि बाहन तब रहै ओनाई।
पुनि धनि सिंघ उरेहै लागै। ऐसी बिथा रैनि सब जागै।
कहाँ सो भँवर कँवल रस लेवा। आइ परहु होइ घिरिनि परेवा।
सो धनि बिरह पतंग होइ जरा चाह तेहि दीप।
कंत न आवहु भृंगि होइ को चंदन तन लीप॥

परी बिरह बन जानहुँ घेरी। अगम असूझ जहाँ लगि हेरी।
चतुर दिसा चितवै जनु भूली। सो बन कवन जो मालति फूली।
कँवल भँवर ओही बन पावै। को मिलाइ तन तपनि बुझावै।
अग अनल अस कँवल सरीरा। हिय भा पियर पेम की पीरा।
चहै दरस रबि कीन्ह बिगासू। भँवर दिस्टि महँ कै सो अकासू।
पूँछै धाइ बारि कहु बाता। तूँ जस कँवल करी रँग राता।
केसरि बरन हिया भा तोरा। मानहुँ मनहि भएउ कछु फोरा।

पवनु न पावै सचरै भँवर न तहाँ बईठ।
भूलि कुरगिनि कसि भई मनहुँ सिंघ तुइ डीठ ॥

धाइ सिंघ बरु खातेउ मारी। कै तसि रहति अही जसि बारी।
जोबन सुनेउँ कि नवल बसतू। तेहि बन परेउ हस्ति मैमतू।
अब जोबन बारी को राखा। कुंजर बिरह बिधासै साखा।
मैं जाना जोबन रस भोगू। जोबन कठिन सँताप वियोगू।
जोबन गरुअ अपेल पहारू। सहि न जाइ जोबन कर भारू।
जोबन अस मैमत न कोई। नवै हस्ति जौं आँकुस होई।
जोबन भर भादौ जस गगा। लहरै देइ समाइ न अगा।

परी अथाह धाइ हौं जोबन उदधि गँभीर।
तेहि चितवौं चारिउँ दिसि को गहि लावै तीर ॥

पदुमावति तूँ सुबुधि सयानी। तोहि सरि समुँद न पूजै रानी।
नदी समाहि समुँद महँ आई। समुँद डोलि कहु कहाँ समाई।
अबहीं कँवल करी हिय तोरा। आइहि भँवर जो तो कहँ जोरा।
जोबन तुरै हाथ गहि लीजै। जहाँ जाइ तहँ जाइ न दीजै।
जोबन जो रे मतंग गज अहै। गहु गिआन जिमि आँकुस गहै।
अबहिं बारि तूँ पेम न खेला। का जानसि कस होइ दुहेला।
गँगन दिस्टि करु जाइ तराहीं। सुरुज देखि कर आवै नाहीं।

जब लगि पीउ मिलै तोहि साधु पेम कै पीर।
जैसैं सीप सेवाति कहँ तपै समुँद मँझ नीर।

दहै धाइ जोबन औ जीऊ। होइ न बिरह अगिनि महँ घीऊ।
करवत सहौ होत दुइ आधा। सही न जाइ बिरह कै दाधा।
बिरहा सुभर समुँद असँभारा। भँवर मेलि जिउ लहरन्हि मारा।
बिरह नाग होइ सिर चढि डसा। औ होइ अगिनि चँदन महँ बसा।
जोबन पंखी बिरह बिआधू। केहरि भयो कुरंगिनि खाधू।
कनक बान जोबन कत कीन्हा। औ तन कठिन बिरह दुख दीन्हा।
जोबन जलहिं बिरह मसि छुवा। फूलहि भँवर फरहि भा सुवा।

जोबन चाँद उवा जस बिरह भएउ सँग राहु ।
घटतहि घटत खीन भा कहै न पारौं काहु ॥

नन जो चक्र फिरै चहुँ ओराँ । चरचै धाइ समाइ न कोराँ ।
कहेसि पेम जौ उपना बारी । बाँधु सत्त मन डोल न भारी ।
जेहि जिय महँ सत होइ पहारू । परै पहार न बाँकै बारू ।
सती जो जरै पेम पिय लागी । जौ सत हिएँ तौ सीतल आगी ।
जोबन चाँद जो चौदसि करा । बिरह कि चिनगि चाँद पुनि जरा ।
पवन बंध होइ जोगी जती । काम बंध होइ कामिनि सती ।
आउ बसंत फूल फुलवारी । देव बार सब जैहहिं बारी ।

पुनि तुम्ह जाहु बसंत लै पूजि मनावहु देव ।
जिउ पाइअ जग जनमे पिउ पाइअ कै सेव ॥

जब लगि अवधि चाह सो आई । दिन जुग बर बिरहिनि कहँ जाई ।
नींद भूख अह निसि गै दोऊ । हिएँ माझ जस कलपै कोऊ ।
रोवँहि रोवँ लागे जनु चाँटे । सोतहि सोत बेधे बिख काँटे ।
दगध कराह जरै सब जीऊ । बेगि न आउ मलैगिरि पीऊ ।
कवन देव कहँ जाइ परासौं । जेहि सुमेरु हिय लाइ गरासौं ।
गुपुत जो फल साँसहि परगटै । अब होइ सुभर चहहि पुनि घटै ।
भए सँजोग जौ रे अस मरना । भोगी भएँ भोग का करना ।

जोबन चंचल ढीठ है करै निकाजहि काज ।
धनि कुलवति जो कुल धरै करि जोबन महँ लाज ॥

पद्मावती सुआ भेंट खंड

तेहि वियोग हीरामनि आवा । पदुमावति जानहुँ जिउ पावा ।
कंठ लागि सो हौसुर रोई । अधिक मोह जो मिलै बिछोई ।
आगि बुझी दुख हियँ जो गँभीरू । नैनन्ह आइ चुवा होइ नीरू ।
रही रोइ जब पदुमिनि रानी । हँसि पूँछहि सब सखी सयानी ।

मिले रहस चाहिअ भा दूना। कत रोइअ जौ मिले बिछूना।
तेहि क उतर पदुमावति कहा। बिछुरन दुक्ख हिएँ भरि रहा।
मिला जो आइ हिएँ सुख भरा। वह दुख नैन नीर होइ ढरा।

बिछुरता जब भेटिऐ सो जानै जेहि नेहु।
सुक्ख सुहेला उग्गवइ दुक्ख झरै जेउँ मेहु॥

पुनि रानी हँसि कूसल पूँछा। कत गवनेहु पिजर कै छूँछा।
रानी तुम्ह जुग जुग सुख पाटू। छाज न पखिहि पिजर ठाटू।
जौं भा पख कहाँ थिर रहना। चाहै उड़ा पखि जौ डहना।
पिजर महँ जो परेवा घेरा। आइ मँजारि कीन्ह तहँ फेरा।
देवसेक आइ हाथ पै मेला। तेहि डर बनोबास कहँ खेला।
तहाँ बिआध जाइ नर साँधा। छूट न पाँव मीचु कर बाँधा।
ओइँ धरि बेचा बाँभन हाथाँ। जबू दीप गएउँ तेहि साथाँ।

तहाँ चित्रगढ़ चितउर चित्रसेनि कर राज।
टीका दीन्ह पुत्र कहँ आपु लीन्ह सिव साज॥

बैठ जो राज पिता के ठाऊँ। राजा रतनसेनि ओहि नाऊँ।
का बरनौं धनि देस दियारा। जहँ अस नग उपना उजियारा।
धनि माता धनि पिता बखाना। जेहि कें बंस अस अस आना।
लखन बतीसौ कुल निरमरा। बरनि न जाइ रूप औ करा।
ओइँ हौं लीन्ह अहा अस भागू। चाहै सोनहि मिला सोहागू।
सो नग देखि इंछ भै मोरी। है यह रतन पदारथ जोरी।
है ससि जोग इहै पै भानू। तहाँ तुम्हार मैं कीन्ह बखानू।

कहाँ रतन रतनाकर कञ्चन कहाँ सुमेरु।
दैय जौ जोरी दुहुँ लिखी मिलै सो कवनेहु फेर॥

सुनि कै बिरह चिनगि ओहि परी। रतन पाव जौ कञ्चन करी।
कठिन पेम बिरहा दुख भारी। राज छाड़ि भा जोगि भिखारी।
मालति लागि भँवर जस होई। होइ बाउर निसरा बुधि खोई।
कहेसि पतंग होइ धँसि लेऊँ। सिंघल दीप जाइ जिउ देऊँ।

पुनि ओहि कोउ न छाड अकेला । सोरह सहस कुँवर भए चेला ।
औरु गनै को संग -सहाई । महादेव मढ मेला जाई ।
सूरुज परस दरस की ताईं । चितवै चाँद चकोर कि नाईं ।

तुम्ह बारीं रस जोग जेहि कँवलहि जस अरघानि ।
तस सूरुज परगासि कै भँवर मिलाएउँ आनि ॥

हीरामनि जौ कही रस बाता । सुनि कै रतन पदारथ राता ।
जस सूरुज देखत होइ ओपा । तस भा बिरह काम दल कोपा ।
पै सुनि जोगी केर बखानू । पदुमावति मन भा अभिमानू ।
कचन जौ कसिअै कै ताता । तब जानिअ दहुँ पीत कि राता ।
कंचन करी न काँचहि लोभा । जौ नग होइ पाव तब सोभा ।
नग कर मरम सो जरिया जाना । जरै जो अस नग हीर पखाना ।
को अस हाथ सिध मुख घाला । को यह बात पिता सौं चाला ।

सरग इद्र डरि काँपै बासुकि डरै पतार ।
कहाँ अैस बर प्रिथिमी मोहिं जोग संसार ॥

तूँ रानी ससि कचन करा । वह नग रतन सूर निरमरा ।
बिरह बजागि बीच का कोई । आगि जो छुवै जाइ जरि सोई ।
आगि बुझाइ ढोइ जल काढ़ै । यह न बुझाइ आगि असि बाढै ।
बिरह कि आगि सूर नहि टिका । रातिहुँ दिवस जरा औ धिका ।
खिनहिं सरग खिन जाइ पतारा । थिर न रहै तेहि आगि अपारा ।
धनि सो जीव दगध इमि सहा । तैस जरै नहि दोसर कहा ।
सुलुगि सुलुगि भीतर होइ स्यामा । परगट होइ न कहा दुख नामा ।

काह कहौ मैं ओहि कहँ जेइ दुख कीन्ह अमेट ।
तेहि दिन आगि करौ यह बाहर होइ जेही दिन भेंट ॥

हीरामनि जौ कही रस बाता । पाएउ पान भएउ मुख राता ।
चला सुआ रानी तब कहा । भा जो परावा सो कैसें रहा ।
जो निति चलै सँवारै पाँखा । आजु जो रहा काल्हि को राखा ।
न जनौ आजु कहाँ दिन उवा । आएहु मिलै चलेहु मिलि सुवा ।

मिलि कै बिछुरन मरन की आना। कत आएहु जौं चलेहु निदाना।
अनु रानी हौं रहतेउ राँधा। कैसें रहौं बचा कर बाँधा।
ताकरि दिस्टि अैस तुम्ह सेवा। जैस कूज मन सहज परेवा।

बसै मीन जल धरती अबा बिरिख अकास।
जौं रे पिरीति दुहुन महँ अंत होहिं एक पास॥

आवा सुवा बैठ जहँ जोगी। मारग नैन बियोग बियोगी।
आइ पेम रस कहा सँदेसू। गोरख मिला मिला उपदेसू।
तुम्ह कहँ गुरु मया बहु कीन्हा। लीन्ह अदेस आदि कहँ दीन्हा।
सबद एक होइ कहा अकेला। गुरु जस भृंगि फनिग जस चेला।
भृंगि ओहि पंखिहि पै लेई। एकहि बार छुएँ जिउ देई।
ताकहँ गुरू करै असि माया। नव अवतार देइ नै काया।
होइ अमर अस मरि कै जिया। भँवर कँवल मिलि कै मधु पिया।

आवै रितू बसत जब तब मधुकर तब बासु।
जोगी जोग जो इमि करहि सिद्धि समापति तासु॥

पार्वती-महेश खंड

ततखन पहुँचा आइ महेसू। बाहन बैल कुस्टि कर भेसू।
काँथरि कया हड़ावरि बाँधे। रुंडमाल औ हत्या काँधे।
सेस नाग औ कंठै माला। तन बिभूति हस्ती कर छाला।
पहुँची रुद्र कँवल के गटा। ससि माथें औ सुरसरि जटा।
चँवर घंट औ डँवरू हाथा। गौरा पारबती धनि साथा।
औ हनिवत बीर सँग आवा। धरे बेष जनु बंदर छावा।
औतहि कहेन्हि न लावहु आगी। ताकरि सपथ जरहु जेहि आगी।

कै तप करै न पारेहु कै रे नसाएहु जोग।
जियत जीय कस काढहु कहहु सो मोहि बियोग॥

कहेसि को मोहि बातन्ह बेलवाँवा। हत्या केर न तोहिं डर आवा।
जरै देहु दुख जरौं अपारा। निस्तरि परौं जरौं एक बारा।

जस भर्तहरि लागि पिंगला। मो कहँ पदुमावति सिंघला।
मैं पुनि तजा राज औ भोगू। सुनि सो नाउँ लीन्हा तप जोगू।
यह मढ सेएउँ आइ निरासा। गै सो पूजि मन पूजि न आसा।
तेइँ यह जिउ दाधे पर दाधा। आधा निकसि रहा घट आधा।
जो अधजरत सो बेलब न लावा। करत बेलँब बहुत दुख पावा।

एतना बोल कहत मुख उठी बिरह की आगि।
जौ महेस नहि आइ बुझावत सकल जगत हुति लागि॥

पारबती मन उपना चाऊ। देखौ कुँवर केर सत भाऊ।
दहुँ यह बीच कि पेमहि पूजा। तन मन एक कि मारग दूजा।
भै सुरूप जानहुँ अपछरा। बिहसि कुँवर कर आँचर धरा।
सुनहु कुँवर मोसो एक बाता। जस रँग मोर न औरहि राता।
औ बिधि रूप दीन्ह है तोकाँ। उठा सो सबद जाइ सिव लोकाँ।
तब हौ तो कहँ इंद्र पठाई। गै पदुमिनि तैं आछरि पाई।
अब तजु जरन मरन तप जोगू। मो सो मानु जनम भरि भोगू।

हौं आछरि कबिलास की जेहि सरि पूजि न कोइ।
मोहि तजि सँवरि जो ओहि सरसि कौन लाभु तोहि होइ॥

भलेहि रंग तोहि आछरि राता। मोहि दोसरें सौ भाव न बाता।
मोहि ओहि सँवरि मुएँ अस लाहा। नैन सो देखसि पूँछसि काहा।
अबहीं तेहि जिउ देइ न पावा। तोहि असि आछरि ठाढ़ मनावा।
जौ जिउ देहुँ ओहि कि आसाँ। न जनौ काह होइ कबिलासाँ।
हौं कबिलास काह लै करऊँ। सोइ कबिलास लागि ओहि मरऊँ।
ओहि के बार जीवनहि बारौ। सिर उतारि नेवछावरि डारौ।
ताकरि चाह कहै जो आई। दुऔ जगत तेहि देउँ बड़ाई।

ओहि न मोरि कछु आसा हौ ओहि आस करेउँ।
तेहि निरास प्रीतम कहँ जिउ न देउ का देउँ॥

गौरै हँसि महेस सौं कहा। निस्चै यहु बिरहानल दहा।
निस्चै यह ओहि कारन तपा। परिमल पेम न आछै छपा।

चं पेम पीर यह जागा। कसत कसौटी कचन लागा।
न पियर जल डभकहि नैनाँ। परगट दुश्रौ पेम के बैनाँ।
श्रोहि लागि जरम एहि सीझा। चहै न औरहि श्रोही रीझा।
देवन्ह के पिता। तुम्हरी सरन राम रन जिता।
कहँ तसि मया करेहू। पुरवहु श्रास कि हत्या लेहू।

हत्या दुइ जो चढ़ाएहु काँधे श्रबहुँ न गे श्रपराध।
तीसरि लेहु एहु कै माँथें जौ रे लेइ कै साथ॥

कै महादेव कै भाखा। सिद्ध पुरुष राजै मन लखा।
श्रंग नहिं बैठै माखी। सिद्ध पलक नहि लागै श्राँखी।
द्धहि संग होइ नहिं छाया। सिद्धहि होइ न भूख श्रौ माया।
जग सिद्धि गोसाईं कीन्हा। परगट गुपुत रहै को चीन्हा।
चढ़ा कुस्टी के भेसू। गिरिजापति सत श्राहि महेसू।
सोइ रहै तेहि खोजा। जस बिक्रम श्रौ राजा भोजा।
जियँ तंत मत सो हेरा। गएउ हेराइ जबहि भा मेरा।

बिनु गुरु पंथ न पाइश्र भूले सोइ जो मेंट।
जोगी सिद्ध होइ तब जब गोरख सौं भेंट॥

रतनसेनि गहबरा। छाड़ि डफार पाउ लै परा।
पितैं जनमि कत पाला। जौ पै फाँद पेम गियँ घाला।
सरग मिले हुत दोऊ। कत निरार कै दीन्ह बिछोऊ।
पदारथ कर हुँति खोवा। टूटहि रतन रतन तस रोवा।
मेघ जस बरिसहिं भले। पुहुमि श्रपूरि सलिल होइ चले।
उपटि सिखर गा पाटी। जरै पानि पाहन हिय फाटी।
पानि होइ होइ सब गिरईं। पेम के फाँद कोउ जनि परईं।

तस रोवै जस जरै जिउ गरै रकत श्रौ माँसु।
रोवँ रोवँ सब रोवहि सोत सोत भरि श्राँसु॥

बूड़ि उठा संसारू। महादेव तब भएउ मयारू।
न रोव बहुत तैं रोवा। श्रब ईसर भा दारिद खोवा।

जो दुख सहै होइ सुख ओकाँ । दुख बिनु सुख न जाइ सिवलोकाँ ।
अब तूँ सिद्ध भया सिधि पाई । दरपन कया छूटि गै काई ।
कहौं बात अब होइ उपदेसी । लागु पंथ भूले परदेसी ।
जौ लहि चोर सेंध नहिं देई । राजा केर न मूँसै पेई ।
चढ़ै तौ जाइ बार वह खूँदी । परै तौ सेंधि सीस सौं मूँदी ।

कहौ तोहि सिंघल गढ़ है खँड सात चढ़ाउ ।
फिरा न कोई जिअत जिउ सरग पंथ दै पाउ ॥

गढ़ तस बाँक जैसि तोरि काया । परखि देखु तैं ओहि की छाया ।
पाइअ नाहि जूझि हठि कीन्हे । जेइँ पावा तेइँ आपुहि चीन्हे ।
नौ पौरी तेहि गढ मँझिआरा । औ तहँ फिरहि पाँच कोटवारा ।
दसवँ दुआर गुपुत एक नाँकी । अगम चढाव बाट,सुठि बाँकी ।
भेदी कोइ जाइ ओहि घाटी । जौ लै भेद चढै होइ चाँटी ।
गढ़ तर सुरँग कुंड अवगाहा । तेहि महँ पंथ कहौ तोहि पाहाँ ।
चोर पैठि जस सेंधि सँवारी । जुआ पैंत जेउँ लाव जुआरी ।

जस मरजिया समुँद धँसि मारै हाथ आव तब सीप ।
ढूँढि लेहि ओहि सरग दुवारी औ चढु सिंघल दीप ॥

दसवँ दुवार तारु का लेखा । उलटि दिस्टि जो लाव सो देखा ।
जाइ सो जाइ साँस मन बंदी । जस धँसि लीन्ह कान्ह कालिंदी ।
तूँ मन नाँथु मारि कै स्वाँसा । जौ पै मरहि आपुहि करु नाँसा ।
परगट लोकचार कहु बाता । गुपुत लाउ जासौं मन राता ।
हौ हौ कहत मत सब कोई । जौ तूँ नाहि आहि सब सोई ।
जियतहि जौ रे मरै एक बारा । पुनि कत मीचु को मारै पारा ।
आपुहि गुरु सो आपुहि चेला । आपुहि सब सो आपु अकेला ।

आपुहि मीचु जियन पुनि आपुहि तन मन सोइ ।
आपुहि आपु करै जो चाहै कहाँ क दोसर कोइ ॥

पद्मावती-रतनसेन-भेट खंड

सात खंड ऊपर कबिलासू। तहँ सोवनारि सेज सुखबासू।
चारि खभ चारिहुँ दिसि धरे। हीरा रतन पदारथ जरे।
मानिक दिया बरे औ मोती। होइ अँजोर रैनि तेहि जोती।
ऊपर रात चँदोवा छावा। औ भुइँ सुरँग बिछाउ बिछावा।
तेहि महँ पलँग सेज सो डासी। का कहँ असि रची सुखबासी।
दुहुँ दिसि गेडुआ औ गलसुई। काँचे पाट भरी धुनि रूई।
फूलन्ह भरी असि केहि जोगू। को तेहि पौढ़ि मान सुख भोगू।

अति सुकुमारि सेज सो साजी छुवै न पावै कोइ।
देखत नवै खिनुहि खिन पाँव धरत कस होइ॥

सूरुज तपत सेज सो पाई। गाँठि छोरि ससि सखी छपाई।
अहे कुँवर हमरे अस चारू। आजु कुँवरि कर करब सिगारू।
हरदि उतारि चढाएब रंगू। नब निसि चाँद सुरुज सौ संगू।
जनु चात्रिक मुख हुति गौ स्वाती। राजहि चकचौहट तेहि भाँती।
जोगि छरा जनु अछरिन्ह साथा। जोग हाथ हुँति भएउ बेहाथा।
वै चतुरा गुरु ले उपसईं। मत्र अमोल छीनि लै गईं।
बैठेउ खोइ जरी औ बूटी। लाभ न आव मूर भौ टूटी।

खाइ रहा ठग लाड़ू तंत मंत बुधि खोइ।
भा धौराहर बनखँड ना हँसि आव न रोइ॥

अस तप करत गएउ दिन भारी। चारि पहर बीते जुग चारी।
परी साँझ पुनि सखी सो आईं। चाँद सो रहै न उईं तराईं।
पूछेन्हि गुरू कहाँ रे चेला। बिनु ससियर कस सूर अकेला।
धातु कमाइ सिखे तैं जोगी। अब कस जस निरधातु बियोगी।
कहाँ सो खोए बीरौ लोना। जेहि तें होइ रूप औ सोना।
कस हरतार पार नहि पावा। गंधक कहाँ कुरकुटा खवा।
कहाँ छपाए चाँद हमारा। जेहि बिनु जगत रैनि अँधिआरा।

नैन कौड़िया हिय समुँद गुरू सो तेहि महँ जोति।
मन मरजिया न होइ परै हाथ न आवै मोति ॥

का बसाइ जौ गुरु अस बूझा। चकाबूह अभिमनु जो जूझा।
बिख जो देहि अंब्रित देखराई। तेहि रे निछोहिहिं को पतिआई।
मरै सो जानु होइ तन सूना। पीर न जानै पीर बिहूना।
पार न पाव जो गधक पिया। सों हरतार कहौ किमि जिया।
सिद्धि गोटिका जापहँ नाही। कौनु धातु पूँछहु तेहि पाही।
अब तेहि बाजु राँग भा डोलौ। होइ सार तब बर कै बोलौ।
अभरक कै तन एँगुर कीन्हा। सो तुम्ह फेरि अगिनि महँ दीन्हा।

मिलि जौ पिरीतम बिछुरै काया अगिनि जराइ।
कै सौ मिलै तन तपति बुझै कै मोहि मुएँ बुझाइ ॥

सुनि कै बात सखी सब हँसी। जनहुँ रैनि तरईं परगसीं।
अब सो चाँद गँगन महँ छपा। लालि किहें कत पावसि तपा।
हमहुँ न जानहिं दहुँ सो कहाँ। करब खोज औ बिनउब तहाँ।
औ अस कहब आहि परदेसी। करु माया हत्या जनि लेसी।
पीर तुम्हार सुनत भा छोहू। दैय मनाव होउ अब ओहू।
तूँ जोगी तप करु मन जथा। जोगिहि कवनि राज कै कथा।
वह रानी जहवाँ सुख राजू। बारह अभरन अरै सो साजू।

जोगी दिढ़ आसन करु अस्थिर धरु मन डाउँ।
जौ न सुने तौ अब सुनु बारह अभरन नाउँ ॥

प्रथमहि मंजन होइ सरीरू। पुनि पहिरै तन चदन चीरू।
साजि माँग पुनि सेंदुर सारा। पुनि लिलाट रचि तिलक सँवारा।
पुनि अंजन दुँहु नैन करेई। पुनि कानन्ह कुंडल पहिरेई।
पुनि नासिक भल फूल अमोला। पुनि राता मुख खाइ तँमोला।
गियँ अभरन पहिरै जहँ ताईं। औ पहिरै कर कँगन कलाईं।
कटि छुद्रावलि अभरन पूरा। औ पायल पायन्ह भल चूरा।
बारह अभरन एइ बखाने। ते पहिरै बरहौ असथाने।

पुनि सोरह सिगार जस चारिहुँ जोग कुलीन।
दीरघ चारि चारि लघु चारि सुभर चहुँ खीन॥

पदुमावति जो सँवरै लीन्ही। पूनिव राति दैयँ असि कीन्ही।
कै मजन तब किएहु अन्हानू। पहिरे चीर गएउ छपि भानू।
रचि पत्रावलि माँग सेंदूरा। भरि मोतिन्ह औ मानिक पूरा।
चदन चित्र भए बहु भाँती। मेघ घटा जानहुँ बग पाँती।
सिरे जो रतन माँग बैसारा। जानहुँ गँगन टूट लै तारा।
तिलक लिलाट धरा तस डीठा। जनहुँ दुइज पर नखत बईठा।
मनि कुंडल खुँटिला औ खूँटी। जानहुँ परी कचपची टूटी।

पहिरि जराऊ ठाढि भौ बरनि न आवै भाउ।
माँग क दरपन गँगन भा तौ ससि तार देखाउ॥

बाँक नैन औ अजन रेखा। खजन जनहुँ सरद रितु देखा।
जब जब हेरु फेरु चखु मोरी। लुरै सरद महँ खजन जोरी।
भौहैं धनुक धनुक पै हारे। नैनन्ह साँधि बान जनु मारे।
कनक फूल नासिक अति सोभा। ससि मुख आइ सूक जनु लोभा।
सुरँग अधर औ लीन्ह तँबोरा। सोहै पान फूल कर जोरा।
कुसुम गेंद अस सुरँग कपोला। तेहि पर अलक भुअगिनि डोला।
तिल कपोल अलि पदुम बईठा। बेधा सोइ जो वह तिल डीठा।

देखि सिंगार अनूप बिधि बिरह चला तब भागि।
कालकूट एइ ओनए सब मोरें जिय लागि॥

का बरनौं अभरन उर हारा। ससि पहिरे नखतन्ह कै मारा।
चीर चारु औ चंदन चोला। हीर हार नग लाग अमोला।
तिन्ह झाँपी रोमावलि कारी। नागिनि रूप डसै हत्यारी।
कुच कचुकी सिरीफल उभै। हुलसहिं चहहि कंत हिय चुभै।
बाँहन्ह बाँहू टाड सलोनी। डोलत बाँह भाउ गति लोनी।
नीवी कँवल करी जनु बाँधी। बिसा लंक जानहु दुइ आधी।
छुद्रघटि कटि कंचन तागा। चलै तौ उठै छतीसौ रागा।

चूरा पायल अनवट बिछिया पायन्ह परे बियोग।
हिए लाइ टुक हम कहँ समदहु तुम्ह जानहु अउ भोगु ॥

अस बारह सोरह धनि साजै। छाज न औरहि ओहिं पै छाजै।
बिनवहि सखी गहरु नहि कीजै। जेइँ जिउ दीन्ह ताहि जिउ दीजै।
सँवरि सेज धनि मन भौ सका। ठाढि तिवानि टेकि कै लंका।
अनचिन्ह पिउ काँपै मन माहाँ। का मैं कहब गहब जब बाँहाँ।
बारि बएस गौ प्रीति न जानी। तरुनी भइ मैमंत भुलानी।
जोबन गरब कछु मैं नहि चेता। नेहु न जानिउँ स्याम कि सेता।
अब जौ कत पूँछिहि सेइ बाता। कस मुँह होइहि पीत कि राता।

हौ सो बारि औ दुलहिनि पिउ सो तरुन औ तेज।
नहि जानौ कस होइहि चढ़त कत की सेज ॥

सुनि धनि डर हिरदै तब ताईं। जौ लगि रह सि मिला नहिं साईं।
कवन सो करी जो भँवर न राईं। डारि न टूटै फर गरुआईं।
माता पिता बियाही सोईं। जरम निबाह पियहि सो होईं।
भरि जमबार चहै जहँ रहा। जाइ न मेटा ताकर कहा।
ताकहँ बिलँबु न कीजै बारी। जो पिय आएसु सोइ पियारी।
चलहु बेगि आएसु भा जैसें। कंत बोलावै रहिए कैसें।
मान न करु थोरा करु लाडू। मान करत रिस मानै चाडू।

साजन लेइ पठाइया आएसु जेहि क अमेट।
तन मन जोबन साजि सब देइ चलिअ लै भेंट ॥

पदुमिनि गवँन हंस गौ दूरी। हस्ती लाजि मेल सिर धूरी।
बदन देखि घटि चंद छपाना। दसन देखि छबि बीजु लजाना।
खंजन छपा देखि कै नैना। कोकिल छपा सुनत मधु बैना।
गीवँ देखि कै छपा मँजूरू। लंक देखि कै छपा सदूरू।
भौह धनुक जो छपा अकाराँ। बेनी बासुकि छपा पताराँ।
खरग छपा नासिका बिसेखी। अम्रित छपा अधर रस पेखी।
भुजन छपानि कँवल पौनारी। जंघ छपा केदली होइ बारी।

आछरि रूप छपानी जबहि चली धनि साजि।
जावँत गरब गहीलि हुतिं सबै छपीं मन लाजि॥

मिली तराईं सखी सयानी। लिए सो चाँद सुरुज पहँ आनी।
पारस रूप चाँद देखराई। देखत सुरुज गएउ मुरुछाई।
सोरह करा दिस्टि ससि कीन्ही। सहसौ करा सुरुज कै लीन्ही।
भा रबि अस्त तराइन हँसे। सुरुज न रहा चाँद परगसे।
जोगी आहि न भोगी होई। खाइ कुरकुटा गा परि सोई।
पदुमावति निरमलि जसि गगा। तोहि जो कित जोगी भिखमंगा।
अबहुं जगावहिं चेला जागू। आवा गुरू पाय उठि लागू।

बोलहिं सबद सहेली कान लागि गहि माँथ।
गोरख आइ ठाढ़ भा उठु रे चेला नाथ॥

गोरख सबद सुद्ध भा राजा। रामा सुनि रावन होइ गाजा।
गही बाँह धनि सेजवाँ आनी। आँचर ओट रही छपि रानी।
सकुचै डरै मुरै मन नारी। गहु न बाँह रे जोगि भिखारी।
ओहट होहि जोगि तोरि चेरी। आवै बास कुरुकुटा केरी।
देखि भभूति छूति मोहि लागा। काँपै चाँद राहु सौ भागा।
जोगी तोरि तपसी कै काया। लागी चहै अंग मोहि छाया।
बार भिखारि न माँगसि भीखा। माँगै आइ सरग चढ़ि सीखा।

जोगि भिखारी कोई मँदिर न पैसै पार।
माँगि लेहि किछु भिख्या जाइ ठाढ़ होहि बार॥

अनु तुम्ह कारन पेम पियारी। राज छाँड़ि कै भएउँ भिखारी।
नेह तुम्हार जो हिए समाना। चितउर माँह न सुमिरेउँ आना।
जस मालति कह भँवर बियोगी। चढ़ा बियोग चलेउँ होइ जोगी।
भएउँ भिखारि नारि तुम्ह लागी। दीप पतँग होइ अँगएउँ आगी।
भँवर खोजि जस पावै केवा। तुम्ह काँटे मैं जिव पर छेवा।
एक बार मरि मिलै जौ आई। दोसरि बार मरै कत जाई।
कत तेहिं मीचु जो मरि कै जिया। भा अम्मर मिलि कै मधु पिया।

भँवर जो पावै कँवल कहँ बहु आरति बहु आस।
भँवर होइ नेवछावरि कँवल देइ हँसि बास॥

अपने मुँह न बड़ाई छाजा। जोगी कतहुँ होंहि नहि राजा।
हौं रानी तूँ जोगि भिखारी। जोगिहि भोगिहि कौन चिन्हारी।
जोगी सबै छंद अस खेला। तूँ भिखारि केहि माहँ अकेला।
पवन बाँधि उपसवहिं अकासाँ। मनसहि जहाँ जाहि तेहि पासाँ।
तै तेहि भाँति सिस्टि यह छरी। एहि भेस रावन सिय हरी।
भँवरहि मींचु नियर जब आवा। चंपा बास लेइ कहँ धावा।
दीपक जोति देखि उजियारी। आइ पतँग होइ परा भिखारी।

रैनि जो देखिअ चद मुख मकु तन होइ अनूर।
तहूँ जोगि तस भूला भै राजा के रूप॥

अनु धनि तूँ ससिअर निसि माहाँ। हौं दिनअर तेहि की तूँ छाहाँ।
चाँदहि कहाँ जोति औ करा। सुरज कि जोति चाँद निरमरा।
भँवर बास चंपा नहिं लेई। मालति जहाँ तहाँ जिउ देई।
तुम्ह निति भएउँ पतँग कै करा। सिंघल दीप आइ उड़ि परा।
सेएउँ महादेव कर बारू। तजा अन्न भा पवन अधारू।
तुम्ह सो प्रीति गाँठि हौ जोरी। कटै न काटे छुटै न छोरी।
सीय भीख रावन कहँ दीन्ही। तूँ असि निठुर अँतरपट कीन्ही।

रंग तुम्हारे रातेउँ चढ़ेउँ गँगन होइ सूर।
जहँ ससि सीतल कहँ तपनि मन इछा धनि पूर॥

जोगि भिखारि करसि बहु बाता। कहेसि रंग देखौ नहि राता।
कापर रँगे रंग नहि होई। हिएँ औटि उपनै रँग सोई।
चाँद के रग सुरुज जौ राता। देखिअ जगत साँझ परभाता।
दगध बिरह निति होइ अँगारू। ओहि की आँच धिकै ससारू।
जौ मँजीठ औटै औ पचा। सो रँग जरम न डोलै रँचा।
जरै बिरह जेउँ दीपक बाती। भीतर जरै उपर होइ राती।
जर परास कोइला के भेसू। तब फूलै राता होइ टेसू।

पान सुपारी खैर दुहुँ मेरै करै चक चून।
तब लगि रंग न राचै जब लगि होइ न चून॥

धनिश्रा का सुरंग का चूना। जेहि तन नेह दगध तेहि दूना।
हौ तुम्ह नेहुँ पियर भा पानू। पेड़ी हुत सुनि रासि बखानू।
सुनि तुम्हार संसार बड़ौना। जोग लीन्ह तन कीन्ह गड़ौना।
करभँज किगरी लै बेरागी। नेवती भएउँ बिरह की आगी।
फेरि फेरि तन कीन्ह भुँजौना। औटि रकत रँग हिरदै औना।
सूखि सुपारी भा मन मारा। सिर सरौत जनु करवत सारा।
हाड़ चून भै बिरह जो डहा। सो पै जान दगध इमि सहा।

कै जानै सो बापुरा जेहि दुख अैस सरीर।
रकत पियासे जे हहिं का जानहिं पर पीर॥

जोगिन्ह बहुतै छद ओराही। बुँद सेवातिहि जैस पराहीं।
परै समुद्र खार जल ओही। परै सीप मुँह मोंती होही।
परै पुहमी पर होइ कचूरू। परै केदली महँ होइ कपूरू।
परै मेरु पर अंब्रित होई। परै नाग मुख बिख होइ सोई।
जोगी भँवर न थिर ये दोऊ। केहिं आपन भए कहै सो कोऊ।
एक ठाँउ वै थिर न रहाहीं। भखु लै खेलि अनत कहँ जाहीं।
होइ गिरिही पुनि होहि उदासी। अत काल दुनहूँ बिसवासी।

तासौं नेह जो दिढ करै थिर आछहि सहदेस।
जोगी भँवर भिखारी इन्ह तें दूरि अदेस॥

थल थल नग न होइ जेहि जोती। जल जल सीप न उपनै मोंती।
बन बन बिरिख चँदन नहि होई। तन तन बिरह न उपजै सोई।
जेहि उपना सो औटि मरि गएऊ। जरम निनार न कबहूँ भएऊ।
जल अंबुज रबि रहै अकासा। प्रीति तो जानहुँ एकहि पासा।
जोगी भँवर जो थिर न रहाहीं। जेहि खोजहि तेहि पावहि नाहीं।
मैं तुइ पाए आपन जीऊ। छाँड़ि सेवातिहि जाइ न पीऊ।
भँवर मालती मिलै जौं आई। सो तजि आन फूल कत जाई।

चपा प्रीति जो बेलि है दिन दिन आगरि बास ।
गरि गुरि आपु हेराइ जौ मुएहु न छाँड़ै पास ॥

ओैसें राजकुँवर नहि मानौ । खेलु सारि पाँसा तौ जानौ ।
कच्चे बारह बार फिरासी । पक्के तौ फिरि थिर न रहासी ।
रहै न आठ अठारह भाखा । सोरह सतरह रहै सो राखा ।
सतएँ ढरै सो खेलनिहारा । ढारु इग्यारह जासि न मारा ।
तूँ लीन्हे मन आछसि दुवा । औ जुग सारि चहसि पुनि छुवा ।
हौ नव नेह रचौ तोहि पाहाँ । दसौ दाँउ तोरे हिय माहाँ ।
पुनि चौपर खेलौ कै हिया । जो तिरहेल रहै सो तिया ।

जेहि मिलि बिछुरन औ तपनि अंत तत तेहि निंत ।
तेहि मिलि बिछुरन को सहै बरु बिनु मिले निचित ।

बोलौ बचन नारि सुनु साँचा । पुरुख क बोल सपत औ बाचा ।
यह मन तोहि अस लावा नारी । दिन तोहि पास और निसि सारी ।
पौ परि बारह बार मनावौ । सिर सौ खेलि पैत जिउ लावौ ।
मारि सारि सहि हौ अस राँचा । तेहि बिच कोठा बोल न बाँचा ।
पाकि गहे पै आस करीता । हौ जीतेहुँ हारा तुम्ह जीता ।
मिलि कै जुग नहि होउँ निनारा । कहाँ बीच दुतिया देनिहारा ।
अब जिउ जरम जरम तोहिं पासा । किएउँ जोग आएउँ कबिलासा ।

जाकर जीव बसै जेहि सेतें तेहि पुनि ताकरि टेक ।
कनक सोहाग न बिछुरै अवटि मिलै जौ एक ॥

बिहँसी धनि सुनि कै सत बाता । निस्चै तूँ मोरे रँग राता ।
निस्चै भँवर कँवल रस रसा । जो जेहि मन सो तेहि मन बसा ।
जब हीरामनि भएउ सँदेसी । तोहि निति मँडप गइउँ परदेसी ।
तोर रूप देखेउँ सुठि लोना । जनु जोगी तूँ मेलेसि टोना ।
सिद्ध गोटिका दिस्टि कमाई । पारै मेलि रूप बैसाई ।
भुगुति देइ कहँ मैं तुहि डीठा । कवल नयन होइ भँवर बईठा ।
नैन पुहुप तूँ अलि भा सोभी । रहा बेधि उड़ि सकेसि न लोभी ।

जाकरि आस होइ असि जा कहँ तेहि पुनि ताकरि आस।
भँवर जो डाढ़ा कँवल कहँ कस न पाव रस बास ॥

कवनि मोहनी दहुँ हुति तोहीं। जो तोहि बिथा सो उपनी मोहीं।
बिनु जल मीन तपी तस जीऊ। चात्रिक भइउ कहत पिउ पिऊ।
जरिउँ बिरह जस दीपक बाती। पँथ जोवत भइउँ सीप सेवाती।
डारि डारि जेउँ कोइल भई। भइउँ चकोरि नींद निसि गई।
मोरें पेम पेम तोहि भएऊ। राता हेम अगिनि जो तएऊ।
हीरा दिपे जौ सुरुज उदोती। नाहि त कित पाहन कहँ जोती।
रबि परगासें कँवल बिगासा। नाहि त कित मधुकर कित बासा।

तासों कवन अँतरपट जो अस प्रीतम पीउ।
नेवछावरि गइ आप हौ तन मन जोबन जीउ ॥

कहि सत भाउ भएउ कँठलागू। जनु कंचन मों मिला सोहागू।
चौरासी आसन बर जोगी। खट रस बिदक चतुर सो भोगी।
कुसुम माल असि मालति पाई। जनु चंपा गहि डार ओनाई।
करी बेधि जनु भँवर भुलाना। हना राहु अर्जुन के बाना।
कंचन करी चढी नग जोती। बरमा सौं बेधा जनु मोती।
नारँग जानुँ कीर नख देई। अधर आँबु रस जानहुँ लेई।
कौतुक केलि करहिं दुख नसा। कुंदहि कुरुलहि जनु सर हंसा।

रही बसाइ बासना चोवा चंदन मेद।
जो असि पदुमिनि रावै सो जानै यह भेद ॥

चतुर नारि चित अधिक चिहूटै। जहाँ पेम बाँधै किमि छूटै।
किरिरा काम केलि मनुहारी। किरिरा जेहि नहिं सो न सुनारी।
किरिरा होइ कंत कर तोखू। किरिरा किहे पाव धनि मोखू।
जेहि किरिरा सो सोहाग सोहागी। चदन जैस स्यामि कँठ लागी।
गोदि गेंद कै जानहुँ लई। गेंदहुँ चाहि धनि कोवरि भई।
दारिवँ दाख बेल रस चाखा। पिउ के खेल धनि जीवन राखा।
बैन सोहावनि कोकिल बोली। भएउ बसंत करी मुख खोली।

पिउ पिउ करत जीभ धनि सूखी बोली चात्रिक भाँति।
परी सो बूँद सीप जनु मोंती हिएँ परी सुख साति॥

हौ जूझि जस रावन रामा। सेज बिधसि बिरह संग्रामा।
लीन्ह लक कंचन गढ टूटा। कीन्ह सिगार अहा सब लूटा।
औ जोबन मैंमत बिधंसा। बिचला बिरह जीव लै नसा।
लूटे अंग अंग सब भेसा। छूटी मग भंग भे केसा।
कंचुकि चूर चूर भै ताने। टूटे हार मोंति छहराने।
बारी टाड सलोनी टूटी। बाँहू कँगन कलाईं फूटीं।
चदन अंग छूट तस भेंटी। बेसरि टूटि तिलक गा मेंटी।

पुहुप सिगार सँवारि जौ जोबन नवल बसंत।
अरगज जेउँ हिय लाइ कै मरगज कीन्हें कत॥

बिनति करै पदुमावति बाला। सो धनि सुराही पीउ पियाला।
पिउ आएसु माँथे पर लेऊँ। जौ मागै नै नै सिर देऊँ।
पै पिय बचन एक सुनु मोरा। चाखि पियहु मधु थोरइ थोरा।
पेम सुरा सोई पै पिया। लखै न कोइ कि काहूँ दिया।
चुवा दाख मधु सो एक बारा। दोसरि बार होहु बिसँभारा।
एक बार जो पी कै रहा। सुख जेंवन सुख भोजन कहा।
पान फूल रस रग करीजै। अधर अधर सों चाखन कीजै।

जो तुम्ह चाहहु सो करहु नहिं जानहुँ भल मंद।
जो भावै सो होइ मोहि तुम्हहि पै चहौ अनंद॥

सुनु धनि पेम सुरा के पिएँ। मरन जियन डर रहै न हिएँ।
जहँ मद तहाँ कहाँ संभारा। कै सो खुमरिहा कै मँतवारा।
सो पै जान पियै जो कोई। पी न अघाइ जाइ परि सोई।
जा कहँ होइ बार एक लाहा। रहै न ओहि बिनु ओही चाहा।
अरथ दरब सब देइ बहाई। कह सब जाउ न जाउ पियाई।
रातिहुँ देवस रहै रस भीजा। लाभ न देख न देखै छीजा।
भोर होत तब पलुह सरीरू। पाव खुमरिहा सीतल नीरू।

एक बार भरि देहु पियाला बार बार को माँग।
मुहमद किमि न पुकारै ऐस दाँउ जेहि खाँग ॥

भएउ बिहान उठा रबि साईं। ससि पहँ आईं नखत तराईं।
सब निसि सेज मिले ससि सूरू। हार चीर बलया भे चूरू।
सो धनि पान चून भै चोली। रंग रँगीलि निरँग भौ भोली।
जागत रैनि भएउ भिनुसारा। हिय न सँभार सोवति बेकरारा।
अलक भुअगिनि हिरदै परी। नारँग ज्यों नागिनि बिख भरी।
लरै मुरै हिय हार लपेटी। सुरसरि जनु कालिंदी भेंटी।
जनु पयाग अरइल बिच मिली। बेनी भइ सो रोमावली।

नाभी लाभी पुन्य की कासी कुंड कहाउ।
देवता मरहि कलपि सिर आपुहि दोख न लावहि काउ ॥

बिहँसि जगावहिं सखी सयानी। सूर उठा उठु पदुमिनि रानी।
सुनत सूर जनु कँवल बिगासा। मधुकर आइ लीन्ह मधुबासा।
जनहुँ माँति बसियानी बसी। अति बिसँभार फूलि जनु अरसी।
नैन कँवल जानहुँ धनि फूले। चितवनि मिरिग सोवत जनु भूले।
भै ससि खीनि गहन असि गही। बिथुरे नखत सेज भरि रही।
तन न सँभार केस औ चोली। चित अचेत मन बाउर भोली।
कँवल माँझ जनु केसरि डीठी। जोबन हुत सो गँवाइ बईठी।

बेलि जो राखी इंद्र कहँ पवनहुँ बास न दीन्ह।
लागेउ आइ भँवर तहँ करी बेधि रस लीन्ह ॥

हँसि-हँसि पूँछहि सखी सरेखी। जानहुँ कुमुद चंद मुख देखी।
रानी तुम्ह ऐसी सुकुमारा। फूल बास तनु जीउ तुम्हारा।
सहि न सकहु हिरदै पर हारू। कैसे सहिहु कंत कर भारू।
मुखा कवँल बिगसत दिन राती। सो कुँभिलान सहिहु केहि भाँती।
अधर जो कोंवल सहत न पानू। कैसें सहा लागि मुख भानू।
लंक जो पैग देत मुरि जाई। कैसें रही जो रावन राई।
चंदन चोंप पवन अस पीऊ। भइउ चित्र सम कस भा जीऊ।

सब अरगज भा मरगज लोचन पीत सरोज।
सत्य कहहु पदुमावति सखीं परीं सब खोज ॥

कहौं सखी आपन सति भाऊ। हौ जो कहति कस रावन राऊ।
जहाँ पुहुप अलि देखत संगू। जिउ डेराइ काँपत सब अंगू।
आजु मरम मैं पावा सोई। जस पियार पिउ और न कोई।
तब लगि डर हा मिला न पीऊ। भान कि दिस्टि छूटि गा सीऊ।
जत खन भाव कीन्ह परगासू। कँवल करी मन कीन्ह बिगासू।
हिएँ छोह उपना और सीऊ। पिउ रिसाइ लेउ बरु जीऊ।
हुत जो अपार बिरह दुख दोखा। जनहुँ अगस्ति उदधि जल सोखा।

हहूँ रंग बहु जानति लहरैं जेति समुंद।
पै पिय की चतुराई सकिउँ न एकौ बुंद ॥

कै सिंगार तापहँ कहँ जाऊँ। ओहि कहँ देखौ ठाँवहि ठाऊँ।
जौ जिउ महँ तौ उहै पियारा। तन महँ सोइ न होइ निरारा।
नैनन्ह माँह तौ उहै समाना। देखउँ जहाँ न देखउँ आना।
आपुन रस आपुहि पै लेई। अधर सहे लागे रस देई।
हिया थार कुच कंचन लाड़ू। अगुमन भेंट दीन्ह होइ चाड़ू।
हुलसी लंक लंक सो लसी। रावन रहसि कसौटी कसी।
जोबन सबै मिला ओहि जाई। हौं रे बीच हुति गई हेराई।

जस किछु दीजै धरै कहँ आपन लीजै सँभारि।
तस सिंगार सब लीन्हेसि मोहि कीन्हेसि ठठियारि ॥

अनु री छबीली तोहि छबि लागी। नेत्र गुलाल कंत सँग जागी।
चंप सुदरसन भा तोहि सोई। सोन जरद जसि केसरि होई।
पैठ भँवर कुच नारँग बारी। लागे नख उछरे रँग ढारी।
अधर अधर सों भीज तबोरी। अलकाउरि मुरि मुरि गौ मोरी।
रायमुनी तूँ औ रतमुँही। अलि मुख लागि भई फुलचुही।
जैस सिंगार हार सो मिली। मालति ऐसि सदा रहि खिली।
पुनि सिंगार करि अरसि नेवारी। कदम सेवती पियहि पियारी।

कुंद करी जहँवा लगि बिगसै रितु बसंत औ फागु।
फूलहु फरहु सदा सखि और सुख सुफल सोहाग ॥

कहि यह बात सखी सब धाई। चपावति कहँ जाइ सुनाई।
आजु निरँग पदुमावति बारी। जीउ न जानहुँ पवन अधारी।
तरकि तरकि गौ चदन चोला। धरकि धरकि डर उठै न बोला।
अही जो करी करा रस पूरी। चूर चूर होइ गई सो चूरी।
देखहु जाइ जैसि कुँभिलानी। सुनि सोहाग रानी बिहँसानी।
लै सँग सबै पदुमिनी नारी। आइ जहाँ पदुमावति बारी।
आइ रूप सबहीं सो देखा। सोन बरन होइ रही सो रेखा।

कुसुम फूल जस मरदिअ निरंग दीखु सब अंग।
चपावति भै बारनै चूँबि केस औ मंग ॥

सब रनिवास बैठ चहुँ पासा। ससि मंडर जनु बैठ अकासा।
बोला सबहि बारि कुँभिलानी। करहु सँभार देहु खंडवानी।
कोंवलि करी कँवल रँग भीनी। अति सुकमारि लंक कै खीनी।
चाँद जैस धनि बैठि तरासी। सहस करा होइ सुरज गरासी।
तेहि की झार गहन अस गही। भै निरंग मुख जोति न रही।
दरब उबारहु अरघ करेहू। औ लै वारि सन्यासिहि देहू।
भरि कै थार नखत गज मौंती। वारने कीन्ह चाँद कै जोती।

कीन्ह अरगजा मरदन औ सखि दीन्ह अन्हान।
पुनि भै चाँद जो चौदसि रूप गएउ छपि भान ॥

पटुवन्ह चीर आनि सब छोरे। सारी कचुकी लहरि पटोरे।
फुँदिआ और कसनिआ राती। छाएल पंडु आए गुजराती।
चदनौटा खीरोदक झारी। बाँस पोर झिलमिल की सारी।
चिकवा चीर मेघौना लोने। मोंति लाग औ छापे सोने।
सुरँग चीर भल सिंघल दीपी। कीन्ह छाप जो धन्नि वै छीपी।
पेमचा डोरिआ औ बीदरी। स्याम सेत पियरी औ हरी।
सातहुँ रंग सो चित्र चितेरी। भरि कै डीठि जाहिं नहिं हेरी।

पुनि अभरन बहु काढ़ा अनबन भाँति जराउ।
फेरि फेरि निति पहिरहिं जैस जैस मन भाउ॥

षट्ऋतु वर्णन खंड

पदुमावति सब सखी बोलाईं। चीर पटोर हार पहिराईं।
सीस सबन्हि के सेंदुर पूरा। सीस पूरि सब अग सेंदूरा।
चंदन अगर चतुरसम भरी। नएँ चार जानहुँ अवतरी।
जनहु कँवल सँग फूलीं कुईं। कै सो चाँद सँग तरईं उईं।
धनि पदुमावति धनि तोर नाहूँ। जेहि पहिरत पहिरा सब काहूँ।
बारह अभरन सोरह सिंगारा। तोहि सोहइ यह ससि ससारा।
ससि सो कलंकी राहुहि पूजा। तोहि निकलंक न होइ सरि दूजा।

काहूँ बीन गहा कर काहूँ नाद म्रिदग।
सब दिन अनँद गँवावा रहस कोड एक संग॥

भै निसि धनि जसि ससि परगसी। राजै देखि पुहुमि फिरि बसी।
भै कातिकी सरद ससि उवा। बहुरि गँगन रबि चाहै छुवा।
पुनि धनि धनुक भौहँ कर फेरी। काम कटाख टँकोर सो हेरी।
जानहुँ नहिं कि पैज पिय खाँचौ। पिता सपथ हौ आजु न बाँचौं।
काल्हि न होइ रहे सह रामा। आजु करौ रावन सग्रामा।
सेन सिगार महूँ है सजा। गज गति चाल अँचर गति धुजा।
नैन समुंद्र खरग नासिका। सरवरि जूझि को मो सौं टिका।

हौ रानी पदुमावति मैं जीता सुख भोग।
तूँ सरबरि करु तासौ जस जोगी जेहिं जोग॥

हौ अस जोगि जान सब कोऊ। बीर सिंगार जिते मैं दोऊ।
उहाँ त समुँह रिपुन दर माहाँ। इहाँ त काम कटक तुव पाहाँ।
उहाँ त कोपि बैरिदर मडौ। इहाँ त अधर अमिअ रस खंडौ।
उहाँ त खरग नरिंदन्ह मारौ। इहाँ त बिरह तुम्हार सँघारौं।

उहाँ त गज पेलौ होइ केहरि। इहाँ त कामिनि करसि हहेहरि।
उहाँ त लूसौ कटक खँधारू। इहाँ त जितौ तुम्हार सिंगारू।
उहाँ त कुंभस्थल गज नावौ। इहाँ त कुच कलसन्ह कर लावौ।

परा बीचु धरहरिया पेम राज कै टेक।
मानहिं भोग छहूँ रितु मिलि दूनौ होइ एक॥

प्रथम बसंत नवल रितु आई। सुरितु चैत बैसाख सोहाई।
चंदन चीर पहिरि धनि अगा। सेंदुर दीन्ह बिहँसि भरि मगा।
कुसुम हार औ परिमल बासू। मलयागिरि छिरिका कबिलासू।
सौर सुपेती फूलन्ह डासी। धनि औ कंत मिले सुखबासी।
पिउ सँजोग धनि जोबन बारी। भँवर पुहुप सँग करहि धमारी।
होइ फागु भलि चाँचरि जोरी। विरह जराइ दीन्ह जसि होरी।
धनि ससि सियरि तपै पिउ सूरू। नखत सिगार होहि सब चूरू।

जेहि घर कंता रितु भली आउ बसता नित्तु।
सुख बहरावहि देवहरै दुक्ख न जानहि कित्तु॥

रितु ग्रीखम कै तपनि न तहा। जेठ असाढ कत घर जहाँ।
पहिरैं सुरँग चीर धनि झीना। परिमल मेद रहै तन भीना।
पदुमावति तन सियर सुबासा। नैहर राज कंत कर पासा।
अधर तँबोर कपूर भिवँसेना। चदन चरचि लाव नित बेना।
ओबरि जूड़ि तहाँ सोवनारा। अगर पोति सुख नेति औधारा।
सेत बिछावन सौर सुपेती। भोग करहि निसि दिन सुख सेंती।
भा अनंद सिघल सब कहूँ। भागिवत सुखिया रितु छहूँ।

दारिवँ दाख लेहि रस बेरसहि आँब सहार।
हरियर तन सुवटा कर जो अस चाखनहार॥

रितु पावस बिरसै पिउ पावा। सावन भादौ अधिक सोहावा।
कोकिल बैन पाँति बग छूटी। धनि निसरी जेउँ बीर बहूटी।
चमकै बिज्जु बरिस जग सोना। दादुर मोर सबद सुठि लोना।
रँग राती पिय सँग निसि जागै। गरजै चमकि चौकि कँठ लागै।

सीतल बुंद ऊँच चौबारा। हरियर सब देखिअ संसारा।
मलै समीर बास सुख बासी। बेइलि फूल सेज सुख डासी।
हरियर भुम्मि कुसुंभी चोला। औ पिय संगम रचा हिंडोला।
पौन झरक्के हिय हरख लागै सियरि बतास।
धनि जानै यह पौनु है पौनु सो अपनी आस॥

आइ सरद रितु अधिक पियारी। नौ कुवार कातिक उजियारी।
पदुमावति भै पूनिवँ कला। चौदह चाँद उए सिंघला।
सोरह करा सिंगार बनावा। नखतन्ह भरे सुरुज ससि पावा।
भा निरमर सब धरनि अकासू। सेज सवारि कीन्ह फुल डासू।
सेत बिछावन औ उजियारी। हँसि हसि मिलहिं पुरुख औ नारी।
सोने फूल पिरिथिमी फूली। पिउ धनि सौं धनि पिउ सौं भूली।
चखु अंजन दै खंजन देखावा। होइ सारस जोरी पिउ पावा।
एहि रितु कंता पास जेहि सुख तिन्हके हिय माँह।
धनि हँसि लागै पिय गले धनि गल पिय कै बाँह॥

आइ सिसिर रितु तहाँ न सीऊ। अगहन पूस जहाँ घर पीऊ।
धनि औ पिउ महँ सीउ सोहागा। दुहूँक अंग एक मिलि लागा।
मन सौं मन तन सौं तन गहा। हिय सौं हिय बिच हार न रहा।
जानहुँ चंदन लागेउ अंगा। चंदन रहै न पावै संगा।
भोग करहि सुख राजा रानी। उन्ह लेखें सब सिस्टि जुड़ानी।
जूझै दुहुँ जोबन सौं लागा। बिच हुत सीउ जीउ लै भागा।
दुइ घट मिलि एकै होइ जाहीं। ऐस मिलहिं तबहूँ न अघाहीं।
हंसा केलि करहिं जेउँ सरवर कुंदहिं कुरलहिं दोउ।
सीउ पुकारै ठाढ़ भा जस चकई क बिछोउ॥

रितु हेवंत संग पीउ न पाला। माघ फागुन सुख सीउ सियाला।
सौर सुपेती महँ दिन राती। दगल चीर पहिरहिं बहु भाँती।
घर घर सिंघल होइ सुख भोगू। रहा न कतहूँ दुख कर खोजू।
जहँ धनि पुरुख सीउ नहिं लागा। जानहुँ काग देखि सर भागा।

जाइ इंद्र सौ कीन्ह पुकारा। हौं पदुमावति देस निकारा।
एहि रितु सदा सँग मैं सोवा। अब दरसन हुत मारि बिछोवा।
अब हँसि कै ससि सूरहि भेंटा। अहा जो सीउ बीच हुत मेटा।
भएउ इंद्र कर आएसु प्रस्थावा यह सोइ।
कबहुँ काहु कै प्रभुता कबहुँ काहु कै होइ॥

गोरा-बादल-युद्ध खंड

मँते बैठ बादिल औ गोरा। सो मत कीज परै नहिं भोरा।
पुरुख न करहि नारि मति काँची। जस नौसाबै कीन्ह न बाँची।
हाथ चढ़ा इसिकदर बरी। सकति छाँड़ि कै भै बँदि परी।
सजग जो नाहिं काह बर काँधा। बधिक हुते हस्ती गा बाँधा।
देवन्ह चलि आई असि आँटी। सुजन कँचन दुर्जन भा माँटी।
कंचन जुरै भए दस खंडा। फुटि न मिलै माँटी कर भंडा।
जस तुरुकन्ह राजहिं छर साजा। तह हम साजि छड़ावहि राजा।
पूरुख तहाँ करै छर जहँ बर कीन्हे न आँट।
जहाँ फूल तहाँ फूल होइ जहाँ काँट तहाँ काँट॥

सोरह सौ चंडोल सँबारे। कुँवर सँजोइल कै बैसारे।
साजा पदुमावति क बेवानू। बैठ लोहार न जानै भानू।
रचि बेवान तस साजि सँवारा। चहुँ दिसि चँवर करहि सब ढारा।
साजि सबै चंडोल चलाए। सुरँग ओढ़ाइ मोंति तिन्ह लाए।
भै सँग गोरा बादिल बली। कहत चले पदुमावति चली।
हीरा रतन पदारथ भूलहिं। देखि बेवान देवता भूलहिं।
सोरह सै सँग चलीं सहेलीं। कँवल न रहा औरु को बेली।
रानी चली छड़ावै राजहि आपु होइ तेहि ओल।
बत्तिस सहस सँग तुरिअ खिंचावहि सोरह सै चंडोल॥

राजा बंदि जेहि की सौपना। गा गोरा तापहँ अगुमना।
टका लाख दस दीन्ह अँकोरा। बिनती कीन्ह पाय गहि गोरा।

बिनवहु पातसाहि पहँ जाई। अब रानी पदुमावति आई।
बिनै करै आई हौं ढीली। चितउर की मो सिउँ है कीली।
एक घरी जौं अग्याँ पावौं। राजहिं सौंपि मँदिल कहँ आवौं।
बिनवहु पातसाहि के आगें। एक बात दीजै मोहिं माँगें।
हते रखवार आगें सुलतानी। देखि अँकोर भए जस पानी।

लीन्ह अँकोर हाथ जेइँ जाकर जीव दीन्ह तेहि हाँथ।
जो वहु कहै सरै सो कीन्हे कनउड़ झार न माँथ॥

लोभ पाप कै नदी अँकोरा। सत्तु न रहै हाथ जस बोरा।
जहँ अँकोर तहँ नेगिन्ह राजू। ठाकुर केर बिनासहिं काजू।
भा जिउ घिउ रखवारन्ह केरा। दरब लोभ चडोल न हेरा।
जाइ साहि आगें सिर नावा। ऐ जग सूर चाँद चलि आवा।
औ जावँत सँग नखत तराई। सोरह सै चडोल सो आई।
चितउर जेति राज कै पूँजी। लै सो आई पदुमावति कूँजी।
बिनति करै कर जोरें खरी। लै सौंपौ राजहिं एक घरी।

इहाँ उहाँ के स्वामी दुहूँ जगत मोहि आस।
पहिलें दरस देखावहु तौ आवौं कबिलास॥

अग्याँ भई जाउ एक घरी। छूँछि जो घरी फेरि बिधि भरी।
चलि बेवान राजा पहँ आवा। सँग चडोल जगत गा छावा।
पदुमावति मिस हुत जो लोहारू। निकसि काटि बँदि कीन्ह जोहारू।
उठेउ कोपि जब छूटेउ राजा। चढ़ा तुरग सिंघ अस गाजा।
गोरा बादिल खाँडा काढ़े। निकसि कुँवर चढि चढ़ि भए ठाढ़े।
तीख तुरग गँगन सिर लागा। केहु जुगुति को टेकै बागा।
जौं जिउ ऊपर खरग सँभारा। मरनिहार सो सहसन्हि मारा।

भई पुकार साहि सौं ससियर नखत सो नाहिं।
छर कै गहन गरासा गहन गरासे जाहिं॥

लै राजहिं चितउर कहँ चले। छूटेउ मिरिग सिंघ कलमले।
चढ़ा साहि चढ़ि लागि गोहारी। कटइ असूझ पारि जग कारी।

फिरि बादिल गोरा सौ कहा। गहन छूट पुनि जाइहि गहा।
चहुँ दिसि आइ अलोपत भानू। अब यह गोइ इहै मैदानू।
तूँ अब राजहिं लै चलु गोरा। हौ अब उलटि जुरौं भा जोरा।
दहुँ चौगान तुरुक कस खेला। होइ खेलार रन जुरौं अकेला।
तब पावौं बादिल अस नाऊँ। जीति मेदान गोइ लै जाऊँ।

आजु खरग चौगान गहि करौं सीस रन गोइ।
खेलौं सौहँ साहि सौं हाल जगत महँ होइ॥

तब अकम दे गोरा मिला। तूँ राजहिं लै चलु बादिला।
पिता मरै जो सारैं साथें। मींचु न देइ पूत के माँथें।
मैं अब आउ भरी औ भूँजी। का पछिताँउ आइ जौ पूजी।
बहुतन्ह मारि मरौ जौ जूझी। ताकहँ जनि रोवहु मन बूझी।
कुँवर सहस सँग गोरैं लीन्हे। औरु बीर सँग बादिल दीन्हे।
गोरहि समदि बादिला गाजा। चला लीन्ह आगैं कै राजा।
गोरा उलटि खेत भा ठाढा। पुरुखन्ह देखि चाउ मन बाढ़ा।

आउ कटक सुलतानी गँगन छपा मसि माँझ।
परत आव जग कारी होत आव दिन साँझ॥

होइ मैदान परी अब गोई। खेल हाल दहुँ काकरि होई।
जोबन तुरै चढी सो रानी। चली जीति अति खेल सयानी।
लट चोगान गोइ कुच साजी। हिय मैदान चली लै बाजी।
हाल सो कर गोइ लै बाढा। कूरी दुहूँ बीच कै काढ़ा।
भए पहार दुवौ वै कूरी। दिस्टि नियर पहुँचत सुठि दूरी।
ठाढ़ बान अस जानहुँ दोऊ। सालहिं हिए कि काढ़ै कोऊ।
सालहिं तेति न जासु हियँ ठाढ़े। सालहि तासु चहै ओन्ह काढ़े।

मुहमद खेल पिरेम का खरी कठिन चौगान।
सीस न दीजै गोइ जौ हाल न होइ मैदान॥

फिरि आगैं गोरैं तब हाँका। खेलौं आजु करौं रन साका।
हौं खेलौं धौलागिरि गोरा। टरौं न टारा बाग न मोरा।

सोहिल जैस इंद्र उपराहीं। मेघ घटा मोहि देखि बिलाहीं।
सहसौ सीसु सेस सरि लेखौं। सहसौं नैन इंद्र भा देखौं।
चारिउ भुजा चतुर्भुज आजू। कस न रहा औरु को राजू।
हौं होइ भीवँ आजु रन गाजा। पाछें घालि दंगवै राजा।
होइ हनिवँत जमकातरि ढाहौ। आजु स्यामि सँकरें निरबाहौ।

होइ नल नील आजु हौं देउँ समुँद महँ मेंड़।
कटक साहि कर टेकौं होइ सुमेरु रन बेंड़॥

ओनै घटा चहुँ दिसि तसि आई। चमकहि खरग बान झरि लाई।
डोलहि नाहिं देव जस आदी। पहुँचे तुरुक बाद कहँ बादी।
हाथन्ह गहे खरग हिरवानी। चमकहि सेल बीज की बानी।
सजे बान जानहुँ ओइ गाजा। बासुकि डरै सीस जनि बाजा।
नेजा उठा डरा मन इंदू। आइ न बाज जानि कै हिंदू।
गोरैं साथ लीन्ह सब साथी। जनु मैमंत सुड बिनु हाथी।
सब मिलि पहिलि उठौनी कीन्ही। आवत अनी हाँकि सब लीन्ही।

रुंड मुंड सब टूटहिं सिउँ बकतर औ कुंडि।
तुरिअ होहि बिनु काँधे हस्ति होहिं बिनु सुंडि॥

ओनवत आव सैन सुलतानी। जानहुँ पुरवाई अति बानी।
लोहैं सैन सूझ सब कारी। तिल एक कतहुँ न सूझ उघारी।
खरग पोलाद निरँग सब काढ़े। हरे बिज्जु अस चमकहिं ठाढे।
कनक बानि गजबेलि सो नाँगी। जानहुँ काल करहि जिउ माँगी।
जनु जमकात करहिं सब भवाँ। जिउ लै चहहिं सरग उपसवाँ।
सेल साँप जनु चाहहि डसा। लेहिं काढि जिउ मुख बिख बसा।
तिन्ह सामुहँ गोरा रन कोपा। अंगद सरिस पाउ रन रोपा।

सुपुरुस भागि न जानै भएँ भीर भुइँ लेइ।
असि बर गहे दुहूँ कर स्यामि काज जिउ देइ॥

भै बगमेल सेल घन घोरा। औ गज पेल अकेल सो गोरा।
सहस कुँवर सहसहुँ सत बाँधा। भार पहार जूझि कहँ काँधा।

लागे मरै गोरा के आगें। बाग न मुरै घाव मुख लागें।
जैस पतग आगि धँसि लेही। एक मुएँ दोसर जिउ देही।
टूटहिं सीस अधर धर मारे। लोटहिं कध कबध निनारे।
कोई परहि रुहिर होइ राते। कोइ घायल घूमहि जस माँते।
कोइ खुर खेह गए भरि भोगी। भसम चढाइ परे जनु जोगी।

घरी एक भा भारथ भा असवारन्ह मेल।
जूझि कुँवर सब बीते गोरा रहा अकेल॥

गोरैं देख साथ सब जूझा। आपन काल नियर भा बूझा।
कोपि सिंघ सामुहँ रन मेला। लाखन्ह सौं नहिं मुरै अकेला।
लई हाँकि हस्तिन्ह कै ठटा। जैसें सिंघ बिडारै घटा।
जेहि सिर देइ कोपि कर बारू। सिउँ घोरा टूटै असवारू।
टूटहिं कंध कबध निनारे। माँठ मँजीठि जानु रन ढारे।
खेलि फागु सेंदुर छिरियावै। चाँचरि खेलि आगि रन धावै।
हस्ती घोर आइ जो ढूका। उठै देह तिन्ह रुहिर भभूका।

मै अग्याँ सुलतानी बेगि करहु एहि हाथ।
रतन जात है आगें लिए पदारथ साथ॥

सबहिं कटक मिलि गोरा छेंका। कुंजल सिंघ जाइ नहिं टेका।
जेहिं दिसि उठै सोइ जनु खावा। पलटि सिंघ तेहिं ठायँन्ह आवा।
तुरुक बोलावहि बोलहिं बाहाँ। गोरैं मींचु धरा मन माहाँ।
मुए पुनि जूझि जाज जगदेऊ। जियत न रहा जगत महँ केऊ।
जनि जानहु गोरा सो अकेला। सिंघ की मोंछ हाथ को मेला।
सिंघ जियत नहिं आपु धरावा। मुएँ पार कोई घिसियावा।
करै सिंघ हठि सौंही डीठी। जब लगि जिअै देइ नहि पीठी।

रतनसेनि तुम्ह बाँधा मसि गोरा के गात।
जब लगि रुहिर न धोवौं तब लगि होउँ न रात॥

सरजा बीर सिंघ चढ़ि गाजा। आइ सौहँ गोरा के बाजा।
पहलवान सो बखाना बली। मदति मीर हमजा औ अली।

मदति अयूब सोस चढि कोपे । राम लखन जिन्ह नाउँ अलोपे ।
औ ताया सालार सो आए । जिन्ह कौरौ पंडौ बँदि पाए ।
लिंघउर देव धरा जिन्ह आदी । और को माल बादि कहँ बादी ।
पहुँचा आइ सिंघ असवारू । जहाँ सिंघ गोरा बरियारू ।
मारेसि साँगि पेट महँ धँसी । काढ़ेसि हुमुकि आँति भुइँ खसी ।

भाँट कहा धनि गोरा तू भोरा रन राउ ।
आँति सैंति करि काँधे तुरै देत है पाउ ॥

कहेसि अंत अब भा भुइ परना । अत सो तंत खेह सिर भरना ।
कहि कै गरजि सिंघ अस धावा । सरजा सारदूर पहँ आवा ।
सरजैं कीन्ह साँगि सौ घाऊ । परा खरग जनु परा निहाऊ ।
बज्र साँगि औ बज्र के डाँडा । उठी आगि सिर बाजत खाँडा ।
जानहुँ बजर बजर सौ बाजा । सबही कहा परी अब गाजा ।
दोसर खरग कुंडि पर दीन्हा । सरजै धरि ओडन पर लीन्हा ।
तीसर खरग कंध पर लावा । काँध गुरुज हत घाव न आवा ।

अस गोरै हठि मारा उठी बजर की आगि ।
कोइ न नियरें आवै सिंघ सदूरहि लागि ॥

तब सरजा गरजा बरिवडा । जानहुँ सेर केर भुअडंडा ।
कोपि गुरुज मेलेसि तस बाजा । जनहुँ परी परबत सिर गाजा ।
ठाठर टूट टूट सिर तासू । सिउँ सुमेरु जनु टूट अकासू ।
धमकि उठा सब सरग पतारू । फिरि गै डीठि भवाँ ससारू ।
भा परलौ सबहूँ अस जाना । काढ़ा खरग सरग नियराना ।
तस मारेसि सिउँ घोरैं काटा । धरती काढ़ि सेस फन फाटा ।
अति जौ सिंघ बरिअ होइ आई । सारदूर से कवनि बड़ाई ।

गोरा परा खेत महँ सिर पहुँचावा बान ।
बादिल लै गा राजहि लै चितउर नियरान ॥

उसमान

अन्य प्रेमगाथाओं की भाँति चित्रावली में भी कवि ने ग्रंथ का रचनाकाल और व्यक्तिगत परिचय तथा निवास-स्थान आदि का पर्याप्त विवरण दे दिया है। इन्होंने अपनी कथा के आदर्शस्वरूप तीन कथाओं का स्मरण आरंभ में किया है। मृगावती (मिरगावती) मधुमालती और पद्मावत। इनमें से जायसी कृत पद्मावत अभी तब इस कोटि का पहला काव्य माना जाता था (९४७ हिजरी या १५४० ईसवी) पर जायसी ने स्वयं अपने काव्य मे कुछ कथाओं का उल्लेख किया है। जब तक ये ग्रथ मिले नहीं थे तब तक जायसी की इन पंक्तियों पर यथोचित ध्यान आलोचकों ने नहीं दिया। जायसी ने कहा है—

पूर्व परम्परा

विक्रम धँसा प्रेम के वारा। सपनावति लगि गयो पतारा॥
सिरी भोज खँडरावति लागी। गगनपूर होइगा बैरागी॥
राजकुँवर कचनपुर गैऊ। मिरगावति तजि जोगी भैऊ॥
साधा कुँवर मनोहर जोगू। मधुमालति कहँ कीन्ह बियोगू॥

इसमें से मिरगावति का पता काशी नागरीप्रचारिणी सभा को सन् १९०० में लगा। इसके रचयिता कुतुबन के अनुसार इसकी रचना ९०९ हिजरी अर्थात् १५०२ ईसवी में हुई।

मधुमालती की भी खडित प्रति चित्रावली के संपादक श्री जगमोहन वर्मा को मिली थी (सन् १९१२) इसके आदि अंत के पन्ने गायब होने के कारण रचना काल तथा कृति का परिचय आदि ठीक न प्राप्त हो सका। कवि का ठीक नाम भी नही मालूम हो सका। 'मझन' नाम मिलता है जो स्पष्टतः उपनाम सा जँचता है। कवि अपना परिचय आमतौर से आदि या अंत के पन्नों में देते हैं और वही पन्ने गायब हैं। प्रतिलिपिकार ने एक जगह ११ रबी उस्सानी सन् १०६९ हिजरी

की तारीख लिखी है। इस हिसाब से इसकी प्रतिलिपि सन् १६५३ ई० की ठहरती है तो फिर असल रचना काफी पहले की होगी। पर इस संबंध में ज्यादा से ज्यादा अटकल ही हो सकते हैं। जो हो, आशा यह की जा सकती है कि शायद किसी दिन सपनावति और खंडरावति का भी अनुसंधान मिल जाय।

पर उसमान ने सपनावति और खंडरावति का स्मरण नहीं किया। शायद इनके समय तक इन कथाओं को लोग भूल चुके हों या कवि ने इनको इतनी महत्त्वपूर्ण न समझा हो।

मृगावती मुख रूप बसेरा। राज कुवँर भयो प्रेम अहेरा ॥
सिंघल पदुमावति भो रूपा। प्रेम कियो है चितउर भूपा ॥
मधुमालति होइ रूप दिखावा। प्रेम मनोहर होइ तहँ आवा ॥

जीवन-वृत्त

जन्म-स्थान

उसमान अपना जन्म स्थान गाजीपुर बतलाते है। तत्कालीन नगर का बड़ा सुन्दर और सजीव वर्णन इन्होंने किया है।

गाजीपुर उत्तम अस्थाना। देवस्थान आदि जग जाना ॥
गंगा मिलि जहँ जमुना आई। बीच मिली गोमती सुहाई ॥
तिरधारा उत्तम तट चीन्हा। द्वापर तहँ देवतन्ह तप कीन्हा ॥ इत्यादि

वंश और गुरु

इनके पिता का नाम शेख़ हुसेन था और ये पाँच भाई थे। हुसेन के पाँचों पुत्र योग्य और किसी न किसी कला में पारंगत थे।

कवि उसमान बसै तेहि गाऊँ। सेख हुसेन तनै जग नाऊँ ॥
पाँच भाइ पाँचो कवि हीये। एक-एक भाँति सो पाँचो लीये ॥
शेख अजीज पढै लिखि जाना। सागर सील ऊँच कर दाना ॥
सानुल्लह बिधि मारग गहा। जोग साधि जो मौन होइ रहा ॥
शेख फैजुल्लह वीर अपारा। गनै न काहु गहे हथियारा ॥
शेख हसन गायन भल अहा। गुन बिद्या कहँ गुनी सराहा ॥

अन्य मसनवी कवियों की भाँति उसमान ने अपनी या अपने पिता की वंश-परंपरा या गुरु-परंपरा की तालिका नहीं दी है। निसार अपने को विख्यात मौलवी रूम का वंशज कहता है। जायसी प्रसिद्ध औलिया शेख निजामउद्दीन चिश्ती की शिष्य परंपरा में थे। पर इस तरह की कोई बात उसमान ने अपने संबध में नहीं कही है। यहाँ, ग्रंथारंभ मे, शाह निजामउद्दीन चिश्ती तथा एक बाबा हाजी की प्रशंसा इन्होंने की है। हाजी बाबा को इन्होंने अपना गुरु कहा है।

बाबा हाजी सिद्ध अपारा। सिद्ध देत जेहि लाग न पारा॥
मोहि माया कै एक दिन, श्रवन लागि गहि माथ।
गुरू मुख बचन सुनाय कै, कलिमहँ कीन्ह सनाथ॥

व्यक्तित्व

निसार ने अपने को अरबी फारसी आदि अन्य भाषाओं का ज्ञाता तथा इन भाषाओं में ग्रंथ रचना करने की बात भी कही है, पर उसमान (उपनाम "मान") ने इस तरह का कोई दावा नहीं किया। यह बहुत निरभिमानी और खाकसार तबीयत के कवि थे। अपनी विद्याबुद्धि आदि के संबंध में इन्होंने सिर्फ इतना ही कहना उचित समझा कि चार अच्छर पढ़ना हमने भी सीख लिया था और सो भी माथे में लिखा था इस वजह से हो गया।

आदि हुता बिधि माथे लिखा। अच्छर चारि पढ़े हम सिखा॥
देखत जगत चला सब जाई। एक बचन पै अमर रहाई॥
बचन समान सुधा जग नाही। जेहि पाय कबि अमर रहाहीं॥
औ जो यह अमिरित सों पागे। सोऊ अमर जग भये सभागे॥
पढि गुनि देखा 'मान' कवि, बैठि खोई संसार।
और जगत सब थोथरा, एक बचन पै सार॥

उक्त पंक्ति से कवि की उच्चता और विनयशीलता दोनों एक साथ ही प्रकट होती है। पर इतना तो इनकी कविता से ही प्रकट है कि इनकी शिक्षा दीक्षा इस वर्ग के शायद सभी कवियों से ऊँचे दर्जे की थी।

रचना-काल

कवि ने इस ग्रंथ का रचना-काल सन् १०२२ हिजरी दिया है और तदनुसार ईसवी सन् १६१५ की यह रचना मानी जायगी[1]।

सन् सहस्र बाईस जब अहे। तब हम बचन चारि एक कहे॥
कहत करेजा लोहु भा पानी। सोई जान पीर जिन्ह जानी॥
एक एक बचन मोति जनु पोवा। कोऊ हँसा कोउ पुनि रोवा॥
बहुतन्ह सुनि कै दुख मन लावा। के कवि कह जग दोष नसावा॥
मोरी बुद्धि जहाँ लहु अही। जहँ लहु सूझि कथा मैं कही॥
हर हर बचन कहौ अति रूखा। दूखन कहे सेराय न दूखा॥
जाकी बुद्धि होइ अधिकाई। आन कथा एक कहै बनाई॥

हम देखते हैं कि जायसी की रचना इनसे केवल ७५ वर्ष पहले की है और यही कारण है कि इनकी शैली भाषा तथा प्रबंध कौशल आदि जायसी से बहुत कुछ मिलते जुलते हैं। अंतर यही है कि इनकी भाषा जायसी से बहुत कुछ परिमार्जित भी है; और व्याकरण तथा शैली में ग्रामीणता की छाप उतनी नहीं है।

एक मुख्य अतर यह है कि इनकी कथा पूर्णतः काल्पनिक है और यह सब उसमान के उर्वर मस्तिष्क की उपज है। जायसी की भाँति कुछ ऐतिहासिक आधार और कुछ कल्पना दोनों की खिचड़ी बनाना इन्होंने उचित नहीं समझा। और यह ठीक भी है। यदि ऐतिहासिक कथा लेना है तो उसका निर्वाह यथावत होना चाहिए। पर ऐतिहासिक आधार का निर्वाह करने में जायसी असफल हुए हैं। इतिहास और कल्पना का कुछ ऐसा बेतुका सम्मिश्रण जायसी ने किया है कि कहानी में वह तासीर नहीं पैदा होती जो होनी चाहिए। पर उसमान ने अपनी कथा का ढाँचा तैयार करने और शब्द-चयन करने में असाधारण परिश्रम किया है और इसका उनको उचित गर्व भी है, जैसा कि ऊपर उद्धृत की हुई

[1] ना० प्र० सभा से प्रकाशित चित्रावली की भूमिका में इसका रचना काल ई० १६१३ दिया गया है जो शायद संपादक की गणना की भूल है।

पंक्तियों से स्पष्ट है। और साथ ही ये मानों अन्य कवियों को चुनौती देते हुए से कहते हैं :—

जाकी बुद्धि होइ अधिकाई। आन कथा एक कहै बनाई ॥

यहाँ "बनाई" शब्द ध्यान देने योग्य है। पुराण और इतिहास से बनी बनाई सामग्री लेकर तो बहुतों ने प्रेमगाथा लिखी, पर कोई इस तरह निराधार रूप से रचकर गाथा लिखे तो हम जानें। वह स्पष्ट कहते हैं :—

कथा एक मैं हिए उपाई। वहत मीठ औ सुनत सोहाई ॥
कहौ 'बनाय' जैस मोहि सूझा। जेहि जस सूझ सो तैसे बूझा ॥

यह कथा कवि के हृदय से उपजी जिसे उन्होंने बनाकर कहा। अस्तु

कवि की जन्म और निधन-तिथि निर्णय करने का हमारे पास कोई साधन नहीं है। ऊपर दिये हुए रचना काल के अनुसार हम केवल यह जान सके हैं कि यह जहाँगीर के समय मे विद्यमान थे।

आलोचना

कथा का सार

नेपाल का राजा धरनीधर पँवार कुल का क्षत्रिय था। वह निस्संतान था, और इस कारण बड़ा दुखी रहता था। अंत में इस दुःख से उसे इतनी ग्लानि हुई की वह राजपाट छोड़कर जंगल में जाकर तप करने को उद्यत हुआ, पर मंत्रियों के बहुत समझाने बुझाने से राज्य में क्षेत्र (सत्र) स्थापित कर शिव की आराधना में दत्तचित्त हुआ। अंत में शिव-पार्वती इसके उग्र तप से प्रभावित होकर इसकी परीक्षा लेने आये, और भेंटस्वरूप इसका सिर माँगा। यह तलवार उठाकर अपना सिर काटने ही को था कि भगवान् शिव ने इसका हाथ थामा और बोले, 'तुझे पुत्र-रत्न प्राप्त होगा जो कुछ दिन योगाभ्यास करेगा और एक अनिंद्य सुन्दरी के प्रेमपाश में भी बद्ध होगा।'

भगवान् की दया से राजा धरनीधर के एक पुत्र हुआ जिसकी कुण्डली आदि बनाकर ज्योतिषियों ने 'सुजान' नाम रखा। समय पाकर

यह राजकुमार कामदेव की भाँति सुंदर, महा पराक्रमी और अपूर्व विद्या-बुद्धि-सपन्न हुआ।

एक दिन की घटना है कि सुजान शिकार खेलने जाकर रास्ता भूलकर किसी देव की मढी मे जा सोया। उस देव ने उसकी असहाय अवस्था देखकर उस पर बड़ी दया की, और हर प्रकार से उसकी रक्षा का भार लिया। इसी बीच उस देव का कोई मित्र वहाँ आया और उसने कहा कि आज रूपनगर मे राजकुमारी चित्रावली की वर्षगाँठ का जलसा है, चलो उसे देख आवें। पर उसने कहा कि हमने इस राजकुमार की रक्षा का भार ले रक्खा है, इसे कहाँ फेकें। उसने कहा इसे भी वहाँ ले चलो, सो तो रहा ही है, कहीं रख देंगे और लौटते वक्त फिर लेते आवेंगे। यही राय तय पाई और वे दोनों देव आकाश-मार्ग से सुजान को लेकर उडे और वहाँ जाकर चित्रावली की चित्रसारी में इसे सुला दिया और खुद उत्सव देखने बाहर चले गये।

इधर रात में सुजान की नीद जब टूटी तो वह अपने को इस अपूर्व चित्रशाला में पड़ा देख बड़ा चकराया, पर सामने ही चित्रावली का मनमोहक चित्र देखकर मुग्ध हो गया और उसी के बगल में अपना चित्र खाचकर फिर सो गया। इधर सुबह देव लोग उसे फिर अपने साथ उड़ा ले गये। उठने पर सुजान को सब बाते याद आईं और उसे स्वप्न का भ्रम हुआ पर कपड़ों में रंग और तूलिका का दाग वग़ैरह लगा देखकर सच्ची घटना का निश्चय हो गया और उसे चित्रावली की याद सताने लगी।

इधर राज्य में कुमार के लापता होने के कारण सब लोग व्याकुल होकर ढूँढ़ने चले और कुछ सेवक उस मढ़ी तक आ पहुँचे और उसे राज्य मे ले आये पर वह प्रेम की पीर से बेसुध पड़ा रहा। सुजान का एक मित्र सुबुद्धि नाम का ब्राह्मण था, उसने युक्ति से सब बातें सुजान से पूँछ ली। और एक राय कर दोनों फिर उसी मढ़ी में पहुँचे। वहाँ पहुँच कर उन दोनों ने अन्न-सत्र जारी किया।

इधर कुमार का चित्र देखकर चित्रावली का भी यही हाल हुआ।

उन्होंने अपने नपुंसक भृत्यों को कुमार की खोज में रवाना किया, जिनमें से एक इस मढ़ी तक पहुँच भी गया। इसी बीच एक कुटीचर ने चित्रावली की माता हीरा से शिकायत कर दी जिससे उसने कुमार का चित्र धुलवा डाला। पर इस अपराध में कुमारी ने उसका सिर मुड़वा कर उसे राज्य से निकलवा दिया। इधर यह जोगी कुमार के पास पहुँचा और और उसे रूपनगर में लाकर युक्ति से शिव के मंदिर में चित्रावली से साक्षात्कार करवा दिया। पर इसी बीच उस कुटीचर ने उसे अपना शत्रु मान कर उसे अंधा बना एक पहाड़ की कंदरा में डाल दिया जहाँ इसे एक अजगर निगल गया, पर इसमे विरह की आग इतनी भयंकर थी कि अजगर ने तुरंत उगल दिया। इस घटना को एक बनमानुस देखता था और उसने एक ऐसा अंजन दिया जिससे उसकी दृष्टि फिर पूर्ववत् हो गई। पर इसके बाद इसे एक हाथी ने पकड़ा और उस हाथी को एक पक्षिराज ले उड़ा। तब हाथी ने उसे छोड दिया और वह एक समुद्र तट पर गिरा और घूमता हुआ सागर गढ़ राज्य में पहुँचा जहाँ की राजकुमारी अपनी फुलवाड़ी में इसे घूमता देख इस पर मोहित हो गई। कुमार उस समय योगी वेश में था। कौलावती ने योगियों की एक दावत की जिसमें इसको भी शरीक किया। पर इसके भोजन में अपना हार छिपाकर रख दिया था और इस प्रकार इसे चोरी में फँसा कर क़ैद करवा लिया। फिर कौलावती के रूप-गुण से मुग्ध होकर सोहिल नाम का राजा सैन्य लेकर सागरगढ पर चढ़ आया; पर सुजान ने इसे अपने बाहुबल से मार गिराया। इस पर कौलावती के पिता ने प्रसन्न होकर सुजान के साथ उसका विवाह कर दिया पर उसने कौलावती से प्रतिज्ञा करा ली थी कि वह चित्रावली के मिलन से विरोध न करेगी।

कुमार कौलावती के साथ गिरनार पहुँचा और वहाँ चित्रावली के भेजे हुए दूत से उसकी भेंट हुई और उसने उसका समाचार चित्रावली के पास पहुँचाया। फिर किसी प्रकार वह योगी कुमार को लेकर रूपनगर की सीमा पर पहुँचाया और यह खबर चित्रावली को मिली।

अब रूपनगर के राजा को चित्रावली के विवाह की चिंता सता रही थी। उसने चार चित्रकार राजकुमारों के चित्र लाने के लिए भेजे। इधर रानी हीरा कुमारी को खिन्न देखकर उसका हाल पूछ रही थी पर वह अपने मन का भेद बताती नहीं थी। इसी समय सुजान को एक जगह बैठा कर वह दूत कुमारी को खबर देने आ रहा था। रानी ने उसे मार्ग में ही पकड़वा कर क़ैद करा दिया। पर वह पागल हो चित्र वली नाम ले लेकर भागने लगा। राजा तक ख़बर पहुँची। उसने अपयश के डर से इसे मरवा डालने की ठानी और इस पर हाथी छोड़वा दिया, पर सुजान ने अपने बाहुबल से इसे मार गिराया। इस पर राजा स्वय इसे मारने चला पर इसी बीच एक चितेरा सागरगढ़ से एक कुमार का चित्र लाया जिसने सोहिल को मारा था। देखने पर वह चित्र इसी का निकला। राजा ने उचित पात्र समझकर चित्रावली का विवाह इसके साथ कर दिया।

इसके कुछ दिन बाद बिरहाकुल कौलावती ने कुमार की ख़बर लाने को हस मित्र को दूत बनाकर भेजा। कुमार ने अपने पिता और कौलावती का स्मरण कर रूपनगर से बिदा ली और वहाँ से सागरगढ़ आ कौलावती को बिदा करा लिया और अपने राज्य को रवाना हुआ। पर रास्ते में असंख्य विघ्न-बाधाएँ उपस्थित हुईं। समुद्र में तूफ़ान आया पर किसी प्रकार सबसे बचकर वह जगन्नाथ पुरी में पहुँचे जहाँ पुरोहित काशी पांडे से इनकी भेंट हुई। वहाँ से अपने राज्य में पहुँचे और शोक सतप्त माता पिता से मिले। दुख से रोते-रोते माता अंधी हो गई थी पर इनके आने की ख़ुशी मे इसकी आँखें ठीक हो गईं और सुजान अपनी रानियों सहित आनंदोपभोग करने लगा।

इस कथा के साराश से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि यह आद्योपान्त काल्पनिक है और इसमें अनेक अस्वाभाबिक और बेतुकी बातें भरी पड़ी हैं पर यह सब होते हुए भी कथा बडी रोचक बन पड़ी है, और कहीं भी जी नहीं ऊबता। इनकी प्रबध-शैली कुछ ऐसी है

कि बालक, युवा, बृद्ध, योगी, भोगी सभी वर्ग के लोग इसका आनंद ले सकते हैं। कवि स्वय कहता है—

> बालक सुनत कान रस लावा । तरुनन्ह के मन काम बढावा ॥
> बिरिध सुने मन होइ गियाना । यह ससार धधा कै जाना ॥
> जोगी सुनै जोग पँथ पावा । भोगी कहँ सुख भोग बढावा ॥
> इच्छा तरु एक आह सोहावा । जेहि जस इच्छा तेस फल पावा ॥

आध्यात्मिक दृष्टिकोण

न्यूनाधिक रूप से सभी सूफी कवियों की रचना मे अध्यात्मवाद की कुछ न कुछ झलक आ ही जाती है। शाह निजामुद्दीन चिश्ती की शिष्य परंपरा में होने के कारण हम इनको जायसी का गुरु भाई भी कह सकते हैं और इनका आध्यात्मिक दृष्टिकोण भी जायसी से बहुत कुछ मिलता है। इनकी सारी कथा भी अन्योक्ति के रूप मे समझी जा सकती है और कवि का अभिप्राय हर बात से ऐसा ही प्रतीत होता है कि श्रोतागण इसे इसी रूप मे समझे बूझें। यही मुख्य कारण जान पड़ता है कि इन्होंने किसी ऐतिहासिक घटना या इतिहास प्रसिद्ध नायक-नायिका का सदुपयोग या दुरुपयोग करना उचित नहीं समझा। जायसी ने बड़ी भूल की थी। इन्हे प्रतिपादन तो करना था एक विशेष वाद (सूफीवाद) जो वेदांत, रहस्य, अध्यात्म या एकेश्वरवाद आदि कई 'वादों' की पँचमेल खिचड़ी है और पात्र तथा घटनाएँ इन्होंने इतिहास से लीं। आधी कथा लिखने के बाद इन्हें शायद अपनी भयानक भूल का पता चला और इन्होंने यथासंभव कल्पित नाम और घटनाओं का आश्रय लिया। जायसी की इस फजीहत से उसमान ने पूरा लाभ उठाया। ऐतिहासिक महाकाव्य और मसनवी ढंग की प्रेमगाथा दो जुदा चीजें हैं; और उस पार्थक्य को उसमान ने भलीभाँति समझा था। दोनों को मिलाकर चलाना या दोनों का सामंजस्य किसी प्रकार स्थिर रखते हुए अंत में सूफी एकीश्वरवाद के सिद्धांत का निष्कर्ष निकालना एक असंभव बात है। यही जायसी से भूल हुई पर उसमान ने इस भूल

को पहचाना और पहले से तैयार होकर खूब सोच-समझकर कहानी का प्लाट और पात्रों के नामकरण आदि को अपने आध्यात्मिक निष्कर्ष को दृष्टिपथ मे रखते हुए किया। और वे सफल हुए।

चरितनायक 'सुजान' का नाम बहुत सोच समझकर रक्खा गया है। वह शिव का 'अंश' अतः जन्मतः जोगी या पैदाइशी साधक हैं। कौलावती और चित्रावली इन दोनों नायिकाओं को हम अविद्या और विद्या के रूप में देखते हैं। कौलावती से विवाह तो हुआ पर शर्त यह रही कि जब तक चित्रावली न मिलेगी तब तक सहवास नहीं होगा। 'सुजान' अर्थात् वास्तविक ज्ञानी बिना विद्या के प्राप्त किये अपनी साधना पूरी नहीं समझता। उपनिषद् मे कहा है :—

विद्याञ्चाविद्याञ्च यस्तद्वेदोभयं सह।
अविद्यया मृत्यु तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते ॥

यह अविद्या से अर्थ है साधारण विद्या और विद्या से अर्थ है ब्रह्म विद्या जिससे स्थायी शान्ति प्राप्ति होती है। इसी प्रकार विचारने से सभी पात्र-पात्री तथा उनका सारा कार्य-कलाप हम आध्यात्मिक साधना, तज्जनित बिघ्न-बाधाएँ और अंतिम निर्वाण के रूप में पढ सकते हैं। सरोवर-क्रीड़ा वाले खंड में इन्होंने बड़ी सुदर रीति से ईश्वर की प्राप्ति की ओर संकेत किया है। चित्रावली सरोवर के गहरे जल से अदृश्य हो जाती है और ईश्वर की भाँति वह भी खोज का विषय बन जाती है, देखिए :—

हम अधी जेहि आप न सूझा। भेद तुम्हार कहाँ लौ बूझा ॥
कौन सो ठाउँ जहाँ तुम नाही। हम चख जोति न. देखहि काही ॥
पावहि खोज तुम्हार सो, जेहि देखरावहु पथ।
कहा भएउ जोगी भए, औ बहु पढ़े गरंथ।

तुलसीदास जी ने भी कहा है, 'सो जानहि जेहि देहु जनाई'।

इस कथा की कविता और भाषा आदि के संबंध में हमें कोई नई बात नहीं कहनी है। भाषा, व्याकरण, प्रबंध, शैली, खंड-विभाग आदि सब ढंग जायसी का

काव्यत्व

ही है; केवल अंतर यही है कि इनकी भाषा विशेष परिमार्जित और प्रौढ़ है। यह तुलसी के समसामयिक थे और संस्कृत का ज्ञान यदि इन्हे होता तो इनकी भाषा प्रौढ़ता मे उनके आस-पास पहुँचती।

जायसी की भाँति ही उसमान ने महाकाव्योचित नगर तथा सरोवर आदि विषयों का वर्णन किया है।

इनकी जानकारी बढ़ी-चढ़ी थी, समय-समय पर लोकोक्तियाँ ये 'बड़े मार्के से' बैठाते गये हैं। एक जगह इन्होंने अंग्रेजों का भी वर्णन किया है—

बुलंदीप देखा अँगरेजा। तहाँ जाइ जेहि कठिन करेजा॥
ऊँच नीच धन संपति हेरा। मद बराह भोजन जेहि केरा॥

सन् १६१२ मे ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने सूरत में अपनी गुदाम खोली थी, और १६१३ की यह रचना है। कहाँ सूरत और कहाँ ग़ाज़ी-पुर; और इस समय न रेल, न पोस्ट, न तार न अखबार। इनका भौगोलिक ज्ञान भी असाधारण था, जैसा कि संग्रह से जान पडेगा। 'जोगी ढूँढ़न खंड' मे इन्होंने काबुल, बदख्शाँ, खुरासान, रूस, साम, मिस्र, इस्तंबोल, गुजरात, सिंहल आदि-आदि अनेक देशों का वर्णन किया है।

यों तो सभी सूफ़ी कवि विरह वर्णन में क़लम तोड़ देते हैं, पर इसके सिवा इनके अन्य वर्णन भी मार्के के हुए हैं; यथा विदाई के समय रानी हीरा के उपदेश आदि। ये अंश हमें तुलसी की याद दिलाते हैं। चित्रावली के विरह वर्णन में कहीं-कहीं कबीर और जायसी की छाप है। विरहाग्नि के धुएँ न प्रकट होने की बात कबीर और उसमान दोनों ने ही कही है। देखिए—

उसमान— विरह अगिन उर महँ बरै, एहि तन जाने सोइ।
सुलगै काठ बिलूत ज्यों, धुआँ न परगट होइ॥

कबीर— हिरदे भीतर दव बलै, धुआँ न परगट होय।
जाके लागी सो लखै, की जिन लाई सोय॥

इसके सिवा बिरह वर्णन के अंतर्गत इनका यह ऋतु-वर्णन कुछ नवीन और बड़े सुदर ढंग से हुआ है। ऋतु-वर्णन प्रेम-मार्गी कवियों का अभीष्ट विषय रहा है।

चित्रावली

चित्रदर्शन खंड

वै भूलै तेहि कौतुक जाई। इहाँ कुँअर जागा अँगिराई॥
नैन उघारि देखि चितसारी। रहा अचक उठि बैठ सँभारी॥
देखा मँदिर एक बहु भाँती। चित्र सँवारे पाँतिन्ह पाँती॥
कनक खंभ औ कनक केवारा। लागे रतन करहिं उँजियारा॥
ऊपर छात अनूप सँवारे। करि कटाव सब कंचन-ढारे॥
कीन्ह उरेह सूर ससि जोती। औरे नषत सब मानिक मोती॥
हेठ अपूरब सब डासन डासा। जहँ तहँ आउ सुगँध की बासा॥

भयो कुँअर चित अचक एक, मनही माँहि गुनाउ।
काकर लोन मँदिर यह, औ मोहि को लै आउ॥

बहुरि कुँअर जो पाछे देखा। अपुरुब रूप चित्र एक पेखा॥
जानि सजीउ जीउ भरमाना। भयो ठाढ़ उठि कुँअर सुजाना॥
देखि रूप मुख परचै खरा। बिधि एह चुरइल कै अपछरा॥
किए सिंगार संग नहिं कोई। धरे भेष भावन है सोई॥
जग न होइ मानुष अस रूपा। को पावै अस रूप सरूपा॥
निहचै अहौ सरग पर आवा। सुरकन्या भौ दिष्टि मेरावा॥
निहचै एह सुरपति अपछरा। देखत मोर चित्त जिन हरा॥

हौं तो मंडप देव के, सोवत अहा सुभाउँ॥
होइ परसन कोउ देवता, लै आवा एहि ठाउँ॥

भयो भाग्य मम दाहिन आजू। जेहि बिधि दीन्ह आनि यह साजू॥
कै वहि जन्म पुन्य कछु कीन्हा। तेहि परसाद दरस इन्ह दीन्हा॥
कै बेनी सिर करवट सारा। कै कासी तन तप महँ जारा॥

कै मधुरा बसि हरि जस गावा। ताहि पुन्य यह दरसन पावा ॥
कै काहू की इंछा पूरी। बल बौसाउ कीन्ह दुख दूरी ॥
कै सुदिष्ट अपने बिधि देखा। आनि देख वह रूप सुरेखा ॥
सुनत अहा कबिलास सोहावा। सो बिधि मोहि आन देखरावा ॥

मन रहसहि चितो चितहि, रहा मौन होइ भूप।
रसना मरम न बोलई, लाएन भूले रूप ॥

छिन एक गुनि मन महँ बहु भावा। पुनि ढाढ़स कै आगे आवा ॥
नियरे होइ जो बदन निहारा। रहे निहारि मीन जिमि तारा ॥
तब जानेसि यह चित्र अनूपा। हरयो चित्र लखि बदन सरूपा।
नैन लगाय रहेउ मुख बोरा। चित्र चाँद भा कुँअर चकोरा ॥
सुधि बिसरी बुधि रही न हीये। गा बौराइ प्रेम मद पीए ॥
कबहूँ सीस पाइ तर धरही। कबहुँ ठाढ होइ बिनती करई ॥
कबहूँ चाहै अंचल गहा। हाथ न आव अचक मन रहा ॥

कबहुँ परै अचेत भुईं, कबहूँ होइ सचेत।
रूप अपार हिएँ समुझि, मुख जोवै करि हेत ॥

निरखत जोति नैन जौ पाई। परी डीठ आला पर जाई ॥
देखा आहि लिखै कर साजू। जाते होइ चित्र कर काजू ॥
साँवर अरुन पीत औ हरा। जो रँग चाहिय सो सब धरा ॥
कहेसि विचारि बूझि मन माहीं। काल्हि आजु अस होइ कि नाहीं ॥
आपन चित्र लिखौ एहि ठाऊँ। मुकुरहि जोति जोति कछु पाऊँ ॥
आपनि जोति सूर उँजियारा। सूर कि जोति चंद मनियारा ॥
हिएँ विचारि चित्र तब लिखा। वहि क चरन तर आपन सिखा ॥

साजि सो मूरति आपनी, लै सब रँग वहि केर।
कै सुजान सो जानई, कै सुजान यह फेर ॥

चित्र लिखा पूजी पुनि धरी। निंद्रा आइ कुँअर चखु भरी ॥
कुँअरक चाहत पलक न लावा। बरबस बैरिन नींद सो आवा ॥

इहै नीद जासौ धन खोवा। इहै नींद जो करै बिछोवा॥
इहै नींद मगु चलै न देई। इहै नीद सरबस हरि लेई॥
इहै नीद जेहि नैन समानी। पलकन्ह भीतर दृष्टि समानी॥
जो जग माँह नींद बस होई। रहै बीच मग सरबस खोई॥
जे यहि नींद आपु बस कीन्हे। रहै नीद तोहि नौ निधि दीन्हे॥

मान गवाए सोइ सब, जो सपति हुति साथ।
अजहुँ जागु न घर-बसे, भकुरे है कछु हाथ॥

देवन्ह कौतुक अति जिय भाया। चित्रिनि दरस अमर भइ काया॥
होत भोर आदित परगासा। उठी सभा औ नाँच उडासा॥
चित्रावलि कहँ निद्रा आई। ले पलँग पर सखिन सोआई॥
औ जहँ तहँ सब सोवन लागी। सगरी रैनि अही सुख जागी॥
देवन्ह कहा होत है बारा। चित्रसारि जनु कोऊ उघारा॥
चलहु कुँअर लै चलहि सवेरा। मगु कोइ आइ मढ़ी महँ हेरा॥
एहि न पाउ औ तुरै जो पावा। जानइ कुँअर जन्तु कोउ खावा॥

'जन पुरजन माता पिता, जहँ लहु हित सुनि पाउ।
मरिहहिं छाती फाटि सब, तब कछु हाथ न आउ॥

पुनि दोउ एक संग चितसारी। आइ उघारेन्हि पौरि केवारी॥
सोवत कुँअर आन तहँ पावा। लीन्ह उठाइ बार नहिं लावा॥
निमिष माँह लै मढी उतारा। गए छाड़ि सोवत दुख मारा॥
सूरुज किरन जब कुँअरहि लागी। करवट लेत उठा तब जागी॥
देखै कहा चहूँ दिसि हेरी। भई आनि रचना बिधि केरी।
ना वह मदिर नहिं कविलासू। ना वह चित्र न वह सुख वासू॥
सपन जान चित उठा मरोहू। औटि करेज पानि भा लोहू॥

पुनि जो निहारे आपु तन, चिन्ह आह सो संग॥
बस्तर औ कर पर वही, लिखत लाग जो रंग॥

षन एक कुँअर अचक मन रहा। कौतुक सपना जाइ न कहा॥
पुनि जो बिरह लहरि तन आई। थाँभि न सकेउ गिरेउ मुरझाई॥
दोउ नैनन जनु समुँद अपारा। उमँड़ि चले राखै को पारा॥
फारै झँगा और लोटै परा। बंधुन कोऊ हाथ को धरा॥
भरि गै खेह सीस औ देहा। सेवक नाहिं जो झारै खेहा॥
संग न कोऊ हितू पियारा। को उठाइ बैठाइ सँभारा॥
खिन चेतै खिन होइ बेसँभारा। घरी घरी सिर भुइँ दइ मारा॥

बिरह दहनि कोउ किमि कहै, रसना कहि जरि जाइ॥
सोइ हिय माँहिं सँभारै, जेहि तन लागै आइ॥

कटक जो आइ नगर नियराना। देखिन्ह संग न कुँअर सुजाना॥
वह औ कहँ वह औ कहँ पूँछा। कटक जानु बिन जिउ तन छूँछा॥
सब मिलि कहा कुअँर जो नाहीं। राजा पास काह लै जाहीं॥
पूछत उतर देब हम काहा। छूँछ लजाइ रहब मुँह चाहा॥
जोहि बिनु तब जाइहि मुँह गोवा। कसन अबहि जो खोजिअ खोवा॥
सोवत जानु सबै सुनि जागे। आपु आपु कहँ ढूँढन लागे॥
जल जल थल थल मेरु पहारा। एक एक तरु तर सौ सौ बारा॥

स्याम रैन बिनु पंथ पुनि, अगुवा सग न कोइ।
दूरि दूरि सब धावहि, नियर जाहिं नहि कोइ॥

खोजत खोजि कटक सब हारा। बीती रैनि भयो भिनुसारा॥
सूरज उदै पंथ तब सूझा। भयो दिवस पर आपन बूझा॥
बाजी चरन खोज पुनि पाए। खोजत खोज मढी महँ आए॥
देखहिं कुँअर परा बिकरारा। हाथ पाँव सिर कछु न सँभारा॥
ऊभ उसासं लेइ औ रोवा। देखत सैन प्रान जनु खोवा॥
खेह झारि ले बैसे कोरा। रोवै कटक देखि मुख ओरा॥
पूछे बातन उतर न देई। खिन खिन ऊभ साँस पै लेई॥

अरुन बदन पिराइगा, रुहिर सूखि गा गात।
रहा झाँपि लोयन दोऊ, कहै न पूछे बात॥

कोऊ कहै मृगी एहि आई। होइ अचेत परा मुरझाई॥
कोउ कह डसा साँप एहि मढ़ी। सूरज उदय लहरि है चढी॥
कोउ कहे अहा राति का भूखा। ताँवरि आइ रुहिर तन सूखा॥
कोउ कह रैनि रहा एकसरा। कै दानौ कै चुरइलि छरा॥
इहवाँ घरी बिलँब भल नाही। बेगहि होहु नगर लै जाही॥
ततृषन राज सुखासन आना। लै पौढ़ाए कुँअर सुजाना॥
नाउँ सुखासन लै दुखवाहा। बिरह क जरा दून कै डाहा॥

जाइ सुखासन आसुभा, बाजु गीत औ नाद।
चला पाछु सब आवै, कटक भरा बिसमाद॥

केउ कहा जाइ जहँ राजा। कुँअर आव कछु औरै साजा॥
संगन सुनिय गीत औ दाना। सिगरी कटक देखि बिसमाना॥
सुनि औगुन राजा उठि धावा। व्याकुल होइ भुइँ पाव न लावा॥
रानी सुनि सिर परी बिजागी। सुनतहि जरी कोष की आगी॥
आई धाइ कुँअर जहाँ आवा। रोइ सुखासन लेइ कँठ वाला॥
देख षीन तन मुख पियराना। राजा रानी तजहि पराना॥
कठ लगावहि पूँछहि बाता। उतर न देइ बिरह मद माता॥

पुनि ते पूँछा बोलि कै, जे सँग हुते सयान।
जहँवा कुँअर बिछुरि मिला, तिन्ह सब कीन्ह बखान॥

राजमँदिर महँ कुँअर उतारा। जानहु आनि अगिन महँ डारा॥
कल न परै पल अति बिकरारा। हाथ पाँव सिर दै दै मारा॥
राजै ततखन जन दौराए। वैद सयान गुनी लै आए॥
गहहिं नाड़िका बूझहि पीरा। नारि माँह निरदोष सरीरा॥
ससि सूरज दोऊ निरदोषी। अपुने अपुने घर सतोषी॥
अब नाड़िका माँह नहि पीरा। प्रगट पियर मुख षीन सरीरा॥
कहि न आव हम हिएँ विचारा। ई जस बिरह घाउ कर मारा॥

पीर सोई जो नहीं कछु, औषद मूरि उपाय।
एहि कर हितू जो होइ कोइ, सो पूछै फुसिलाय॥

उठि अकुलाइ मात दुखभरी। कुँअर पास आई एकसरी॥
सीस लाइ के बैठी कोरा। पूछे बात देखि मुख ओरा॥
नैन उघारु पूत कहु पीरा। केहि कारन भा षीन सरीरा॥
काहे पीत भयों मुख राता। कहहु बात बलिहारी माता॥
तहीं एक दिनमनि कुलकेरा। नैन मूँदि कस करहि अँधेरा॥
हम सब घट तुम जीव सनेही। कस कुँभिलाइ देसि दुख देही॥
पूत परि कहु कस जिउ तोरा। नैन खोलु करु जगत अँजोरा॥

तोरे पीर कि औषद, जौ एहि जग महँ होइ।
अर्थ द्रव्य जिउ दइ कै, बेगि मँगावों सोइ॥

कहु जो उपजी विथा सरीरा। कहौं सोई जेहि नेवरइ पीरा॥
जो है मढी देव कर भाऊ। लै पूजा सो दैव मनाऊ॥
जो काहू के दरसन भूला। माँगौ होइ दुनो कर फूला॥
और जो मन कछु ईछा होई। कहु सो बेगि लै पुरवों सोई॥
दुहु जग माँह तुही एक आसा। आस तोरि का करसि निरासा॥
को काटै इह दुख दिन राती। अबही मरब फाटि मैं छाती॥
सुन कै कुँअर मातु कै बोला। ऊभि साँस लीन मुख खोला॥

माता पीर सो ऊपजी, ताहि न मूरि उपाइ।
लोयन अटके तहाँ पै, मन न सकै जहँ जाइ॥

कहि कै कुँअर मौन भै रहा। लोयन दुहू गिरे जल बहा॥
बहुत पूँछि रानी जब हारी। कहि न बात नहि पलक उघारी॥
एहि महँ बिरह लहरि पुनि आई। थाँभि न सका परा मुरछाई॥
धाह मेलि तब रानी रोई। सुनत लोग धावा सब कोई॥
राजा रोवै डारि सिर पागा। जन परिजन सब रोवइ लागा॥
राज मँदिर कर सुनत अँदोरा। घर घर परा नगर मह रोरा॥
जो जैसहि तसहि उठि धावा। हाथ हाथ लै कुअँर उठावा॥

कोई मेलै पानी मुख, कोऊ मूँदै नाक।
मेटे कैसेहु नहिं मिटै, माथ लिखा जो आँक॥

विद्याधर गुरु पंडित महा। तेहि कुल सुमति पूत एक अहा ॥
नाउ सुबुधि सकल गुन जाना। पढा पाठ सँग कुँअर सुजाना ॥
विद्या जानु जहाँ लगि गुनी। नाटक चेटक आखर घनी ॥
मानत हेत कुँअर तेहि सेती। कहत सुनत जिय बातैं जेती ॥
सुनि कै विथा कुँअर पहँ आवा। कुँअर अचेत आइ तहँ पावा ॥
नारी देखि विचारेसि पीरा। दोष न पाइस कुँअर सरीरा ॥
वदन पियर लोचन न उघारा। निहचै कहेसि बिरह कर मारा ॥

प्रेय मंत्र बोला सुबुधि, श्रवनन लागि पुकारि।
सोवत जागा कुँअर पुनि, देखिसि पलक उघारि ॥

तब एकसर भै पूछेसि बाता। कहहु कहाँ कासो मन राता ॥
कौन रूप देखा तुम जाई। देखत जाहि परे मुरझाई ॥
मै तोर हितू जान सब कोई। कौन बात तुम मोसो गोई ॥
औ मैं गुन आकरषन पढा। स्वर्ग बसै सोऊ कर चढ़ा ॥
नाउँ ठाउँ जाकर जौ होई। करि उपाउ पुनि आनउँ सोई ॥
जो तुम्ह काज आज नहि आवौ। बुधि विद्या सब कुलहि लजावौ ॥
प्रेम पहार स्वर्ग ते ऊँचा। बिनु रेवे कोउ तहँ न पहूँचा ॥

कहु सो बात अब जीउ की, बेगहि करौ उपाइ।
ना तो बौरे कुँअर निज, सब मरिहै बौराइ ॥

सुनि सुनि मन सब बात बिचारी। रोइ रोइ कहन कथा अनुसारी ॥
जैसे खेलै गए अहेरा। आँधि आइ औ भयो अँधेरा ॥
औ जैसें सब चले पराई। परयो आपु जस एकसर जाई ॥
औ जैसे बीती सो आँधी। सोवा मढ़ी तुरै तरु बाँधी ॥
औ जैसें वह सपना देखा। अपुरब रूप चित्र जस पेखा ॥
औ जैसें मन गा बउराई। दिष्टि परत चित लीन्ह चोराई ॥
आपन चित्र लिखा रँग लागा। सोवत मढ़ी माँह जस जागा ॥

जैसे देखा सपन सब, सौंमुह पाए चीन्ह।
कुँअर कहा सब सुबुधि सो, जस कौतुक विध कीन्ह ॥

कहा कहौ कछु कही न जाई। हिय सौंरत बुधि जाइ हेराई ॥
कहत न बनै जो कछु मैं देखा। गूँग क सपन भयो मोर लेखा ॥
नाउँ न जानौ पूछो काही। पटतर नाहि देखावौ जाही ॥
देस न जानौ केहि दिसि आही। पथ न जानौ पूछौ काही ॥
मन चहुँ दिसि धावै बैरागा। फिरि आवै बोहित ज्यों कागा ॥
करहु उपाय करै जो पारहु। नाहि तो कहा मुए कहँ मारहु ॥
गहिरे सिंधु जाइ जिउ खोवा। अब मैं हाथ आपु सो धोवा ॥

मोहि जियत नहि सूझइ, पुनि वह रूप मिलाउ।
मुएँ कबहुँ सुरभौन महँ, हाथ आउ तौ आउ ॥

जबहि कुँवर यह बात सुनाई। सुबुधि-बुद्धि सब गईं हेराई ॥
परेउ जाइ मन तेहि अवगाहा। तीर ने देखि पाव नहि थाहा ॥
कछू विचार हिए नहि आवै। कुँअर पीर जेहि औपद जावै ॥
कहेसि कुँअर यह पथ दुहेला। निराधार खेल तिन्ह खेला ॥
कहेसि उपाइ एक मति मोरी। मूँदिय और बाट चहुँ ओरी ॥
जहवा सोइ सपन अस दीसा। ओही ठाँव हनहु पुनि सीसा ॥
मकु बिधि सोवत कर्म लगावै। बहुरि सोई सपना सो पावै ॥

लेहु कुँअर उपदेस यह, चेतहु चेत सँभारि।
आन पंथ नहि दूसरा, दीख न हिएँ विचार ॥

परेवा खंड

कै सिव साज निपुंसक चारी। जिन्ह सौं आहि सौं चित्र चिन्हारी ॥
बेगि चलाए चारिहु ओरा। ढूँढन चले सूर ससि जोरा ॥
औ समुझाइ कीन्ह पुनि बाता। जानत अहौ जाहि मन राता ॥
ताकर चाह कहै जो आई। जो माँगहि सो देउँ बँधाई ॥
चारौ चले चारि दिस भए। आपु आपु कहँ ढूँढ़न गए ॥
जल थल सागर मेरु सुमेरा। रन बन पुर पाटन सब हेरा ॥
जहँ तहँ भवहिं गेहँ बैरागा। दहुइन महँ कोइ होइ सुभागा ॥

बन घन गिरि सायर पटन, जहाँ सुनहि नर नाम।
फिरि फिरि हेरहि रैनि दिन, छिन न लेहि बिसराम ॥

तिन्ह मँह अहा जो नाम परेवा। हिएँ सँवारि चित्रावलि सेवा ॥
उत्तर दिसा दीप अति भला। धौलागिरि पर्वत कहँ चला ॥
प्रथमहिं नगर कोट कर फेरी। काशमीर पुनि तिब्बत हेरी ॥
हरद्वार गै गंग अन्हावा। माँगी ईछा सिंभु मनावा ॥
सिरीनगर गढ़ देखि कुमाऊँ। खसिया लोग बसहि तेहि गाऊँ ॥
पुनि बदरी केदार सिधारा। ढूँढा फिरि फिरि सकल पहारा ॥
दुरगम देखि मगन कर देसा। चला ताकि नैपाल नरेसा ॥

बाँक कोट बसगित बहुत, औ चारिहुँ दिसि ताल।
अमर पुरी जानहुँ बसी, नाउ धरा नैपाल ॥

अतिहि अपूरब ताल सुहावा। इसिकंदर जुलकरन खनावा ॥
घाट बँधाये गच चिकनाई। चहुँ दिसि फेर आरसी लाई ॥
तिरहिं होइ पानी कर धोखा। देखि पिआस पाव सतोखा ॥
पुनि दुइ नदी सुहावनि बही। उत्तम वेदब्यास जस कही ॥
नागमती अहि मुख ते आई। बागमती नाहरमुख पाई ॥
तीरथ जानि जगत चलि आवा। अग धोई सब पाप नसावा ॥
बारह मास पटन पुनि घिरी। बरहौ मास जातरा भिरी ॥

नर नारी सुंदर सबै, ससि मुख अधर रसाल।
नैन परेवा थकित रह, देखि नगर नैपाल ॥

घर घर नगर लीन्ह तहँ फेरी। राउ रंक देखे तहँ हेरी ॥
रूप सरूप लोग सब आहा। सो न मिलै जा कहँ चित चाहा ॥
जहँ न होइ सो प्रान पियारा। बसत देस सब जानु उजारा ॥
चला नगर तजि पर्वत ओटा। परी दिष्ट एक कंचन कोटा ॥
हीरा रतन पदारथ मोती। जगमगाइ सब मानिक जोती ॥
कहेसि जाइ देखौ एहि ठाऊँ। लागत अतिहि सुहावन गाऊँ ॥
हिएँ चाउ मइ पाव न लावा। जोगी जाइ न नगर नियरावा ॥

आइ सींव दिन नयर भो, लीन्ह अतीथ बोलाइ।
धरमसाल जहँ हुत रचा, तहँ ले गए लिवाइ ॥

गै जोगी तहँ देखै काहा। अतिथि सहस एक बैठे आहा ॥
ठाढे सबै राउ औ राना। सेवा करहि जैस मन माना ॥
भाँति भाँति पकवान जेंवावहिं। औ अपनै कर पान खिवावहि ॥
जो इच्छा मन माँगै कोई। बेगिहि आन पुरावै सोई ॥
देखि अतीथ सबै रहँसाए। सेवा कहँ चलि आगे आए ॥
आदर सहित आनि बैसारा। पहिलें लै जल पाँव पखारा ॥
ता पाछे लाए पकवाना। जेउ गोसाईं जो मन माना ॥

जोगी कछू न जेवई, पूछें कहै न बैन।
चरचै आनन चहूँ दिस, कीन्हे चचल नैन ॥

जोगि न जेवा रहे जेंवाई। काहू कहा कुँअर पहँ जाई ॥
धरमसाल एक जोगी आवा। चित चचल बैराग जनावा ॥
नहि जानहि दुहुँ का चित जानी। अन्न न खाइ पियै नहि पानी ॥
पूँछे कहे न एकौ बाता। पियर बदन जस काहुक राता ॥
चंचल नैन चहूँ दिस हेरा। चरचै पुर आनन सब केरा ॥
पलक न लाउ जानु नहि सोवा। ढूँढत फिरै जानु कछु खोवा ॥
धरमसाल की नीत न होई। भूखा जाइ इहां हुत कोई ॥

भइ आयसु ऐसी कहा, बेगिहि आनहु सोइ।
मैं चूक्यों सेवा कछू, तातें रिसि जिय होइ ॥

कुँअर पास तब जोगी आना। जोगी कुँअर देखि पहिचाना ॥
चित रहसा जानहुँ निधि पाई। कंथा महँ जोगी न समाई ॥
पीत बरन जु अहा भा राता। अति हुलास कपेउ सब गाता ॥
देखि कुँअर आदर बहु कीन्हा। निकट पाट बैठन कहँ दीन्हा ॥
बिनती कीन्ह सुनौ हो देवा। कस न धरम कै मानहु सेवा ॥
हम सेवक तुम्ह देव गोसाईं। सेवक हुते चूक बहु ठाईं ॥
रिस तजि जेंवहु जेवन देवा। होउँ सनाथ आज तुम्ह सेवा ॥

कहेसि कुँअर सुनु धरम तरु, अस लागेउ तुअ भाग।
जरि पताल पालो सरग, हीछा फल तेहि लाग ॥

जा दिन तें हम गुरु बिछोवा। अन्न न जेवा नींद न सोवा ॥
भूख नाहिं औ नाहि पियासा। नाउँ अधार रहइ घट साँसा ॥
दक्खिन देस जान जिन्ह देखा। रूपनगर कबिलास बिसेखा ॥
बसे गुरू तेहि नगर सोहावा। चेला देस बिदेस फिरावा ॥
जोग अगिनि जब हिए प्रचारी। पल महँ कीन्ह भसम रिसि जारी ॥
काया जोग अहै रिसि रोगू। जो रिसि करै सो नासै जोगू ॥
कुँअर कहा कस देस तुम्हारा। औ को देस बसावन हारा ॥

मो सौ देस बखान करु, कैस नगर कस भूप।
कौन लोग तहवाँ बसैं, पुनि गुन कौन अनूप ॥

जोगी कथा कहन अनुसारी। सुनहु कुँअर यह बात रसारी ॥
रूपनगर सो उत्तिम देसा। चित्रसेन जहँ राउ नरेसा ॥
ऊँच नीच घर ऊँच उँचाए। चित्र कटाउ अनेक बनाए ॥
धन[1] सो नग्र धन उत्तिम देसा। चित्रसेन जहँ राउ नरेसा ॥
राउ रंक घर जानि न जाई। एक ते एक चाह अछवाई ॥
बेल चँबेली कुंद नेवारी। घर घर आँगन फुलि फुलवारी ॥
लीपे चंदन मेद अवासा। भीत बैठि लेहि अलि बासा ॥

मृगमद चोवा कुमकुमा, खोरि खोरि महकाइ।
सुर नर मुनि गंधरब सब, रहे सुबास लुभाइ ॥

चित्रसेन अति राउ भुवारा। जस रवि तपै तेज मनियारा ॥
जेहि घर विषम दिष्टि परि राई। बैरी तम जिनि जाइ बिलाई ॥
बड़ परताप अखंडित राजू। अगनित हस्ति घोर दल साजू ॥
गुन बिद्या सरि भोज न पावा। पँडितन्ह हिएँ हेत बहु लावा ॥
दुखी न कोई सब सुख राता। जहँ तहँ चलै धरम की बाता ॥

---

[1] यह उर्दू की प्रति में नहीं है।

सब सुखिया कोउ दुःख न जाना। ढूँढत फिरहिं लेइ को दाना ॥
देस देस के राजा आवहि। ठाढ़ तॅवाहि बार नहि पावहि ॥

महथ गरब अति मान तहॅ, रहै न एकौ अंक।
रूप नगर की खोरि महँ, राउ होहिं सब रंक ॥

तेहि घर पुनि चित्रावलि बारी। मात पिता की प्रान पियारी ॥
रूप सरूप बरनि नहि जाई। तीनिहुँ लोक न उपमा पाई ॥
दिनकर दिन पावै नहि जोरा। इन्द्र लजाइ देखि मुख ओरा ॥
अमरकोष गीता पुनि जाना। चौदह विद्या करे निधाना ॥
संतति आन न तेहि घर आवा। वाही एक ते सब चित लावा ॥
भौंह चढ़ाइ जो कबहुँ रिसाई। मात पिता कर जिउ निसराई ॥
औ जो चाह करै पुनि सोई। लेत देत कछु बरज न कोई ॥

दखिन दिसा पुनि नगर के, सरवर एक खनाइ।
सखिन साथ चित्रावली, तहॅ नित जाइ नहाइ ॥

कहा सराहौ सरवर तीरा। पानि मोती तहॅ कॉकर हीरा ॥
अति औगाह थाह नहिं पाई। विमल नीर जहँ पुहुमि देखाई ॥
अति अमोघ औ अति बिस्तारा। सूझ न जाइ वारहु त पारा ॥
घाट बॅधाए कंचन ईंटा। सरग जाइ जनु लाग्यो भीटा ॥
ऊपर ताल पानि जहॅ ताईं। ठाँव ठॉव चौखंडि बनाईं ॥
औ जहॅ तहॅ चौरा कै लीन्हे। निसि दिन रहहि बिछावन कीन्हे ॥
जहॉ एक छिन करै निवासा। सोई ठॉव होइ कबिलासा ॥

सुख समूह सरवर सोई, जग दूसर कोउ नाहि।
मानुष कर का पूछिये, देवता देखि लोभाहिं ॥

भीतर सरवर पुरइन पूरी। देखत जाहिं होइ दुख दूरी।
फूले कॅवल सेत औ राते। अलि मकरंद पियहिं रस माते ॥
बासर पदुम कुमुद रह फूला। सब निसि नषत चॉद रह भूला ॥
तोरि कॅवल केसर झहराही। केसरि बास आव जल माहीं ॥
हंस झुंड कुरिलहि चहुँ ओरा। चकई चकवा पौरहिं जोरा ॥

सँवरत ताहि सिरायो हीया। चातक आइ पानि सो पीया ॥
औ जित पछी जल के आए। केलि करत अति लाग सोहाए ॥

रहसहिं क्रीड़ा वृन्द बस, भौर कँवल फहराहिं ॥
निसि दिन होहि अनँद तहँ, देखन नैन सिराहिं ॥

सरवर तीर पछिम दिसि जहाँ। चित्रावलि की बारी तहाँ ॥
सीतल सघन सुहावन छाहीं। सूर किरिन तहँ सँचरै नाहीं ॥
मंजुल डार पात अति हरें। औ तहँ रहहिं सदा फर फरे ॥
तुरँज जँभीरी अति बहुताई। नेबू डारन गलगल जाई ॥
अमिरित फर औ दाड़िम दाखा। संतति जियै निमिष जो चाखा ॥
नरियर और सोपारी लाई। कटहर बडहर कोऊ न खाई ॥
आँब जमुनि लै एक दिसि लाए। बर पीपर तहँ गनत न आए ॥

मूर सजीवन कलपतरु, फल अमिरित मधु पान ॥
देउ दइत तेहि लगि भजहि, देखत पाइय प्रान ॥

कोकिल निकर अमिरित बोलहि। कुँज कुँज गुजत बन डोलहिं ॥
सारी सुआ पढै बहु भाखा। कुरलहि बैठि बैठि तरु साखा ॥
पवई आपन आपन जोरी। छकी फिरहि कुरलहि चहुँ ओरी ॥
खंजन जहँ तहँ फरकि देखावैं। दहिअल मधुर बचन अति भावैं ॥
मोर मोहनी निरतहिं बहुताई। ठौर ठौर छवि बहुत सोहाई ॥
चलहि तरहि तहँ ठमुकि परेवा। पंडुक बोलहि मृदु सुख-देवा ॥
बहु करनास रहहिं तेहि पासा। देखि सो संग भाग जेहि बासा ॥

भंगराज औ भृ गी, हारिल चात्रिक जूह।
निसि बास तेहि बारि महँ, कुरलहिं पछि समूह ॥

औ पुनि रहै माँझ जहँ बारी। चित्रावलि लाई फुलवारी ॥
सोन जरद नागेसर फूले। देखि सुदर्सन दिष्ट जो भूले ॥
जाही जूही अति बहुताई। अनबन भाँति सेवती लाई ॥
बनबेला सतबर्ग चमेली। रायबेल फूली सुखबेली ॥
करना केतकि बास नेवारी। चपकली जनु कुंदि उतारी ॥

कदम गुलाब लाग बहु भाँती । औ बसाइ बकुचन की पाँती ॥
मौलसिरी फूली औ मूँदी । जनु सिगार हरावलि गूँदी ॥

पौन बसेरा लेहि निसि, तेहि फुलवारी पास ।
भोर भए जग प्रगटइ, तिन्ह फूलन्ह की बास ॥

ललित लवग लता जहँ फूली । भौरा भौरि कुसुम तेहि भूली ॥
नगर नगर तहँ डगरै जूही । गधराज फूलहि सबूही ॥
कस्तूरी सुगध बिगसाही । ठौर ठौर सौ अधिक बसाही ॥
भुइँ चंपा फूली बहु रगा । मानहु दरसा रूप अनंगा ॥
सूरज भाँति भाँति अति राते । देखत बनै बरनि नहि जाते ॥
उड़हिं पराग भौर लपटाही । जनु बिभूति जोगिनि लपटाही ॥
मरकंडी भौंरन सँग खेली । जोगिन सग लागि जनु चेली ॥

केलि कदम नवमल्लिका, फुल चपा सुरतान ॥
छ ऋतु बाहर मास तहँ, ऋतु वसंत अस्थान ॥

और पुनि जहाँ माँझ फुलवारी । तहँ चित्रावलि की चित सारी ॥
चदन मेद कपूर मिलावा । इन्ह तिहुँ मिलि कै कीन्ह गिलावा ॥
हीरा ईंट लगाइ उँचाई । देखत बनै बरनि नहिं जाई ॥
चूनी चूरि कै कीन्हो खोहा । मोती चूरि गच्च जगमोहा ॥
अति निरमल जस दरपन कीन्हा । तहाँ जाइ पुनि आपु न चीन्हा ॥
मँदिर एक तँह चारि दुआरी । नगिन जरी पुनि लागु केवारी ॥
कनक खंभ तँह चारि बनाए । हीरा रतन पदारथ लाए ॥

ठौर ठौर सब नग जरित, अस होइ रहेउ अँजोर ।
जँह न रैनि दिन जानिए, और न साँझ नहि भोर ॥

तेहि महँ चित्रावलि गुन ग्यानी । आपु न चित्र लिखै अस जानी ॥
जौ लौं सखी दरस नहि पावहि । भोरहि आइ सीस तेहि नावहिं ॥
और जो चित्र अहहि तेहि माहीं । सो चित्रावलि की परछाँहीं ॥
अस विचित्र केहि लावौं जोरी । अस्तुति जोग जीभ नहि मोरी ॥
वही रग अपने रँग माहीं । ओहि के रंग और कोउ नाहीं ॥

सौंह न जाइ चित्र मुख हेरा। धन सो चित्र औ धन सो चितेरा।
मानुष कहा सो देखै पावै। देखता जाहिं जो हारे आवैं॥
कोटि चित्र चितसारि महँ, देखत एकौ नाहिं।
जौ दिनकर उद्दोत ही, नषत सबै छिपि जाहिं॥
लखो लिलाट दूजि कर चंदा। दूजि छाडि जग वो कहँ बंदा॥
भौंह धनुष बरुनी बिषबाना। देखि मदन धनु गहत लजाना॥
बरुनी बान गड़े जेहि हीये। बहुरि न निकसै जब लहुँ जीये॥
लोचन विमल जानु सम जोवा। निमिख जो देख जनम भर रोवा॥
अधर सुरँग जनु खाए तँबोला। अबही जनु चाहै हँसि बोला॥
लंक छीन जेहि भृंग लजाहीं। कोउ कह आहि कोऊ कह नाहीं॥
फीली चरन सराहौ काहा। अबही रहसि चलै जनु चाहा॥
गुपुत रहै चित सारि महँ, जग जानै सब कोइ।
सपने जो कोइ देखई, सौंतुक जोगी होइ॥
सुनी कुँअर जो चित्र की बाता। हिए हुलास कँपेउ सब गाता॥
सचक भयौ चित औ मन गुना। सपन जो देखा सौंतुक सुना॥
सोवत भाग अहे सो जागे। श्रवन भए सुनि जाहि सभागे॥
मोहि परतीति करम की नाहीं। कहत आहि कोउ सपने माही॥
जौ निहचय हौ सोअत अहौ। जनि जगाउ विधि हा हा कहौ॥
कौन घरी यह आह सुभागी। देखेउँ सोइ सुनेउँ सो जागी॥
कौन बार यह आह सरेखा। सखन सुना नैनन जो देखा॥[1]
यहि अंतर जनु बिरह अहि, बंधन देई छुड़ाइ।
विथुरि गयो विष सकल तन, लहरि चढ़ी जनु आइ॥
गुपत पीर परगट पुनि भई। सुलगत आगि फूँकि जनु दई॥
उठी आगि पालहु जरा। धाइ कुँअर जोगी पग परा॥
रहि न सकेउ हिय गह भरि रोआ। नैन नीर जोगी पग धोआ॥

---

[1]यह उर्दू की प्रति में नहीं है।

बिरह अनल जल मैं चखु ढरा । लोचन नीर जोगि तब जरा ॥
दुहूँ हाथ गहि सीस उठावा । पूँछत बात बकुर नहिं आवा ॥
साँप डसा जनु बिष छहराना । घूमत रहै सुनै नहिं काना ॥
दिष्टी भुअँग बंद जनु कीन्हीं । ते पढ़ि मत्र खोलि जनु दीन्हीं ॥
तब जोगी कर नीर लै, मुख छिरकेसि करि हेत ॥
पहर एक बीते भयौ, बहुरि कुँअर चित चेत ॥

बहुरि जो कुँअरउ सोइ कै जागा । बैठ सँभारि गहिसि सिर पागा ॥
तौ पुनि कहिस ऊभ लै साँसा । ए देनिहार निरासहि आसा ॥
वोह सो चित्र जो मोहि दुख दीन्हा । बरबस जीउ मोर हरि लीन्हा ॥
जीउ लेइ तन दूरइ डारा । हौ तो वही चित्र कर मारा ॥
वही चित्र मैं सपने दीठा । चित्त माँहि वहि चित्र बईठा ॥
वही चित्र बिनु जीउ बिहूना । जिउ हरि लीन्ह कीन्ह तन सूना ॥[1]
वही चित्र जो नैन समाना । सौ तुक सपन जाइ नहि जाना ॥
वही चित्र हम हिए महँ, जो तैं कीन्ह बखान ।
हौ अब रहा सरीर होइ, वह भौ जीउ समान ॥

जेहि दिन ते नैनन भा लाहा । बहुरि न पायौ कतहूँ चाहा ॥
पथन पावउँ केहि दिसि जाऊँ । पूछौं काहि न जानउँ नाऊँ ॥
मैं निरास औ बिनु जिउ आहा । आस दई तैं जिउ घट बाहा ॥
आजु आस तैं पुरएसि मोरी । तन मन धन नेवछावरि तोरी ॥
अब कहु पथ गवन जेहि पावों । चलउँ बेगि खिन बिलँब न लावों ॥
तुम्ह जहँ चहहु सिधारहु तहाँ । मोहि अब कहहु पथ सो कहाँ ॥
कै अब जाइ चित्र सो पावौ । कै अपान वहि पंथ लगावौ ॥
जिउ चितसारी महँ रहा, देह रही हम साथ ।
देहु सोई उपदेस मोहि, जेहि जिउ आवै हाथ ॥

जोगी कहा कुँअर सुनु बाता । अबही देखि चित्र तूँ राता ॥
वह सो चित्र तैं देखा नाही । जाकर ऐस चि। परछाहीं ॥

[1] यह उर्दू की प्रति में नहीं है ।

चित्र देखि तैं चित्रै जाना । ता महँ अहा सो नहि पहिचाना ॥
चित्रहि महँ सो आहि चितेरा । निर्मल दिस्टि पाउ सो हेरा ॥
जैसे बूँद माँह दधि होई । गुरु लखाव तौ जानै कोई ॥
जा कहँ गुरू न पंथ देखावा । सो अधा चारिहुँ दिसि धावा ॥
मूरख सो जो चित्र मन लावै । सेमर सुआ जैस पछतावै ॥

यह मूरति औ चित्र जग, जो बिधि सरा सुजान ।
परगट देखहि नैन यह, गुपुत जो पूजहि आन ॥

अति सरूप चित्रावलि बारी । जनु बिधिनै कर चित्र सँवारी ॥
चित्रहि कहाँ जोति छबि ओती । वह सजीव यह बिनु जिउ जोती ॥
चित्र अबोल होइ जनु गूँगा । ओहि क बोल जस मानिक मूँगा ॥
चित्र कटाच्छ भाव बिनु नैना । ओहि क नैन सब मोहन सैना ॥
चित्र अडोल न डोल डोलावा । ओहि गौनत जनु हंस सोहावा ॥
सायक बरुनि भौह धनु ताना । सौरत जाहि लागु उर बाना ॥
चंद बदन तन चंपक सारी । अलि सँग फिरहि जानि फुलवारी ॥

काहि लगावौं उपम तेहि, अच्छर पूज न छाँहि ।
सुर नर मुनि गन पचि मरहि, दरसन पावहिं नाहिं ॥

बदन जोति केहि उपमा लावौ । ससिहर पटतर देत लजावौ ॥
ससि कलंक पुनि खडित होई । है निकलक सँपूरन सोई ॥
ससि बदी जब दूजिक दीसा । ओहि बदी नित देहिं असीसा ॥
जो मुख खोलि करै उजियारा । नषत छपाहिं होइ ससि तारा ॥
नैन कुरग कहे नहिं पारौ । खजन मीन ताहि पर वारौं ॥
तीन रंग जा महँ नित लहिए । तेहि कुरंग कहु कैसे कहिये ॥
जाकहँ नैन एकौ छन हेरा । सो बिष बान क भयौ अहेरा ॥

ऐसन चित्र अहेरिया, मारि न खोज करेइ ।
जेहि उर लागे बान सो, रहसि रहसि जिउ देइ ॥

औ तेहि संग अनेग सहेली । सबै सरूप अनूप नवेली ॥
उन्हक रूप बिधि अपुरुब कीन्हा । करि करि चित्र जानु जिउ दीन्हा ॥

कोउ कुमुदिनि कोउ पंकज कली। एकतें एक चाहे अति भली॥
अबही सबै कली मुँह मूँदी। भौर चरन तें बेलिन खूँदी॥
सब चित्रिन औ पदुमिनि जाती। सेवा करत रहत दिन राती॥
अग्या होहि करहि पै सोई। मेटि न सकै रजायसु कोई॥
औ जिहि ठाँव करहि बिसरामा। जपत रहहि चित्रावलि नामा॥

निसि बासर ठाढी रहहि, लीन्हे आपन साज।
जो पठवहि सिष एक कहँ, धाइ करहि दस काज॥

पुनि सो चित्र लिखे भल जाना। उनसो जगत न कोऊ सयाना॥
आपन चित्र आपु पै लीखा। और को लिखै जान नहिं सीखा॥
जगत चितेर रहे पचि हारी। ओकर चित्र न सकें सँवारी॥
जो कोई आपन चित आनै। अतरजामी तबही जानै॥
आपन चित्र छीन के लेई। औ तेहि देस निकारा देई॥
आपन चित्र जाहि लिख दीन्हा। ते सो घालि हिये मो लीन्हा॥

एहि डर कोऊ न बीसरै, अह निसि आठौ जाम।
लिये रजायसु नित रहहि, जपत फिरहि सो नाम॥

औ तेहि संग निपुंसक जाती। पठवै जहाँ जाहिं ले पाती॥
गुन बिद्या सब जाना बूझा। निरमल दिष्टि पंथ भल सूझा॥
अन्न न खाहिं पानि नहिं पीयहि। नाउँ अधार रैनि दिन जीयहिं॥
काम क्रोध तिसना मन माया। पंच भूत सौ तिन्ह की काया॥
अग्या काज बिलब न लावा। करहिं सोइ जेहि दोष न पावा॥
सब की बात जनावहि जाई। अग्या होई कहहिं सो आई॥
अग्या बिना पैग जो धरही। अनल तेज सिखा लहि जरहीं॥

दूरि रहहिं तेहिं गनत नहि, निकट रहहि ते चारि।
रचना सिरजनहार की, नावै पुरुष न नारि॥

हौ तेहि माहँ परेवा नाऊ। सेव करौ चित्रावलि ठाऊँ॥
वह सो गुरू हौं आकर चेला। वहिक नाउ हम मुँदरा मेला॥
वही पंथ मोहि दीन्ह देखाई। वेहि के वचन सिद्धि मैं पाई॥

औ सुमिरन दीन्ही वोहि कैरी। वेहि क नाउँ सुमिरौं हरि फेरी ॥
भूख नाहि औ नीद पियासा। चित्रिनि सुरति ध्यान घट आसा ॥
भा अग्या करि साज महेसू। दिन दस फिरहुँ देस परदेसू ॥
जौ लगु फिरत होइ नहि रोगी। तौ लगि सिद्ध होइ नहि जोगी ॥

भसम अंग पग पाँवरी, सीस कलपि करि केस।
कंथ पहिरि लै दंड कर, देखन निसर्यौ देस ॥

सुनत कुअँर जोगी के बैना। उघरे दोऊ हिये कै नैना ॥
मन महँ कहेसि साँचु यह साजा। वह सो कौन जा कर उपराजा ॥
जेहिक चित्र अस जिउ लेनिहारा। दुहुँ कस होइहि सिरजनहारा ॥
साजा होई मेटि पुनि जाई। सिभू सरीर न कोऊ मिटाई ॥
जौ न आपु आपहि पहिचाना। आन क पेम कहाँ हुत जाना ॥
जैसे कुबुध जानि कै देवा। बहुत करहिं पाहन की सेवा ॥
पाहन पूजि सिद्धि किन पाई। सेमर सेइ सुआ पछिताई ॥

कस न बूझि खोजौं सोई, जेहि क चित्र सब कीन्ह।
जीउ देई जो चाहई, लेइ जो चाहै लीन्ह ॥

कुअँर कहा अब सुनहु परेवा। मैं तोर सीख मोर तैं देवा ॥
मैं तजि पथ जात बौराना। तैं गहि बाँह पथ पर आना ॥
बूड़त मोर नाउ मँझनीरा। तूँ खेवक होइ लाइसि तीरा ॥
सोअत हौ जो अहा सो जागा। मन तजि चित्र चितेरहिं लागा ॥
चित्र देखि न चितेरा जाना। बिनु चितेर अब दिष्टि न आना ॥
अब फिरि कहु चित्रावलि बाता। जेहि के रूप आजु मन राता ॥
सुनतहि नाम दूरि भइ दाहा। दहुँ मुख देखत होइहै काहा ॥

मरत जियाए जोइ कहि, फिरि फिरि कहु सो बात।
सुनिबे कहँ अमिरित कथा, श्रवन भए सब गात ॥

जोगी सँवरि कहै पुनि बाता। वह चित्रावलि जेहि रंगराता ॥
बदन मयक मलयगिरि अगा। चंदन वास फिरहिं अलि संगा ॥
जो अलि अंग वास वह पाई। सो तजि आन फूल नहिं जाई ॥

बहुतन्ह सिर करवट गहि सारा। हिंछा करि लघुकर औतारा॥
बहुत नाउँ सुनि जोगी भए। मूँड मुँडाइ देसंतर गए॥
ससि सूरज औ नषतन पाँती। बरने होहिं दिवस औ राती॥
भूषन सोभ पाव तेहि अंगा। ताते निसि दिन छाड़ न संगा॥

चाँद न सरवर पावई, रूप न पूजै भानु।
अब सुनु तन मन कान दै, नख सिख करौ बखानु॥

प्रथमहि कहौं केस की सोभा। पन्नग जनौं मलयगिर लोभा॥
दीरघ विमल पीठि पर परे। लहर लेहि विषधर विष भरे॥
कच अहि डसा जनम नहिं जागा। मंत्र न मानै मूरि न लागा॥
बिथुरी अलक भुअगिनि कारी। कै जनु अलि लुबुधे फुलवारी॥
कै जनु बदन तरनि जौ तपा। सिमिटि सुमेरु पाछु तम छुपा॥
किमि कच बरनौं राजकुमारा। मति न समाइ देखि अँधियारा॥
मृग-मदवास आव तेहि केसा। पौन जाइ लइ देस बिदेसा॥

सिरजी तब विधि स्यामता, जब जग सिरजै लीन्ह।
ते कच सिरजे सार लै, सेप बाँटि के दीन्ह॥

सीस सिंगार माँग बिधि कीन्ही। तातें ठाउँ माँग पर दीन्ही॥
सूर किरन करि बालहि धारा। स्याम रैनि कीन्ही दुइ फारा॥
पथ अकास विकट जग जाना। को न जाइ बोहि पंथ भुलाना॥
तहाँ देखि अलकावरि फाँसा। पंथिन्ह परा जीउ कर साँसा॥
जिउ परतेजि चलहिं तेहि माही। और बाट नहि केहि दिसि जाहीं॥
बेनी सीस मलयगिरि सीसा। माँग मोति मनि माथे दीसा॥
सूर समान कीन्ह बिधि दीया। देखि तिमिर कर फाट्यो हीया॥

स्याम रैनि मँह दीप सम, जेहि अँजोर जग होइ।
अछज भुअंगम माँहि बसि, दिया मलीन न होइ॥

पुनि लिलाट जस दूजि क चदा। दूजि छाड़ि जग वह कहँ बंदा॥
पटतर दूजि होति जौ होती। दूजि माँह पुन्यौं कै जोती।
भाग भरा अस दिपै लिलारा। तीनहुँ भुवन होह उजियारा॥

होइ मयक खीन जेहि रीसा। सो लिलाट कामिनि पहँ दीसा ॥
कुंदन तिलक सोभ कस पावा। मनहुँ दुइज माँ जीउ मिलावा ॥
मुकुता पाँति चहूँ दिसि पाई। मानहु मिली किरितिका आई ॥
जाहि लिलाट भाग मनि होई। अस सँजोग सुभ देखै सोई ॥

सुभ सँजोग वहि एक छिन, जा कहँ सनमुख होइ।
जौ जग लागै गरह जिमि, बार न बाँकै कोइ ॥

कुटिल भौह जानों धनु ताना। इद्रधनुष तेहि देखि लजाना ॥
जानहु काल जगत कहँ कढ़ा। निसि दिन रहै पयच जनु चढा ॥
भौह फिराइ जाहि तन हेरा। देखत काल होइ तेहि केरा ॥
एही धनुष जुध मनमथ लीता। कै परनाम काम तन जीता ॥
भौह धनुष लखि इद्र सँकाना। सब जब जीति सरग कहँ ताना ॥
कौन सो बली जो न गै मारा। तिनहुँ लोक एक हुंकारा ॥
ऐस धनुष जग और न दूजा। देवतन्ह आइ बाहुबल पूजा ॥

अहिपुर नरपुर जीति कै, सुरपुर जीतो जाइ।
अब दहु कछू न जानिये, का कहँ धरे चढाइ ॥

बाँके नैन तीष अति दोऊ। जगत जाहि सर पूजि न कोऊ ॥
राते कौल मधुप तेहि माही। कहत लजाउँ तेउ सर नाही ॥
कौल देखि ससिहर कुम्हिलाने। ए ससि सग सदा बिगसाने ॥
स्याम सेत अति दोऊ सोहाए। खंजन जानु सरद रितु आए ॥
कै दुइ मिरिग लरत सिर नीचे। काजर रेख डोर गहि खींचे ॥
दोउ समुद्र जनु उठहि हलोरा। वह महँ चहत जगत सब बोरा ॥
तीछे हेर जाहि चषु आछे। चली मीन जनु आगें पाछें ॥

बर कामिनि चषु मीन सम, निमिष हेर तन जाहि।
बहुरि जनम भरि मीन जिमि, पलक न लागै ताहि ॥

बरुनी बान तीख अरु घने। सोई जानु जाहि उर हने ॥
मद सिराय ते भाल सँवारे। जाके हने सबै मतवारे ॥
तापर बिष काजर सौ बाँधा। सोई मरै जाहि तन साँधा ॥

लाग न बरुनि बान जेहि हीया। सो जग माँह अमिरथा जीया॥
जेते अहैं जीव जग माही। साधन जाइ बान सो खाही॥
जगत आइ होइ रहा निसाना। मकु हौं सौह मारि तेहि बाना॥
गलि गलि हाड़ रहे जो आई। बैठ जो लागि जाइ तो जाई॥

एक मूँठ के छाड़ते, लागे बान अलेख।
जग महँ ऐसन पारधी, दूसर काहु न देख॥

सुभग सरूप सुरग अमोला। जनु नारँग बरनारि कपोला॥
ईंगुर केसर जानु पिसाए। दोऊ मिलाइ कपोल बनाए॥
और सो देखि कपोल लुनाई। मती हीन कछु बरनि न जाई॥
तेहि पर तिल सो देइ अस सोभा। मधुकर जानु पुहुप पर लोभा॥
कै बिधि चित्र करत कर धरे। करत उरेह बूँद खसि परे॥
बदन सिगार सोभ जो पावा। रहेउ न दिन पुनि सो न उचावा॥
वह तिल जाहि दिष्टि तल परा। भयो स्याम तस तिल तिल जरा॥

नहि चीन्हत कोउ काहु कहँ, जो जग माहि न होति।
परछाही तिल एक की, सब नैनन्ह महँ जोति॥

किमि बरनौ नासिका सोहाई। नासिक सुनि मति नियर न जाई॥
खरग धार कहि आवै हाँसी। कौन खरग जेहि उपमा नासी॥
तिलक फूल कबितन्ह चित धरा। उहो लजाइ पुहुमि खस परा॥
इह रुऑर पुनि कीर कठोरा। उपम देत मन मान न मोरा॥
उह सुर मौन जगत उपराई। ससि सूरज जहँ उदै कराई॥
तेहि पर हेरि रही मति मोरी। उपमा नहिं केहि लावौं जोरी॥
बेसरि जो पहिरै रहसाई। नग कुंदन छबि पाउ सोहाई॥

मुकुता डोलत निरखि मन, सुर नर इहै गुनाहिं।
कहत सुहागिनि नासिका, तिहुँ पुर पटतर नाहिं॥

अधर सुधा निधि बरनि न जाई। बरनत मति रसना पनियाई॥
छुए न काहु अछूते राखे। प्रेम दिष्टि मुख अजहुँ न चाखे॥
विद्रुम अति कठोर औ फीके। सुरँग मृदुल दुखदायक जीके॥

बिब अरुन सो सरि न तुलाना । अति लजान बन जाइ दुराना ॥
बदन मयक जगत उँजियारा । अमिरित अधर प्रान देनिहारा ॥
का बरनौ का मति भइ मोरी । उत्तम अधम लगाएउँ जोरी ॥
ससि अमिरित देवतन्ह कै जूठा । जगत जान यह अधर अनूठा ॥

लोयन जाहि कटाच्छ सर, मारि प्रान हरि लीन्ह ।
अधर बचन तब खिन दोऊ, अमिय सींचि जिउ दीन्ह ॥

दसन जानु हीरा निरमरे । बदन आनि मुख संपुट धरे ॥
इक इक नग दुहुँ जग कर मोला । जो जिय देइ कहै सो खोला ॥
पान खात कछु भए उघारे । दिष्टि परे मजुल रतनारे ॥
जनु दुइ लर मुकुता रँग भरे । मंजन लागि आइ मुँह धरे ॥
कै देवतन्ह ससि कीन्ह कियारी । अमिरित सानि बारि अनुसारी ॥
दाडिम बीज तहाँ लै बोए । रखवारे राखे अहि पोए ॥
निसि बासर ते निकट रहाही । मकु सुक पिक खंजन चुनि जाहीं ॥

इक दिन विहँसी रहसि कै, जोति गई जग छाइ ।
अबहूँ सौरत वह चमक, चौंधि चौंधि जिय जाइ ॥

तेहि भीतर रसना रस भरी । कौल पाँखुरी अमिरित भरी ॥
दसन पाँति मँह रही छिपानी । बोलत सो जनु अमिरित बानी ॥
बोलत बैन अमी जनु चूआ । सुनत जिये बरषन कर मूआ ॥
जे मन अहि कुंतल के खाए । बोलि बोलि धन सबै जियाए ॥
जाके सवन बचन उन डारा । ताकर बचन जीउ देनिहारा ॥
उकतिन बोलत रतन अमोली । आँब चढ़ी जनु कोइल बोली ॥
व्याकरनौ जानै संगीता । पिंगल अमर पढहि पुनि गीता ॥

रहहिं रैनि दिन बास मह, चित्रिनि चखु औ बैन ।
त्यों त्यो रस न जियावई, ज्यों ज्यो मारहि नैन ॥

आँब सूल सम ठाढी भई । वह आमिल यह अमिरित भई ॥
तेहि तर गाड़ अपूरब जोवा । पाक आँब जनु अँगुरी टोवा ॥
पाका आँब गात पियराना । वह कुमकुम जनु ईंगुर साना ॥

चिबुक कूप अति नीर गँभीरा। बिंब अधर सँजीव जेहि नीरा ॥
अमिरित कुंड अगल औगाहा। जो तहँ परा निकास न चाहा ॥
ताहि कूप ढिग रहस न जाही। बूडन कहँ मुनि लाल कराही ॥
परहि जाइ मन रहइ न देई। कुंतल काँट काढि कै लेई ॥

नैन पियासे रूप जल, पीवत जेहि न अघाहि।
कूप चिबुक जो मन परै, बूडि बूड़ि रहसाहि ॥

सिंधु सुता सम सवन अमोला। जलसुत बचन लागि बिधि खोला ॥
जे अमोल नग जगत बखाने। नारि सवन महँ सबै समाने ॥
ग्यान बात बिनु आन न सुना। सुनत मोति तबहीं सिर धुना ॥
निसि दिन मुकता इहै गुनाहीं। खंजन झाँकि झाँकि जिमि जाही ॥
कंचन खुटिला जा न बखाना। गुरु सिष देइ लागि ससिकाना ॥
राहु जुद्ध कहँ सपरि निसंका। दुहुँ कर लीन्हे सेलि मयंका ॥
औ पुनि सोभै खुमी सोहाई। अग्रही तरिवन चढा न जाई ॥

कमल दसन खँभिया दोउ, सोऊ पट तर नाहि।
एक छिन देखें जनम भरि, खुभी रहैं जिउ माहि ॥

अब सुनु बरनौ गींव सुहाई। बिधि कर चाक भँवाइ चढाई ॥
अँगुरिन बीच रही जो रेखा। सोइ चीन्ह रेखा तहाँ जो देखा ॥
केलि समै कौतर की रीसा। तत घिन चलो लाइ भुइँ सीसा ॥
नाचत, मोर गीव सर जोवा। तबही सीस पाइ धरि रोवा ॥
संख न सम भा साँझ सँकारा। तातें जहँ तहँ करे पुकारा ॥
तब ही छरन जान अपछरा। भूषन ताग न बाँधै छरा ॥
वोही कठ जानु जिन्ह दीठी। अमिरित चाहि न पूरै मीठी ॥

सोहस हाँस जराउ गर, बदन हेठ निकलंक।
सर न मयंक सूर जनु, दुरत राहु के संक ॥

दीरघ बाहु कलाई लोनी। अति सुदर जग भई न होनी ॥
दुहुँ पौनाल सोऊ सर नाहीं। तातें रध कलेजे माही ॥
सुभ्र भुजन पर टाँड सोहाई। टाँड तहाँ छबि पाव सवाई ॥

देखि धुनहि गन गंध्रब माथा । एक सो इंद्र वज्र पुनि हाथा ॥
देखि सो मंजुलि सुभ्र कलाई । को न गयो बनफलै सिधाई ॥
वहि संग देखु जो जुरी हथोरी । कौल पाँखुरी ईंगुर बोरी ॥
विद्रुम वेलि सो अँगुरी दीसी । वह कठोर यह मुगफली सी ॥

अँगुरिन मुँदरी जरित की, सोह छला प्रति पोर ।
अमीकरन नग आँखि जनु, गाँठि कनक कै जोर ॥

होत उतंग सिहन निरमरे । एक डारि दोइ नारँगि फरे ॥
कनक कटोरा दुइ गुन भरीं । संकर पूजि उलटि जनु धरीं ॥
झीने पट महँ झलकत दीसी । जनु भीतर द्वै कँवल कली सी ॥
मुकुताहल बिच सोभा कैसी । चकवा छवा बिछुरि जनु बैसी ॥
होन उतंग दोऊ अति लोने । जनु द्वै बीर छत्रपति होने ॥
अबही छत्र सीस नहिं छाजू । छत्रिन जहाँ तहाँ कर साजू ॥
दान दुंद जोरी गुन भरी । दुई जनु डँका उलटि कै धरी ॥

गढ़पति हयपति दुरदपति, सुनि कुच कथा अकाथ ।
होइ भिखारी सब चहहिं, जाइ पसारन हाथ ॥

रोमावलि अबही उर छीनी । बरनि न सकै दिष्टि मति हीनी ॥
संधि सुमेरु लही अहि पोवा । सीतल ठाँव पाइ जनु सोवा ॥
अमिरित अधर बास सुनि माती । उर जनु चढी पपील क पाँती ॥
द्वै नृप सीव लागि रिस बाढी । रतिपति आनि लीक जनु काढ़ी ॥
सौरत रोमावली सोहाई । हेवर जाइ दरलि सी खाई ॥
पाँहन हिए जोरि वहि दीसी । होइ लीक वह पाहन कीसी ॥
नीद न परी जनम भरि जागा । जिन्ह नैनन्ह होइ रही सरागा ॥

खैंची लीक हदीस की, विधिना हिएँ विचार ।
तिहुँपुर रोमावलि सरी, आन न दूजी नार ॥

नाभि कुंड पुनि अति गहिराई । जब चित चढ़ै बूड़ि जिउ जाई ॥
सिंधु भौंर जहँ पानि फिरावा । तहँ परि जनम निकास न पावा ॥
बिगसत पंकज कली सोहाई । अजहूँ भौंर बास नहि पाई ॥

छीर सिंधु मथनी जब काढ़ी। नाभि भौंर आही जहँ ठाढ़ी॥
नैनूँ ते कोमल सो ठाऊँ। जीभ कठोर लेउँ का नाऊँ॥
रोमावलि सोभा तेहि पासा। नैनूँ ते जनु बारि बिकासा॥
जासौं ग्यान हाथ मा हीना। जनमत धाइ नार किमि छीना॥

नारि पेट जेहि अंत नहि, बारिधि गहिर गँभीर।
नाभिकुंड मन जो परै, बहुरि न निकसे तीर॥

पातर पेट कहै का कोई। जनु बाँधी ईंगुर की लोई॥
मनहु महाउर दूध सौ पागा। संतत रहै पीठि सौ लागा॥
छीर न पियै अतिहि सुकुवारा। कै तँबोल कै फूल अधारा॥
बिनु रस पान आन नहि खाई। सोऊ बिकल करै अधिकाई॥
तेहि तर त्रिबली अति सुख देई। गढी बिधातै काम पसेई॥
सोभित तीनौ रेख सोहाई। तीन भुवन नहि उपमा पाई॥
सिसुता जानि तरुनता मिली। तीनौ रेख खाँचि कै चली॥

सिरजत भार नितंब के, मिलत न कीन्ह सँबंधि।
मनु कटि राखे बाँधि के, त्रिवली बँधन बंधि॥

अति सुकुवाँरि लँक पुनि छीनी। दिष्टि न परै बारहु तब खीनी॥
देखत सकुचै देखनहारा। टूटि न परै दिष्टि कै भारा॥
काम कला दुइ साँचै भरी। सकत सोहाग जोरि जनु धरी॥
बिधिनै तोरि जोरि पुनि लीन्हे। तातें नाउँ निगम कटि कीन्हे॥
अपने थल भूखे केहरी। कोउ कहै कटि तिन्ह की हरी॥
देखि लंक भृंगी कटि टूटी। भँवति फिरै जनु संपति लूटी॥
तहँ सोहै किकिनि कटि कसी। काछे जनु आहै उरबसी॥

सोभित किंकिनि निकट कटि, मान उपम जी आइ।
हंस पाँति तजि मानसर, परबत बैठे जाइ॥

सुभ्र नितंब नितबनि केरे। गए हेराइ सोई जनु हेरे॥
जनु संगम दुइ परबत अहहीं। एक बार के बाँधे रहहीं॥
तेहि पर कटि सोभित निरमरी। जनु सिंहिनि गिरि ऊपर धरी॥

दुइ गिरि सम दोउ मगु जहँ नाहीं। चित के चरन चढत बिछलाहीं ॥
मति नितंब बरनत झिझकाई। मति की दिष्टि न आगे जाई ॥
परगट सो कवि कीन्ह बखाना। गुपत सो अंतरजामी जाना ॥
जहाँ जात मन पिंडुरी काँपी। तहँ की बात रहो सब झाँपी ॥

गुपत जो रचना बिधि रची, परगट नहिं होनिहार।
ग्यान तहाँ नहिं संचरै, जानै सिरजनिहार ॥

पुनि जंघा अति सुंदर साजी। जुगल जंघ तिहुँ लोक बिराजी ॥
केरा खंभ कलभ कर हेरी। जंघ निकट वे दोऊ करेरी ॥
अति सुंदर सम तूल सुहाए। जनु बिधि अपने कर चिकनाए ॥
सुरति करत सुख सरति हरी। मन की दिष्टि थलकि तहँ परी ॥
गौन समै जनु चमकत चूरा। हंस गयंद गरब धरि चूरा ॥
सीस धुनै गज लज्जित भए। हंस मानसर बूड़न गए ॥
छवाछीन भूषन छबि हरी। पायल आइ पाय लै परी ॥

चकइ जराऊ जेहरी, जेहरि जिउ लै जाइ।
सुर नर हैं झाँझर भए, देखि सो झाँझरि पाइ ॥

चरन कँवल पर मन बलि गये। जेहिं मगु चलै तहाँ रज भए ॥
मकु तेहि पथ गौन पुनि करई। भूलि पाँव इन्ह नैनन धरई ॥
तरवा ऊधरेख सुभ वाँची। सुरनर हिये लीक जनु खाँची ॥
जेहि जेहि पथ चरन तें चले। लेते हिये पाँय तर मले ॥
रकत लाग रह पायन संगा। जानहि लोग महाउर रंगा ॥
चलत चरन भुईं परै न देही। सुर नर मुनि नैनन पर लेही ॥
अनवट बिछिया अंगुरिन भरे। मैन सोनार रतन नग जरे ॥

जेहि चित्र चित्रावलि चरन, चित्र किये बिधि आनि।
ते चषु मगु बाहर कियो, हिये सरोवर पानि ॥

वह चित्रावलि आहै सोई। तीन लोक बंदै सब कोई ॥
सुर पुर सबै ध्यान ओहि धरही। अहिपुर सबै सेव तेहि करही ॥
मृतुमंडल जो देखा हेरी। घर घर चलै बात तेहि केरी ॥

पंछी वहि लगि फिरहिं उदासा। जल के सुत ओहि नाउँ पियासा ॥
परब्रत जपहिं मौन होइ नाऊँ। आसन मारि बैठि एक ठाऊँ ॥
पुहुमी दहु जो सरग लहु बाढ़ी। सेवा करतहि एक पग ठाढ़ी ॥
जानि बूझि जो ताहिं बिसारा। सो मनु जियतहि मरा अडारा ॥

अति सुरूप चित्रावली, रवि ससि सर न करेइ।
धन सो पुरुष औ धन हिया, ओहि क पंथ जिउ देइ ॥

भए सुनत चित्रावलि बरना। कुअँर नैन परबत के झरना ॥
गयो चेत चित रह्यो न ग्याना। जनु एहि सागर लच्छ हेराना ॥
माथें चढी लहर जनु आई। बिसम्हरि परा पुहुमि मुरझाई ॥
गहि जोगी पुनि कुँअर उठावा। खेह झारि सन्मुख बैठावा ॥
कहेसि कुँअर कस भए अचेता। बैठु सम्हारि हियें करु चेता ॥
एकौ बात कहै नहि पूछी। जनु गा जीउ देह भइ छूछी ॥
मूँदे नैन साँस पुनि लेई। सुनै न कछू उतर नहि देई ॥

प्रेम मत्र जोगी कहै, कुँअर स्रवन महँ तब्ब।
सुनत नाउ चित्रावली, निजन गयौ विष सब्ब ॥

जबहि कुँअर जागा पुनि सोई। गहिसि पाउ जोगी कर रोई ॥
सो तुम रूप बखाना देवा। भइ मनसा होइ उड़उँ परेवा ॥
पुनि मन महँ अस होइ गियाना। जाउँ कहाँ जो पंथ न जाना ॥
कहु सो केहि दिसि नगर अनूपा। जहाँ बसै वह नारि सुरूपा ॥
चलौं न करौं बिलँब एक घरी। निहफल जाइ घरी जो टरी ॥
और न मोरे हिये विचारा। सीस मोर औ चरन तुम्हारा ॥
किंचित रैनि जाइ तहँ ताईं। चरन लाइ लै चलहु गोसाईं ॥

लोचन रहै चकोर होइ, हिया सकल उनमाद।
मकु ससि मुख चित्रावली, देखौ तुव परसाद ॥

कहेसि कुँअर यह पंथ दुहेला। अस जनि जानु हँसी औ खेला ॥
अगम पहार विषम गढ घाटी। पखि न जाइ चढै नहिं चाँटी ॥
खोह घराट जाइ नहिं लाँघी। देखि पतार काँपि नर जाँघी ॥

जाइ सोंई जो जिउ परतेजा । सार पाँसुली लोह करेजा ॥
तैं अबही घट आप न बूझा । बार देखि पिछवार न सूझा ॥
बैठे देई न सेंध पिछवारे । मूँसहि तसकर घर अँधियारे ॥
तैं दै बार रहा गहि कूँजी । रही न एकौ घर महँ पूँजी ॥

निसिबासर सोवहि परा, जागेसि नहि पल आध ।
घर न सँभारसि आपना, का लेबे एहि साध ॥

एहि पगु केर करै जो साधा । चलत निचिंत न होइ पल आधा ॥
चाहै चरन चुभै जो काँटा । चलै बराइ मारग नहि छाँटा ॥
जो पल एक कोऊ बिलमावै । साथ जाइ पुनि पंथ न पावै ॥
एहि मगु माहँ चारि पुनि देसा । जस जस देस करै तस भेसा ॥
चारिहुँ देस नगर है चारी । पंथ जाइ तेहि नगर मँझारी ॥
चारिहु नगर चारि पुनि कोटा । रहहि छिपे एक एक के ओटा ॥
जो कोऊ जान न चार बिचारा । बीचहिं मार लेहिं बटमारा ॥

चारि देस बिच पथ सो, अब सुनु राजकुमार ।
बेगर बेगर बरन गुन, जस कछु तहँ ब्यवहार ॥

प्रथम भोगपुर नग्र सोहाया । भोग बिलास पाउ जहँ काया ॥
दुइ दुआर कर कोट सँवारा । आवागमन यही दुइ बारा ॥
पुनि दूनहुँ दिसि अपुरुब हाटा । अनबन भाँति पटन सब पाटा ॥
जो कछु चाहिय सबै बिकाई । मिरतक देखि जीभ ललचाई ॥
कहूँ पंच अमिरित जेवनारा । कहूँ सुगंधि करै महकारा ॥
कहूँ नाच कहुँ कथा अनूपा । कहुँ मिरदुल अति ससिहर रूपा ॥
इंद्रपुरी जनु चहुँ दिसि छाई । जो आवा सो रहा लुभाई ॥

घर घर मोहन जानहीं, पथहि बस कै लेहिं ॥
माया रूप देखाइ कै, आगे चलै न देहि ॥

बसै सोई ओहि नगर मँझारी । लेखा जानि होइ बैपारी ।
सूधें मारग आवै जाई । माँटो लेखैं बिषै पराई ॥
सौ देखै जेहि दोष न पावा । सुनै सोई जो पँडित सुनावा ॥

मिलि कै पाँच देहिं जेउनारी। भुगतै ताहि सोइ बैपारी॥
आपन अंस माँगि कै लेई। राज अंस बिनु माँगे देई॥
पाँच जूनि कै राजजोहारू। करत रहै जस जग व्यवहारू॥

धरै छोह चित नेह सौं, रिंस की ठौर रिसाइ।
ऐसी चलन चलावहि, तेहि भल पाँच कहाइ॥

पंथी जेहि आगे है जाना। सो व्यवहार कहौं करु आना॥
अंध होइ तस मूँदै नैना। बहिर होइ तस सुनै न बैना॥
रसना मौन होइ नहि भाषा। षट रस अमी न पावै चाषा॥
मूँदै नास साँस नहि आवै। काम क्रोध कै छार जरावै॥
दुष्ट के हनत न पाछे टरई। पगु जो उठाइ आगु मन धरई॥
बिलँब न लावै मन जग मदा। निसरै तोरि मौन जिमि फदा॥
पथी जो ओहि बार लहु जाई। आपु केवार उघारि कै जाई॥

चित रहसत पट ऊघरत, मिटै नैन अँधियार।
जैसें बीतै स्याम निसि, होइ बिमल भिनुसार॥

आगे गोरखपुर भल देसू। निबहै सोई जो गोरख भेसू॥
जँह तँह मढी गुफा बहु अहहीं। जोगी जती सनासी रहहीं॥
चारिहु ओर जाप नित होई। चरचा आन करै नहिं कोई॥
कोउ दुहुँ दिसि डोलै बिकरारा। कोऊ बैठि रह आसन मारा॥
काहू पंचअगिन तप सारा। कोऊ लटकइ रूखन डारा॥
कोऊ बैठि धूम तन डाढे। कोउ बिपरीत रहै होइ ढाढे॥
फल उठि खाहि पियहिं चलि पानी। जाँचहि एक बिधाता दानी॥

परम सबद गुरु देइ तँह, जेहि चेला सिर भाग।
नित जेहिं ड्योढ़ीं लावई, रहै सो ड्योढ़ी लाग॥

ताहि देस बिच आहि सो पंथा। चलै सोई जो पहिरै कथा॥
तेल नाहि सिर जटा बरावै। रजक नासि जे बसन रँगावै॥
भसम देह पग पाँवरि होई। एहि मग बिकट चलै पै सोई॥
मेखलि सिंगी चक्र अधारी। जोगौटा रुद्राप धँधारी॥

भल मँद बसै तहाँ इक भेसा। होइ बिचार न राँक नरेसा॥
एही भेष सिद्ध बहु अहही। एही भेष बहुत ठग रहहीं॥
एही भेष सौं बहु ठग आए। एही भेष सौं बहुत ठगाए॥

जो भूले एहि भेष जग, खुले न तेहि हिय आछ।
आगे चलै न तहँ रहैं, वरु फिरि आवैं पाछ॥

जो कोउ आगे चाहै चला। परगट देह भेष सो रला॥
पै अंतर सब जानै धंधा। भेष पत्याइ सोई जग अंधा॥
घटही माँहि भेष सो लेखै। हिय के लोचन मारग देखै॥
काया कथा ध्यान अधारी। सींगी सबद जगत धंधारी॥
लोचन चक्र सुमिरनी साँसा। माया जारि भस्म कै नासा॥
हिय जोगोट मनसा पाँवरी। प्रेम बार लै फिरि भावरी॥
परगट भेख तहाँ दइ डारै। आगे चलै सो पँवरि उधारै॥

रहहि नैन जो जोति बिनु, खीपक पहिल मिलानु।
पुनि ससिहर सम दूसरे, होहिं तीसरे भानु॥

आगे नेह नगर भल देसू। राँक होइ जँह जाइ नरेसू॥
भूलै देखि देस की सोभा। जँह वहि देखतही चित लोभा॥
जाइ तहँहिं जँह कोइ लै जाई। ऊँच खाल सम एक देखाई॥
खाइ सोई जो कोई खिआवै। विष अमिरित एक स्वाद जनावै॥
भल औ मद दोऊ एक लेखा। दुइ न जान सब एक कै देखा॥
मारि मारि जिय राख न कोऊ। रहस न होउ किए कछु छोऊ॥
उतर न देइ जो कोउ कछु कहा। ऐसैं रहै तहाँ सो रहा।

पथ नाहिं पुनि पंथ सो, ताहि देस निज पंथ।
बिनु गुरु कोऊ न जानई, औ पुनि पढ़ै गरंथ॥

आगे पंथ चलै पै सोई। जाके संग कछु भार न होई॥
डारै कंथा चक्र धँधारी। करै मया जिय काया सारी॥
ऐसन जिय जेहि लोभ न होई। रूपनगर मगु देखै सोई॥
हेरत तहाँ पंथ नहिं पावा। हेरन चहै जो आपु हेरावा॥

पथिक तहाँ जो जाइ भुलाना । बिमल पथ तेहीं पहिचाना ॥
आवहिं रूपनगर के लोगा । परखत फिरहिं कौन तेहि जोगा ॥
जो तेहि जोग लखहिं जिय माहीं । आगें होइ नगर लै जाहीं ॥

रूप भेख उतहिं क सजहि, औ सिखवहि सब भाव ।
देस न जानहिं तेहि कोऊ, आन कहूँ ते आव ॥

रूप नगर अति आह सोहावा । जेहि सिर भाग सो देखै पावा ॥
अतिहिं डेरावन अतिहि सो ऊँचा । कोटि माँह कोउ एक पहूँचा ॥
बहुतन्ह कीन्ह जोगि कर भेसा । चले छाँड़ि घर मन ओहि देसा ॥
तैं सुखिया सुख कौतुक राता । का जानसि दुख पंथ कि बाता ॥
भोजन बिनु मुख जाइ सुखाई । पानी बाजु कँवल कुम्हिलाई ॥
छीन बसन जेहि अँग न सोहाई । कथा कैसें सकै उठाई ॥
सौरि माँह जिन बनउर ठोवा । कुस साथरी सो कैसें सोवा ॥

बसन अपूरब पहिरि तन, लावहु मोद सुबास ।
अहहि नारि अछरी सरस, मानहु भोग बिलास ॥

अजगर खंड

कुँअर अँधेरें हा जहँ परा । बिधिना कहँ बिनवै भाखरा ॥
ए गुसाँइ जगरच्छ बिधाता । तोहिं बिनु और न दुख संघाता ॥
अह निसि जगत कीन्ह सब तोरा । तैं सिरजा अँधियार अँजोरा ॥
तही सरग ससि सूर बनावा । तहीं कीन्ह दधि अंत न पावा ॥
तही सकल गिरि मेरु सँवारा । तैं सब कीन्ह नदी औ नारा ॥
तुही पताल कीन्ह बलि बासू । तै पति और सबै तोर दासू ॥
तुहीं सोई जो सब जग पूजा । सुमिरौ काहि और नहिं दूजा ॥

तैं सुख दायक दुहूँ जग, दुख भंजन जेहिं नाउँ ।
तहीं बिछोवसि दुइ मिलै, तहीं करसि एक ठाउँ ॥

मैं जबहीं जिय सौरा तोहीं। तहीं मया करि काढ़े मोहीं॥
कूप माँहिं जे सुमिरन साजा। काढ़ि किये तै देस के राजा॥
प्रेम बिछोह अंध जेहि कीन्हे। बहुरि मिलाइ जोति तेहि दीन्हे॥
अगिन जरत जे तहीं सँभारा। किये ताहि फुलवारि अँगारा॥
मैं अब परा आइ तेहि ठाऊँ। अपनी सकति निकास न पाऊँ॥
मकु तैं होइ दयाल बिधाता। तोरे निकट कहाँ यह बाता॥
मैं जस हा तस कीन्ह गोसाईं। अब तू कर जस चाहसि साईं॥

हेरु गोसाईं आप कहँ, मोरे काँ जनि हेरु।
आपन नाउँ दयाल गुनि, हो दयाल एहि बेरु॥

जहाँ कुँअर चित सुमिरन ठाना। अजगर आइ एक नियराना॥
ओदर खोह जाहि नहि अंतू। लीलै हस्ति और को जंतू॥
सिखर डाँग तस आवै चला। बन बीहर सब काँ दलमला॥
औ तहँ पाइस मानुष बासा। खोह लाइ मुख ऐंचिस साँसा॥
पाहन रूख डार भरमना। साँस संग पुनि कुँअर समाना॥
गयो कुँअर पुनि साँसहि लागी। उठी खात ओहि ओदर आगी॥
परयो उलटि भा उदर दुहेला। डारिसि उगिलि जेत हुत लीला॥

भागा अजगर जीउ लै, परा कुँअर बिसँभार।
जे तापे बिरहा अगिन, तेहिं को निजवै पार॥

कुँअर सँभारि बैठु पुनि तहाँ। नैन न जोति जाइ उठि कहाँ॥
टोइ टोइ तहँ ठाँव सँवारा। टारे पाहन औ द्रुम डारा॥
बनमानुष एक तेहि बन अहा। कुँअर चरित सब देखत रहा॥
कहेसि जाहि विधि चहै न मारा। अस अहि ओदरहु ते निसारा॥
जौ जम सौं बिधि जीउ उबारा। रहे न नैन जोति बिष झारा॥
कौन जिअन जो नैन न जोती। सोत न लहै पानि बिनु मोती॥
हाथ पाँव बर बुधि सब आही। एक विनु नैन करै बिनु काही॥

मान न बातैं इमि करै, जौलहु घट महँ पौन।
बिधिना एतना राखु थिर, नैन बैन औ सौन॥

बिधि तेहि हिये दया उपजाई। नियरे होइ पुनि देखेसि आई ॥
देखि रूप मन किहिसि बिचारी। यह सुरपुर हुत दिये अँडारी ॥
जग न होइ अस कोई मानवा॥ निहचै यह बान गंध्रव छवा ॥
अब पूछौं एहि की सब बाता। कौन जाति कस लीन्ह बिधाता ॥
केहि अभाग के दीन्ह सरापा। अस कारन दहुँ भौ केहि पापा ॥
कहेसि रे अंध विधाताद्रोही। कहु सो सत सत पूछौ तोही ॥
जो सत संग साथ लष गोती। हियै सत्त लोचन सिर जोती ॥

सती मरै जो मत चढ़ै, सत्त सहस दस आउ।
तन मन धन बरु जीउ किन, जाउ सत्त जनि जाउ।

सत्य सपत दै पूछौ तोकाँ। का तोर जाति जन्म केहि लोका ॥
का तोर सरग देव औतारा। इंद्र सराप लहे महि डारा ॥
कै रे जनम बल बासुकि देसा। कै तपि मही आइ परवेसा ॥
केहि गुन एकति इहाँ तैं आवा। मानुष इहाँ न आवै पावा ॥
जो मानुष तौ गुन कहु मोही। जेहि तें साँप न निजवै तोहीं ॥
कै तैं जनम अध चषु पाए। कै अबहीं भौ अहि के खाए ॥
देखौं सब मानुष कै भावा। कहु सत इहाँ कौन लै आवा ॥

देखत लोना रूप तोर, छोह उठै जिय मोहिं ॥
कहेसि सत्त सत पूछौं, सपथ सिभु दै तोहि ॥

हस्ती खंड

बीते चलत पाख दुइ चारी। परा दिष्टि एक कुंजर भारी ॥
ऊँच सीस जनु मेरु देखावा। सूँड़ जानु अजगर लरकावा ॥
तरुवर जनु चबाइ दुइ दाँता। डारत आउ खेह मदमाता ॥
धावत जाइ पुहुमि जनु धसी। आवै पीठ सरग सों खसी ॥
भागहिं और हस्ति मद बासा। कुँअर देखि जिय भयो तरासा ॥
कहेसि मीचु अब पहुँची आई। एहि आगे कहँ जाब पराई ॥
अस्त्र नाहि जो सम्मुख धाऊँ। मारौं एहि जैपत्र जौ पावौं ॥

जनम अकारथ जगत भा, गई अमिरथा आउ।
चित्रावलि के दरस कर, रहा हिएँ पछताउ॥

अस्त्र न जो सनमुख होइ लरौं। जो निजु मरन भागि का मरौं॥
कुंजर धाइ कुँअर पर परा। रहा ठाढ़ ही नेक न डरा॥
धाइ लपेटि सूँड़ सौ लीन्हा। चाहेसि मूड डाढ़ तर दीन्हा॥
कुँअर हिए बिधि सँवरा तहाँ। जो बिधि केर मीचु तेहि कहाँ॥
ततखन राजपंछि एक आवा। परबत डोल जो डैन डोलावा॥
ओहि हस्ती पर टूटा आई। गहि ले उड़ा सरग कहँ जाई॥
सूँड़ समेटि जो कुंजर रहा। कुँअरन छूट डरन्ह सुठि गहा॥

उड़ा जाय अंतरिख महँ, दीखै जैस पहार।
घरी चार मँह लै गयो, सात सुमुदर पार॥

बारिध तीर जहाँ हुत रेतू। परा तहाँ छुटि कुँअर अचेतू॥
भरि गये सीस देह सब खेहा। जेहि तन नेहाँ गति देहि एहा॥
जेहि के हिए बस प्रान पियारा। सतत देह चढ़ावै छारा॥
जिमि जिमि छार देह पर चढ़ा। तिमि तिमि रूप मुकुर जिमि बढ़ा॥
छार चढावैं बहु गुनि जोगी। छार मरम का जानै भोगी॥
मानुस देह छार हुत कीन्हा। छार बुद्धि जिन छार न चीन्हा॥
कवन जनम केहि तप करतारा। मूँठी छार अमित बिस्तारा॥

देखि बड़ाई छार की, बमेउ आइ करतार।
छारहि ते कीन्हेसि सबै, अन्त कीन्ह पुनि छार॥

पहर एक गइ उठा जो चेती। देखा परा समुँद की रेती॥
ना सो हस्ति जेहि के बस अहा। ना सो पंछि जो कुंजर गहा॥
सौंरिस हिए विधाता सोई। जेहि के करत खेल सब होई॥
ऐ गुसाइँ तै दुहुँ जुग राजा। ए सब चरित तोहि पै छाजा॥
जियतेहिं मारि मिलावसि छारा। चहसि तो देखि फेरि औतारा॥
गिरि परबत कै पानि बहावसि। पानिहि साजि सुमेरु देखावसि॥
छत्रिन अछत रौंक सम करई। चहइ तु छत्र रॉक सिर धरई॥

भंजन गठन समस्त तू, और न दूजा कोइ।
तही अहा अरु है तही, औ पुनि आगे होइ॥

कुँअर सँवरि चित्रावलि नेहा। उठि के चला झारि तन खेहा॥
गिरि परबत औ कानन घना। प्रेम प्रसाद न लेखे घना॥
निडर जाहि तेहि बनखँड माँहीं। जम सौं बाच मीच अब नाही॥
बीता चलत मास एक सारा। बन ओरान औ भा उजियारा॥
रहसा हिये देस जब पावा। दृष्टि परा एक नगर सोहावा॥
कहेसि जाउँ अब नगर मँझारी। मकु मिलि जाय कोऊ बैपारी॥
पूँछि लेहुँ तेहि नगर की बाटा। चित बिकान है जेहि की हाटा॥

देखेसि पुनि फुलवारि एक, फूले फूल अमोल।
अलि गुंजारहि जहाँ तहँ, करहि मजोर कलोल॥

देखि अपूरब ठाउँ सोहाई। कुँअर तहाँ छिनु बैठेउ जाई॥
संपति कुसुम देखि चित लावा। लोचन जरे निहारि सिरावा॥
जूही फूल दिष्टि भरि हेरा। लखै भाव चित्रावलि केरा॥
देखि गुलाल अधर चित चढ़ा। दारिम दसन रहसि हिय बढा॥
चंपक माँहि सरीर की शोभा। नारँगि लखि उरोज मन लोभा॥
अली माल फूलन पर हेरी। होइ सुरति अलकावलि केरी॥
गीव मजोरि देखि मन आवा। लोचन खजन आइ देखावा॥

जाहि होइ चित की लगनि, मूरख सों सो दूरि।
जान सुजान चहूँ दिसि, वोहि रहा भरि पूरि॥

चित्रावली बिरह खंड

चित्रावलि चिल भएउ उदासा। पिउ न गए दै अवधि की आसा॥
बिरह समुँद अति अगम अपारा! बाज अधार बूड़ मँझधारा॥
चहुँ दिसि हेरहुँ हित कोउ नाहीं। बूड़त काह उँचावै बाही॥
निसि दिन बरै अगिन की ज्वाला। दुरगा मँदिल भयो है बाला॥

बुझै न लूम सगर लहु बाढ़ा । पथी गयो लाइ हिय डाढा ॥
जोगी सुरति रहै चखु माही । ज्यों जल महँ दीपक परछाहीं ॥
झलझल जोति होइ उजियारा । पानी पौन बुझाव न पारा ॥

बिरह अगिन उर महँ बरै, एहि तन जानै सोइ ।
सुलगै काठ बिलूत ज्यों, धुआँ न परगट होइ ॥

एक दिन कहिसि कि ऐ रँगमाती । करिया भयो रूप रँगराती ॥
रूप रग सब लै गा जोगी । लोग कुटुँब जानै यह रोगी ॥
जोगी गयो छाड़ि तजि माया । भोर कि धुईं भई मम काया ॥
जोगी करत कहा दहुँ फेरी । आसन परी छार की ढेरी ॥
बिरह पवन जो करै झकोरा । बिथुरे छार न कोऊ बटोरा ॥
जोबन गज अपसर मद कीन्हे । अब न रहै अँधियारी दीन्हे ॥
निसि बासर तन कानन गाहा । जाकी साल हिये तेहि चाहा ॥

जोबन सखी मतङ्ग गज, तौ लहुँ लाग गुहार ।
जौलहुँ अपसर होइ कै, सीस न डारेसि छार ॥

सुनि रँगमति कहा सुनु बारी । जोबन मैगल मद दिन चारी ॥
अपसर होइ देइ नहि कोई । जौ तिय आपु महाउत होई ॥
अकुस सकुच गहै कर नारी । है आँखिन्ह घूँघुट अँधियारी ॥
औ कुलकानि महादिढ़ अदू । निसि दिन राखै मेलि के फदू ॥
जौ हठि कै अरि पाँव निकारा । हटक बुद्धि चरचा गड़दारा ॥
एह ससार रीति अस अहई । जो जेहि लाग दुःख जिय सहई ॥
जो तजि ठाउँ सकै नहि जाई । आपुहि तहाँ मिलै सो जाई ॥

आजु बदन तोर कौल सम, औरै रग सुभाउ ।
सब तन लागै मधुप पुनि, मकु कोउ चाह सुनाउ ॥

एहि महँ सखी एक हितकारी । आई हँसति भई रननारी ॥
कहिसि कुँअरि सुनु बचन सुहाये । गये बिदेस नपुंसक आये ॥
बदन अरुन हिय हुलसत अहही । जानहुँ बचन कछुक सुभ कहही ॥
सुनतहि चलि धाई बरनारी । गिरी रही पै सखिन्ह सँभारी ॥

जोगी आइ मनावत नाथा। दरस पाइ भुइँ लायउ माथा॥
कहिन कि हम पुहमी सब धाए। चित्र सरूप चीन्हि अब आए॥
सुनि रहसी चित्रावलि हीया। चित्रहिं जानु फेरि रँग दीया॥

हिय हुलास बिहँसे अधर, औ कपोल रँग होइ।
पुनि उपजै उर धकधकी, होइ न औरै कोइ॥

पूछिसि कौन रूप सो देखा। केहि दिन कौन भाँति केहि लेखा॥
जोगिनि रहसि रहसि जस जानी। आदि अंत लहुँ कथा बखानी॥
सुनि चित्रावलि हिय संतोखा। निहचै जानि गयो जिय धोखा॥
कहिसि कि हौं तुम्ह ऊपर वारी। मोरै दुख बहु भए दुखारी॥
अब सुख करहु बैठि एहि ठाऊँ। करिहौ सेव जगत जब ताईं॥
मैं सब इच्छ तुम्हार पुराई। तुम जग इच्छा पुरवहु जाई॥
सेवक सेव तजौ जिन कोई। सेवा ठाकुर आपन होई॥

मान सेव सोइ कीजिये, जासो पति पहिचानु।
ठाकुर आपन जो भयो, सब जग आपन जानु॥

कौलावती गवन खंड

देखि कटक जिमि बादल छाहाँ। परी हूल सागर गढ़ माहाँ॥
यह अब को जस सोहिल राऊ। कटक साजि भुइँ चापे आऊ॥
वह हुत कौलावति अनुरागी। एह अब दहुँ आवै केहि लागी॥
ओ कहँ हुत सुजान संघारा। अब कहँ पाउब तस बरिआरा॥
सागर मन पुनि चिंता भई। साहस बाँधि मीचु पुनि भई॥
जहँ तहँ सजग बीर हित बासे। सूर बदन जनु कौल बिगासे॥
एहि महँ हंस पहूँचा आई। कहिसि करहु अब अनँद बधाई॥

जो जोगी सोहिल हना, औ राखा तुम प्रान।
आयो बहुरि नरेस होइ, चलहु करहु सनमान॥

हंस बचन जब सागर सुना। भा जिअ सोच हिआ महँ गुना॥
अब लहु कौल आस जल अहा। अब जो राखिय कारन कहा॥
लोग कुटुम मिलि कै मत ठाना। कौल न काज आउ बिनु भाना॥
जस बर कै ओहि दीन्ह बिआही। अब बर कै पुनि सौपहु ताही॥
दुहिता केर कठिन है भारा। तबहीं पति जो जाइ ससुरारा॥
जनम पिता माता घर लेई। दुख दुख माथे बिधि लिखि देई॥
यह बिचारि कै डाँड़ी फाँदी। गौन जान कौलावति साँदी॥

समदी गगा गोद गहि, औ कुमुदिनि कँठ लाइ।
पुनि समदेउ परिवार सब, लोगन आँगन आइ॥

कौलावति चढ़ि चली विमाना। जेहि अँबराउ सुरेस सुजाना॥
सागर साजि कटक पुनि चला। कौल गौन दुख जग कलमला॥
औ जहँ लहु हुत दायज दीन्हा। सो सब लाइ पुरोहित लीन्हा॥
सागर आइ सुजानहि भेंटा। मुख देखत सब दुख गा मेंटा॥
कंठ लाय हिय सीतल कीन्हाँ। भुजा जोरि अँकवारी दीन्हाँ॥
औ जहँ लहु पर आपन अहै। छुइ छुइ पाँउ दूरि तकि रहै॥
सागर तब बिनती औधारी। कस घर तजि के उतरेउ बारी॥

जो राखहु नीरज चरन, सोभ पाउ हम माथ।
चलउ आप घर जानि कै, कीजै हमहिं सनाथ॥

तब सुजान बोला सुनु राऊ। एहि मारग हम लोग बटाऊ॥
पथिक पथ जौ छाड़ै कोई। भूलै अत महा दुख होई॥
सूध पंथ तजि उत्तर केरा। कौल बचा आएउँ एहि फेरा॥
कौलावति कर बिदा करीजै। अगुआ एक सग पुनि दीजै॥
तुम परसाद जाउँ अब देसा। मकु भेटउँ के जियत नरेसा॥
राय कहा कछु आहि न खाँगा। को राखै जो आपनँ माँगा॥
सूख पंथ वहु दुख जगजाना। पानी पानी बहुत मिलाना॥

अज्ञा देहु तो जाइ घर, साजो बोहित साज।
लीजै सभै लदाय जो, आउ तुम्हारे काज॥

कुँअर गहे सागर के चरना । कहिसि बेगि कीजै जो करना ॥
सागर राउ पलटि घर आवा । चित्रावलि पहँ कुँअर सिधावा ॥
कहिसि कि सुन्दरि प्रान पियारी । तोहि बिनु प्रान होइ घट भारी ॥
एही नगर जहवाँ हौ कहा । पाँच मास पग साँकर रहा ॥
एही नगर हम कहँ दुख बीता । इहाँ हाँकि सोहिल रन जीता ॥
एहो गाँव सागर गढ आही । कौलावति जहाँ दीन्ह ब्याही ॥
मों कहँ तुम्ह बिनु आन न भावा । वै मोंहि बिरह बहुत दुख पावा ॥

ओहि के दूसर आन नहि, मोहिं बिनु एहि संसार ।
तजि आपन घर बार सब, आई कै अभिसार ॥

अब लहुँ रही इहाँ ओडेरी । आजु अवधि पूजी ओहि केरी ॥
जो जेहि कारन तन मन जरई । सो पुनि ताकर चिंता करई ॥
सौति जानि जनि होहु दुखारी । वह तुम्हारि जस आज्ञाकारी ॥
सुनि चित्रावलि हिए सँताई । नैन दुराइ कहिसि बिलखाई ॥
तुम साईं अपने सुख राजा । तिरियहि नाउँ सोति सिर गाजा ॥
जो बिधि ससी करावत देई । सहै न तौ अब काह करेई ॥
निसि आयो तहँ कुँअर सुजाना । कौला जहाँ कीन्ह अस्थाना ॥

कंत बचा परतीति पर, सोरह साजि सिगार ।
बासक-सेजा होइ रही, लाइ नैन दुइ बार ॥

पदुम कोस अलि लीन्ह बसेरा । हिये सोच भइ मालति केरा ।
नीरज लोयन रूप अतिसाए । दिन कर देखि नीर भरि आए ॥
बिहँसि कत कामिनि कँठ लाई । बिरह दगधि उर लाइ बुझाई ॥
मनमथ दाब जाँघ पुनि काँपी । रावन बार लक गहि चाँपी ॥
दीन्हीं चार नखच्छत छाती । फूट सिंघोर सेज भइ राती ॥
होइगा अग भंग नव साता । अति परसेद सिथल भइ गाता ॥
भयो प्रभात गयो उठि साईं । कौल पास कुईं चलि आईं ॥

हँसि हँसि पूछहिं रैनिसुख, रहसि करहिं परिहास ।
लाजन गोवै कौल मुख, सखियन अधर बिगास ॥

चित्रावलि कहँ बिनु ससि साईं । गईं रैनि सब गनत तराईं ॥
सौति संग सालै जनु काँटा । अंग अंग लागै जनु चाँटा ॥
सुलगी उरध आगि सन सेजा । औटि होइ जल रकत करेजा ॥
करम करम कै सो निसि गई । पिअ देखत तिअ खंडित भई ॥
रही सोइ मिसि बदन छिपाई । नायक सकुचत आनि जगाई ॥
परी चौंकि लागै कर सीरा । दच्छिन नाहि नायका धीरा ॥
कहिसि अहिउँ सुद सपने माहीं । कहा जगाइ लीन्ह गहि बाहीं ॥

आहिउँ महा सुख सपन महँ, तुम कर लागे अंग ।
गए नैन पट उघरि कै, भयो सकल सुख भंग ॥

जाचहुँ तुम एक सुंदरि संगा । मानत अहै केलि रति रंगा ॥
मोहि देखि नौ सात बनाए । तजि सो नारि आनि कँठ लाए ॥
हिये लागि हिय मोर सिराना । पाएउँ अधर अमिय कै पाना ॥
और सकल सुख कहे न जाही । उठै आगि सँवरत मन माही ॥
भई दोहागिन बिकल सरीरा । जनु गिरि गयो हाथ ते हीरा ॥
वह रौवै परि सेज अकेली । हौ हँसि हँसि मानों रस केली ॥
मोरे छुरै कुसुम जनु गाथा । वह लगि रहै हाथ सो माथा ॥

सेज अकेली रैनि सब, सहेउ सकल उतपात ।
चतुर नारि चित्रावली, रस काढै रस बात ॥

सिद्धसमागम खंड

भयो सोर सब नगर मँझारी । करहि बखान सकल नर नारी ॥
सागर गाँव सिद्ध एक आवा । मुख देखत मन इच्छ पुरावा ॥
कुष्टी कथा बाँझ सुत पावै । अधहिं चखु दै जग देखरावै ॥
कहै चाह परदेसी केरी । बिछुरेहिं आनि मिलावै फेरी ॥
सुनि के धाए सब नर नारी । बार बूढ तरुनी औ बारी ॥
जेहि निहचै ते निधि लै आए । निहचै बिना बादि सब धाए ॥
निहचै नग जनि डारो कोई । निहचै सिद्धि परापति होई ॥

निहचै इच्छा सरग हुत, आनि मिटावै दुंद ।
जैसे नैन चकोर कहँ, अमी पियावै चंद ॥

सुना कुँअर पुनि सिद्ध बखाना । अकसमात चित रहस समाना ॥
कहिसि कि भाग जोर समुहाई । तब अस सिद्ध मिलै कोउ आई ॥
करूँ जाइ मन बच कै सेवा । मकु तो नहिं होइ जाइ परेवा ॥
चित्रावलि करि कुसल सुनावै । रूपनगर कर पथ दिखावै ॥
चला कुँअर निहचै यक हाथा । सेवक पाँचन न छोड़हि साथा ॥
महत गरब दोऊ तहँ त्यागे । मन बच कर्म तिनो सँग लागे ॥
सनमुख आइ दरस जब कीन्हा । वै ओकहँ वै ओकहँ चीन्हाँ ॥

देखत दुहूँ आनन्द भा, रहसत आगैं आय ॥
परेउ परेवा कुँअर पग, कुँअर परेवा पाय ॥

कहै कुँअर सुनु हनिवँत बीरा । लागु कठु ज्यों सीत समीरा ॥
कहु कुसलात बेगि सिय केरी । निसरत प्रान राखु घट फेरी ॥
हौं जिमि राम भयो बैरागी । नख सिख परी बिरह की आगी ॥
राम संग हुत लछिमन भाई । हौं अकेल दुख पुनि अधिकाई ॥
हनिवँत कहा सीय कुसलाता । राघव बदन सुनत भा राता ॥
औ पुनि बिथा कहिसि ओहि केरी । जेहि दिन ते तुम ओहि औडेरी ॥
तहँहीं दिवस देखि अकसरी । रावन बिरह नारि से हरी ॥

सीता रावन बस परी, करौ न कोटि उपाइ ।
तौ लहुँ नाहिं उधार निजु, जो लहुँ राम न जाइ ॥

पुनि दीन्हेसि चित्रावलि पाती । खोलि कुंअर लाई लै छाती ॥
सुलगत काठ लागु जनु लूका । दुहुँ आगि मिलि उठा भभूका ॥
हिया जरत जो लिहिसि उसासा । धूम बरन होइ गयो अकासा ॥
अमिरित बचन भरी हुत छाती । ता सों अगिन मुख बाँची पाती ॥
पाती पावस सलिता भई । दूनहुँ कँवल दुःख जल मई ॥
आखर मगर गोह घरिआरा । अरथ भँवर परि कठिन निसारा ॥
भँवर अनेक पैठि मन तरा । एक तें निकसि ऐक मँह परा ॥

पाती जनु पावस नदी, मन तकि पार तराइ।
चित्रावलि दुख अगम जल, बूड़ि बूड़ि तहँ जाइ॥

पाती पढी समापति भई। बिरह झकोर कुँअर सुधि गई॥
हीवर जिमि ग्रीषम रवि जरा। जिउ जनु पात बवडर परा॥
बर कै उठा चला लै चाहा। पाइ फिरा जैसे उतसाहा॥
पुनि जो चेत होइ देखा हेरी। पायन परी बचा की बेरी॥
कहिसि कहौ का दुःख बखानी। जनम सिराइ न कहत कहानी॥
हौ पंछी भूला हुत आवा। जाल मेलि एहि गाँव फँदावा॥
चार लोभ बैसेउँ एहि आड़ा। अचक आइ खोंचा उर गडा॥

पाँखन लासा प्रेम का, बाचा बंधन पाइ।
दै दै मारौ मूँड़ बहु, निकस न केहु उपाइ॥

अब तोहि मिलें भयो संतोखा। आसा मिली गयो जिउ धोखा॥
करहु उपाइ गवन जेहि होई। मैं आपन बुधि मति सब खोई॥
चोरी चलै धरम की हानी। परगट चहुँ दिसि रोकहि रानी॥
सुनि कै बिथा परेवै कहा। अब दुख सब बीता जित अहा॥
परगट जाइ सँवारहु कथा। अजन लाइ गुपत चलु पंथा॥
रहसिं कुँअर मदिर महँ आए। कौलवति कहँ निअर बुलाए॥
कहेसि सुनहु अब राजदुलारी। हौ परदेसी आदि भिखारी॥

आउ न हमरे काज यह, राज पाट सुख भोग।
चित्रावलि हियरे बसी, जाकर बिरह बियोग॥

अब लहुँ मिला न अगुवा कोई। जेहि परचय ओहि दिस कै होई॥
अगुआ मिला चल्यो उठि संगा। तुम जनि करहु कौल मन भंगा॥
जौ बिधि आस पुरावै मोरी। तौ मैं चेत करब पुनि तोरी॥
सुनतहि गवन धसकि उर गयऊ। कंचन अंग रॉग पुनि भयऊ॥
कहिसि कि ऐ जग जीवन साईं। मोर जिअन तुअ दरसन ताईं॥
जो तुम होब बिदेसी राजा। इहवाँ मोर कौन अब काजा॥
पाछे महा दुःख पुनि कीता। जहवाँ राम तहाँ पुनि सीता॥

जैसे पनहीं पाँव की, तैसे तिया सुभाउ।
पुरुष पंथ चलु आपने, पनहीं तजै न पाऊँ॥

कहै सुजान सुनहु बर नारी। तुम सयानि औ बूझनिहारी॥
मेहरिहिं कहैं लोग सब देहरी। धरै असन अस्थिर सोइ मेहरी॥
औ पुनि घरनि कहै सब कोई। घरहिं सँभारै घरनी सोई॥
राघव जौ लाई सँग सीता। बिछुरें जनम दुःख सब बीता॥
तुम कछु चित चिता जनि करहू। जो हम कहा सोई चित धरहू॥
इतना कहि कथा गिवँ डारा। औ पुनि अंग चढ़ाएउ छारा॥
लुकअंजन लै आँखिन दीन्हा। गा छिपाइ चटेक जनु कीन्हा॥

कौला देखि अचक रही, जनु ठग लाव देखाए।
पुनि लागें बिरहा धका, गिरी पुहुमि मुरछाए॥

देखि सखी सब कीन्ह अँदोरा। गहि उठाइ बैठी लै कोरा॥
सुनि कौलावति मदिर कूका। परी अचल गंगा जिय हूका॥
राजा पुनि बिसँभर होइ धावा। नंगे पाँव तहाँ चलि आवा॥
देखि अवस्था धिय कर रोवा। दूनहुँ बदन नैन जल धोवा॥
पूछहि बिथा सुनावहिं ईठा। गुर गूँगा कर तीत न मीठा॥
रानी पूंछी हारि जब रही। कौल बिथा तब फूलन कही॥
प्रति उत्तर जस दूनहुँ बीता। औ सुजान चेटक पुनि कीता॥

आदि अंत बहु सखिन सब, एक एक कीन्ह बखान॥
सुनत आगि दुहुँ उर परी, औ ओहि पारा प्रान॥

राजकुँअर कर सुनत बिछोहा। धाह मेलि पुनि राजा रोआ॥
कौलावति दुख दीरघ जानी। उमड़ि चली गंगा चखु पानी॥
सखी सहेली पुनि सब रोईं। ससि अथई जानहुँ सर कोईं॥
पर आपन ज़न परिजन लोगा। सगरे नगर परा सुनि सोगा॥
नर नारी जुबती औ जरा। सब के सीस गाज जनु परा॥
मलि मलि हाथ कहैं सब कोई। अस परजापति आन न होई॥
पहर एक बीता होइ रोरा। कोऊ साँच कोउ झूँठ नीहोरा॥

छमा कराए सब जना, पंडितन्ह ज्ञान बुझाइ ।
मारे बिरह बयारि के, कौंल रही कुम्हिलाय ॥

जोगी खेल जो चेटक खेला । छाड़ि मँदिल होइ चला अकेला ॥
आवा बार जहाँ जग रोका । भीर लागि पै काहु न टोका ॥
देखि भीर जिय कौतुक होई । सब सगी पै चीन्ह न कोई ॥
आदि पंथ सो आगे कीता । यह कौतुक जनु सपना बीता ॥
बेगिहि आइ परेवहिं मिला । संगिहि देखि कौंल जनु मिला ॥
पंथ चले तजि सागर गाऊँ । जपत चले चित्रावलि नाऊँ ॥
सूध पंथ अगुवा लै आवा । बेगहि रूपनगर निअरावा ॥

कहिसि कि एही ठाँव तुम, बैठि रहहु लौ लाइ ।
हौ चित्रावलि निअर होइ, चाह सुनावों जाइ ॥

परेवा बंधन खंड

चेरी एक अहित जो आही । ते छिपाइ हीरा सों कही ॥
एक दिन देखत अहेउ छिपानी । चित्रावलि निकसी कुम्हिलानी ॥
रोइ परेवा सों कछु कहा । पाती दीन्ह पाँव पुनि गहा ॥
गयो परेवा लै कहुँ चीठी । तेहि दिन सो पुनि परा न डीठी ॥
पेम बाउ जो बाउर करही । सेवक पाय तबहि पति धरही ॥
देखा अहा कहा मैं सोई । अब तुम करौ वो करबै होई ॥
सुनि के हीरा हिए सँकानी । धसकि गयो हिय अजुगुति जानी ॥

केहि अधरम केहि पाप विधि, हस कोखि भा काग ।
अपने जान न बिसतुरेउँ, चित्र परेउ कहँ दाग ॥

पुनि मन कछु गियान उपराजा । जाँघ उधारे मरिये लाजा ॥
अधिक उदगरी काठी भूरी । राखौ आगि मेलि सिर धूरी ॥
बाट बाट सब लाई भूता । रोकहि राह परेवा दूता ॥
आवइ कहुँ पूछे बिनु नाही । आनि बाँधि राखहु बँद माँहीं ॥

जो जहँ तहाँ रोकि मगु रहा। आवत पथ परेवा गहा ॥
बाँधि आनिके बँद मँह राखा। अचक रहा कछु आव न भाखा ॥
मन मँह कहिसि रहा पछतावा। कुँअर न आवन कहन न पावा ॥

वह पुनि रहिहै रैनि दिन, मारग लाएँ आँखि।
वह परदेसी बापुरा, मरिहि अकेला झाँखि ॥

रहा सुजान नैन मगु लाई। का दहुँ कहै परेवा आई ॥
सो पुनि अज्ञा काह करेई। कौन भाँति दरसन पुनि देई ॥
सगर दिवस एहि सोच गँवावा। साँझ परी न परेवा आवा ॥
ज्यों ज्यों छिन छिन रैनि बिहाई। त्यों त्यों बिरह आगि अधिकाई ॥
लोयन दोऊ रहे मगु लागे। आहट कहँ सरवन पुनि जागे ॥
सकल रैनि पुनि ऐसेहि बीती। जानु कँवल जिय मानु कि पीती ॥
दिनकर उठत उठै हिय आगी। बिरह बयारी सरग गै लागी ॥

कहिसि कि प्रीतम हिया सिर, सूखि गयो जल नेह।
फाट न हिया तडाक जेउँ, हँस चलेउ तजि देह ॥

जौ वै मो सौं निज मुख फेरा। तौ काया परान केहि केरा ॥
जीउ लेइ जो जम बरिआरा। छुटै प्रान यह दुःख अपारा ॥
जो अब मारौं होइ अपघाती। जगत नसाइ जनम औ जाती ॥
मैं बिरही मोहि नाँच नचावा। अत सो यह कौतुक देखरावा ॥
अब नाचौं किन परगट होई। ओहि कै पथ लै मारौ कोई ॥
निसरा कुँअर डारि सिर छारा। चित्रावलि चितरवलि पुकारा ॥
कोऊ आहि अस पर उपकारी। आनि देखावै राजकुँआरी ॥

खनक देखाउ सरूप मुख, लिहिसि चोर जिय मोर।
यह राजा हत्यार बड, घर महँ राखै चोर ॥

सुनि कै लोग अचंभौ रहा। जोई सुना सोई मुख गहा ॥
बिरह उसास अगिन कर ज्वाला। लागत परै हाथ महँ छाला ॥
दूरहि हटकि रहैं सब कोई। कोउ मुख मूँदै नियरे होई ॥
होइ गा सगरै नगर चवावा। रूपनगर एक बाउर आवा ॥

कहै सोई जो कहा न जाई। मरै लागि एह बुद्धि उपाई ॥
राजसभा सब काहू सुना। सुनतहि चित्रसेन सिर धुना ॥
बदन सुखान अंग दुति छाडी। लाजन सीस पुहुमि गा गाड़ी ॥
कहिसि कि जा कहँ जिय डरत, सँवरि सुहात न राज ॥
सोई आनि हम सिर परी, अचक कहूँ हुत गाज ॥

दलगंजन खंड

पुनि सँभारि कै बैसेउ राजा। कहिसि कि भल नाही यह काजा ॥
किन भिखारि पर कीन्ह अगासा। जिन अस वचन असुभ परगासा ॥
काढि जिभि जिय मारहु सोई। जो अस सुनै कहै नहिं कोई ॥
राजनीति एक मन्त्री अहा। तिन उठि सीस नाइ के कहा ॥
यहि संसार बेद अनुमाना। बाउर बचन न कोऊ माना ॥
जाकर बचन नाहि परतीता। ताके मारे होइ अनीता ॥
लाज लाग जो मारै कोई। अस मारे भल कहै न कोई ॥
गहि जो भीखारी मारई, दुइ घट यहि जग होइ।
एक हत्या काँधे चढै, पुनि भल कहै न कोइ।
यह चरचा पुनि मंदिर भई। रानी सुनत सूखि जिय गई ॥
कहिसि कि मुई न ऐसन बारी। जे अपने कुल लाइसि गारी ॥
आपनि जानि बिसारेउ नाहीं। पौन न पाउ छुवै परछाहीं ॥
एहि क रूप कहँ काहु न देखा। मिटी न सीस करम की रेखा ॥
कुमुद यह भेद परेवा जाना। पूछहु बोलि कहै अनुमाना ॥
बहुरि कहिसि यह पावक जरई। ज्यों ज्यों खुदी त्यों उदगरई ॥
बाहर नगर परा जन कूका। कहुँ घर लागि जाइ जनु लूका ॥
तब कुछ हाथ न आवइ, होइ आन की आन।
तातें बरजे सकल जन, परै न चित्रिनि कान ॥

राजें मते महाउत लावा। पान दीन औ कहि समुझावा॥
जहाँ कहूँ वह बाउर होई। अस जस दूसर जान न कोई॥
अपसर गज दलगंजन नाऊ। छलि मकुलाइ देहि तेहि ठाऊँ॥
मकु गज धाइ हने सो जोगी। बिनु औषधि जिय होइ निरोगी॥
लै सो पान महाउत लावा। मूरी दइ गज अतिहि मतावा॥
खोलि गयंद ओहि दिसु लावा। कोऊ न जानत गुप्त की कला॥
जहँ बाउर सिर डारत छारा। उतरि महाउत भयो निसीरा॥

छूटि चला मैमंत गज, चहुँ दिसि परी पुकार॥
जग लै भाजो जीव सब, कूटा जम बरिआर॥

भा अँदोर मैगल मकुलाना। सुनि चारिहुँ दिसि परा बसाना॥
देखि देखि लोग हीय सब कूटा। भा अजुगुत दलगंजन छूटा॥
एहि सों जिअत बँचा जो आजू। ताकर नवा जनम कर साजू॥
आपु आपु कहँ परजा राजा। जहँइ सुना सोउ जिउ लै भाजा॥
पूतहिं बाप सँभारे नाहीं। कुटुम्ब लोग केहि लेखें माहीं॥
जेहि सँग अहा बटम हय हाथी। अकसर जाइ न कोई साथी॥
जाकर अंग न छुअत समीरा। गहै आनि अनचीन्ह शरीरा॥

जेहि तन लाग रैनि दिन, चोआ चन्दन सार।
तिन्ह तन बन महँ सग बिनु, निभरम लागै छार॥

चले छाँड़ि बनियाँ बैपारी। रही जहाँ तहाँ हाट पसारी॥
छाड़ि चले जित मंदिर लोना। जहवाँ लाग रूप औ सोना॥
छाड़ि तिया जासों रँग कीन्हा। चले जाहिं जानहुँ अनचीन्हा॥
छाड़हि अन धन घोर घोरसारा। छाड़हि दरब झूठ संसारा॥
छाड़हि अगर कुमकुमा चोवा। छाड़हिं रतन जो माल परोवा॥
छाड़हिं कस्तूरी घन सारा। अत आइ तन लागी छारा॥
सगरे जनम सौंति दुःख पावा। छिन एक महँ सब भयेउ परवा॥

यहि विचार कै मान कवि, महापुरुष जग माहि।
तासौं जोउ न लवहीं, अत जो साथी नाहि॥

कुँअर देखि हस्ती मतवारा। मरन जानि जित कीन्ह विचारा ॥
जा कह अंत मरन जित य माहीं। मीचु देखि सो भागै नाहीं ॥
मोहि एहि मारग निज जो मरना। भागि रहौ लै का की सरना ॥
बिनु साहस जो तजउँ सरीरा। कोउ कहै यह छत्री बीरा ॥
बाजौं आजु भीम की नाईं। मारौं जो जय देइ गोसाईं ॥
मरौ तौ लोग कहै यहि देसा। छत्री कहा जोगि के भेसा ॥
पुनि चित्रावलि सुनि यह बाता। जूझि मुवा जोगी रँगराता ॥

बाँधि काछ दृढ होइ रहा, मन महँ मरन बिचारि।
जोहि जिय डाँडा प्रेम कर, सब जग जीतनि हार ॥

आवत हस्ति चुवत मदगधा। तोरत तरुवर धावत कंधा ॥
गज बाजी कहँ परलो कोपा। अंगद पाँव पुहुमि जस रोपा ॥
कुँअरहि देखि धाइ अस परा। बीर पँवार न पाछे टरा ॥
कंथा डारि गयद झुकावा। आपु सजग होइ पाछूँ आवा ॥
गहि कै पूँछि गयंद घुमाइसि। येही भाँति घरी एक लाइसि ॥
जनु चकई गहि डोर फिराइसि। पुहुमि परा गज ताँवरि खाईं ॥
मस्तक आइ मूँक तब मारा। सीस फोरि गजमोति निकारा ॥

पुहुमी परा गयंद ढहि, जानहुँ परा पहार।
देखि अचंभित जग भवो, चहुँदिस परी पुकार ॥

कहैं लोग यह को बरिआरा। जिन गयद दलगजन मारा ॥
वह राजा कर हस्ती सोई। जेहि ते बली आनि नहिं होई ॥
यह जोगी भल कीन्ह न काजा। परलै करहि आजु सुनि राजा ॥
राज दुआरे भई पुकारा। जोगि बली दलगंजन मारा ॥
एहि जोगी कहँ सिव परसना। नाहिं तो अस परबल को हना ॥
मानुष अस बल करै न पारा। निज यह पुहुमि भौम औतारा ॥
औरौ हस्ति सभारहु नाहीं। मति कहँ भटकी सिर कहँ जाहीं ॥

सुनिकै राजा थकि रहा, रुधिर सूखि गा गात।
हिये थरथरी पेह डर, मुख नहिं आवै बात ॥

सुजान बंधन खंड

पुनि सँभारि के बोला राजा । साजहु बेगि जूझि कर साजा ॥
हनुमत जस लंका हुत आवा । तस छलि कै यहि काहु पठावा ॥
काहु केर पठावन होई । जिअत न जाइ करहु अब सोई ॥
बाजन बार जूझि कर बाजा । जानहुँ सरग मेघ दल गाजा ॥
साजे हस्ती सिंघलदीपी । चीता माथ छीट जनु छोपी ॥
साजे तुरै समुँद जलगाहा । पखरै राउत पहिरि सिनाहा ॥
राजा सपरि भयो असवारा । चलै बीर चढि तुरी तुखारा ॥

बाजे बाजन जूझि के, धुका दगामा भेरि ।
छेंका जोगी कटक लै, मण्डल चहुँ दिस फेर ॥

जुझि साज जौ कुअँरहि सूझा । कै बिचार अपने मन बूझा ॥
जाकर दोष करै जो कोई । का बसाइ जो मारै सोई ॥
मोहिं नहि इहाँ जूझि सों काजा । मारौं लै पुहमीपति राजा ॥
एह गुन बैस्यो आसन मारी । जैसे निरगुन जोगि भिखारी ॥
सीस नाइ पुहमी तिन हेरा । कटक आउ सब करत करेरा ॥
मन्त्री राज-बाग तब गही । सीस नाइ के बिनती कही ॥
जूझि केर जग अस बेवहारा । मारिय सोइ जो गहै हथियारा ॥

जोगी बाँधिय जिअत गहि, मारि न करी अनीत ।
पूँछि भेद पुनि लीजिये, को बैरी को मीत ॥

घेरत घेरत आए राँधा । पाँच जने मिलि जोगी बाँधा ॥
अस कै ढील दीन्ह दुइ बाँही । जानहुँ एक रती बल नाहीं ॥
राजा सनमुख जोगी आना । देखि रूप सब कटक भुलाना ॥
पूछै को हसि कहँ तें आवा । केहि कारन केहि केर पठावा ॥
कुँअर न बोल मौन मुख गहा । सीस नवाइ औंधि चखु रहा ॥
एहि अंतर एक चतुर चितेरा । सागर नगर कीन्ह जे फेरा ॥
कुँअर चित्रलिखि अति मतिमाना । सोहिल जूझि भेद पुनि जाना ॥

आइ पहूँचा राज ढिग, देखि नवाइसि माथ।
लीन्हे चित्र अनेक जे, देस देस के नाथ॥

वै कुँअरहिं देखा पहिचाना। कहिसि कि यह जस कुँअर सुजाना॥
वह उहवों पुहुमीपति भारी। राज छाड़ि कत होत भिखारी॥
पुनि वह अस कुकरम कत करई। जेहि कोइ बाँधि चोर कै धरई॥
चित्र काढ़ि जो पटतर देखा। सोई कुँअर सुजान सरेखा॥
कहिसि कि यह पुहुमीपति राजा। पुहुमी रहो सदा ओहि साजा॥
यह पवाँर छत्री बरिआरा। यही हाँकि रन सोहिल मारा॥
यह पुहुमी पति देस क राजा। अचरज मोहिं देखि यह साजा॥

कुँअर चित्र लैकर दिहिसि, कहिसि कि अचरज हीय।
बाँधा सिंह सियार ज्यों, का कौतुक बिधि कीय॥

इहाँ नरेस जूझि कहँ आवा। रानी उहाँ अँदोर बढावा॥
जे मारा दलगजन सोई। तेहि के जूझि आजु कस होई॥
हिये सोच करि हीरा रानी। पूँछौ बोलि परे वा ज्ञानी॥
वह पंडित औ चतुर परेवा। आमग न चलै जानि पति सेवा॥
जिन मारा दलगंजन हाथी। मकु वह होइ परेवा साथी॥
खोलि मँगावा सीध परेवा। आइ देखाइसि कंतहि सेवा॥
होइ अकसर लै मंत बईठो। कहिसि कहाँ लै गवनेहु चीठी॥

बिनु पूछे किछु ना कहै, तैं पंडित सहदेव।
को जन यह हस्ती हना, कछु जानसि यह भेव॥

कहिसि कि सदा सोहागिनि रानी। तुम सयान पंडित औ ज्ञानी॥
मैं यह सुफल सुआ सो खोजा। चीन्हहु होइ सो राजा भोजा॥
जा कहँ भोर सदा सिर नाई। चहै मारि तो कहा बसाई॥
कथा कहत लागिहि बढ़ि बारा। उहाँ न होइ जाइ संघारा॥
थोर कहौ जौ बिलँब न होई। सोहिल जिन मारा वह सोई॥
धरनीधर नैपाल भुआरा। एह सुबंस औ बीर पवाँरा॥
चित्र माँह चित्रावलि जानी। भा जोगी सुनि रूप कहानी॥

एहि सो रतन जेहि कीजिये, कुंदन घालि जराउ।
जनि गहि डारहु समुँद महँ, नतु रहिहै पछताउ॥

रानी कहा बेगि चलि जाहू। लगै न पाउ मयंकहि राऊ॥
जाइ जनाउ नरेस रिसाना। जौ लहुँ छुटै पाव नहिं बाना॥
दसरथ धोखे सरवन मारा। पाइ सराप भयो हत्यारा॥
अज्ञा मिली परेवा धावा। निमखि माँह राजा पँह आवा॥
देखिसि राजहि रिसि मन नाहीं। हाथ चित्र चित चिता माहीं॥
औ पुनि कुँअर बाँधि कै आना। कीन्ही जल चखु जानि सुजाना॥
आइ नवाइस पति कहँ माथा। कहिसि है पुहुमीपति नाथा॥

एह सोई जिन बैरी हना, सोहिल अस बारि आर।
जबूदीप नरेस सोई, निरमल जाति पँवार॥

एह जस विक्रम राजा भोजा। मैं चित्रावलि कहँ बर खोजा॥
चित्रावलि कर रूप सुनाई। कै जोगी आनेउँ बौराई॥
मैं राजा सों कहै न पावा। बीचहि बैरी मोहिं बँधावा॥
तौ एह कौतुक सब बिधि कीन्हा। रतन खेह महँ काहु न चीन्हा॥
राजा हिय सुनि कुँअर बखाना। तजि चिंता चित रहस समाना॥
जो जहँ चित्र मूँदि वै राखी। तब भा आनि परेवा साखी॥
एह पंडित औ बिधि सो डरई। पंडित काज बूझि कै करई॥

छोरे बधन दुःख के, महाबीर पहिचानि।
राजा उतरि तुखार सों, अक मिलायो आनि॥

ततखन तहाँ कुँअर अन्हवावा। राज साज सब आनि पन्हावा॥
औ पुनि लीन्ह चढाइ अँबारी। दूलह जानि बरात सँवारी॥
रहसत चला तुरै चढ़ि राजा। बाजत अनँद बधावा बाजा॥
एकै बाजन जेहि जग जाना। आवत आन जात भा आना॥
गह गह बाजन बाजत आवा। नगर लोग सब देखै धावा॥
जिन देखा तिन धनि धनि कहा। रूप निहारि चित्र होइ रहा॥
धनि सो चित्र धनि सोई चतेरा। कहहिं जोर चित्रावलि केरा॥

निकसा हाट मँझार होइ, चहुँ दिसि रहस अनंद।
देखै आई उतरि जनु, सूर तराई चंद॥

चढ़ि अँटारि देखहिं रनवाँसा। जनु ससि नखत सरग परगासा॥
देखि कुँअर मुख हीरा रानी। हिए अनंद अधर बिहसानी॥
कहिसि कि जानु आहि एह सोई। जेहिक चित्र चितसारी धोई॥
पुनि तिन्ह साथिन्ह आनि देखावा। जे अपने कर चित्र नसावा॥
जिन देखा तिन मुख अनुसारा। यह सोई गँधरब औतारा॥
जब तें हम वह चित्र नसाई। नैन हिएँ जानहुँ लिखि लाई॥
धनि यह दिन धनि घरी सरेखा। हिया इछ इन्ह नैनन्ह देखा॥

मान न मन्त निसारहिँ, सिह पुरुख मुख बैन।
जो मूरति हिअरै बसी, सो निजु देखी नैन॥

रानिहिँ यह सुनि भयो अनंदा। सीस पुहुमि धरि बिधना बंदा॥
जिन्ह काहू यह भेद न जाना। सो बिधि कौतुक देखि भुलाना॥
कहै कि यह कस बैरी होई। आदर चाह करै सब कोई॥
सखी एक चित्रावलि केरी। चढ़ि मंदिर पुनि देखिसि हेरी॥
कोतुक लखि चित कीन्ह हुलासा। गई धाइ चित्राविल पासा॥
कहिसि कि ऐ कुल मनि मनिआरी। तोरी जोति पुहुमि उजियारी॥
फिरेउ बीति सग्राम भुआरा। गहिं आना बैरी बरिआरा॥

देखौं सोइ हस्ती चढ़ा, नहिं जानौ केहि काज।
पुहुमी आवै इंद्र जनु, तजि इंद्रासन राज॥

मेहरिन्ह महँ पुनि चरचा होई। चित्र जो मेटा जनु यह सोई॥
सुनतहि चित्र चाउ चित बाढ़ी। होइ ब्याकुल धौराहर ठाढ़ी॥
देखत मुख सुधि बुधि सब हरी। होय अचेत पुहुमी खसि परी॥
सखी सो हाथन हाथ उतारी। सेज सुवाइ ओढाइन्ह सारी॥
डरहि कहहि बिधि का भा आई। भीर मोँह काहू डिठि लाई॥
सुनै पाउ जनि राजा रानी। हम जिय करहि घरी महँ हानी॥
ततखन मँदिर परेवा आवा। सखियन्ह कहे सब भेद सुनावा॥

कहिसि कि ऐ पति कलप जुग, हम माथे तुम छाँह ॥
अब किमि जरिए धूप दुख, छत्र आउ घर माँह ।

सुनत बैन चित्रावलि जागी । देखि परेवा के पौं लागी ॥
कहिसि कि ऐ हीरामन सूआ । रतन लागि कस कौतुक हूआ ॥
कैसे जाइ भोराएहु साईं । कैसे आनेहु इहवाँ ताईं ॥
का कहि चित्रसेन समुझावा । काहि लागि मदिर लै आवा ॥
बैसि परेवा प्रेम कहानी । आदि अत लौ कहिसि बखानी ॥
चित्रावली चित भयो सँतोषा । गा सो सोच अहा जो घोखा ॥
बर बिआह सुनि मनहिं लजानी । घूँघट ओट दिये मुसुकानी ॥

कहिसि परेवा सुमति तैं, पूरन सेवा कीय ।
जो चित भावै सोइ करु, मैं तुअ अज्ञा दीय ॥

बोहित खंड

उहवाँ सागर बोहित साजा । इहवाँ दुद गौन कर बाजा ॥
पखरे घोर पलाने हाथी । सँभरि चलै पुनि अंत के साथी ॥
चली दोऊ धनि करत कलोला । अपने अपने चढि चडोला ॥
एक बाएँ एक दहिने जाईं । एकहि एक न पास सुहाईं ॥
कुँअर साजि पुनि कटक सुहावा । रहसत जाइ समुँद लहुँ आवा ॥
बोहित साज देखि मन भावा । चित्रिनि कर चंडोल चढावा ॥
पुनि कौलावति समदि भुआरा । चढ़ी जाइ तजि सब परिवारा ॥

अगिनित दायज दरब जेहि, देखि हिया हरखंत ।
एक एक सबै चढाइ के, कुँअर चढा पुनि अंत ॥

बोहिते -चढेउ कुँअर लै भारा । समदि चले पहुँचावनहारा ॥
समदे लोग कुटुँब हय हाथी । सोई साथ अत जो साथी ॥
लोकाचार तीर लहुँ आए । नाव चढे सब भए पराए ॥
पीठ देत ही मिंत बिसारा । सब काहू घर बार सँभारा ॥

कुँअर पेलि बोहित लै चला । भार देखि केवट कलमला ॥
कहिसि कीन्ह तुम दूर पयाना । बोहित नाहि भार अनुमाना ॥
बोहित चढ़े बहुत उतपाथा । ऊँचे भौंर ऊठहिं पुनि साथा ॥

भौंर फेर जलजतु डर, तेहि पर आँधी आउ ।
जिउ आवै तब पेट मँह, तीर लाग जब नाउ ॥

सोन रूप तुम कहा बटोरा । भार बहुत देखत पुनि थोरा ॥
गाढ परे पुनि होइहि भारी । अबही कस नहि देहु अडारी ॥
कुँअर कहा सुनु बोहित पती । दरब न डारि जाय एक रती ॥
बोहित साजा दरब हि लागी । का ले जाब संग यहि त्यागी ॥
जो मानै जिय अस डर भारी । चढ़ै न कोऊ नाव नवारी ॥
तुम खेवहु जनि मानहु सका । मेटि न जाइ सीस कर अंका ॥
हँसि कै बोहित केवट पेला । चला जाइ जल माँह अकेला ॥

देखत बारिध अगम जल, प्रान न धीर धराइ ।
सोई चलै निचिंत होइ, जो कोउ आवै जाइ ॥

रैनि एक बादर जुरि आये । दुहुँ दिसि होइ रिखि सात छपाये ॥
मारग भूला केवट डरा । बोहित जाइ भौंर बिच परा ॥
भँवै लाग तहँ बोहित भारी । कुँअर कहा कछु देहु अडारी ॥
जाके अहा सग कछु भारा । पलिहि ते सब रूप अडारा ॥
हरुआ होइ बोहित अगुसरा । दूजे भौंर जाइ कै परा ॥
जहँ लहु अहा सोन कर नाऊँ । सो सब डारि दीन्ह तेहिं ठाऊँ ॥
तीजे भौंर जहाँ नग हीरा । चौथे अन जा कर नर कीरा ॥

पँचएँ भौंर भयो सेस नर, अत जादि पुनि मीच ।
कुँअर जिअन जिअ सौरिकै, परे कूदि जल बीच ॥

छठएँ भौंर मरन निज हेरी । साहस बाँधि गिरी सब चेरी ॥
सतएँ भौंर जो आइ तुलाना । कौलावति कर जिउ अकुलाना ॥
कहिसि कि हौ बलि देउँ सरीरा । मकु ए दोउ लगि लागै तीरा ॥
पुनि मन कहिसि रहा पछितावा । चित्रिन रूप न देखै पावा ॥

मरन बेरि मुख देखौं जाई। मकु अजहूँ तजि कोह छोहाई ॥
चित्रिनि पहँ आई गुन भरी। बदन बिलोकि पाउँ लै परी ॥
कहिसि कि हौं अपराधिनि तोरी। करहु छोह सुनि बिनती मोरी ॥

रहै सदा तुअ सीस पर, सेंदूर भाग सुहाग।
हौं समदति हौं चरन गहि, इहै मोर अनुराग ॥

चित्रावलि सुनि हिए छोहाई। कौंलावति कह कंठ लगाई ॥
कहिसि कि तजहु सौति कर नाता। मोरि तोरि एकै जनु माता ॥
हौ जिउ देउँ रहउ तुम्ह दोऊ। मोरे मुए होउ सो होऊ ॥
मरन लागि दुहुँ बाद पसारा। सुनि सुजान धायो बिकरारा ॥
कहिसि कि मेहरिन्ह बुद्धि न रती। हौं अब मरौं होहु तुम्ह सती ॥
तीनिहु गही मरन की टेका। मरन न पाउ एक तें एका ॥
देवता सरग जो देखत अहे। इन्ह कर प्रेम देखि थकि रहे।

ससि सूरज कुज दोउ गुरु, राहु बुद्ध सनि केतु।
कहहि कि अब लहु भूमि महँ, अस न कीन्ह कोउ हेतु ॥

आलम

जीवन-वृत्त

भ्रान्त धारणा

इस कवि के संबंध में आरंभ से ही हिंदी संसार मे एक भ्रात धारणा फैली हुई है, और वह यह कि 'माधवानल-कामकंदला' के आलम और 'आलमकेलि' के लेखक आलम दो अभिन्न व्यक्ति हैं। आलम केलि के रचयिता तथा शेख रँगरेजिन के प्रेम में पड़ कर मुसलमान हो जाने वाले आलम (जो पहले जाति के ब्राह्मण थे) का रचना काल संवत् १७४०-६० तक माना गया है। पर माधवानल-कामकंदला के रचयिता आलम का रचना काल स० १६४० या ई० १५८४ था। इनका शेख रँगरेजिन से कोई सरोकार नहीं था और न इनके जाति के ब्राह्मण होने का ही कोई प्रमाण है।

हिंदी साहित्य के सभी इतिहास लेखकों ने (आचार्य शुक्ल जी के इतिहास मे यह भूल नहीं है) आलम के संबंध में यह भद्दी भूल की है। स्पष्ट है कि यह भूल प्रथम इतिहास लेखक से आरंभ हुई और बाद के सभी इतिहास लेखक आँख मूँद कर इस भूल का अनुकरण करते गये।[1]

---

[1] यदि किसी भी साहित्य के इतिहास लेखक ने 'माधवानल-कामकंदला' को देखने का कष्ट उठाया होता तो इस भ्रांति का निराकरण कभी का हो गया होता। पर कटु सत्य यह है कि आज के हिंदी साहित्य के इतिहास ग्रंथों के अध्ययन के फलस्वरूप नहीं लिखे गये हैं, बल्कि पिछले लेखकों की नकल के अधार पर। वास्तव में साहित्य के इतिहास लेखन से बढ़ कर श्रमसापेक्ष और उत्तरदायित्वपूर्ण कोई दूसरा काम नहीं है, पर हिंदी में तो जितने साहित्य के स्रष्टा नही हैं उनसे अधिक इतिहास लेखक हो रहे हैं और नकल से बढ कर आसान कोई काम होता भी नही!

रचनाकाल

अस्तु, आलम केलि के रचयिता विशुद्ध ब्रजभाषा में शृङ्गार संबंधी फुटकर पदों की रचना करते थे, पर प्रस्तुत आलम अवधी के कवि थे और इनका रचनाकाल उनसे ठीक सौ वर्ष पहले का था।

सन नौ सै इक्यानुवै आइ। करौ कथा अब बोलौ ताहि ॥

सन् नौ सै इक्यानवे हिजरी और तदनुसार से १६४० में इन्होंने इस ग्रंथ की रचना की। उस समय दिल्ली के सिंहासन पर सम्राट् अकबर विराजमान थे और इनके अर्थसचिव राजा टोडरमल हमारे कवि के आश्रयदाता थे। ग्रंथारंभ मे कवि ने दोनों की प्रशंसा की है।

दिलिय पति अकबर सुरताना। सत्त दीप मैं जाकी आना ॥
सिहन पति जगन्नाथ सुहेला। आपनु गुरू जगत सब चेला।
जब घर भूमि पयानौ करई। बासुक इद्र आसन थरथरई ॥
धर्मराज सब देस चलावा। हिंदू तुरुक पच सबुलावा ॥
आगरवु महामति मडनु। नृप राजा टोडरमल टडनु ॥

रचनाकाल, तत्कालीन दिल्ली सम्राट तथा आश्रयदाता राजा टोडरमल आदि का उल्लेख कवि ने अपने ग्रंथ में इतनी स्पष्ट रीति से किया है कि इनके समय के बारे मे संदेह करने की कोई गुंजाइश नहीं है। हाँ, इतना अवश्य है कि केवल इनके रचनाकाल की तिथि ही जानी जा सकती है, जन्म-मरण-तिथि नहीं। इन्होंने अपनी वंशावली या गुरु-परंपरा के संबंध में भी कुछ नहीं कहा है।

आलोचना

कथा का स्रोत

आलम की यह रचना मौलिक नहीं है। इस नाम का एक नाटक संस्कृत में है और इसी की कथा के आधार पर इन्होंने इस काव्य की रचना की। पर इसका तद्वत अनुकरण नहीं किया है। अपनी आवश्यकतानुसार कुछ घटाया-बढ़ाया है। वह साफ कहते है कि कुछ अपनी और कुछ 'परकृति' मैने 'चुराई' है।

कुछ अपनी कुछ परकृति चोरौ। यथा सकति करि अच्छर जोरौं ॥
सकल सिगार विरह की रीति। माधौ काम कदला प्रीति ॥

हो सकता है कि आलम संस्कृत के विद्वान रहे हों, क्योंकि इनकी रचना मे संस्कृत के शब्द इस शाखा के अन्य कवियों से अधिक आते हैं पर यह कोई जरूरी नही है क्योंकि यह साफ कहते है कि संस्कृत की कथा 'सुन' कर मैंने भाषा चौपाई मे इसका रूपांतर किया—

कथा सस्कृत सुन कछु थोरी। भापा बाँधि चौपही जोरी ॥

कथा का साराश

पुष्पावती नामक नगर मे गोपीचंद नामक एक राजा राज्य करता था। वह बड़ा न्यायपरायण और धर्मनिष्ठ था। उसी नगर मे माधव नामक एक बैरागी ब्राह्मण रहता था। वह नित्य प्रातःकाल राजा के पास जाकर पूजा कराता था। माधव बड़ा विद्वान् और संगीत कला मे पारदर्शी था। वेद, पुराण, ज्योतिप, व्याकरण, सामुद्रिक आदि विविध शास्त्रों मे भी वह निपुण था। विद्या मे बृहस्पति और रूप मे कामदेव के समान था। अभूतपूर्व वीणा वादक था। उसकी बीन सुनकर नगर की स्त्रियाँ अपना काम छोड़ देती थीं और सब बेहाल हो जाती थीं। कोई मूर्छित होकर गिर पड़ती थी और उसके पीछे-पीछे घूमती थी। अत मे नौबत यहाँ तक पहुँची कि माधव की मोहक स्वरलहरी शहर के लिए अभिशाप हो गई। लोगों के घर-गृहस्थी की शांति भंग होने लगी। किसी को वक्त पर खाना नहीं मिल रहा है, किसी के घर की बीबियाँ घर का काम धंधा छोड़कर बेसुध पड़ी हुई है। सब हैरान थे। अंत मे नगर निवासियों का डेपुटेशन राजा के यहाँ इस आशय का गया कि या तो आप इस बला को (माधव को) यहाँ से हटाइए या तो हम लोग सब आपका राज्य छोड़कर दूसरे देश को जाते है। राजा बडे धर्म-संकट में पड़ा, पर अंत मे यह निर्णय किया कि अकेले माधव के लिए सारी प्रजा को देश निकाला दे देना ठीक न होगा पर इसके पहले उन्होंने माधव पर लगाये गये इलजाम की जाँच कर लेना मुनासिब समझा। इस दृष्टि से उन्होंने

बीस नव-यौवना सेविकाओं को बुलवाकर एक कतार में कमल के पत्तों पर बिठलाया। इधर माधव को सामने बैठाकर वीणा का आलाप करने को कहा। आलाप शुरू हुआ, कुछ ही देर बाद सभी स्त्रियाँ स्पष्ट रूप से कामार्द्रा हो गईं। अब राजा को निश्चय हो गया और उसने माधव से हाथ जोड़ लिया।

तब राजा गयो पौरि पगारैं। तुम को ठोर न विप्र हमारैं॥
तीन पान को बीरा लयो। राह हाथ माधौ के दयौ॥

इस प्रकार बेचारा माधव पुष्पावती से विदा हुआ, और अपनी वीणा सँभालकर एक ओर चल दिया। वह चलते-चलते कामावती नामक नगरी मे पहुँचा और वहाँ विश्राम करने के लिये ठहर गया।

उस नगर में कामकंदला नाम की वारांगना रहती थी जो रूप लावण्य और संगीत तथा नृत्यकला दोनों ही मे अद्वितीय थी। एक दिन राजा के दरवार मे जलसा था जिसमे कामकंदला का नृत्य होने को था। शहर के अनेक लोग देखने जा रहे थे। माधव स्वयं संगीत कला का अन्यतम साधक था। उसे भी उत्सुकता हुई और अपनी बीन कंधे पर रख दरबार के दरवाजे पर पहुँचा पर अपरिचित होने के कारण दर-वानों ने भीतर जाने से रोक दिया। खैर वह बाहर ही बैठकर सुनने लगा। भीतर कामकंदला का नृत्य हो रहा था और संगत मे बारह मृदंग एक साथ बज रहे थे। पर इनमे से एक पखावजी के जो चौथे के बाद बैठा हुआ था, चार ही उँगलियाँ थीं जिससे उसकी थाप बेसुरी और बेताली पड़ती थी। माधव के कान इतने अभ्यस्त थे कि इन सब बातों का पता उसने बाहर से ही लगा लिया। और सिर धुनकर कहने लगा कि सभा में सब उल्लू के पट्ठे बैठे है, किसी को पता नहीं, द्वारपाल से कहा कि राजा से जाकर कह दो कि एक ब्राह्मण बाहर बैठा हुआ ऐसा-ऐसा कह रहा है। राजा के पास जब यह अद्भुत समाचार पहुँचा तो पहले तो बहुत चकराया पर जाँच कराने पर माधव की बातें सच्ची साबित हुईं। वह फौरन भीतर बुलाया गया और राजा ने बड़े आदर से उसे अपनी गद्दी पर दाहिनी

ओर बैठाया। राजा ने उसे सोने का मुकुट पहिनाया और दो करोड़ रुपये भेट किये। राजा टोडर ने अपनी अँगूठी उतार कर माधव को पहिना दी। इसके बाद माधव का गायन और वीणा वादन हुआ। सब लोग मुग्ध हुए, खासकर कामकंदला बहुत प्रभावित हुई। अंत मे कामकंदला का नृत्य हुआ। उसने सिर पर पानी से भरा हुआ कटोरा रखकर एक कठिन नृत्य आरंभ किया। नाचते समय जब वह भाव प्रदर्शन मे लीन थी उसी समय एक शहद की मक्खी उसके वक्षस्थल पर बैठ कर काटने लगी। अब वह अगर हाथ से उसको हटाती है तो नृत्य बिगड़ता है। यह सोच कर वहीं से उसने नृत्य की गति चौगुन करके एक चक्करदार टुकडा लिया जिसके पवन के वेग से वह मक्खी उड़ गई। इस बात को सिवा माधव के और कोई लक्ष्य न कर सका। माधव ने खुले आम कामकंदला की प्रशंसा की और जो कुछ भेंट उसे वहाँ मिली थी सब उतार कर कामकंदला को दे दिया। इसका कारण पूछे जाने पर उसने राजा से कहा—"तुम्हारी सारी सभा मूर्ख मंडली है, कोई गुण का समझने वाला नहीं है, कामकदला इतना चमत्कारपूर्ण काम कर गई और किसी के पहचान मे वह न आया।" राजा को इस अपमान से क्रोध चढ़ आया और उसने कहा कि—"यदि तुम ब्राह्मण न होते तो तुम्हारा सिर उड़ा देता, तुम फ़ौरन हमारे राज्य से बाहर चले जाओ।" माधव इसके पहले ही उठ चुका था और यह कहता हुआ चल पड़ा कि "ऐसे मूर्ख राजा के यहाँ रहने मे ही मेरा अपमान है।"

पर उसके गुण को पहिचानने वाली कामकंदला से यह न देखा गया। वह आग्रह कर के माधव को अपने घर ले गई और उसे छिपा कर रक्खा। दोनों एक दूसरे के रूप-गुण पर मुग्ध थे। कामकंदला ने वहाँ माधव से प्रेम-कला सिखाने की प्रार्थना की। कई दिन तक दोनों आकंठ आनंदोपभोग मे रत रहे। अत मे माधव ने यह कह कर बिदा चाही कि यदि यहाँ हमारा रहना राजा को मालूम हो जायगा तो तुम विपद में पड़ोगी पर कामकंदला ने एक रात्रि और उसके यहाँ व्यतीत

करने की प्रार्थना की और माधव रुक गया। मध्य रात्रि में कामकंदला ने प्रार्थना की कि कोई ऐसा उपाय करो कि इस रात का अंत न हो। माधव ने बीन सँभाली और अलाप शुरू किया। कहते है कि उस अपूर्व संगीत के प्रभाव से चन्द्रमा की गति रुक गई और ग्रह उपग्रह आदि अपनी-अपनी धुरी पर रुक गये।

ख़ैर, आख़िर उसका संगीत खतम हुआ, रात बीती और सबेरा हुआ और माधव चलने को तैयार हुआ। इस अवसर पर कामकदला का दुख बड़ा हृदय-विदारक है। माधव के जाने पर वह एक प्रकार से मर ही गई। किसी प्रकार सखियों ने होश दिलाया पर 'माधव' 'माधव' कहती हुई विक्षिप्त की सी अवस्था मे रहने लगी। वह सूख कर काँटा हो गई और खाना-पीना सभी भूल कर जीवित ही मृत सी अवस्था में रहने लगी।

इधर माधव की अवस्था भी लगभग वैसी ही थी। सिवा रात-दिन रोने के और कोई काम न था। अंत मे उसने बहुत सोच-विचार कर राजा विक्रम की शरण लेने की ठानी। उसने सुन रक्खा था कि वह बड़ा परोपकारी राजा है। यह तै कर वह उज्जैन पहुँचा, पर राजा तक उसकी पहुँच न हो पाती थी। पर अपनी अर्ज़ी राजा तक पहुँचाने का उसने एक उपाय निकाल ही लिया। वहाँ एक महादेव का मंदिर था जहाँ राजा नित्य आता था। उसी मंदिर में माधव ने अपनी वेदना-सूचक एक दोहा लिख दिया और राजा की निगाह में वह दोहा पड़ गया और उसने उसे दासियों को भेज कर पता लगाया। 'ज्ञानवती' नाम की एक चेरी राजा का संदेस लेकर माधव के पास पहुँची और अपने साथ राजा के पास लिवा ले गई। माधव को देखते ही राजा को विश्वास हो गया कि यह विरह पीड़ित कोई सच्चा प्रेमी है और कहा कि मै आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ। माधव ने अपना और अपने गुण का परिचय देते हुए अपनी रामकहानी कह सुनाई। राजा ने आश्वासन देते हुए सहायता करने का वचन दिया पर पहले उसको बहुत ऊँच-नीच समझाया कि गणिका से प्रीति करना ठीक नहीं। पर

माधव ने कुछ इस ढंग से अपने सच्चे प्रेम का परिचय इतनी करुण रीति से दिया कि सारी राजसभा रोने लगी और सब को यह निश्चय हो गया कि यह सच्चा प्रेमी है और अगर कामकंदला इसे न मिली तो यह घुल-घुल कर मर जायगा।

अंत मे राजा विक्रम ने कामसेन राजा के नगर पर चढ़ाई कर दी। पर जब नगर थोड़ी दूर रह गया तो वहीं ठहर कर वह कामकंदला के प्रेम की परीक्षा करने का निश्चय कर के छद्म-वेश से उसके घर गया, और कामकंदला को बड़ी बुरी हालत मे, विरह में म्रियमाण अवस्था मे पाया। पर, तो भी प्रेम की परीक्षा करने के इरादे से उसे यह ख़बर दी कि माधव तो वियोग मे घुलते-घुलते मर गया। यह सुनते ही पिंगला की भाँति कामकंदला ने भी तत्काल माधव का नाम उच्चारण करते हुए प्राण त्याग दिया। राजा बड़ा चकराया और उदास होकर अपने खेमे मे आया और यह दुखद समाचार उसने सभा में कहा। ग़जब हो गया। इधर माधव ने भी अपनी प्रियतमा का निधन सुनकर वहीं दम तोड दिया। सारे कटक मे हाहाकार मच गया। इधर राजा ने दो प्रेमियों का ख़ून अपने सर लेकर जब कोई उपाय न सूझा तो आत्म-हत्या करने की ठानी और चंदन की चिता तैयार करवाई और बहुत सा दान पुण्य कर सूर्य-नमस्कार कर चिता पर बैठ गया।

स्वर्गलोक तक यह बात पहुँची; देवी देवता सब अपने-अपने विमानों पर आरूढ़ होकर यह विचित्र दृश्य देखने पहुँचे। राजा के मित्र बैताल को भी यह ख़बर मिली। राजा अग्निदान की आज्ञा ले रहा था कि इसी समय बैताल ने पहुँच कर हाथ थाम लिया और राजा की नियति का सब हाल जान तुरत अमृत ले आया और माधव को जिलाया। वह कामकंदला का नाम लेता हुआ उठ बैठा। तब राजा वैद्य के वेश में अमृतकलश लेकर कंदला के यहाँ पहुँचे और उसे भी जिलाया और बहुत कुछ आश्वासन देकर खेमें मे आये। वहाँ से राजा के यहाँ दूत भेज कर यह कहलवाया कि जिस किसी मूल्य पर हो आप

कामकंदला को हमारे हवाले कर दीजिये। पर उसने इसमे अपमान समझ कर युद्ध की ठानी।

दोनों मे घमासान युद्ध हुआ चार प्रहर तक। अंत मे कामसेन राजा पराजय स्वीकार कर, हथियार फेंक हाथ जोड विक्रम के सामने खड़ा हुआ और माफी माँगी। फिर उसने कामकंदला को लाकर राजा के खेमें मे दाखिल कर दिया।

चिर विरही माधव और कामकंदला का मिलन हुआ और आर्त दुखहारी राजा विक्रम दोनों को लेकर अपनी राजधानी उज्जैन चला गया।

× × ×

विरह-वर्णन

इस काव्य की भाषा परिमार्जित अवधी है। चूँकि यह ग्रंथ छोटा और अभी तक अप्रकाशित है इसलिए इस संग्रह मे यह समूचा दे दिया गया है। यह विरह प्रधान आख्यान है। दोनों ओर प्रेम की पीर समान है। विरह का व्यापक रूप से भी वर्णन किया गया है।

अगम अथाह अलेख अति, विरह समुद्र अगाध।
प्रीति हिरानी बुद्धि जनु, भूले ब्रह्म समाध॥
विरह समुद्र अगम अति आही। बूड़ि मरै नहि पावै थाही॥
बुधि बल सौ कोउ पार न पावै। जौ नर सप्रेम गुन चढ़ि धावै॥
विरह डसत नर जिऐ न कोई। जौ जीवहिं तौ बौरा होई॥

इस पर थोड़ा कबीर का भी प्रभाव मालूम होता है। देखिए कबीरदासजी क्या कहते है—

विरह भुवंगम तन डसा, मंत्र न लागै कोय।
नाम वियोगी ना जिए, जिए तो बाउर होय॥

वियोग व्यथा के वर्णन में यह ग्रंथ अन्य प्रेममार्गी काव्यों के समकक्ष है। यद्यपि इसमे आध्यात्मिक व्यंजनाएँ कम है तथापि सूफी सम्प्रदाय की मूल भावना प्रेम की पीर का वर्णन इसमे बहुत अच्छा है। विरह की दशा का वर्णन देखिए—

बुधि विद्या गुन ग्यान, प्रेम चाव धुनि हर्ष बल।
सब तजि होइ अयान, जा घट विरहा सचरै॥

इस काव्य मे विरह वर्णन के अतिरिक्त संगीत के मादक प्रभाव का बड़ा सुदर वर्णन है। महारास के अवसर पर जैसी दशा स्त्रियों की थी करीब-करीब वैसी ही दशा माधवानल की वीणा के प्रभाव से हुई थी।

माधवानल-कामकंदला

प्रथमहि पारब्रह्म के सरनै । पुनि कछु रीति जगतरस बरनै ॥
पारब्रह्म परमेस्वर स्वामी । घट घट रहै सो अंतरजामी ॥
घट घट रहै लखै नहि कोई । जल थल रह्यो सर्बं मय सोई ॥
जाकौ आदि अत नहीं जानौ । पंडित कथै ग्यान सोई मानौ ॥
ग्यानी होइ सो गुर-मुख पावै । खोजी होइ सो खोज लगावै ॥

मन वच क्रम सोवत चलत, जागत चितवन चित्त ।
संग लागि डोलत फिरौ, सो करता धरु चित्त ॥

जगपति राज कोटि जुग कीजै । सहज लाल छाजे थिति कीजै ॥
दिल्लिय पति अकबर सुरताना । सप्त दीप मैं जाकी आना ॥
सिंहन पति जगन्नाथ सुहेला । आपनु गुरू जगत सब चेला ॥
जब घर भूमि पयानौ करई । वासुकि इन्द्र आसन थरथरई ॥
गहि त्रिन दंत सरन सो आवै । थापहि फेरि भूमि सो पावै ॥

दड मरै सेवा करै, वासुक इन्द्र कुबेर ।
गनु गंध्रव किन्नर सबै, जच्छ रहै होई चेर ॥

देस देस के भूपति आवैं । द्वारे भीर वार नहि पावैं ॥
कपै बहुत त्रास जी लैहीं । लै अकोर पर द्वार न दैहीं ॥
इक छत राजु बिधाता कीनौ । कहुँ दुर्जन कोउ रह्यो न चीन्हौ ॥
धर्म राजु सब देस चलावा । हिदू तुरक पंथ सबु लावा ॥
आगैरैंवु महामति मंडनु । नृप राजा टोडरमल डडनु ॥

जो॰ मति विक्रम कीन, मन्त्रु करत मनु चैन ।
सुनत वेद सुमिरत सदाॅ, पुन्य करत दिन रैन ॥

सन नौ सै इक्यावन्नुवै आइ । करौं कथा अब बोलौं गाहि ॥
कहौं वात सुनौ अब लोग । कथा कथा सिंगार वियोग ॥

कछु अपनी कछु परकृति चोरौं। जथा सकति करि अच्छर जोरौं ॥
सकल सिंगार विरह की रीती। माधौ कामकदला प्रीती ॥
कथा संसकृत सुनि कछु थोरी। भाषा बाँधि चौपही जोरी ॥

माधौनल सब गुन-चतुर, कामकंदला जोगु।
करौ कथा आलम सुकवि, उतपति बिरह वियोगु ॥

पहुपावति नग्र इक सुनौ। गोपीचद राज वह गुनौ ॥
धर्मपंथु दिन प्रति पगु धरई। पहुमी पवित्र पापु नहिं करई ॥
तिहिपुर बसै सदाँ सुख त्यागी। माधौ विप्र नाम वैरागी ॥
राजा पास प्रात उठि जावै। लै तुलसी दल देव पुजावै ॥
देव पुजाइ विप्र फिरि आवै। प्रात भयें पुनि दरस दिखावै ॥

बाँचै बेद पुरान, नौ ब्याकरन बखानई।
जोतिक आगम जानि, सामुद्रिक साँगीत सब ॥

विद्या सोइ वृहस्पति जानौ। रूपु सोइ मकरध्वज मानौ ॥
ताको रूप नारि जो देखै। पलक ओट जुग जुग भरि लेखै ॥
जे सब नारि बसैं पुर माही। तिहि के निरखि गर्भ गिरि जाही ॥
गावैं सरस बजावैं वीना। नर नारी मोहे भ्रम कीना ॥

मनु लागै जिहि धाइ, सो पुनि मन ही मो बसै।
जागत सोवत नित्त, देखहु आँखिन मैं लसै ॥
बिन देखें अकुलाइ, प्रान नहीं धीरज रहहिं।
निसु दिन भीजहिं चीर, नैना ही के नीर हिं ॥

दिन एक प्रात भयो उँजियारा। माधौनल अस्नान सिधारा ॥
करि मजन पुनि तिलक सँवारै। नाद मधुर धुनि मुख उचारै ॥
सुनत नाद मोही पनिहारी। सीसहु ते गागर भुमि डारी ॥
सुनत नाद तिहि दीनै काना। रीझि रहैं सब चतुरं सुजाना ॥
करै राग मोहन के वेसा। ज्यौं ठग मूर करै वर वेसा ॥

थके कुरंगन जूथ, सुनत नाद सुर ग्यान सब।
तब धाईं करि हूय काम कमान चढ़ाइ के ॥

इक त्रिय मोहि मुर्छित धर परही। इक त्रिय धरत सुद्धि नहि रहही॥
इक नैनन सों नैन मिलावै। तजि सर एक निकट चलि आवै॥
एकन परत न चीर सँभारा। ब्याकुल भईं छूटि गये बारा॥
एकनि भूषन दए उतारी। एकनि तजी कंचुकी सारी॥
एकै नारि चली उठि सगा। जैसें धुनि सुनि चले कुरंगा॥

काम धनुप सरपच लै, मारौ त्रिया सुनाइँ।
वे मृगगति मोही सकल, द्विज पारधी की नाइँ॥

एक नारि हँसि हँसि मुख जोवै। नैन नीर इक भरि भरि रोवै॥
डोलै एक पवन ज्यों दिया। छुटे केस उघरि गये हिया॥
करै राग माधौनल रागी। ज्यौं तन माँहि ठगौरी लागी॥
माधौनल देख्यौ पनिहारी। ब्याकुल भई नगर की नारी॥
तब उठि चल्यो नग्र कहँ सोइ। कहत चरित्र सप्र दिन सोइ॥

गयौ मदन सर मारि, नारि डारियत हार सब।
बिरह अनल तन जारि, तन मन द्वंद उदेग दै॥

नगर खोरि माधौनल आवै। त्रिया पुरिख गृह अन्न जिवावै॥
सुनत नाद कर छीन सँभारी। भूमि अहार दीन सब डारी॥
पूँछै पुरिष नारि सुनु मोही। ऐसे नैन दिये बिधि तोही॥
कत तैं भोजन दियौ सो डारी। वेगि कहौ नहि डारौं मारी॥
बोली बचन कंत सुनि लीजे। स्वामी दोसु मोहि नहि दीजै॥

माधौनल कियौ रागु, सुनि धुनि हौ बिस्मै भई।
तहाँ जाइ मनु लागु, ताते गिरयौ अहार भूइँ॥

तब सुनि कै उठि चल्यौ रिसाई। नगर लोग सक्कवै बुलाई॥
चलहु राइ के सनमुख होहीं। कहौ विप्र त्रिया सब मोही॥
नग्र लोग॰ बूढ़े अरु वारे। राजा आगै जाइ पुकारे॥
सुनौ राइ इक वचन हमारा। माधौनल मोही सब दारा॥
पूछै राइ कौन गुन कर ही। कैसें विप्र त्रिया मनुहरही॥
करै नाद सब त्रिया लुभाहीं। मृग गति मोहि थकित ह्वै जाहीं॥

कहै प्रजा राजा सुनौ, हम न रहै इहि गाँऊ।
कै यह बेगि निकारिए, जिहि माधौनल नाँउ ॥

सुनि राजा जिय चिंता करही। कहा करौ जो परजा जरहीं ॥
पहिले पूँछि लउँ वेउहारा। तब माधौ को देउँ निकारा ॥
तब राजा पठवा इक बारी। माधौनल को ल्याउ हकारी ॥
गयौ पौरिया माधौ जहँ रहही। सीस नाइ विनती इक करही ॥
चलौ बेगि तुम राज बुलाए। परजा पवन कहन कछु आए ॥

माधौनल चिंता करी, मन मैं भयौ उदास।
माधौ धरि बीना चल्यौ, आयौ राजा पास ॥

अधिक मधुर धुनि बीनु बजावै। सरस राग रागिनि उपजावै ॥
चेरी बीस कराइ हकारी। सब पहिराइ कुसुंभी सारी ॥
तब राजा परतिज्ञा लेही। कमल पत्र पर बैठक देही ॥
माधौनल वीना कर गह्यौ। खस्यौ काम धीरज नहिं रह्यौ ॥
माधौ विप्र नाद अस कहा। भीजे चीरु मदन तब बहा ॥

तब राजा आइसु दयौ, चेरी दई उठाइ।
सब ही के पीछे रहे, कमल पत्र लपटाइ ॥

अचरज देखि राजा तब रहा। मिली प्रत्यग्या जो गुन कहा ॥
उठि राजा गयौ पौरि पगारैं। तुम को ठौर न विप्र हमारैं ॥
तीनि पान कौ बीरा लयौ। राइ हाथ माधौ के दयौ ॥
तब उठि वरन अठारह पती। चल्यौ छाँड़ि के पुहुपावती ॥
बीना गहै बजावै रागा। छिन छिन उपजावै वैरागा ॥
दिन दस मारग रह्यौ सुजाना। कामावति नगरी नियराना ॥

कामवती नगरी भली, काँमसैनि नृप नाम।
मन मैं माधौनल कहै, इहाँ करौ बिश्राम ॥

नगर लोग सब बसै सुकर्मी। ब्राह्मन छत्री बैस सुधर्मी ॥
तिहि पुर मद गयद सो रहै। मदिरा नाम औरन सों कहै ॥
मार सोइ सतरँज मैं होही। पुष्प पत्र लै बाँधै कोही ॥

दंड सोइ जो जोगी लेही। और दंड काहू नहिं देही॥
चंचल चोर कटाछ त्रिया के। जो नित चोरैं चित्त पिया के॥

दीपक वधिक बसै जहाँ, जो निसि बसै पतंग।
ऐसो नगर रच्यों बली, काम सैनि चतुरग॥

तिहि पुर बसै चद्र की कला। पातुर सुनि कामकदला॥
ताकौ रूप बरनि को पारा। बरनत सहस जीभ पुनि हारा॥
कुतल चिहुर चुवहिं ज्यों घाला। अबुधार कैधों अलिमाला॥
मध्य माँग चदनु घसि भरे। दूध धार विषधर मुख परै॥
कहुँ कहुँ पुष्प कहूँ कहुँ मोती। जनु घन मैं तारागन जोती॥

माँग अग्र मानिक दिएँ, औ मुक्ता गन संग।
छिन छिन जोति धरैं मनौ, मनि उछली जु भुजंग॥

करनन करन फूल छबि भारी। मन्द मयक की कोटिन नारी॥
मनि मुक्ता लागे बैडूरज। मानौ घन महँ दिएँ दोइ सूरज॥
कर कुँकुम लै तिलक सँवारे। चैन मैन जनु बान सुधारे॥
भृकुटि चाँप चंचल जब मोरे। चितवन चारु चतुर चित चोरै॥
मीन मधुर पजर मृग हारे। निरखत लोचन जुगम डरारे॥

पलक ओट अकुलाइ, चचल नैकु न थिरु रहै।
श्रवन कोर लौं जाइ, निरखौं त्रिया कटाछ जब॥

नासा अग्र बेसर कौ मोती। घट बीच रोहिन की जोती॥
तिल प्रसहि वीव तुपारा। छिनु छिनु दारिज नु माछिनि हारा॥
नासा अग्र मोती इमि रहहीं। दीपक पुष्प करन कौं चहहीं॥
मृगमद तिलक रहै अति मानौ। निरखत अलिविदु नीग्रर जानौ॥
रस बिनोद लागे अहिछौना। लालच लुवुध लोभ जनु गौना॥

अलम अलकैं छुटि रहीं, बेसरि सौं अरुझाइ।
मानहु चारा चोंच तें, अहि सुत लेत छुड़ाइ॥

पल्लव विंब बँधूक लजाहीं। आस्वास रस भौंर लुभाहीं॥
दामिन दंत दिए जनु हीरा। सेत असेत अरुन के धीरा॥

सखि स्यौं हास करहिं जब कामिनी। कमल पत्र कैधौ जनु दामिनी॥
सरस्यौ बचन जु बोलि सुनावै। सहज मनहुँ बाँसुरी बजावै॥
लोग कहैं कोकिल कल नीकी। ताकी धुनि सुनि लागति फीकी॥

अबला बचन अमोल, प्रान धरन चिंता हरन।
श्रवन सुनत वे बोल, मुनि मनसा नहिं थिर रहैं॥

हरे पीत मनि लाल विसाला। रतन जटित सोहति कँठमाला॥
मुकताहल दोउ कुच बिच रहही। दुहुँ पुर मध्य जु सुरसरि बहहीं॥
कुच कंचन भरि साज सवाँरे। सुर सरि धरि जुग ससी दुधारे॥
चक्रवाक सरिता की धारा। मानहुँ मुनि मन वारहि पारा॥
कनक वेलि श्रीफल जुग लागे। किधौ पुष्प गुथि अति अनुरागे॥

अति कठोर कुच तन उठे, सवलैं सहित सुभाइ।
मनुहु मैन को भस्म करि, बैठै ईस चढ़ाइ॥

कनक बरन दुइ बाँह सुहाहीं। देखे नीत सँगीत सुहाईं॥
कनक टाड कर कंकन चलिया। फुद जू चामहि मुद्रिक पलिया॥
भुज सतूल अरु सीन कटाही। लगि फूली सुघरी जु सुहाही॥
सहज हंस तज्यौ कमल दिखावे। नखन अग्र किन्नरी बजावै॥
पलव पल्ल सोभी नख भारे। बिद्रुम बिब कटक मनौ दारे॥

भुज चंदे की मंजुरी, मिलति एक के रूप।
मानहु कंचन खंभ तैं, द्वादस लता अनूप॥

उदर छीन रोमावलि देखा। कनक खंभ मृगमद की रेखा॥
नाभि निकट स्यौं नागिनि चली। जनु कुच कमल नलिन इक भली॥
नाभि पात सौ उठी सुहाही। कँवलहु तैं अति अवली आई॥
ह्रद कर संख ब्रह्म दै काढी। खभ बेलि कचन मनौ. बाढी॥
कै उलटी कालिंद्री बहही। गिरि गंगा परसन कौं चहही॥

इत ते गंगा सुर चल्यौ, उत तैं जमुना अभु।
कुंकुम चंग तुरंग भरि, मिलि परसै इक सभु॥

मृग अरु ससा सिंघ बन भागे। देखि मध्य उदि उपमा लागे ॥
मध्य भीन बोलै ज्यौं आधे। कसनी कसी कुच नीके बाँधे ॥
जंघ जुगल कदली के खंभा। तिहि छबि को पूजै नहि रंभा ॥
नूपुर चूरा जे हरि वाजे। छुद्रावलि घंटिका विराजै ॥
घसि चदन इक चोली कीनी। कंचुकि पहिरि पटोरी लीनी ॥

कुसुँभी सारी पहिरि कै, बेनी गुही सँवारि।
राजा के मंदिर चली, कामकंदला नारि ॥

औसर चली कामकंदला। नगर लोग सब देखन चला ॥
माधौ बिप्र बात या सुनी। कहियतु कामकंदला गुनी ॥
तब उठि माधौनल सँग लागा। काँधे बीन धरे वैरागा ॥
मंदिर मध्य गयौ सब लोगा। माधौ विप्र पवरियन रोका ॥
माधौ कहै जानदे मोही। हौ नहि जाने द द्विज तोही ॥

राजमँदिर कैलास सम, जान देउँ नहि तोहि।
तुहि बाम्हन देखत कछू, कहैं राज बुलावे मोहि ॥

पूँछि राय उत्तर कह ऐसी। जब तुहि पहिचानै परदेसी ॥
उहिंठाँ माधौ पँवरि दुवारा। राजा मंदिर होइ अखारा ॥
तत गिरा गाइन बहु गाँवहि। द्वादस तहाँ मृदंग बजावहि ॥
द्वादस माँझ इक तुरिया दीना। दहिने हाथ अँगुरिया हीना ॥
टूटै तार भंग सुर होई। मूरख सभा न जानै कोई ॥

ऐसो को सुर ज्ञानि, राज सभा मूरिख सकल।
ताल भग को जानि, द्वादस तहाँ मृदंग धुनि ॥

ताल भंग माधवनल सुनही। द्वारे बैठि सीस बहु धुनही ॥
ताल कुताल सप्त सुर जानै। सब पुरान संगीत बखानै ॥
माधव कहै पौरिया आवहु। राजा आगैं जाइ सुनावहु ॥
द्वारे बैठि विप्र इक आही। सकल सभा सौं मूरखि कहही ॥
द्वादस माहिं तूरिया अनारी। दहिनै हाथ अँगुरिया चारी ॥

सात चारि के मद्धि है, उठिकै देखौ ताहि।
चूकै तार जो पाव मिसि, पातुर दोस न आहि॥

सुनत पँवरिया उठि छिन धावँही। राजा आँगै जाइ सुनावहिं॥
बिप्र एक है पँवरि दुवारा। निर्त ताल सब कहै बिचारा॥
कर मीजै सिर धुनि धुनि रहई। सकल सभा सौ मूरिष कहई॥
कहै जु तुरिया द्वादस माही। दच्छिन हाथ अँगुरिया नाही॥
सात चारि के अतर रहै। ऐसी बात बिप्र इकु कहै॥

ताही ठौर को तुरिया, राजा लियौ हकारि।
हतौ अँगूठा मैन को, तरस अँगुरिया चारि॥

मिली बात माधौ जो कही। सभा सकल चक्रत ह्वै रही॥
कहै राज सुनि रे दरबारी। बेगि जाइ कै ल्याउ हँकारी॥
अयौ पौरिया माधव ठाँई। पाउ धारिये विप्र गुसाई॥
राजा मदिर माधौ चला। सुंदर विप्र मदन की कला॥
कँठ सोहै मौतिन की माला। कानन कुंडिल नैन विसाला॥

झीने पट की धोवती, उपर उपरनी झीन।
सीस पाग वैना धरे, राज-मदिर पगु दीन॥

सभा मध्य माधौनल गयौ। बेगि लोगु सब ठाढो भयौ॥
आवत माधौनलहि निहारा। सिहासन तजि भये नियारा॥
माधौ बिप्र चिरंजी कीन्हों। आसिर्वाद नृपति कहँ दीन्हों॥
राजा दियौ सिघासन टारी। ता पर बैठे रूप मुरारी॥
बैठ्यौ विप्र सिहासन जाई। देखि लोग सब रहे भुलाई॥

कै रे इंद्र कै चद्र है, कै कान्हर कै काम।
कै कुबेर के जच्छ हैं, कै किन्नर कै राम॥

कनिक मुकट मुद्रिक मनि माला। माधौनल कौ दीन भुवाला॥
मुद्रिक टोडर दये उतारी। पहिराये भूषन सब भारी॥
टका कोटी द्वै दछिना दीनी। स्वस्ति बोलि माधौनल लीनी॥

चंदन खौरि तिलक सरसावैं। पोथी काँख उपरना काँधैं ॥
बैठि सिंघासन बहुत सुखु पायो। दुख सँताप लै गग बहायौ ॥

गुन देखें गुनिजन सुखी, निर्गुन होइ जनु कोइ।
राय रंक सब बीच लै, जौ रँपेट गुन होइ ॥

ऊँच नीच पूछहि नहि कोई। बैठहि सभाँ जौर गुनु होई ॥
गुनि पुरिष जौ परभुमि जाई। त्यो त्यों मँहगे मोल बिकाई ॥
जैसे पुत्रहि पालै माई। त्यों गुनु रहै सदा सुखदाई ॥
गुन बिन पुरिष पंख बिन पंखी। गुन बिन पुरिष अँध ज्यों अखी ॥
गुन बिन पुरिप पत्र बिन पखी। गुन बिन पुरुष अध बिनु आँखी ॥

संगति की तौ गति उठत, तंत कृति तिहिं काल।
बहुरि अलापै राम पट, पंच पच सँग बाल ॥

एक राग सँग पाँच रागिनी। सग अलापै आठौ नदनि ॥
प्रथम राग भैरव उच्चरही। पाँचौ कामिनि सग सुहाही ॥
प्रथम भैरवी पुनि बिलाविल। पुनि जाकी गावै बगाली ॥
पुनि असावरी औ बैरारी। ये भैरों की पाँचौ नारी ॥
पंचम हर्ष दे साथ सुनावै। पींगाली मधु माधौ गावै ॥

ललित बिलावलि गावहीं, अपनी अपनी भाँति।
अस्ट पुत्र भैरों कहै, गाइनि गावै पाँति ॥

द्रुती मालकौस आलापै। पच कामिनि सगति थापै ॥
गौडी काटी देव गँधारी। गँधारी सी हुतीं उचारी ॥
धनासिरी ये पाँचौ कामिनि। मालकौस के संग सुभाँमिनि ॥
मारू मस्तक अग मेवारा। प्रबल चद्र कौसिक औ भारा ॥
घूँघट और भौरन द्ग गाए। मालकौस आठौ सुत भाए ॥

पुनि आयो हिंडोल, पंच कामिनि अस्ट सुत।
उठै सो तान कलोल, गाइन ताल मिलावही ॥

तैलंगी पुनि देव गिराइ। वासंती सिंधुरी सुहाई ॥
सा अहेरि लै आया राजा। सग अलापहि पंच भारजा ॥

सुर माँ नंद भस्म करि आई। चद्र बिंब मंगली सुहाई ॥
सरसवान औ आहि विनोदा। गावै सरस बसंतक मोदा॥
अस्ट पुत्र मैं कहे सवारी। पुनि आई दीपक की बारी॥

काछाली पट मंजरी, टोडी कही अलापि।
कामोदी औ गूजरी, सँग दीपकै थापि॥

काल काल औ कुंतल रामा। कमल कुसम चंपक के नामा॥
गौड़ी कान्हरिय कल्याना। अस्ट पुत्र दीपक के जाना॥
सब मिलि वहि श्री रागहि गावै। पंचौ संग वरग अलापै॥
बैराटी करनाटी धरी। गौरी गावै आसावरी॥
पुनि पाछै सिधवी अलापी। सिरी राग सँग पाचौ थापी॥

सावा सारँग सागरा, औ गधारी भीर।
अस्ट पुत्र श्री राग के, गोल वुंड गंभीर॥

अष्ट मेघ राज वै गावै। पाँचौ सग वरंगनि ल्यावै॥
सौर गौड़मल्लारी धुनी। पुनि गावै आसा गुन गुनी॥
ऊँचे सुर सों सूहौ कीनी। मेघ राग सँग पचौ चीन्ही॥
बीरा धर गज अरु केदारा। चंडोली घर नित उजियारा॥
पुनि गावै बासकर औ स्यामा। मेघराग पुनि तिन के नामा॥

अस्ट राग ये सकल सँग, रागिनीय गनि तीस।
सब सुत रागन के कहे, अठारह दस बीस॥

गयौ राग रागनि संगीता। अब बरनौं मैं सभा संगीता॥
रंगभूमि बहु भाँति सँवारी। ताल मिलाइ करै पतिहारी॥
दीपक दीवती चले चहुँ भाँती। बहुत मसाल मैन की बाती॥
अतर वोट पिछौरी दीन्हीं। पहुप अँजुली दुहुँ कर लीन्हीं॥
सब मिलि श्री राग वै गावै। सकर गौरि गनेस मनावै॥

षरज रिषभ गंधार, मध्यम पंचम धैवतो।
औ निषाद उच्चार, ये कवि गाये सप्त सुर॥

पुनि मिलि सग एक सुर कीन्हाँ। रंग भूमि पातुर पग दीन्हाँ ॥
सुर सुर मध मध धिपि धिपि बोलहिं। तार धार सँग लागे डोलहि ॥
तथेइ ताथेइ ताता थेइ करही। तनु थकत न थक मुख उच्चरही ॥
सुधिप सुधिप सुधिप धमधमकहिं। झझकत झझकत लाल तरंगहि ॥
झंक झँझकत उठत तरँग रग। अरी उचारहिं दँद दँद मिरदँग॥
प्रथम ताल औहै झप ताला। सकल ताल डोलै इक ताला ॥
राग दाव नरपतिहि प्रधाना। प्रगटे सत भेद सुर ज्ञाना ॥
दुर्दुर छद धुरपद संचारहिं। ठही रीत जनु इद्र अखारहि ॥
धुनि देसी कंदला दिखावै। अच्छर अर्थ हस्त पल्यावै ॥
थिरकी लीन तार जब तोरहि। नैन कोर माधो सो जोरहि ॥

सुर संदर दोहा षटपदा, और बिस्मै पद गाइ।
बूझै चतुर बिलच्छन, माधौनल सब भाइ ॥

पुनि गुन काम कंदला करई। जल भरि सीस कटोरा धरई ॥
भृकुटी चाँप चँचल मुख मोवहि। कर अँगुरी सौ चक्र फिरावहि ॥
दीप जोति इक भँवर उड़ाई। कुच के अग्र सो बैठो जाई ॥
जब लागै तब दै दुख डारहि। मनहु भवंग समै सरसावहिं ॥
चंदन बास लीन है रहा। बैठो भाँवर प्रेम रस भरा ॥

छिन छिन काटहि मधुकरा, अस्तन वेदन होइ।
माधौनल सब बूझही। और न बूझै कोइ ॥

भेंटै पवन सुख बासु न आवइ। अस्तन ओत समीर चलावहि ॥
ज्यों कर छुहा चक्र गिरि परई। कामकंदला चौगुन धरहीं ॥
पवन तेज मधुकर उड़ि चला। माधौनल बूझी यह करा ॥
तब राजा के नैन निहारै। मूरखराज न कला बिचारै ॥
रीझ्यौ माधव कला बिचारी। मुद्रिक टोडर दए उतारी ॥

कनक मुकुट मनि माल सब, टोडर दए उतारि।
टका कोटि दै दच्छिना, दीनी माधौ डारि ॥

चतुर चतुर सो नैन मिलावहि। दुहुतन मदन उमगि बहु आवहि ॥

दूरि दूरि देखै मुरि मुसुकाही। ऐसे नैन न नेकु अघाहीं॥
जब पारखी नाद मुख गावै। सुनतहि मृग हिय मोहित ह्वै आवैं॥
हरिनी कहै हरिन का कीजै। रीझि पारखी कौ का दीजै॥
हमरै कहा दैन कौ दाना। कहे कुरग सो दीजै प्राना॥
तब पारखी धनुष संधाना। मृग हियरा आगे कै दीन्हा॥

धनि कुरंग जिनि राग सुनि, रीझि न राखे प्रान।
वैन करत वलि विक्रमा, दियौ न ऐसो दान॥

धारा भोज लच्छ जिनि दीनौ। करन वैन वलि विक्रम कीनौ॥
ये सब मुए मीचु के मारे। रीझि प्रान नहि दिए पियारे॥
लच्छ लच्छ जे त्यागहि दाना। तो नहि पूजहि हिरन समाना॥
कह राजा दुनु विप्र उदासी। कौन रीझ तैं त्यागी रासी॥
कहै विप्र हौ कला विचारी। औ मुग्धा सब सभा तुम्हारी॥

नाचत त्रिय कुच अग्र पर, मधुकर बैठ्यो आइ।
अस्तन स्रोत समीर सौं, दीनौ भँवर उड़ाइ॥

तू राजा अविवेकी आई। गुन औगुन बूझौ नहिं ताही॥
मै विद्या परवीन सुजानाँ। रीझि कला नहि राखौ प्राना॥
क्रोधवंत राजा उठि कहै। ढीठ विप्र चुप क्यों नहि रहै॥
मारौ खड्ग टूक द्वै करौ। विप्रघात अपजस सौं डरौ॥
जो राजा तू मारै मोही। कला रूप ह्वै व्यापौ तोही॥

पतित करौ तुहि लोक मह, स्वर्न लोक हरिद्वार।
जग मैं अपजसु पावही, सकल कहै हत्यार॥

राजा ब्रह्म हत्या जो करै। कलि मैं कुस्टी ह्वै अवतरै॥
तीरथ कोटि जग्य जो करै। तबहुँ न ब्रह्म दोष तैं तरै॥
सुनि राजा कुछ कहन न पारै। क्रोधवंत मनही मैं विचारै॥
कह राजा जह लग मोर राजू। छाँड़ि जाहु तहँ लगि तुम आजू॥
जो तोहि इहा बहुरि सुनि पाऊँ। खाल खैंचिकर भूस भराऊँ॥

बोलहि क्रोध न बाल, बेगि निकारहु नग्र तें।
भूस भराऊँ खाल, जो कोउ राखै देस मैं॥

तब सो वचन माधवनल कहै। तोरे नग्र राइ को रहै॥
मैं गुनिवत भूमि पर बेसा। चरन धोई करि पिये नरेसा॥
यह सुनि नृप मदिर मैं जाई। नीच सीस करि सासें लेही॥
राजा मन मैं चिंता करही। फिरि फिरि दोस कर्म को देई॥
मैं दिन राति सभा सचारौ। त्यागहुं लच्छ लोभ नहिं करौ॥

जो दच्छिन ध्रुव अस्तवै, तस अग्नि सिवराइ।
पश्चिम भान उदै करैं, तऊन कर्म गति जाइ॥

सम दुग भीर होइ जौ थाहाँ। गगा पश्चिम करैं प्रवाहाँ॥
पंख लागि कै सिला उडाँही। पाहन फोरि कमल विहसाँही॥
जौ इतनी विपरीत चलावै। तऊ न कर्म सौ छूटन पावै॥
कर्म हेत हरिचँद जलु भरा। कर्म देत वलि सर्वसु हरा॥
कर्म हेत पाडव फल खाये। कर्म रेख रघुपति बन आये॥

सोई कर्म मनुष्य मैं, कोटि करावहि भेख।
सो कवि आलम ना मिटै, कठिन कर्म की रेख॥

चित चिंता माधव गहि रहा। तब उठि कामकंदला कहा॥
कवन सोच सोचहु सग्याना। विद्याधर तुम चतुर सुजाना॥
तुम सुजान जाना गुन मोरा। मैं कुछ गुन पहिचानहुँ तोरा॥
मधुकर अहि कमलन गुन जानै। दादुर कहाँ पीउ पहिचानै॥
नाच कूद कछु अँध न देखै। रूप कुरूप एक सम लेखै॥

बहिरौ आगे जो कोऊ, संख बजावै आइ।
वह अपने मन जानहीं, कछु अमृत फल खाइ॥

चलहु बिप्र घर बैठहु मेरे। चरन धोई सेवहुँ कर जोरे॥
प्रेम कथा कछु मोहि सुनावहु। काम अग्नि की तपनि बुझावहु॥
मैं रोगी तुम वैद गुनानी। सोहि सँजीवनि देहु सो आनी॥

काहे गोरिख फिरहि अकेला । अब सँग लाइ करहु मोहि चेला ॥
मैं भई धूधल तू सूरज मेरा । तू चंदा हौ भई चकोरा ॥

तू मधुकर हौ कमलिनी, वैस वास रसलेहि ।
भरै बूँदते स्वाति जल, ऐस बूँद भरि देहि ॥

सुनहु वारि माधौनल कहई । इहि जग नेहुँ नही थिर रहई ॥
जो थिर रहै तो कीजै नेहू । बिछुरि सँताप देह को देहू ॥
नेह लगाइ जो बिछुरै कोई । निस दिन रोम रोम दुख होई ॥
नेह जैसे खाडे की धारा । दह दिस फिरै छुअन कौं पारा ॥
सखी एक माधौ पहिं आई । चलहु सेज पर बैठहु जाई ॥
उठि माधौनल बैठे सेजा । देखत काम तजै तन तेजा ॥
कुसुम मुकट सिर केसर सोहै । निरखत मकरध्वज मन मोहै ॥

उर फूलन की माल, रतन जटित कुंडल दिपै ।
मृगमद तिलक सो भाल, कर बीना माधौ गहै ॥

कामकंदला करयो सिगारा । अरून फूल के पहिरे हारा ॥
तापर पहिरि कंचुकी झीनी । सोधै छिरकि बेल सौ भीनी ॥
पुष्प गूँथि वैनी बनवाई । चंचल गात प्रवीन सुहाई ॥
दियो लिलाट चँदन को टीका । मध्य विदु विदुन कौ नीका ॥
दये न लेइ द्दग ओर करि अंजन । पलौ ओट जनु फरकहि खंजन ॥

कुसुँमी सारी पहिरि सुजान, अंग अंग भूषन किये ।
मुख भरि खाये पान, दाड़िम दसन विराजही ॥

कहै कंदला सुनौ सहेली । मोहि सिखावहु प्रेम पहेली ॥
अब लौ मुग्धा हति अलबेली । सिखवहु रस की रीत सहेली ॥
पुरुष संग रचि सेज न जानहुँ । प्रथम समागम जिय पहिचानहुँ ॥
वह सुजान माधवनल आही । सब अँग कोक बखानहुँ ताही ॥
चौदह विद्या कोक बखानै । अंग बास मनमथ की जानै ॥

कोक कला हौं ही कहौ, सब बिधि अरच बखानि ।
और सिखावहु मोंहि कछु, पूँछहु गुन जन मान ॥

कहै सखी सुन हो कँदला। तो तै रस जानै को भला ॥
जहाँ वासु मनमथ को जानौ। तिहि ठाँहरिसु निकट जनि आनौ ॥
जहाँ अंग मनमथ रह तहाँ। छिपन कियौ रहियो पै तहाँ ॥
कोक रीति कंदला सिखाई। माधौनल पै सखी पठाई ॥
माधौ निरखि रीझि कै रहा। तिहि छिन आइ मदन तन दहा ॥

मदन धनुष सरपंच लै, माधौं सनमुख आइ।
कामकदला निरखि कै, सरन सान गुहिराइ ॥

मिलि प्रजक पर जुगल किलोलहि। बचन चातुरी दोऊ बोलहि ॥
सखी सिखाइ कंदला गई। आवर मदिर ठाढ़ी भई ॥
बैठि कंदला माधव पासा। सूर संग जनु चन्द प्रकासा ॥
जोई कछु कोकिल की रीती। तैसिय रीत रची विपरीती ॥
दोउ कामवत भरि जोबन। सुदर सुघर सुजान विलच्छन ॥

परसन लालन वै पतन, त्रिया पुरुष सुख लीन।
फुटक बदन उमगे रहैं, भये पन्चसर हीन ॥

किलकत बोलत लोक कहानी। भयौ भोर प्रगट्यो जु बिहानी ॥
कामकंदला परिहरि सेजा। भइ बिहाल तन रह्यौ न तेजा ॥
झलकैं पलक उनीदे नैना। अति जम्हुआइ आवहि नहि चैना ॥
कँवल प्रवेस भँवर जो किया। कोस झकोर सकल रस लिया ॥

सिथिल गात कंचुकि पहिरि, बिछुरि माँग लट छूटि।
अधर निरखि औ नख निरखि, गये कंचुकि बँध फूटि ॥

पून्यो जोति ज्यो कामकदला। है प्रगटी परिवा की कला ॥
डोलति चलति मनहुँ मतवारी। पीत वसन मुख भयौ सवारी ॥
सखी आनि छिरकहिं मुख पानी। सुरति रीति औ सब पहिचानी ॥
उरझे बार हारनि न निवारहिं। सब अँग भूषन सखी सुधारहिं ॥
मुख पखारि पुनि पान खवावहिं। नखछत महँ कुमकुमा लगावहिं ॥

भवँर बास रस लेइ कै, भौंर रहे लपटाइ।
सूर तेज तै कुमुदनी, रही अतिहि कुम्हिलाई ॥

बोलहि सखी चलहु मगु रजन । सरवर जाइ करहिं हम मज्जन ॥
माधव विप्र धाम करि धीरा । गई सकल सरवर के तीरा ॥
गई कंदला सरवर पासा । चकही जान्यौ चद्र प्रकासा ॥
चकही बिछुरि गई भुमि भूली । बाँधे कमल कुमुदनी फूली ॥
चक्रवाक उड़ि चले अकासा । अथवा चंद सूर परगासा ॥

सखी तरायन संग, कामकंदला विधुवदन ।
चकई मन भयो भंग, कमल देखि संपुत गह्यौ ॥

तेल सुगन्ध अरगजा कीन्हाँ । अंग उबटना मज्जन कीन्हाँ ॥
करि मज्जन सब बाहिर आईं । चपक बदन सुदेस सुहाईं ॥
कहुँ कहुँ बूँद एक छबि बनी । चपक लता ओस की कनी ॥
सजल ओस अलकै घुँघराली । ऊपर दलति कंदला डारी ॥
अंगन बूँद चुवहिं धर जोती । जनहु भुवराम उगिलहिं मोती ॥
कुटिल स्याम चिहुरा घुँघरारे । डोलै मधुप जनहु मतवारे ॥

नीर चुवहिं चिहुरा सजल, बदन निरखि छबि माल ।
मनहुँ पान मकरंद पर, पवन करत अलि जाल ॥

डोलहिं कामकदला बाला । चिहुर चुवहि मोतिन की माला ॥
निरखत अलक उलटि घुँघरारी । अमृत लगी नागिन ज्यो कारी ॥
कै सावक अलिरस अब डोलहिं । सखी सबहिं उपमा कौ बोलहि ॥
कुटिल कुटिल दोऊ छबि लीन्हैं । कहूँ रसिक मन प्यासे दीन्हैं ॥
सो जेहि फँद्यो सो निकस नहि पारै । जो जिय सकल जन्म पचि हारै ॥

मूलन चिहुर चुवाहि, सखी कहैं कंदल सुनहु ।
बंधन सुरत डराहि, उचेलुट्यो चिहुरा सजल ॥

सुनि कंदला धाम कहँ चली । नखसिख बरन चपे की कली ॥
कहैं सखी सो चलै अवासा । माधौनल जनि होइ उदासा ॥
गवनम राज मंद की नाईं । छिन एक माँझ मँदिर मैं आई ॥
सखी गईं सब अपने धामा । माधौनल मैं आई वामा ॥
कहै कंदला माधौ ठाऊँ । अब सरवर मज्जन नहि जाऊँ ॥

कँवल देखि संपटु गह्यौ, चकही संग बिछोई।
मो मुख पुरन चद सम, निरखत दुख अति होइ॥

वह कलक की कला दिखावहि। पून्यो चद सवानहि आवहिं॥
तू गंभीर सहस रस काला। समतॉ लै ऊपर कै पला॥
तव मुख रूप रैन दिन नीको। सूरज होइ देखि कै फीको॥
रोस बचन जब माधव कहई। भुज भरि कामकदला गहई॥
बैठि सेज पुनि करहु बिलासा। महकन जेहि ठॉ सकल सुवासा॥

मधु कुरल विध्यौ मदनरस, को ये पवन मदनेमु।
नैन प्रान तन मन फस्यौ, छिन न प्रेम कै प्रेमु॥

ऐसे बचन जौ राजा कहई। माधव सूर चेत जिय धरई॥
पूॅछहु कामकदला तोही। अब मैं चलहॅु विदा दै मोही॥
राजा बात सुनै मग पावहि। मोहि तोहि लै भार झुकावहि॥
कहै कंदला बूझै नहि तोही। ऐसे बचन सुनावहु मोही॥
तोहि चलत मोरे प्रान चलाहीं। पलक ओट ऑखिनि अकुलाहीं॥

चलन कहत है मित्र, स्रवन सुनत प्रानहि चलहि।
अति ब्याकुल मन चित्त, सजल नैन भरि भरि ढरहि॥

तुम सुजान माधव सब जानहु। राज कहे कर विलग न मानहु॥
राज सिद्ध धनमद जिहि होई। सकल वीच बस करै जु कोई॥
कहि माधो सुनि तेरी चिन्ता। राज अपनो होइ न मिता॥

राजा त्रिया सुनारि, बिटिया रोकष आगि जल।
पाँसा सॉपिनि हारि, ए दस होइ न आपने॥

यह जिय जानि सोचि करि कहौ। दिन दस जाइ और पुर रहौ॥
यह जग में ब्रिधि कियो सॅजोगु। जिहि मिलना तिहि होइ वियोगु॥
कर्म रेख सौं कछु न बसाइ। जो विधि लिख्यो सो मेटिन जाइ॥
मिलन बिछोह बिधाता कीन्हाँ। दमयती नल को दुख दीन्हॉ॥
मिलि बिछुरे जानहिं दुख सोई। बिछुरि मिलन ढुँढु तन सुख होई॥

आलम मिलन बिछोह, तीछ्ण सकल सँताप ते ।
तपत अंग जनु लोह, बिरह अग्नि इमि पर जरहि ॥
बोलहि नारि बचन अन चैनी । माधव रहहु आजु की रैनी ॥
ललित कुसुम भरि सेज बिछावहुँ । भुज भरि अंकम भरि लपटावहुँ ॥
परी साँझ भइ निसि अँधियारी । सखी पहुप भरि सेज सँवारी ॥
बहुरि सिगार कंदला कीहे । अग अग लै भूखन दीन्हे ॥
करि सिगार माधौ पै आई । जुगल सेज पर बैठे जाई ॥

आगम बिरह वियोग, बिछुरन सूल जु रहत जिय ।
मिलत मैन संजोग, बचन वियोगिनि उच्चरै ॥
सुबचन काम न कंदला कहई । रजनी बीति अल्प ह्वै रहई ॥
ऐसा कछु कीजै उपचारा । बाढ़ै रैनि न होइ सकारा ॥
तब माधौ बीना कर लीन्हा । बिधुरथ मृगन श्रवन सुनि दीन्हा ॥
सरस बजावहि वीन सुरंगा । टिक्यौ चंद थकि रहे तुरंगा ॥
सरवर चक्रवाक अकुलानै । बाढ़ी रैनि न होइ बिहानै ॥
रहौ सदा अधरात, राहु जाइ सूरज मिलहु ।
चलन कहत पिय प्रात, रैनि छिमाखी होइ रहौ ॥
बढी रैनि नहि होइ उँजियारा । तब माधव धरि बीन विहारा ॥
थक्यौ नाद मृग चल्यौ उदासा । अथयौ चद सूरज परकासा ॥
बीती रजनी पृथ्वी जागी । माधवनल उठि भयौ विरागी ॥
पुनि कामा सो अग्या लेई । आग्या लै मारग पगु देई ॥
कहै नारि हौं ही तुम थाहू । हौ न कहौ माधौनल जाहू ॥
रसना पाकौ सोइ, चलन कहत जो मित्र को ।
मद द्रिस्टि मति होइ, जो निरखै बिछुरन सजनु ॥
करि धोती पोथी करि बाँधै । उठ्यो विप्र वीना धरि काँधै ॥
गहि रही कामकंदला बाही । हौ तोहि जान दैउ जो नाही ॥
कहति काम ये मीत बताउ । कैं जु चले मन मोर लुभाउ ॥

अहो मीत सज्जन परदेसी। विद्याधर मनमोहन वेसी॥
मारि कहा रिनि मेटौं दाहू। ता पाछैं तुम पर भुमि जाहू॥

नैन झरत जिमि मेह, गरब देह भीजत सकल।
बिछुरत नथौ सनेह, मन ब्याकुल तन थकित भय॥

कहै त्रिया पूजै आस तिहारी। कर अंजुल मुहि दीजौ वारी॥
प्राननाथ अब क्यों इच्छा आवै। ताके आँसू भरि भरि आवै॥
रति गति मति लै गवनहु मोरी। लै सुखु दै दुखु संघहु जोरी॥
नेहु नाव तवगुन करि लीना। छाँडि वियोग समुद महँ दीना॥
बिन गुन नाउ लगहि नहि तीरा। करि हा हीन झकोरहि नीरा॥

नैन समुद तारंग, प्रीतम विनु उमगे फिरहिं।
विनु गुन वोहित अग, बूड़हि सो त्रिय कंत बिन॥

तुजि समीप जिनि करहु बियोगिनि। तुम बिछुरत ह्वैहौ हम जोगिन॥
कंथा पहिरि जटा सिर केसा। घर घर फिरहुँ तपस्विनी भेसा॥
मुद्रा पहिरि भस्म सिर लाऊँ। मुख माधौ माधौ गुहिराऊँ॥
किगरिय गहि दिन रैन बजैहौ। जोगिनि ह्वै माधौ गुन गैहौ॥
घर घर बन बन ढूढौं तोही। सो कछु करौं मिलौं जो मोही॥

खंड खड तीरथ करौं, कासी करवत लेहुं।
मन रच्छया करि मरि जियौं, ढूँढि मित्र को लेउँ॥

जिन दै जाहु बिरह के हाथा। पाइन परहुँ लेहु मुहि साथा॥
ये हो मीत पंड़ित पंइडोही। बाट माँझ जिनि छाड़हु मोही॥
मोहि मारि जाहु पिय नाहा। छाँड़हुँ प्रान न छाड़हु बाँहा॥
चंद्र बिलोकत सकल चकोरा। चकवी सती होई जो भोरा॥
नैन सकल निरखत भावंता। जिय दूखत सुनि बिछुरि भवंता॥

आलम प्रीतम के मिले, अंग अंग सुख होइ।
पलक ओट जग लाज तैं, रहौं सकल सुख होइ॥

कहै नारि सुनि विप्र उदासी। मेरे ग्रह जो करहु निवासी॥
जिहि मुख सुखद बचन सुनावहु। तेहि मुख काहे चलन कहावहु॥

माधो नैन नीर भरि आये। कामकदला बचन सुनाये ॥
बोलै विप्र नैन बरसाही। सुनहुँ नारिय छाँडहु बाहीं ॥
तब मुख निरखि नैन सुख पाउँ। बिछुरि जान कै वहि मरि जाहुँ ॥
भावंता के बिछुरनै, नैन उमगि जल धार।
मन अधीर तन पीर अति, बिरह उदेग अपार ॥

माधव-कामकंदला-वियोग खंड

सखी आइ कर बाँह छुड़ाई। चल्यो विप्र त्रिय गई मुरझाई ॥
काम मूर्छित धरनि मह परी। सखी आइ करि अकर भरी ॥
लै करि सखी सेज पर धाई। तन व्याकुल जनु मिरगी आई ॥
अधर सूक जिय रहै निरासा। सखि जीवन की छोडी आसा ॥
मूदि नासिका छिरकहि पानी। पुहुप मूरि औषद बहु आनी ॥
करि उपचार सखी थकी, रही बिसूरि बिसूरि।
बिरह भुवंगम वा डँसी, ताकौ मत्र न मूरि ॥

पुनि इकु मंत्र सखी मिलो थापहि। कान लागि माधवनल जापहि ॥
माधौ माधौ उहिं गुहिरायौ। जागि नारि विप्र जनु आयौ ॥
सुनत नाँउ जब नैन उघारे। श्रवन नैन जल मानहुँ नारे ॥
सूनौ भवन देखि बिनु मित्रा। भई पीत तन व्यापी चिंता ॥
बिन काँदव जिमि कमल सुखाई। बिना सूर्ज ज्यों तेज मुरझाई ॥
जैसे जल स्यौं मीन, घरी एक ज्यौं बिछुरई।
सदा रहै तन छीन, छिन ही छिन दुख संचरै ॥

यह हिय वज्र वज्र तैं गाढ़ा। पाल्यौ वज्र वज्र मैं बाढा ॥
जा दिन मीत बिछोहा भयऊ। तँवकि निखड खंड-ह्वै गयऊ ॥
बिछुरन जस भा ताल तरकै। पापी हियौ नेक नहि फरकै ॥
अैसे निलज रहत नहिं प्राना। मीत बिछोह सुनत किमि काना ॥
गये न प्रान मीत के संगा। अैसे निलज रहत गहि अंगा ॥

आलम मीत विदेसिया, लै गयौ संपति सुष्प।
नैन प्रान तन विरह बसि, रहे सहन को दुष्ष॥
गयो विप्र चित्त उचाटउ। अब कहँ पाँऊँ मीत बतावउ॥
तीन्या अपने होई न कोई। छिन इक बिछुरै नैन दुख होई॥
चंदन जान नहिं पीर, तादिन भरहि चकोर दूख।
ब्याकुल रहै सरीर, निसि अँधियारी सीस धुनि॥
तजि स्नेह हम धौन लगायौ। कामकंदला बहु दुख भयौं॥
दिन बीतै रजनी ज्यों आवै। भरै नैन जल पलु न लगावै॥
खिन माधौ माधौ गुहिरावै। खिन भीतर खिन बाहिर आवै॥
बिरह ताप निसि सेजन सोवै। कर मीजै सिरु धुनि धुनि रोवै॥
ऐसे दुख करि रैन बिहावै। कोटि जतन बासर नहि पावै॥

जो दिन हो इतो निसि रटै, जो निसि होइ तो प्रात।
भा दिन सातिन रैनि सुख, बिरह सतावत गात॥
कामवंत बिरहा बसि भई। बिद्याबुद्धि सकल नसि गई॥
नृत्य गीत गुन की चतुराई। गति मति आनि विरह बौराई॥
जिहि तन मन विरहा सचरै। सो जिउ जीवै नहि पुनि मरै॥
बिरह अनल सोइ लै सुख जारइ। रोम रोम वेदनि संचारइ॥
पाउ हर्ष सुख रहै न कोइ। जिहि सरीर विरहानल होइ॥

बुधि विद्या गुन ग्यान, प्रेम चाव धुनि हर्ष वल।
सब तजि होइ अयान, जा घट बिरहा संचरै॥
कामकदला भई वियोगिन। दुर्बल जनू वर्स की रोगिनि॥
अंजन मंजन भोग बिसारे। सजल नैन बहैं जल के नारे॥
वस्त्र मलीन सीस नहि धोवे। लंक टेक माधौ मग जोवै॥
नीद न भूख न भावै पानी। काया छीन दीन मुख बानी॥
हा हा आइ स्वास के गाढ़े। छिन छिन बिरह अनल तन बाढ़ै॥
हा हा प्रान न संग गय, जब बिछुरे भावंन।
कर मीजै वस्तर धुनै, गहै अँगुरिया दत॥

पलक बाह नहि रहहिं नियारे। मंगन भये नैन के तारे॥
माधौ पीर कंदलहि व्यापी। मनमथ अग तपति त्रिय तापी॥
तोरै तनु मनु डारै रहही। हृदै पीर नहि का हु कहही॥
छिन अचेत छिन चेतहि आवहि। पुनि पुनि बिरह विया तन तावहि॥
स्वास लेत पिंजर ज्यों डोलहि। हाहा सजनी मुख नहि खोलहि॥

रकत न रहै सरीर, पीत पत्र के बरन तन।
डोलत अतिहि अधीर, पवन तेज नहि सहि सकत॥

सखी आनि मुख नीर चुवाही। हिदै तपत घसि चंदन लगावहिं॥
कुसुम सेज पर जो पगु धरई। तिहि छिन काम अग्नि पर जरई॥
त्रिविध पवन त्रिय सहै न पारै। चंदन चंद अधिक तन जारैं॥
पीक मधुर धुनि बोल सुनावै। मदन घाउ पर जन विष लावै॥
गीत नाद रस कवित कहानी। श्रवन सुनत वे बिष सम बानी॥

अकुलाई तन विरह के, रस सँजोग रसुलीन।
ते सब काम वियोगि, निसि बासर दुख दीन॥

माधव-विरह-वर्णन खंड

बिछुरै कामकदला नारी। माधौनल मन भय दुख भारी॥
बिरह के साँस जु हिरदै बाढ़ैं। गहि गहि आहि आहि कै काढैं॥
बन बन फिरै नैन जल धोवै। विरह सँताप नींद नहि सोवै॥
छिन बैरागी बीनु बजावै। सूखे गात अगिनि जनु लावै॥
मन चिंता करि त्रिया वियोगी। गोरख ध्यान रहैं जिमि जोगी॥

अगम अथाह अलेख अति, विरहै समुद्र अगाध।
प्रीति हिरानी बुद्धिजनु, भूले ब्रह्म समाध॥

बिरह समुद्र अगम अति आही। बूड़ि मरै नहि पावै थाही॥
बुधि बल स्यै कोउ पार न पावै। जौ नर सप्रेंग गुन चढ़ि धावै॥
विरह डसत नर जिए न कोई। जौ जीवहि तौ बौरा होई॥

बिरह चिनग जिहि तन पर जारैं । छिन छिन बिरह अगिनि बिस्तारैं ॥
सोइ अगिनि माधौदल लागी । वीनु बजाइ रहे वैरागी ॥

हिऐं हूक भरि नैनजल, बिरह अनल अति हूम ।
अतर धर सवर बरै, स्वास प्रगट भइ धूम ॥

जिय बिनु सूक पत्र ज्यों डोलै । सूल सहित माधौनल बोलैं ॥
निस दिन विप्र पीर करि रोवहि । वन पंछी निसि नीद न सोवहि ॥
बाघ सिंह कोइ निकट न आवहिं । चहुँ दिस बिरह अग्नि अति धावाहि ॥
बिरही नैन सजल मुख भरे । सीतल होत तपत जिहि हरे ॥
स्वासा वेग नैन भरि पानी । सानल गत बिरहा की जानी ॥

वस्त्र मलीन उदास तन, उभय स्वास बहु लेइ ।
नीद भूख लज्जा तजै, बिरही लच्छन एइ ॥

माधौ नैन रहे भरि आँसू । सूखी चर्म रुधिर अरु माँसू ॥
तब माधौ मन माहि बिचारहि । बिरछ बासु मन आपु सँभारहि ॥
अहो वन बिरह जोर मरि जाँहू । कामकदलहि हौ न मिलाऊ ॥
अब खोजहु कोउ जग उपकारी । मिलवहि मोहि कंदला नारी ॥
ढूँढौ पर वेदनि जिहि होई । दुख खंडन नर जौ कहूँ होई ॥

लछ दैन सकट हरन । जीवन प्रन मति धीर ।
तिहि के कलि उत्तम करम, ते खडहि पर पीर ॥

विक्रम-सहायता खंड

यहै मंत्र माधवनल लागा । बल सँभारि वन तजि मग लागा ॥
कोइ न भयउ कलि त्रिया वियोगी । माधौनल जो भरथरि जोगी ॥
जग्य बिचारि माधौनल कहै । चल्यौ जहाँ नृप विक्रम रहै ॥
पर दुख हरन दसौ दिसि दैनी । सुनियतु बिक्रम नग्र उजैनी ॥

सुध संगति बहु करेत है, जो मन उत्तम होइ ।
पर दुख खडन तौ गनै, नेह दान मुहि दोइ ॥

काम के बस माधौनल चला। किहि विधि मिलै कामकंदला ॥
वीना विरह साथ जो लीन्हे। नींद भूँख प्यास बस कीन्हे ॥
मारग चलै सकल दुख लैने। पहुँच्यौ जाइ नगर उज्जैनै ॥
धर्मपुरी सब नगर सुहावा। हाट पटन बहु देखि बनावा ॥
चहुँ दिसि नगर बाग फूलवारी। ताल कूप सलिता बहु भारी ॥

कनक खचित मनि मंदिरनि, कलस धुजा फुहराति।
राव रक नहि चीन्हिए, पूरन पुर जिहिं भाँति ॥

अति वियोग माधौ कौ भउऊ। ततखिन चलि मंदिर मे गयऊ ॥
पुनि पुनि हाट पटन फिरि देखै। आनंद पुरी बराबरि लेखै ॥
छत्तिस पुरी नगर बैपारी। बैठे हाट महाजन भारी ॥
कहूँ नाच कहुँ पेखन होई। कहूँ पवारा गावत कोई ॥
कहुँ रामायन भारत होई। कहुँ गीता कहुँ भागवत होई ॥

कहुँ पडित द्वै सहस हैं, कहूँ करहि कवि वाद।
कहूँ मल्ल बिह्वल भिरहिं, कहूँ गीत कहुँ नाद ॥

अति उदास माधौनल भयऊ। तब राजा के मदिल गयऊ ॥
राजमँदिर मनिगन उँजियारा। कै विधना कैलास सुधारा ॥
द्वारै पडित तापस ज्ञानी। देस देस के भूपति जानी ॥
द्वार भीर नरपति कै होई। नैकु जुहारु न पावहि कोई ॥
देखि विप्र मन भयउ उदासा। राज भैट की तजि जिय आसा ॥

दिन उदास दहुँ दिसि फिरहि, नैन द्दगन के नीर।
येक न काहूँ सौं कहै, अंतर गति की पीर ॥

दिवस व्याधि माधौ कौ लागी। मन महँ कामकदला जागी ॥
विप्र एक संग करि लीन्हाँ। करि अहार माधौ मो दीन्हाँ ॥
करि अहारु माधौनल गयौ। नदी तीरक उदक जों भयौ ॥

हाटक यह धारे सकल, भरहिं वारि पनिहारि।
येक नारि मज्जन करहि, अंग मलाइ सुधारि ॥

कनक कलस भरि सबरी नारी। धरि धरि सीस चलहिं ते वारी ॥
मारग छाँड़ि चलहि ते नारी। तोरहिं फल औ फूल उपहारी ॥
येकै चलै घूँघट पट डारै। चंदन वंदन तप अंगारै ॥
लखि चरित्र माधौ मुख फेरा। दुख व्यापौ तहँ कामा केरा ॥
निसु दिन रहै तहाँ चितु लाई। पाहन रेख न मेटी जाई ॥

द्रग पूरन की तारिका, मूरति रही समाई।
जित देखौ तित सो त्रिया, पलक न इत उम जाइ ॥

दिन इक माधौ गयौ सुजाना। मडप महादेव कौ जाना ॥
मडप देखि भेख मन भावै। तहाँ राई विक्रक नित आवैं ॥
तिहि मंडप माधौनल गयौ। विरह ताप व्यकुल मनु भयौ ॥
जामैं विरह व्यापै सोइ जानै। अन जानत सुख कहा बखानै ॥
मन उदास माधौनल भयऊ। दोहा लिखि मंदिर महँ गयऊ ॥

कहा करौ कित जाऊँ हौ, राजा रामु न आहि।
सिय वियोग सताप वस, राधौ जानत ताहि ॥

रामचंद्र नहि जग महँ आहीं। सिया वियोग किधौ दुख जाही ॥
राजा नल पृथिवी सौ गयऊ। जिहि बिछोह दमयती भयऊ ॥
वनवासी अरु भेद सँजोगी। राजा फूहर वाचर भोगी ॥
विछुरत त्रिया भयउ सो जोगी। भरत राज पिंगला वियोगी ॥
राजा रतनसेनि नहि भयऊ। पदमावति लगि सिघल गयऊ ॥

मधुकर कमलहि आहि, कोजि मालती वियोगु।
ये सब गये जगत्र मैं, विरही करि करि जोगु ॥

दोहा लिखि माधौ वैरागी। गयौ नगर कामा अनुरागी ॥
तिहि मडप राजा पगु धरई। महादेव की पूजा करई ॥
पूजा करि प्रदच्छिना देई। राज दृष्टि दोहा पर गई ॥
दोहा बाँचि राज यह कहई। विरह अग्नि किहि व्यापति अहई ॥
मोरैं पुर विरही कोउ आवा। विरह वियोग सताप सतावा ॥

आलम ते नर तुच्छ मति। जे पर हँथ मनु देहि।
सुख संपति लज्या तजै, दुख विरहा सोइ लैहि ॥

राजा कहैं सुनो सब कोई। देखहु नर बिरही सो होई ॥
मोरे नग्र दुखी जो रहई। सकवंसी मोसौ को कहई ॥
अब जो सो विरही नर पाँउ। सुनि वेदनि सब तुरत नसाँउ ॥
कोइ वह पुरुष ढूँढि सो ल्यावइ। राजा कहै लच्छि सो पावइ ॥

दुख खडन नृप दयानिधि, तन पीरे पर पीर।
पुनि पुनि चित चिंता करहि, यह विक्रम मति धीर ॥

राजा अन्न पान नहिं भावहि। मन बच जब लग जो नहि आवहि ॥
नर नारी सब ढूँढन धाईं। विरही लच्छिन सकल बुझाईं ॥
ढूँढ़हि हाट पटन फुलवारी। ढूँढ़त बन महँ भूलत वारी ॥
ज्ञानवती दूती इक अहई। विरह वियोग खेल सब रहई ॥
सो चलि जिहि मडप महँ जाई। माधौनल ता छन गयो आई ॥

तन दुर्बल अखियाँ सजल, भरि भरि लेत उसास।
चित उचाट मन चटपटी, विरह उदेग उसास ॥

मन उचाट छिन बीच वजावहि। जोरे सुनहि तिहि विरह सतावहि ॥
खिन खिन कामकंदला रटई। स्वाति बूँद को चातक चहई ॥
ज्ञानवती त्रिय सुन मुख बानी। मन मह कही यहै सुग्यानी ॥
विरही पुरुष आइ यह सोई। जाकर दुख राजा कौ होई ॥
कामकंदला त्रिया वियोगी। तन मन छीन भयौ सो जोगी ॥

मन मारैं वस्तर मलिन, द्रग भरि ऊँचे साँस।
तन दुर्बल पिंजर झलक, रंजक रकत न माँस ॥

ज्ञानवती छिन इक कहि बानी। सखी बीस दस आनि तुलानी ॥
कहै सखी सौं सो यह वह आही। नरनारी ढूँढ़त सब जाही ॥
अब लै चलहु वेगि गहि बाहाँ। सुखु पावइ विक्रम नरनाहाँ ॥
पूछहि बात न नल मुख बोलहि। दुर्बल गात पवन ज्यौं डोलहि ॥
जो कछु बोलहिं उतर नहि देई। नीचे नैन स्वाँस भरि लेई ॥

रहै ताहि को ध्यानु, मन माला हित मंत्र जपि।
ज्यों जोगी करि ज्ञान, स्रवन सुनत नवगति मुखहि ॥

बोलहि सखी सुनहु बैरागी। बिरह ताप सुख सपति त्यागी ॥
बोलहु बचन पीर सब कहहू। काहे दीन छीन तन रहहू ॥
ताकी सप्ति मानि मन बोलौ। जिहि वियोग विरहा बस डोलौ ॥
छिन एक बचन कहै छिन रोवहि। नीरज नैन कमल मुख धोवहि ॥

दुख को बात दुखिया कहै, दुख वेदनि सुख त्यागि।
दुख समुद्र सोइ परयो जो, रह्यो अग दुख लागि ॥

बिछुरत कामकदला नारी। माधौनलहि भयौ दुख भारी ॥
पुनि मुख कहै विरह की रीती। अपनी कामकंदला प्रीती ॥
अति उचाट मुख विरह बखानै। जिहि यह व्याप्यौ सोई जानै ॥
माधौ पीर सखी कौ व्यापी। विरह वात सखी सब थापी ॥
सुनत बचन त्रिय अग पसीज्यौ। नैननीर कचुकि तन भीज्यौ ॥

.हौं वलि वलि जिहि जीव, पर वेदनि जिहि वेधियौ।
धृक ते पाहन हीय, नीदन भिदहि पषान मैं ॥

बोलहि ज्ञानवती गुन नारी। चलहु विप्र अब नगर मँझारी ॥
हम राजा विक्रम की दासी। तुम वेदनि मन माहि उदासी ॥
हम पठई राजा तुम पासा। चलहु वेगि मन पूजै आसा ॥
चल्यौ विप्र माधौ उहि संगा। त्रिय वियोग तनु रहयौ न अंगा ॥
जहँ सक वदी हुते नरेसा। राजा मदिर मैं कियौ प्रवेसा ॥

ज्ञानवती इमि उच्चरहि, सो विरही है आइ।
विप्र देखि राजा उठयौ, कीन्हौ आदर भाउ ॥

राजा वरन देखि कै कहैं। नख सिख विरह अनल तनु दहै ॥
मूरति नयन रोइ जल धारै। कुंदन देह नेह बस मारैं ॥
पूछहि राइ सुनहु द्विज देवा। अज्ञा होइ करहुँ सो सेवा ॥
कवन देस जासौ पग धारे। दरसन देख्यौ भाग हमारे ॥
अपनो नाँउ कहौ वैरागी। किहि के नेह फिरहु सुख त्यागी ॥

किहि कारन भये बिरह बस, दुख सँग फिरहु उदास।
कहौ विथा हिय पीर सम, विधि पुजहि सब आस ॥

राजा मो माधवनल नामा । उत्तम संग करहुँ विस्रामा ॥
विद्या पढ़ेउँ करन संगीता । सामुद्रिक जोतिक गुन गीता ॥
काव्य कोक आगमहि बखानहुँ । पिंगल पढ़ेउँ सकल गुन जानहुँ ॥
कर मृदग गति बीन बजाऊँ । षट रस राग रागिनि सँग गाऊँ ॥
नृत्य चतुर्गन बैद विनानी । खेल चातुरी उकति कहानी ॥

पसु भाषा औ जल तरन, धातु रसाइन जानु ।
रतन परख औ चातुरी, सकल अग सग्यानु ॥

पुहुपावति नगरी मों ठाऊँ । गोबिंद चंद राज को नाऊँ ॥
कर्म रेख सन विर्गहु भयऊ । तिहिं मोहि देस निकारो दयऊ ॥
तब मैं आन उदास मनु कीन्हाँ । कामावती नगर पगु दीन्हाँ ॥
कामसैनि राजा तहँ आही । सुरनर सकल सराहैं ताहीं ॥
तिहि पुर कामकदला नारी । रूप राग विद्या दस चारी ॥

नैन लगे तिहि रूप, तजि गुन बुधि बल चातुरी ।
ज्यों दादुर वस कूप, निकसत परहि जु विरह बस ॥

जा दिन मोर जन्म जग भयऊ । चित परि जहाँ ब्रह्म लिखि गयउ ॥
मो त्रिय निरख न बिसरहि काहू । चित कर ध्यान रहैं द्रिग वाहू ॥
अँखियन से जिहि अँखियन लागी । जिहि निरखत सुख सपति त्यागी ॥
अनुपम रूप विधाता दीन्हाँ । आँखिनि निरख जीउ हरि लीन्हाँ ॥
जिय बिनु सदा रहैं नहिं आसा । हिरदै नाहिं जु कियौ निवासा ॥

भावंता के मिलन कौ, हा हा पंख न कीन ।
नैन तपत है दरस कौ, तन परसन को जीय ॥

पडित गुनी सकल बुधि ग्यानी । देखि विप्र मुख रह्यो बिनाँनी ॥
राजा देखि अचंभौ रहई । कुछक उतरु माधव कहँ दअई ॥
हौ पडित तुम जगत गुसाईं । सब गुन पूरन काम की नाँईं ॥
तुम देखत त्रिभुवन वस होई । तुम ही वस्य करहि जो कोई ॥

यह मन मानिक वस करन, वाति अत लै देहु ।
विरह वस्त्र सुख त्यागि कै, दुख वियोग सब लेहु ॥

सुनि राजा माधौनल कहई। यह मनु जौ अपनै बस रहई ॥
नैन बसीठ डीठ अति आँही। आपहिं मनु दै फिर अकुलाही ॥
निरखत नैन कंदला नारी। लाग्यो मनु दीन्हौ तनु डारी ॥
तिहि बिछुरत अन्न अबु न भावहि। छिन छिन प्रेम अधिक मन आवहि॥
मित्र वियोग बिरह दुख होई। जिहि दुख परै जानिहै सोई ॥

बिछुरत ऐस बियोगु, स्वास उर्द्धसी लै रहै।
अब विधि करत सँजोगु, नातर प्रान विमुक्त ह्वै ॥

राजा कहै सुनहु गुनरासी। गनिका सौ नहि प्रीति गनासी ॥
राजा पूँछहि विप्र सुजाना। कहियौ उदासी पुनि ग्याना ॥
जब लगि माडो की नहि रीती। तबलौ ही गनिका सौ प्रीती ॥
गनिका प्रीति न सदा चलाई। धन सौं प्रीत बिन धन चलि जाई ॥
केलि फूल दासी कौ हेतू। रूर रग अंतरगति सेतू ॥

नैन अनत चैना अनत, अनतै चित्र निवास।
जनि पातर परतीत करि, विस्वा बिसु विस्वास ॥

बालहि विप्र सुनहु नर भारी। आँखिन बीच सुदेखेहु नारी ॥
जो जेहि राता सो तिहि भावहि। तेहि विनु सून द्रिस्टि जगु आवहि ॥
जो जाके मन माँह बसाई। तजि चंदन सालहि गज पाई ॥
सप्त समुद्र सलिता जलु वहई। चातक स्वाति बूँद कौ चहई ॥
तारा गगन भरे दुति मदा। दुखित चकोर रहै बिनु चदा ॥

जो जिहि राता होइ, निसि वासर सो मन बसहि।
ता बिनु जियै न कोइ, बिछुरत हर जल मीन ज्यौ ॥

जो चाहौ सो हम पर लेहू। तजौ विप्र गनिका सौ नेहू ॥
हौं तो तजौ नेह कर धरई। यह मन जौ अपनै बस करई ॥
गुन धन जीव कंदला लीन्हाँ। दु द उदेग मोहि कर दीन्हाँ ॥
रकत माँस कछु रह्यो न चीन्हाँ। आँसू रुधिर हिदै करि लीन्हाँ ॥

जब लगि जीवहु मरि जियहु, स्वर्ग नर्क विस्राम।
तब लगि रटौ विहंग ज्यौ, कामकंदला नाम ॥

सो मतिहीन वज्र तनु होई। संग्रह नेहु न जीवै कोई ॥
पूरब जन्म कोटि जौ करई। तब सो नैकु पंथ पगु धरई ॥
मानुस पसु अंतरु यह अहई। माधव सोइ नेहु जो बहई ॥
ब्रह्म ग्यान पावै पुनि सोई। जिहि तन तेज नेह कौ होई ॥

अंध कूप मैं देहु, गुन प्रगट कोइ नहिं लखहि।
जानै दीपक नेहु, तब सब देखै रूप गुन ॥

माधौ बचन सुनै जो कोई। सकल सभा को आवै रोई ॥
जो रे सुनै सो देखन धावै। जो देखै तेहि विरह सतावै ॥
नारि बैठही ह्वै इक संगा। करै बात तब दहै अनंगा ॥
नगर एक आयौ बैरागी। अति सुंदर रस जान सुखत्यागी ॥

प्रेम नैम करि रैन दिन, अंग चढ़ायौ राख।
सुनै धुनै सोउ सीसकर, दुंद बिरह अस भाष ॥

एक समे विक्रम नर नाहाँ। गहि लीनी माधव नल बाहाँ ॥
विप्र संग लै धाम सिधारा। दीप मसाल मनिगन उँजियारा ॥
मंदिर जोति मानौ कविलासा। चंदन मिली अनूपम वासा ॥
कनक भूमि पाटंबर वासी। कुंकुम छिरकत केसरिरासी ॥
तिहि मंदिर सिंहासन छाजा। तिहि पर बैठि विप्र अरु राजा ॥

कवित नाद गुन चातुरी, अर्थ ज्ञान सिंगार।
जो राजा मुख उच्चरहि, सो माधौ करै विचार ॥

जो बूझै विद्या नर नाहा। सो संपूरन माधौ माहा ॥
तब राजा उठि चरन पखारे। अहो विप्र तुम ईस हमारे ॥
माँगहु मन इच्छा जो होई। अर्थ द्रव्य हम पुजवहि सोई ॥
मागौ यहई बात सुनि लीजै। मो कहँ कामकंदला दीजै ॥
जिहि कारन हम तन मन खोयौ। रकत धार निसि बासर रोयौ ॥

बेगि देहु करतार, बिव अँखियन पुनि पंख वलु।
उड़ि देखौ इक बार, भावता के दरस कौं ॥

राजा कहै सुनु विप्र गुसाईं। दिन दस रहौ नलन की नाहीं ॥
दल पैदल सैना संग लेऊँ। लै तुहि कामकंदला देऊँ ॥
बर बर बूझि जीति मुह माग। राजा बाँधि देउ तुहि आगें ॥
दिवस दिवस राजा बौरावहि। माँगि विप्र इहिठा चित लावहि ॥
यह मन दियौ प्रेम चित मोहा। रह्यो लागि चुंबक जनु लोहा ॥

मोहन मूरति चित्र लखि, चित पर धरी सुधारि।
सो पलु भूलै महि कहूँ, जो बीतें जुग चारि ॥

विप्र संग विक्रम नल भारी। गयौ संग लै भूमि सँवारी ॥
गंध्रव गुनी आये बहुभारी। राजा करहिं विप्र मनुहारी ॥
ताल पखावज बोलि मँगाये। गाइन गुनी कपरिया आये ॥
कमल बदन मृग नैन सुहाईं। पतुर बीच काछिकै आईं ॥
मध्य छीन औ भूखन सोहै। नैन निकट करि सब मन मोहै ॥

एक भूमि वैडारिये, दामिनि ज्यों छिपि जाइ।
पुष्प लता जिमि पायन, धुनि अति चंचल फहराइ ॥

नर निक्रम औ विप्र उदासा। देखहु नैन करहु मन हासा ॥
करन कपोल विषै धरि हाथा। नैना भरि नीचै करिमाथा ॥
बोला राउ नैन कत भरहू। देखौ नाचर हंस जिय करहू ॥
मैं मॉग्यौ कित सावक साजू। देखौ विप्र नृत्य तुम आजू ॥
माधौनल आगु करि लीन्हाँ। जिहि जहँ नेह पसारा कीन्हाँ ॥

धनि विक्रम सक बंधिया, पर दुख हरन नरेस।
विप्र काज कौ उठि चल्यौ, छाँड़ि धाम धन देस ॥

कंदला-प्रेम-परीक्षा खंड

जोजन दस नगरी जब रही। राजा सींव आनि पुनि गही ॥
राजा मंत्र एक जियँ धरैं। इक रन बीच सैन दुइ करैं ॥
सँग खवास राजा असवारा। आयो नग्र लगी नहि बारा ॥
जाके नग्र विप्र हैं दुखी। सो त्रिय देखहू सुखी कि दुखी ॥

राजा पूछै नग्र मैं, कामकंदला नाम।
कहियत गुनी विचित्र हैं, कौन ताहि को धाम॥

मदिर पूँछि सो लियौ नरेसा। उत्तर पौरि महँ कियौ प्रवेसा॥
भीतर मंदिर पौरिया जाई। कामकंदला बात जनाई॥
उत्तम पुरिष पौरि इक आवा। राजबंस कोइ रूप दिखावा॥
सुनि कै दासी पौरहि आई। राइ मँदिर लै गई लिवाई॥
चित्रसार राजा वैसारा। बहुत दीप दीपक उँजियारा॥

कामकदला बिरहवसि, वस्तर गात मलीन।
मुख माधौ माधौ रटै, होइ सो छिन छिन छीन॥

नृत्य गीत विद्या चतुराई। गई बिसरि गुन की अतुराई॥
बदन मलीन पीत रँग भयऊ। रकत माँस सूखि सब गयऊ॥
राजा बोलहि मीठे बैना। बिरहिनि नारि न जोरहि नैना॥
राजा बोलहि उत्तर नहि देई। वरुनी छूटि नैन भरि लेई॥

गनिका गृध सौ काज, ऊँच नीच चीन्हैं नहीं।
बोलहि बचन जै लाज, बस करि राखै पर पुरिष॥

ऐसे वचन ना कहौ भुवाला। विरह वसी जनु खाई काला॥
सुनु विप्रहि दर्सिन करि दीन्हा। देषत ताहि नैन हरि लीन्हा॥
देखौ ताहि जौरे मन भाई। तिहिं देखत दोउ नैन सिराई॥
मन धन जीउ विप्र लै गयऊ। तिहि बिनु सून द्रिस्टि जग भयऊ॥
सो प्रीतम दै गयौ ठगौरी। तजि गुन रूप भई हौ बौरी॥

जेहि मारग प्रीतम गये, नैन गये तेहि मग्ग।
दै दूनौ दुखु बिरह सौ, करि सूनो सब जग्ग॥

तब बल पग परसै वरनारी। रोसवत कीन्हौ सुख वारी॥
कहै कंदला सुनु नृप भारी। जक्त पूज्य तुहि लाज हमारी॥
ज्यो हिय माँझ गुप्त जिउ रहई। त्यौं द्विज रहै सदा सुख दाई॥
दुज मन माँहि निवाज जो कीन्हाँ। बोलनि तजि रसना हरि लीन्हाँ॥

आलम प्रान पयान अब, करत हिएँ अन आस।
निसि वासर द्रग तारका, प्रीतम कियो निवास॥

राजा बूझि देखु इमि बाता। यह वह राती वह एहि राता॥
इहि के विरह विप्र दुख लीना। विप्र के विरह त्रिया तन छीना॥
दुहुँ की प्रीत रही दुहुँ छाई। दोऊ मन तन रहे भुलाई॥
इन मैं अधिक विरह कौ टीका। जिमि आँखिनि कौ मारग नीका॥
ज्यौ सरवर महँ कमल रहाई। बिछुरत नीद रहै कुम्हिलाई॥

मालति लुबधी अलिरसहि, अलि मालति मकरंद।
बिछुरन विरहा सूल सम, दही विरह के द्वंद॥

नर के प्रान नारि के सगहि। नारि के प्रान पुरिष के सगहि॥
राजा निरखि रीझि मन माही। इन महँ प्रीति कपट कछु नाहीं॥
इहि जिय प्रीति रीति कौ गहई। त्रिया विरह लगि अति दुख दहई॥
चाहौ नैन नींद नहि आवहि। दुहुँ तन अन्न पान नहि खावहि॥
ब्रह्म लोक अमीरस जानहुँ। गुन गंधर्वहि प्रीति बखानहु॥

आलम ऐसी प्रीत पर, तन मन दीजे वार।
गुप्त प्रगट अँखियाँ मिलैं, दियौ कपट पट डार॥

राजा निरखि वियोगिनि नारी। पूँछहि गुरुजन सखी हँकारी॥
किहि लगि इहि की सुधि बुधि गई। किहि के हेत नेक बस भई॥
कहै सखी सब कामिनि पीरा। सुनत नैन भरि आवहि नीरा॥
विप्र एक माधौनल नामा। तिहि के विरह याहि यह कामा॥
सो प्रीतम दै गयउ ठगौरी। तन मन लाइ प्रेम की ठौरी॥

यह पपीह पिउ पिउ करै, छिनु अचेत छिनु चेत।
औरनं सुख विरहा अनल, भयौ बरन तन सेत॥

रूपवंत अति काम के भेसा। सो दुज छाँडि गयौ परदेसा॥
कैंधो चहइ इंदु ठगि गयऊ। कैधौं बरस मदन कौं भयऊ॥
मोहन रूप विप्र वह आवा। नैन लगाइ तिहि मन बौरावा॥

ताकि चाह कोइ नहि कहई। तिहि बिनु त्रिया बिरह बस भई॥
अन्न नीर एहि नीद न आवहि। दिन उदेग निसि रोइ गवावहि॥

मित्र वियोगिनि नारि, धारावरि सहि नैन जल।
रही रोइ पचि हारि, तन तन दुद उदेग करि॥

कपट बचत राजा उच्चरई। दुहुँ की प्रीति रीझि कै रहई॥
मैं देख्यौ माधौनल जोगी। पुर उजैन रह त्रिया वियोगी॥
नारि वियोगु ताहि दुख भयऊ। विरह के सूल विप्र मरि गयऊ॥
ऐसे बचन जब राज सुनाए। त्रिया बधन कहँ जम उठि धाए॥
सुनत कदला विस भरि गयऊ। धरनि पछार खाइ मरि गयऊ॥

आलम मीत वियोग को, सबद परयौ जब कान।
लोभ न कीनौ स्वास कौ, गए आहि सँग प्रान॥

सुनत पिगला जैसो कीन्हा। ऐसे जीउ कंदला दीन्हा॥
सखी आनि करि नारि रिखाई। मानहु काल बासुकी खाई॥
बैठे दसन जीभ भइकारी। किनकै नहि छुटि गइ जब नारी॥
रोवै सखी छोरि कै केसा। राजा जिय मँह करहि अँदेसा॥
जिहि लगि विप्र इतो दुख लीना। सो त्रिय बचन कहत जिय दीना॥

अति वियोग मालति सुनत, सूखे पल्लव मूल।
दुखित साल भये कलित बस, कलह सकत त्रिय सूल॥

गये प्रान छिन मे मरि गई। राजा के मन चिता भई॥
सीस धुनै राजा पछिताई। कइ अपराध कियों मैं आई॥
प्रथमै तिरिया बध मैं कीन्हाँ। घोलि हलाहल देखत दीन्हाँ॥
जो जनतेउँ त्रिय देइ पराना। कत हौ वचन सुनाएउँ काना॥
उत्तर कवनु विप्र कौ देऊँ। वह मरि जाइ दोष द्वै लेऊँ॥

गात सरोवर पच वग, प्रान हंस उहिं वारि।
पिसुन बचन किये व्याधि विधि, दीनौ सकल बिडारि॥

राजा कहै सखी सुनु बैना। विरह दुखित भइ मूँदे नैना॥
विरह तेज मुर्छित तन नारी। लै आयउ गर रूधि हकारी॥

यह के प्रान स्वर्ग नहि गयऊ । पंच भूत आत्मा मूर्छित भयऊ ॥
यह त्रिय करे काल नहि आयउ । आहि के सग प्रान उठि धायउ ॥
जा तन मैं विरहा नल रहई । सो तनु आइ कालु नहि दहई ॥

गये प्रान तन फिर्यौ न जिहि, इहाँ गगन जिमि दूरि ।
हौ पारस जिहि कर छुवौ, सीतल जीवन मूरि ॥

इहि विधि विक्रम भयौ उदासा । नारि उठि चल्यौ निरासा ।
कर मींजै पछिताइ नरेसा । नीच माथ कै करै अदेसा ॥
ग्रंथ गँवाइ ज्यौं चलै लुवारी । तैसे चल्यौ राजा मनु मारी ॥
जाम तीन जामिन के भयऊ । राजा उतरि कटक मैं गयऊ ॥
जहँ तँबुआ साजै सै वारा । तिहि तँबुआ राजा पगुधारा ॥

राजा नैननि नींद नहि, अन्न न भावहि पान ।
मन झखत झुरखत तपन, सोचत भयौ विहान ॥

माधव-प्रेम-परीक्षा खंड

भयौ प्रात बैठ्यौ दरबारा । राजा माधौनलहि हँकारा ॥
सभा माँझ नल बैठे आई । राजा विप्रहि बात सुनाई ॥
जब लगि विप्र कथा यह भई । सो त्रिय विरह ताप मरि गई ॥
सुनत बात माधौनल काना । तुम पर दिये कंदला प्राना ॥
सुनत बात द्विज बिस भरि गयऊ । धरनि पछार खाइ मरि गयऊ ॥

दँव दाधी मालति सुनत, अति दाध्यौ तिहि ठाहिं ।
अलि मालति बिनु नहि जिए, अलि बिनु मालति नाहि ॥

राजा वचन सुनत द्विज काना । इहि के संग दिये मुहि प्राना ॥
माधौ सकँल सभा उठि धाई । स्वास नासिका मूँदैं जाई ॥
पंडित गुनी वैद उठि धाए । जोगी मंत्र गारडू आए ॥
ओषधि मूर मंत्र करि थाके । फरे न एक जियहि गुन ताके ॥
सीतल गात विप्र कौं भयऊ । मन धन जीउ स्वास संग गयऊ ॥

आलम ऐसी प्रीति करु, ज्यो वारिज अरु वारि।
वह सूखे वह ना रहै, रहै मूल दल जारि॥

विक्रम-चितारोहण खड

करि उपचार लोग सब हारे। राजहि देखि आँसु भरि ढारे॥
प्रथमहि तिरिया वध मैं कीन्हाँ। पुनहि विप्रहि जानत विष दीन्हाँ॥
नर मारत कोइ मोखु न पावै। ब्रम्हन वध्य नर्क उठि धावै॥
दोनों वध कीने मै आई। चिहुरचि अग्नि जरौ मैं जाई॥
मैं विस्वास गुप्त जिय धारा। छलु करि जीउ दोउ कर हारा॥

प्रेम नैम निरखत रहत, यह नर नाहिन दोष।
भगत करत जिहि प्रीतमहि, तिहि नर नाहिन मोष॥

सकल कटक मैं परयौ हिरोरा। छूटैं फिरैं हाँथि औ घोरा॥
रिध्या नाजु कोइ नहि खाई। सैना उठी सकल अकुलाई॥
जिहि कै कारन इतनौ कीन्हो। तिहि द्विज वचन सुनत जिउ दीन्हो॥
उठि राजा विक्रम वल वीरा। बैठ्यौ जाइ नदी के तीरा॥
मलयागिरि के काठ उठाए। चदन अगर बहुत लै आए॥

कियौ हेम सकल्प लै राजा, कर लै वारि।
घीउ कलस जहँ डारि कै, साजी चिता सँवारि॥

लोग बैठि राजा समुझावैं। नेगी नेह लोग सब आवैं॥
कहैं लोग राजा तुम जरहू। थोरी बात लागि तुम मरहू॥
राजा येतौ दुख जिनि करही। कोतिक नारि पुरुष जो मरही॥
उठि कै चलहु कटक कौं जाही। नातर जरै सैन सँग• याहीं॥
घर भर लोग कटक मैं मरई। उठि किन चलहु साति जब परही॥

जग समुद्र सुख दुख करम, ना तिहि मेटन पार।
राज मरन व्यापहि सकल, जिहि पृथिवी को भार॥

राजा कहै सुनहु सब कोई। जिहि विधि हानि धर्म की होई॥
इहि जग माँह मरन सब आये। राजा रंक काल सब खाये॥
जाको सब जग अपजस करई। जीवत मुयौ पाछैं का मरई॥
शिक्षा दई सब ही गहि रहे। आप आप को चित गहि रहै॥
उठि राजा कीन्हे अस्नाना। धोती पहिरि दिये बहु दाना॥

गगा जल अस्नान करि, द्वादस तिलक बनाइ।
नमस्कार करि भानु को, बैठि चिता मैं जाइ॥

बैताल खंड

स्वर्ग लोक महँ बात चलाई। जीवत जरत है विक्रमराई॥
देवी देवता सब उठि धाये। चढि बिवान सब देखन आये॥
गन गधर्व किन्नर सब गुनी। तब बैताल बात यह सुनी॥
जाकौं मित्र वीर बैताला। सुनत वचन आयौ ततकाला॥
राजा अग्नि दैन कौ चहई। तिहि छिन आइ बाहैं पुनि गहई॥

तू सकबधी चक्कवै, सिह सूरपति सेस।
किहि कारन तू जरत है, पर दुख हरन हरेस॥

राजा कहै सुनहु बैताला। मैं बड़ पाप आपकौ घाला॥
पहिले तिरिया वध मैं कीन्हाँ। पुनि मैं जीउ विप्र को लीन्हाँ॥
जिहि कारन पावक मैं जरहूँ। जम के त्रास नर्क तैं डरहू॥
कह बेताल राजा जनि जरहू। ऐसी बात लागि जनि मरहू॥
खिन मैं अमृत ल्याऊँ जाही। विप्र नारि तुम देहु जियाही॥

आलम उत्तम सोइ, अपजस तैंकर का करहि।
रहत न लज्जा होइ, आपु बुराई कान सुनि॥

कहि बैताल सुनहुँ वलवीरा। मैं लाऊँ जीवन कौ नीरा॥
बेगहि गयो वीर बैताला। सुधाकुंड तहँ होते ब्याला॥
परकत नयन बिलंब न लावा। तुरत वीर अमृत लै आवा॥

पहिले लै माधौ कौ दीन्हाँ। तिहि यह प्रेम पसारा कीन्हाँ ॥
सुधा पियत माधौनल जागा। आये प्रान सुन्न सब भागा ॥

नैन उघरि स्वासा चली, कियौ प्रान विस्राम।
कामकंदला कदला, लेत उठ्यो मुख नाम ॥

उठ्यो विप्र राजा सुखु पावा। तिहि छिन उतरि चिता स्यौं आवा ॥
तब बैताल के चरन पखारे। प्रान जात तुम रखे हमारे ॥
कियो अनद बाजा बहु बाजहिं। अर्व खर्व अति द्रब्य लुटावहिं ॥
सुनि सुख सकल खलक महँ भई। नर नारी की चिंता गई ॥
राज कहै हौ तब सुख पाऊँ। लै अमृत कदला जियाऊँ ॥

भूसुर दीन असीस, जुग जुग जीउ नरेस बहु।
लोभ न करयौ सरीर, प्रेम काल यौ चाहिये ॥

राजा-वैद्य खंड

कनक कलस अमृत भरि लीन्हाँ। राजा भेष वैद को कीन्हाँ ॥
काम कंदला के घर आवा। पौरि दार सो बात जनावा ॥
सुनि कै बैदु पौरिया जाई। सखियन आगे बात जनाई ॥
सुनि कै बैदु सखी इक आई। मदिर मैं लै गई बुलाई ॥
सुंदर बैद सुमूरति कामा। यह की मूरि जियहि यह वामा ॥

पंडित मीत विदेसिया, सुदर गुनी सु आहि।
सनसुख आवत देखि कै, सखी रही सब चाहि ॥

सखी बहुत कै आदर कीन्हाँ। पाटबर बैठन को दीन्हाँ ॥
जहाँ कंदला मिरतक परी। वैद आनि के नारी धरी ॥
सीतल गात देखि कै नारी। तब कछु बैद करहि उपचारी ॥
बैठि सखी सौं बोलहि गाता। नाहिन स्वास झूठि सनिपाता ॥
नहिन रोग बेदन दिहिं हरई। मिर्तक परा वैद कह करई ॥

स्वर्ग गये तेऊ फिरै, प्रान जिये जम जाल।
ताकौ मत्र न मूरि कछु, डँसै विरह कै ब्याल ॥

सुनहु बैद जौ नारि जिवावहु । मुख माँगौ सोई तुम पावहु ॥
मृतक परयौ जौ बैद जियावहि । सो आपन को ब्रह्म कहावहि ॥
बैद रोग कों औषध करई । ताकौ कहा अचरज नर करई ॥
वचन निरास जब बैद सुनाये । सब के नैन नीर भरि आये ॥
साँचहु मरी कदला नारी । परी खेह महँ खाइ पछारी ॥

गुन सुंदरता चातुरी, जब लगि तब लगि प्रान ।
स्वास गहै इहि अग तें, सब कोइ कहै समान ॥

निरखि बैद जिय आस कराई । जिन कोउ सखी और मरिजाई ॥
कहै बैद जिनि तोरौ वारा । देखौ कछू करौ उपचारा ॥
सकल सखिनु कौ धीरजु दीन्हॉ । अंब्रत वैद हाथ करि लीन्हॉ ॥
जहॉ हती कदला नारी । सींच्यौ अमृत वदन उघारी ॥

अमृत बूंद जब मुख परयौ, आयौ चलि घर स्वास ।
बोली नारी कदला, भई सखी मन आस ॥

प्रगटे प्रान कदला जागी । उघरे नैन चिंता सब भागी ॥
लेत उठी मुख माधौ नामा । पचभूत मै किय विश्रामा ॥
कहै सखिन सौ सखी सुहाई । केती बार नींद मुहि आई ॥
तब यह उतरु दीन्हौ बाला । तूँ तौ मुई विरह के काला ॥
यह विषहर धन्वतरि आयौ । मूर मंत्र पढि तोहि जियायौ ॥

यह हनुमत महाबली, पर स्वारथ चल्यो दूरि ।
लछमण को सकट परयौ, आनि सजीवन मूरि ॥

जब सुख काम कंदला भई । सबरी सखिनि की चिंता गई ॥
तब उठि वैद के चरन पखारे । गये प्रान तुम दये हमारे ॥
कहै वैद हौ दान न लेऊँ । मागै औरु सुमागै देऊँ ॥
जौ जिय लोभ तौ गुनी न कहिये । गुन सकर वैगुन तै रहिये ॥

जौ जिय लोभ तौ गुन कहाँ, जौ गुन लोभ तौ काइ ।
गुन बिन रूपहिं ना गुनौ, गुन बिन पुरिष अपाइ ॥

कहै कदला वैद सुनु मोही। वैद रूप नहि देखौं तोही ॥
कै तुम देउ रूप चलि आये। मुख अमृत दै मोहि जिवाये ॥
मन बच बोलहु अपनी बाता। कहिये साँचु सप्त मैं साता ॥
हौ सकबंधी विक्रम राजा। पर की पीर हरहुँ करि काजा ॥
नगर उजैन राज तहँ करऊँ। दुखिया देखि सकल दुख हरऊँ ॥

माधौनल द्विज कारनै, चलि आयौ इहि देस।
तुम तन मिर्तक देखि कै, कियौ वैद कर बेस ॥

तोहि मरन जब माधव सुनिऊँ। वह मरि गयउ सीस मैं धुनिऊँ ॥
मैं छल रूप दोइ सिर लीन्हाँ। तब उपचार जरन का कीन्हाँ ॥
जरतै सुनि कै वीर वेताला। सो अमृत लायउ ततकाला ॥
प्रथमहि माधौनलहि जियायौ। तिहि पाछे हम तुम घर आयौ ॥
अब सब साजि सैनि लै आऊँ। युद्ध जीति तोहि विप्र मिलाऊँ ॥

उपकारन दुख हरन जे, अगीकरन अभार।
सुरपुर तिहि कीरति करै, जग मैं जस विस्तार ॥

ऐसे बचन जब राजा गहई। उठि चरन कदला गहई ॥
दया निधान तुम रूप मुरारी। राजनि के राजा बुधि भारी ॥
यह संसार समुद्र अथाई। तहँ तुम तारन तरन गुसाई ॥
विरह धाव जे वोपधि करई। ते नर दुहूँ लोक जसु लहई ॥
बूड़त नाव जे पार लगावहिं। ते नर दुहूँ लोक जस पावहिं ॥

बिरला नर पंडित गुनी, बिरला बूझन हार।
दुख खंडन बिरला पुरिष, ते उत्तम संसार ॥

ऐसे चरित तुमहिं पर आवहि। यह वुधि लोक वैद कहँ पावहिं ॥
पर उरकार करहु बलवीरा। बूड़त नाव लगावहु तीरा ॥
कीरति कहिय न जाइ तुम्हारी। धर्म कर्म वलि वीर मुरारी ॥
तुम समर्थ करिहौ सब काजा। हम ससार नरनि के राजा ॥

जो बुधिवंत महाबली, नरसिर जे करतार।
पर उपकार नर दुख हरन, जे अगवत पर भार ॥

कंदला-संदेश खंड

पायन लागौं सुनहु नरेसा। माधौनल सो कहउ सँदेसा॥
गये प्रान लैगये उपाऊ। अब के गये न बहुरै आऊ॥
तुम सन भई विपति की पीरा। जोगी भेष न कीन्हौ फेरा॥
अब विधि मोहि आनि दिखरावो। निरखि विरह की पीर बुझावो॥
पंख होइ जो नैनन माही। छिन एक देखन को उड़ि जाही॥

दृग पुतरिन की तारिका, निरखि मूरती मैन।
तब गुन माला कर लियै, जपौ सु वासर रैन॥

बिति की बात हौ सब मेरी। नृपति कहहु बिनती कर जोरी॥
निसि दिन वहै विरह दव देहा। हीयो तरकत सुनि जिय नेहा॥
करि भर सेज नीद भरि होई। रजनी सकल सिराऊँ रोई॥
निसि दिन अग्नि गात ज्यों जरई। रोम रोम वेदनि सचरई॥
सोचति रहौ निसि वासर जागी। नैम रहै तव मारग लागी॥

जर कपोल औ करन ये, सदा रहत इक सग।
रोइ रकत ये नयन मग, सेत बरन भयो अंग॥

रितु बसत मोहि कोकिल दहई। मलय समीर आगि जिमि बहई॥
पावस रितु बरसै जब मेहा। झुकति मरौ हौ सुमिरि सनेहा॥
चातक मोदनि षरिय सताई। दामिनि दमकि प्रान लै जाई॥
सूर चद्र सीतल सब कहई। मिलि समीर आगि जिमि बहई॥
जे जे सीतल सुखद सहायक। ते सब मोहि भये दुख दायक॥

चंदन चद कँवलन कली, पिक चातक जु समीर।
ये सब वैरी मोहि तन, हौ क्यों राखौ धीर॥

विरह बनावल सीतल रहई। उठत अगिनि नख सिख तन दहई॥
मंजन अजन कौन सिंगारा। सुनत न भावै नाद बिस्तारा॥
माधौनल सो कहौं बुझाई। जौ आपनी विपत्ति जनाई॥
विनवति हौ सकवंधी राई। बिरह द्रिस्टि सौ लेउ बुझाई॥
सौ उपकार करौ जिय माँई। दमवंती ज्यों नलहि मिलाई॥

मालति अस सपति मिलै, पूरन ससिहि चकोर।
चकवी कौ चकवा मिलै, कँवल बिगसि भये भोर॥

त्रिया विरह दुख राजा सुनिहू। देखत सुनत सीस कर धुनिहू॥
कामकदलहि धीरज दीन्हा। राजा जीव कटक पर कीन्हा॥
सखी सकल मिलि देई असीसा। चिरजीव राजा जुग बीसा॥
तुरिय सिगारि भये असवारा। आये कटक न लागी बारा॥
सिघासन पर बैठे जाई। लोक सभा सब लई बुलाई॥

विरह कथा राजा कहै, निरखत बुधिजन लोग।
सुनत सकल सब थकित भे, प्रगट्यो बिरह वियोग॥

राजा कहै गुनौ सब लोई। यह जग ऐसो और न होई॥
इहि की प्रीति इही जग जानी। जग मैं जुग जुग चलै कहानी॥
कलि मैं अमर भयौ यह नेहा। बिरह की अग्नि दहैं जिय देहा॥
पुनि राजा मत्री सौ कहई। सो कछु कहौ कथा निरवहई॥
काम सैनि पहे पठ्यौ वसीठा। बुधिजन चतुर सभा महं डीठा॥

उत्तम बस स्वरूप गुन, बुध विद्या जु प्रवान।
वीर धीर बचननि चतुर, सो पठवहु परधान॥

दूत-खंड

पहिलैं राजा बात जनाई। कामकदला माँगि पठाई॥
जो कछु माँगै दर्वि सु देऊँ। नातर जुद्ध जीति कर लेऊँ॥
रघुवसी इकु श्री पति नाऊँ। पठ्यौ काम सैनि के ठाऊँ॥
चतुर दूत श्री पति चलि गयऊ। राजा द्वार सु ठाढ़ो भयऊ॥

दूत सुनत आगे भए, लेउ बेगि हंकारि।
आदर सो तिहि लैन को, उठि धाये जन चारि॥

आयौ सभा बैठि तिहि ठाऊँ। राजा कीन्हौ आदर भाऊँ॥
राजा दूतहि मुखै लगायौ। कहौ बचन तुम कौन पठायौ॥

बोल्यो दूत सुनौ बलवीरा। हौ पठ्यौ नृप बिक्रम धीरा ॥
सकबंधी बल बिक्रम राई। सो तुम देस पहुँच्यौ आई ॥
माँगत देउ कदलानारी। विप्र काज आयौ बुधि भारी ॥

माधौनल के कारनै, नृप आयौ इहि देस।
कामकंदला विप्र को, माँगै देउ नरेस ॥

काम सैनि राजा तब कहई। रिस करि रूखे बचन न सहई ॥
निठुर बचन कस कहै बसीठा। बोलै और सभा की दीठा ॥
जो तुम कामकंदला देऊँ। सब दानिन मैं अपजस लेऊँ ॥
देस देस के कहैं नरेसा। दीन्हौ दंड बचायौ देसा ॥
जब लग स्वास जीउ भरि लेउँ। तब लग दंड न माँगे देउँ ॥

बल करि आयौ राज अब, सूरबीर सँग लाइ।
मद गयंद दल साजि कै, उठि रन मडौ जाइ ॥

कहै बसीठ राजा सुनि लीजै। येते लघु विग्रह नहि कीजै ॥
देस गुरू राजा चलि आयौ। जाको सीस नरेस नवायौ ॥
आयौ विक्रमचद नरेसा। जा कहँ कपै सुरपति सेसा ॥

हय दल गज दल गवत न, आवै ही औसर विचारि।
दुर्जन हू हँसि उठि मिलह, बोलहि रोस निवारि ॥

रानी कहै बसीठ सुनु बैना। भौह चढ़ाइ रोस करि नैना।
काम सैनि नै पठ्यौ नेगी। कहौ राइ सौ आवै वेगी ॥
लै सदेस बसीठ उठि चलई। गयौ जहाँ नृप विक्रम रहई ॥
कहै बसीठ माँगे नहिं देई। क्रोधवत मनु लै मनुलेई ॥

कहै बसीठ राजा सुनहु, उठि रन मडहु जाइ।
सिह रूप गाजै सुभट, वे मृग चलै पराइ ॥

युद्ध-खड

सुनि राजा तब बोलहि वैना। गयद पैदल साजौ सैना ॥
साजौ मेघबरन गज कारे। चुवहिं गयंद घुमैं मतवारे ॥

पर्वत से आगै दै चलिऊ। धरनी धँसी दिकपति सब हलिऊ॥
धूमर धूलि आन रथ जोती। छूटे सिंह रूप जिव होती॥
जबर जंग गोला जब भारे। अस्टधात साँचै सों ठारे॥

हयदल पयदल गज दल, जोतिहि जोति सुरंग।
सूरबीर बानै बनै, चली चूम चतुरंग॥

दुहूँ दिसि ते उमगे असवारा। लोह लपेटै अगम अपारा॥
कूदहिं बाजी नाना रंगा। नाचैं यौंज्यौं डहडहहिं कुरंगा॥
उतिम जाति पछिम के ताजी। तिहि पर चढ़े सभट सब साजी॥
बाँधे विष करि धनुक कर लीन्है। लाँकहि कूटि सीस पर लीन्हैं॥
साँग सेल फरसा चमकारा। चमकत लोह अगिनि की भारा॥

रन मडन खंडन दवन, आनदै सब सूर।
चलेति चंचल चाउ करी, डरै ठकाइर क्रूर॥

मेघ सबद जिमि बजै निसाना। उठै अकूट अँबर घहराना॥
भरे झाँझ धुनि सुनै अडारू। सूर समूह अरु बाजहिं मारू॥
मारू सब्द सुनहि जिमि बीरा। पुलकत रोम रोम अरु धीरा॥
इक दिसि तै रथ जोरि चलाये। इक दिसि गज ढाढ़े सत भाये॥
बीचहि लैकर पैदल भारा। तिहिं पाछे आवै असवारा॥

सेल सोध कर रंग बिनु, पाये भंडन जूद।
बहुरि सुभट जे सुभट सौ, सिह रूप ह्वै कूद॥

विच बिक्रम हस्ती असवारा। रन अभरन सब पहिरै सारा॥
जामन चलत सेत सिर दती। स्याम ' घटा मानहु बगपती॥
घंटक धुनि दिगपति थरहरई। कर तजारत इद्रासन डरई॥
चहुँ दिसि वीर परवरिया चले। दोनों जूझ इहूँ विधि भले॥
मुंड कूट सूरन के सीने। गज सिपाह आँगे करि लीने॥

सिहनि ऐसो पूत जनि, पर रन मंडहि जाइ।
कुंभ पिदारन गज दलन, अब रन मडै जाइ॥

जुद्ध राग प्रगटी सुनि काना । कामावति पुर सुन्यौ निसाना ॥
परी रोइ नगरी उकताइ । प्रजा पवन सब चले पराइ ॥
कामसैनि राजा तब बोला । चहुँ दिसि देहु जुद्ध कहँ ढोला ॥
ततखन सूर समिटि सब आये । करि सकूट चहूँ दिसि धाये ॥
अब राजा आग्यॉ जौ देई । सब रन जाइ आगे ह्वै लेई ॥

जौ जगपतिहूँ को सूनिय, मृग गन षुटि सब जाइँ ।
सो हरजन की धाक सुनि, रहे न मदिर मॉहि ॥

थके साज साजैं रजपूता । दुर्जन को लागै ह्वै भूता ॥
तूँ वर चढ़े कै वानै । मिलि औ चले राव सव रानै ॥
काम सैनि राजा दल साजा । चले लरन मारू जब बाजा ॥
चले बजाइ राव औ वानी । चढ़ी धौरहर देखति रानी ॥

अचरज सूरमा देखि कै, वली अनद करेइ ।
दुहुँ बिधि मॉग सिदुर भरि, हाथ नारियर लेइ ॥

इत तैं कामसैनि चढि गयौ । राजा बिक्रम सनमुख भयौ ॥
एक खेत जब दो दल भये । एक एक सों सनमुख भयो ॥
हिसहि तुरग चिकारैं हाथी । सोभै हक हक मिलि साथी ॥
दुहुँ दिसि युद्ध राज मल बाजा । कायर डरैं सूरमा गाजा ॥
वान वाधिजु बिरद सुगावहि । सुनि सुनि सुभट उमगि करि आवहि ॥

सुनि मारू कौ राग, भुज फरकैं रन बीर के ।
युद्ध जाइ मन लाइ, 'मारु' 'मारु' मुख उच्चरैं ॥

अगिन बान छुटैं दुहुँ ओरा । चकित विजुकित हाथी घोड़ा ॥
धुनुषहि धनुष वीर जो नाहा । अटकें पंच बान सौ काहा ॥
चलै चक्र जो लै हथि नाला । पसरहि धूम होइ अँधकाला ॥
छिन इक धनुष बान सौ लरईं । हमकन बाहिर षग मँह परईं ॥
भीर बान ते सहै न पारैं । दुहुँ दिसि तुरी भीरन को मारैं ॥

सूर गरजि काइर डरहि, सुनि गज सिह सदूर ।
षड्ग खोल तै जानियै, कोइ कायर कोइ सूर ॥

रावत पर रावत चढि धाये। धानष पर धानष चढि आये ॥
पाइक सौ पाइक भये जोरा। लरत वार यौ मुष नहिं मोरा ॥
गज सौ गज कीन्हे चौ दंता। चिकरैं कुंजर मैमत मंता ॥
बाजै लोह उठै टंकारा। तापर फिरैं खड्ग की धारा ॥
फूटैं फूट मुड कटि जाही। बाजैं सार सार छुन जाहीं ॥

सेज खड्ग नेजै सहैं, खाँय खड्म की मार।
सूर वीर पैते गनौ, सहैं लोह की मार ॥

रावत सो रावत जो भिरई। एकहि मारि एक पग धरई ॥
हाँकै सूर सूर सौ भिरही। घायल भूमि एक गिरि परही ॥
मारै खड्ग उतरि गये मुंडा। फिरै राति धरती पर रुंडा ॥
सूर जूझि धर तेजे परही। रंडौ मार मार उच्चरही ॥

कर न करै विस्राम, घाव जे सन्मुख सहि सकहि।
जे जूझै संग्राम, ते अपछर वर ह्वै रहहिं ॥

सकर मुंड वीनि करि लीन्हे। गूँथि गूँथि कर माला कीन्हे ॥
सन्मुख होइ जो देइ पराना। तिन कहँ स्वर्ग ते आवैं बिमाना ॥
सग निसगनि करै उबारा। दुहुँ दिसि चलै रुधिर की धारा ॥
परहि खड्ग टूटैं तरवारा। तब कर काढ़ी कमर कटारा ॥
सुभट वीर खोलि कै लरही। दोनौ आनि भूमि महँ परही ॥

गमि मारै सनमुख लरैं, जे मारहि तजि छोह।
लोभी सूर लहरि मरैं, जो अपछर बरनै मोहि ॥

कपै सूर वीर ते भारी। गज कपै सहि सकैं कटारी ॥
लागै खड्ग गिरहि ते दंता। टूटे सुँड रोवै मैमंता ॥
टूटै मुंड होइ मुख भगा। पर्वत से जनु परे भुवगा ॥
गन गयद रन जहँ तहँ परे। जनु धरनी मह पर्वत डरे ॥
लरि लरि सकल थमित ह्वै दरैं। इक जूझै रन कानि न करै ॥

सिंहनि ऐसो पूत जनि, सिह बिदारन जोग।
धर सूरा रन भागना, जिन न हँसैये लोग ॥

बोलै घाव 'मारू' उच्चरही। जहँ तहँ रकत के नारे ढरही॥
फूटे मुड चलै रन लोहुव। सुभटै सुभय फिरै जन कुहुरुव॥
जोगिनी फिरै भूतनी साना। बैठि करै लोहुअ कर पाना॥
भिरहि धाइ लोथि लै जाही। लोहू पियै मासु मिलि खाही॥
जोवब जाल करालै करोलै। लोथहि काटि सरो महि बोलै॥

जोगनि फोरै खोपरी, जबुक भखै जु मास।
सूरन की गति देखि कै, सूरज होई उदास॥

लोहू भरे छूटै सिर वारा। सूते सूर वीर बिकरारा॥
सुन्यौ सरन उमड़े ते भलै। दहनै चुवहिं रुधिर के चलै॥
चिहुरो हाथ आव नहिं मेरै। गुन ज्यो सिह देखि डहि मरै॥
कहूँ कहूँ गावैं बरचा लै कोऊ। कहूँ दौर रागन गुन दोऊ॥

पर दल खडहि लरि मरै, खाय जु सन्मुख धाव।
स्वामी सँग ते ना तजै, छत्री कुलहि सुभाव॥

पहर चारि लौ विग्रह भयऊ। दुहुँ दिसि लोग जूझि सब गयऊ॥
सुभट सूर विक्रम के बाँचे। जूझे सुभट सूरमा साँचे॥
कामसैनि सब सैनि जुझाई। जूझि गिरे सब रावत राई॥
जूझे सुभट जे चढ़े बिवाना। गेये सकल रवि के अस्थाना॥
स्वामि काज जे कटि कटि मरही। ते सब सूर अप्सरा बरही॥

जूझंता सूरा भलै, घाव जै सन्मुख खाँहि।
जीवत मैं मुख भागही, मरै त सुरपुर जाँहि॥

माधव-कंदला मिलन खंड

कामसैनि राजा जो हारा। जाइ मिल्यो तजि के हथियारा॥
हाथ जोरि के सनमुख आयो। विक्रम आगे सीस नवायौ॥
सुनहुं राज मैं दीन्ह्यौ देसा। सक्रबधी पर हरौ कलेसा॥
चढ़तै थहराई सिर सेसा। विक्रम जा दिन करै प्रवेसा॥

कामसैनि जब मिल्यौ जु जाई। फिरि पछितानौ सैन जुझाई॥
मिलकरि राज नगर महँ चला। दीनी आनि कामकंदला॥
मिली कंदला बहु सुख पावा। राजा माधौनलहि बुलावा॥

कलि महँ विरह वियोगिनी, भरि भरि लेहि उसास।
सीसु ठगौरी भोर भय, कीनौ सूर प्रकास॥

माधौनल औ कंदला मिलेउ। मिलि बिरही दोनौ दुख दलिऊ॥
मिलि कै अधिक सुक्ख तिनि पावा। दुउ सँताप लै गग बहावा॥
मिल्यौ सोइ भावत भावती। राजा नल रानी दमयती॥
मिले भरथरी अरु पिगला। माधौनल औ कामकदला॥
पूरन ससि जिमि दुखित चकोरा। कुमुदिन चक्रवाक जिमि मोरा॥
नित प्रति केलि करहि सुख रहहीं। दिन दिन प्रीत अधिक मन करहीं॥

भावता जा दिन मिलै, ता दिन होइ अनंद।
संपति हिएं हुलास अति, कटि विरहा दुख फद॥

माधौ कामकंदला मिलाई। पुनि राजा उज्जैनै जाई॥
संग विप्र माधौनल लीन्हा। जिहि कारन इतनौ जस कीन्हां॥
राजा नगर उज्जैनै गयऊ। तबही अंत कथा कर भयऊ॥
माधो कामकंदला नारी। जानौ त्रिधि रचि दई सँवारी॥

अपनौ सुख तजि दुख लहैं, पर दुख खडन जाइ।
वार निबाहै एक सम, धनि सकबधी राइ॥

कथा चौपही आलम कीन्ही। पहिले कथा स्रवन सुनि लीन्हीं॥
कहुँ कहुँ बीच दोहरा परै। कहू आनि सोरठा धरै॥
सुनत स्रवन यह कथा सुहाई। आत रसाल पडित मन भाई॥
प्रीतिवत है सुनै सो कोई। बाढै प्रीति हिए सुख होई॥
कामी पुरिष रसिक जे सुनही। ते या कथा रैनि दिन सुनहीं॥

पंडित बुधिवंता गुनी, कविजन अच्छर टेक।
नाम नमित गुन उच्चरहि, कहि कहि कथा अनेक॥

———

नूर मुहम्मद

जीवनवृत्त

इंद्रावती का केवल पहला भाग काशी नागरी-प्रचारिणी-सभा से प्रकाशित हुआ है। इसका दूसरा भाग अभी तक प्रकाशित नहीं हो सका है अतः इसकी कहानी अभी तक अधूरी ही प्राप्त हो सकी है, जिससे पूरी कहानी का अटकल लगाना कठिन है। पहले भाग मे जो अंश सुंदर जान पड़े वह इस संग्रह मे ले लिये गये है। हाँ, कथा का रचना काल आदि का पता प्रथम भाग से ही चल जाता है।

इसके रचयिता नूरमुहम्मद अपना जन्मस्थान पूरब में 'सबरहद' नामक एक स्थान बताते है।

निवास-स्थान

कबि अस्थान कीन्ह जेहि ठाऊँ। सो वह ठाऊँ सबरहद नाऊँ॥
पूरब दिस कइलास समाना। अहै नसीरुद्दी को थाना॥

पूर्व दिशा मे कैलास के समान रम्य यह 'सबरहद' नामक स्थान कहाँ है इसका पता गजेटियर आदि से भी नहीं चलता। यह कोई मामूली गाँव या क़स्बा होगा जो अभी तक कोई प्रसिद्धि नहीं पा सका। श्री चंद्रबली पाडे ने इस स्थान को जौनपुर जिले में शाहगंज बतलाया है। पांडेजी के मतानुसार वे अंतिम दिनों मे अपनी सुसराल मादौ (फूलपुर आजमगढ़) मे रहने लगे थे। 'अनुराग बाँसुरी' में उन्होंने अपना उपनाम 'कामयाब' लिखा है। 'इंद्रावती' और 'अनुराग बाँसुरी' के अतिरिक्त 'फेर कहा नलदमन कहानी' के अनुसार इनकी एक रचना 'नलदमन' भी है।

यह एक तरुण कवि की रचना है। कवि स्पष्ट कहता है कि मैंने तरुणाई की अवस्था में इसकी रचना की है। मेरा लड़कपन अभी नही छूटा है, मेरी बुद्धि अभी अपरिपक्व है। मै तो खेल खेलना जानता हूँ 'पोथी कहना' मै नहीं जानता अतः विद्यावयोवृद्ध गुरुजन मेरी रचना देख

कवि का दैन्य

कृपया नाक भौं न सिकोड़ें। मैने तो भूतपूर्व कवियों के खेतों से बालें चुनकर एक बड़ा सा खलिहान खड़ा करने का प्रयास मात्र किया है। मेरी अपनी पूँजी बहुत परिमित है, इत्यादि—

कवि है नूर मुहम्मद नाऊँ। मैं पछलग सब को जग ढाऊँ ॥
चुनि कविजन खेतन सों बाला। करै चहत खलिहान बिसाला ॥
है कवि समै नई तरुनाई। छूट न अबहीं कवि लरिकाई ॥
जाके हिए लरिक बुधि होई। बहुतै चूक कहत है सोई ॥
विनवत कवि जन कहँ कर जोरी। है थोरी बुधि पूँजिय मोरी ॥
चूका देखि सँभारिकै, जोरेहु अच्छर टूट।
दाया कर मोहि दीन पर, दोस न लायहु कूट ॥
हौं हीना विद्या बुधि सेती। गरब गुमान करौ केहि सेती ॥
हौं मैं लरिकाई को चेला। कहौ न पोथी खेलहुँ खेला ॥
गुरुजन सों यह बिनती मोरी। कोप न मानहिं भौंह सिकोरी ॥

विनयशीलता मे यह कवि उसमान से भी बाजी मार ले जाता है। पर जो भी हो, एक नवयुवक कवि की कविता मे यौवन की स्फूर्ति और उमग का होना स्वाभाविक है, जिसका परिचय हमे बराबर इस काव्य मे मिलता है।

कवि ने अपनी वंशावली या गुरु परपरा का वर्णन नहीं किया है। स्तुति के रूप मे इन्होंने 'सिरजनहार' ईश्वर का स्मरण किया है और उसके बाद अपने 'अरबी' नबी मुहम्मद साहब का स्मरण किया है। 'अपने कुल की रीति' का पालन करने के ये कायल थे। ये कहते है—

है मगु बहुत जगत महँ, तिन मगु की नहि चाव।
आपन पथ देखावहु, राखौ तापर पॉव ॥
सुमिरौ चेत धरे मन ढाऊँ। अरबी नबी मुहम्मद नाऊँ ॥
जो कहँ करता दरस देखाएउ। कै किरपा सब भेद बताएउ ॥

ये अंतिम मुगल सम्राट मुहम्मद शाह के समकालीन थे और पैग़बर की स्तुति के बाद ही इन्होंने शाह की प्रशंसा की है—

रचना-काल

करौं मुहम्मद साह बखानूँ। है सूरज दिल्ली सुलतानूँ ॥
धरम पथ जग बीच चलावा। निवरन सबरै सौ दुख पावा ॥
पहिरे सलातीन जग केरे। आये सुहँस बने हैं चेरे ॥
इहै साह नित धरम बढ़ावे। जेहि पहराँ मानुस सुख पावै ॥
सब काहू पर दाया करई। धरम सहित सुलतानी करई ॥

कला प्रेमी, कवि तथा निपुण संगीतज्ञ मुहम्मद शाह उपनाम "रँगीले" का नाम अब भी प्राचीन परिपाटी के गायकों तथा शायरों की जबान पर रहता है। इनका जीवन ही संगीत-साहित्यमय था। इनके रचे हुए सैकडों ख्याल अस्थायी अब भी गवैयों को याद है। ऐसी अवस्था मे कोई आश्चर्य नही कि सुदूर पूर्व सबरहद निवासी नूर मुहम्मद तक इनसे प्रभावित हुए हों। अस्तु

अपने ग्रंथ का रचना काल नूर मुहम्मद ने सन् ११५७ हिजरी (संवत् १८०१) दिया है—

सन इग्यारह सौ रहेउ, सत्तावन उपनाह।
कहै लगेउ पोथी तबै, पाय तपी कर बाँह ॥

इस हिसाब से इनकी रचना उसमान १०२२ हिजरी से १३५ वर्ष और जायसी ९४७ हि० से २१० वर्ष बाद की ठहरती है। पंडित रामचंद्र शुक्ल के हिंदी साहित्य के इतिहास मे कहा गया है कि 'इस ग्रंथ' (इंद्रावती) को सूफी पद्धति का अंतिम ग्रंथ मानना चाहिए। पर तब तक शायद शेख निसार का पता नही लग सका था। यह इनके बाद के है और अभी तक इनकी रचनाएँ अप्रकाशित रही है। हो सकता है कि इनके 'सूफी पद्धति' के कवि होने मे मतभेद हो। पर इतना निश्चय है कि 'यूसुफ-जुलेखा' सोलहो आने प्रेम-गाथा काव्य है और इनके सभी ढंग 'पद्मावत' आदि के समान है। सूफी ढंग के रहस्यवाद का दृष्टि-कोण कुछ कवियों के सामने कम रहा है और कुछ के सामने अधिक। आलम और निसार (मुख्यतः आलम) अपेक्षाकृत यथार्थवादी कवि हुए हैं। और निसार का कथानक अपना आदर्श भारतीय परंपरा की

अपेक्षा ईरानी संस्कृति से अधिक लेता है। जो हो, उक्त तिथि से नूर मुहम्मद की जन्म तथा निधन तिथि का अटकल लगाना असंभव है। सिवाय 'इंद्रावती' के इनके रचे हुए अन्य किसी ग्रंथ का पता अभी तक नही चल सका है।

आलोचना

उसमान की भाँति इनकी कथा भी पूर्णतः काल्पनिक प्रतीत होती है[1]। उधर उसमान कहते है 'कथा एक मैं हिए उपाई, और इधर नूरमुहम्मद को स्वप्न मे इसकी प्रेरणा मिली !

कथा का रूप

एक रात सपना मैं देखा। सिधु तीर वह तपिय सरेखा॥
अहै ठाढ़ मोहि लीन्ह बुलाई। कहेसि कि सिधु में बूड़हु भाई॥
त्रसा छोड़ पोढा कै हीया। मोती काढ़हु होइ मरजीया॥
ससि मोती को हार सँवारहु। इदावति की गोद महँ डारहु॥
लै मोती दोउ हाथन माहाँ। फारू रतन सीर उपराहाँ॥
तेहि पल तपसी दरस देखाएउ। मोहि सग एहिबात सुनाएउ॥
राज कुँवर रानी इद्रावती। हैं रवि कमल औ भँवर मालती॥
चुनि परसुन दुइ हार सँवारहु। तिनके ग्रीव बीच लै डारहु॥

अज्ञा मान तपी कर, चलेउ जहाँ फुलवार।
खुला न पायउँ द्वार को, मालिहि दिएउँ पुकार॥

माली कहा जएत सन होई। कोहु फूल नहि बरजित कोई॥
तन पलुहा बारी की नाँई। भन भा फुलवारी तेहि ठाईं॥

किरपा सौं बारी मँह, माली दीना साथ।
आडे कीउ न आएउ, भै फुलवारी हाथ॥

---

[1] चूंकि कथा अधूरी है और कोई ऐतिहासिक आधार नहीं है अतः इसका संक्षेप देना व्यर्थ समझा गया। हाँ संगृहीत अंश इस ढग से रखे गये हैं कि कथा का संबंध लगता चला जायगा।

स्पष्ट है कि नूर मुहम्मद को स्वप्न में किसी तपस्वी द्वारा इस कथा की अंतःप्रेरणा मिली और माली गुरु ने रास्ता दिखाया। कवि का हृदय ही एक फुलवारी है। और वहीं माला गूँथने की सामग्री मिल जाती है। यदि माली द्वार खोल देता है तो दर-दर भटकने की जरूरत नहीं है।

फिर कहते है मन ही समुद्र है और उसमें गहरा गोता लगाने से ही मुक्तावत् कवि-वचन-सुधा की प्राप्त हो सकती है और उन्हीं मोतियों से दोहा चौपाई की शकल में हार गूँथे जा सकते है।

फिर इनके हृदय ने कहा कि दो हार बनाकर एक राजकुँवर के और एक इंद्रावती के गले मे पहिनावो।

कथा की उपज के सबंध मे कवि के इन प्रवचनों से उसका रहस्य-वादी दृष्टिकोण स्पष्ट हो जाता है। कालिंजर नाम अवश्य ऐतिहासिक है (यहाँ का किला देश-प्रसिद्ध है) पर पात्र कल्पित है, जैसा कि नाम ही से प्रगट है। राजा का नाम 'भूपति'; राजकुमार का नाम 'राजकुँवर'; और यह नाम ज्योतिपियों ने बहुत विचार तथा गणना के बाद तय किया।

राजें पडित बेगि हँकारेउ। पडित आइ सुजनम विचारेउ॥
कहा पुत्र के हीयरे, बाढै प्रेम वियोग।
रूप एक पर रीझै, वेहि नित साधै योग॥
'राजकुँवर' तेहि राखा नाऊँ। जनम नछत्र घड़ी के भाऊँ॥

खैर, कालिंजर के इन्हीं राजकुँवर का प्रेम आगमपुर[1] की राज-कुमारी से होता है; स्वप्न-दर्शन विधि के अनुसार। फिर नाना प्रकार की चौरासी भोगते हुए (वही जोगी खंड, सुवा खंड, युद्ध खंड आदि होते हुए) अत में इनका मिलन होता है।

आगमपुर इंद्रावती कुवर कलिंजर राय।
प्रेम हुतें दोउन्ह कहँ, दीन्हा अलख मिलाय॥

---

[1]यह नाम भी काल्पनिक है, ऐतिहासिक नहीं।

यहाँ पर 'अलख' शब्द ध्यान देने योग्य है। 'अलख' 'निरजन' 'माया' आदि नाथपंथियों और फिर कबीर, दादू आदि संतों की बोली में ही ज्यादातर आते हैं; और सूफ़ी कवि भी इनकी विचारधारा से काफी प्रभावित हैं। फिर इस संबंध मे कवि के निम्नलिखित प्रवचन भी ध्यान देने योग्य हैं—

आपुहु भोग रूप धरि, जग मो मानत भोग।
आपुहि जोगी भेस होइ, निस-दिन साधत जोग ॥

अलख प्रेम कारन जग कीन्हा। धन जो सीस प्रेम महँ दीन्हा ॥
जाना जेहिक प्रेम महे हीया। मरै न कबहूँ सो मर जीया ॥
प्रेम खेत है यह दुनियाई। प्रेमी पुरुष करत बोवाई ॥
जीवन जाग प्रेम को अहई। सोवन मीच वो प्रेमी कहई ॥
आग तपन जल चाल समूझो। पुनि टिका मॉटी कहँ बूझो ॥

इन पंक्तियों से स्पष्ट है कि कवि नाथपथियों या संतों के एकेश्वरवाद को मानता हुआ भी प्रेम को प्रधानता देता है। और प्रेम ही उसका मार्ग तथा ध्येय दोनों एक साथ था। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि सूफी दृष्टिकोण के रहस्यवाद मे एक साथ ही कबीर और ख़ैयाम के रहस्यवाद का कितना मधुर सम्मिश्रण है।

प्रबन्ध शैली

इन्होने भी प्रबन्ध रचना जायसी और उसमान के ढंग पर ही की है। खंड विभाग और कथा का विकास प्रायः समान है। भाषा की प्रौढ़ता उसमान से घट कर है। नव-युवक कवि की रचना तो है ही। ढाँचे मे एक खास फर्क है कि इन्होंने पाँच-पाँच चौपाई के बाद दोहा बैठाया है, और जायसी आदि ने सात-सात के बाद। हाँ निसार ने नौ चौपाई का क्रम रक्खा है, और इन्होंने (निसार ने) दोहा चौपाई के सिवा सोरठा, कवित्त सवैया आदि अन्य छंदों का भी यथास्थान उपयोग किया है और उन स्थानों पर इनकी भाषा में व्रज भाषा की छटा आये बिना नही रह सकी है।

भाषा

नूर मुहम्मद की भाषा शुद्ध अवधी है और उसमान की भाँति परिमार्जित नही है। ठेठ और ग्रामीण प्रयोग बहुत आये हैं। इन्होंने कहा भी तो है कि 'पोथी कहना' मेरा काम नहीं; मैने तो खेल-खेल मे यह कथा लिख डाली है।

इंद्रावती

स्तुति खंड

धन्य आप जग सिरजन हारा। जिन बिन खम्भ अकास सँवारा॥
होऊ जग को आपुहि राजा। राज दोऊ जग को तोहि छाजा॥
दीन्हा नैन पथ पहिचानों। दीन्हा रसना ताहि बखानों॥
बात सुनै कहँ सरवन दीन्हा। दीन्ही बुद्धि ज्ञान तेहि चीन्हा॥
गगन कि सोभा कीन्हे सितारा। धरती सोभा मनुष सँवारा॥

आप गुपुत औ परगट, आप आद औ अंत।
आप सुनै औ देखै, कीन्ह मनुष बुधवत॥

अहइ अकेल सो सिरजन हारा। जानत परगट गुपुत हमारा॥
कीन्ह गगन रवि ससि महि मेरा। कोउ नाही जोरी तेही केरा॥
कीन्हा राति मिले सुख तासों। कीन्हा दिन कारज है जासो॥
धन सो महि पर भेजत नीरा। पलुअत सूखी भूमि सरीरा॥
सब बिलाय जाइहि एक बारा। रहै तेहिक मुख रवि उँजियारा॥

है स्रोता औ दिष्टा, तेहि सम कोउ न आहि।
जो कुछ है महि गगन महँ, सब सुमिरत है ताहि॥

अरे दोऊ जग के करतारा। कित कै सकउँ बखान तुम्हारा॥
रसना होइ रोम सब मोहीं। तबहूँ बरन न पारउँ तोही॥
है अपार सागर भौ केरा। मोहि करनी को नाव न बेरा॥
कै किरपा मोहि पार उतारो। दया दृष्टि मोहि ऊपर डारो॥
है हमकहँ आलम्म तुम्हारी। तोहि दाया सो मुकुत हमारी॥

है मगु बहुत जगत्त महँ, तिन मगु की नहिं चाव।
आपन पंथ देखावहु, राखौ तापर पाँव॥

सुमिरों चेत धरें मन ठाऊँ। अरबी नबी मुहम्मद नाऊँ॥
जा कहँ करता दरस देखाएउ। कै किरपा सब भेद बताएउ॥
जेहिक बखान अहै लौ लाका। ताहि बखानत दोउ जग थाका॥

चार यार चारिउ जस तारे। दीन गगन ऊपर उँजियारे॥
अबूबकर औ उमर बखानौ। उस्माँ बहुरि अली कँह जानौ॥
अहदहुते अहमद भएउ, एक जोत दुइ नाउँ।
भएउ जगत के कारने, परेउ मोहम्मद नाउँ॥
कहौ मोहम्मद साह बखानूँ। है सूरज दिहली सुलतानूँ॥
धरम पंथ जग बीच चलावा। निबरन सबरै सौ दुख पावा॥
पहिरें सलातीनु जग केरे। आए सुहाँस बने है चेरे॥
उहै साह नित धरम बढ़ावै। जेहि पहराँ मानुष सुख पावै॥
सब काहू पर दाया धरई। धरम सहित सुलतानी करई॥
धरम भलो सुलतान कहँ, धरम करै जो साह।
सुख पावै मानुष सबै, सबको होइ निबाह॥
कवि अस्थान कीन्ह जेहि ठाऊँ। सो वह ठाऊँ सबरहद नाऊँ॥
पूरब दिस कइलास समाना। अहै नसीरुद्दी को थाना॥
है भल जग महँ पथिक रहना। लेहु इहाँ सों आगम लहना॥
जग औ आपुहि कस पहिचानो। तरिवर और बटोहिय जानों॥
चला जात जस होइ बटोही। आह छँहाइ विरिछ तर वोही॥
जबा जुड़ाई तरिवर तर, धरे पंथ पर पाँव।
बास हमार जगत महँ, बूझो तेही सुभाव॥
आज रहन यह चाँद न ऊआ। आनन्द हरन जगत कर हूआ॥
साह करबला को दुख सोगू। समुझि समुझि रोवै सब लोगू॥
रोएउ गगन सेंदुरी नाही। रकत आँस है मुख उपराही॥
रोवैं बादशाह जग साईं। हम ना रहे करबला ठाईं॥
देतेउँ सीस दीनपति कारन। करतेउँ जिउ तन मन सब वारन॥
रोवै अच्छर सीस धुनि, सल्स सविल भाखार।
आज छिपान जगत रवि, जगत भएउ अँधियार॥
वावैला प्यासा गा मारा। आल रसूल वतूल पियारा॥
उठा चहूँ दिस तें वावैला। महि सिर परेउ सोग को सैला॥

पहिरेउ गगन मातमी बागा। परेउ चंद के हियरें दागा ॥
औ ससि कहुँ दुख राहु गराहा। सूरज कहँ उपनेउ उर दाहा ॥
इनके बीच हसन का प्यारा। सेहरा लीन्ह रकत के धारा ॥

नूर मोहम्मद जीभ तें, कहे न मातम होइ।
जिग्र सों कहूँ मातम कथा, मन आँखिन सो रोइ ॥

मन इगसो एक रात मझारा। सूझि परा मोहिं सब संसारा ॥
देखेउँ एक नीक फुलवारी। देखेउँ तहाँ पुरुष अउ नारी ॥
दोउ मुख सोभा बरनि न जाई। चद सुरुज उतरेउ भुई आई ॥
तपी एक देखेउँ तेहि ठाऊँ। पूछेउँ तासों तिन कर नाऊँ ॥
कहा अहैं राजा अउ रानी। इद्रावति औ कुँवर गेयानी ॥

आगमपुर इंद्रावती, कुँवर कलिंजर राय।
प्रेम हुते दोऊ कहँ, दीन्हा अलख मिलाय ॥

सरब कहानी दीन्ह सुनाई। कहा दया सेती हो भाई ॥
इंद्रावति औ कुँवर कहानी। कहु भाषा मों हो कवि ज्ञानी ॥
गाढ़ी गाँठ परै जहाँ तोही। छुटि जाय सुमिरेहु तुम मोहीं ॥
आज्ञा दीन्हा तपिय सेयाना। मन जिउ सो आज्ञा मैं माना ॥
होत भोर लिखनी मैं लीन्हा। कहै लिखै ऊपर चित दीन्हा ॥

सन इगयारह सौ रहेउ, सत्तावन उपराह।
कहे लगेउ पोथी तबै, पाय तपी कर बाँह ॥

कवि है नूर मोहम्मद नाऊँ। है पछलग सब को जग ठाऊँ ॥
चुनि कविजन खेतन सों बाला। करै चहत खरिहान बिसाला ॥
है कवि समै नई तरुनाई। छूट न अबहीं कवि लरिकाई ॥
जाके हिए लरिक बुधि होई। बहुतै चूक कहत है सोई ॥
बिनवत कविजन कहँ कर जोरी। है थोरी बुधि पूँजिय मोरी ॥

चूका देखि सम्हारि के, जोरेहु अच्छर टूट।
दाया कर मोहि दीन पर, दोस न लाएहु कूट ॥

हौ हीना बिद्या बुधि सेती। गरब गुमान करौ केहि नेतीं ॥
हौ मैं लरिकाई को चेला। कहौ न पोथी खेलउँ खेला ॥
गुरुजन सों यह बिनतिय मोरी। कोप न मानहिं भौंह सिकोरी ॥
दोस बहुत खेलत महँ होई। दाया करेहु न कोपेहु कोई ॥
दोस करै जो छोटा आही। मया करै गुरजन कहँ चाही ॥
मोहि विवेक कछु नाही, नहि विद्या बल आहि।
खेलत हौ यह खेल एक, दिष्टा देइ निबाहि ॥
एक रात सपना मैं देखा। सिधु तीर वह तपिय सरेखा ॥
अहै ठाढ़ मोहि लीन्ह बुलाई। कहेसि कि सिंधु में बूड़हु भाई ॥
असा छाड़ पोढ़ा कै हीया। मोती काढ़हु होइ मरजीया ॥
ससि गोती को हार सँवारहु। इंद्रावति की गीउ महँ डारहु ॥
लै मोती दोउ हाथन माहाँ। झारू रतन सीर उपराहाँ ॥
अस सपना मैं देखेउँ, जागि उठेउँ अकुलाइ।
बहुत बूझ सचारेउँ, सपन न बूझा जाइ ॥
चित औ चेत बहुत मैं धरा। तब वह सपन बूझि मोहिं परा ॥
सिंधु समा मन को पहिचानेउँ। मोती समा बचन कहँ जानेउँ ॥
हार गुहन बूझेउँ चउपाई। रतन ग्रीव कहँ रतन बड़ाई ॥
मनुष सुबचन कहे सों लहई। बचन सरस मोती सों अहई ॥
बचन एक करतार निसारा। भा तेहि बचन हुते ससारा ॥
बचन हँसावै मनुष्य कहँ, बचन रोवावै ताहि।
बचनहु तें यह जगत मों, कीरत परगट आहि ॥
है मन फुलवारी हो भाई। फूल समाँ यह बचन सोहाई ॥
बचन अरथ है वास समाना। कवि स्रोता है भँवर सयाना ॥
अचरज ऐस फूल पर अहई। बारी माँह कली नित रहई ॥
जब वह फूल तजत फुलवारी। विकसत वास देत अधिकारी ॥
जुगजुग रहत न तनु कुम्हिलाई। दिन दिन बास बढ़त अधिकाई ॥
मन चाहत सों अस पुहुप, आज चुनौ भरि गोद।
हार गूँथि के पहिरेउँ, मनमों बाढै मोद ॥

हिया कहा दुइ हार सँवारहु। रवि औ कमल गले महँ डारहु ॥
बुद्धि कहा दुइ हार बनावहु। मालति मधुकर कहँ पहिरावहु ॥
तेहि पल तपसी दरस देखाएउ। मोहि संग एहि बात सुनाएउ ॥
राजकुँअर रानी इंद्रावती। हैं रवि कमल औ भँवर मालती ॥
चुनि परसुन दुइ हार सँवारहु। तिनके ग्रीवँ बीच लै डारहु ॥
आज्ञा मान तपी कर, चलेउँ जहाँ फुलवार।
खुला न पायउँ द्वार को, मालिहि दिएउँ पुकार ॥
आएउ माली सुनत पुकारा। खोलेउ फुलवारी का द्वारा ॥
पैठेउँ फुलवारी महँ जाई। रहसेउँ देखत फूल निकाई ॥
तन पलुहा बारी की नाईं। मन भा फुलवारी तेहि ठाईं ॥
माली कहा जएत मन होई। लेहु फूल नहिं बरजत कोई ॥
जब आज्ञा मालिहि सों पाएउँ। तब मैं फूल चुनै पर आएउँ ॥
किरपा सों बारी महँ, माली दीन्हा साथ।
आडे कोउ न आएउ, भै फुलवारी हाथ ॥
रहत न आगर रूप छिपाना। आपुहि परगट करै निदाना ॥
जो रस रूप सों बाँधहु द्वारा। जाइ झरोखे चितवै प्यारा ॥
सिरजनहार छिपा ना रहा। आपुहि फेर चिन्हावै चहा ॥
तब यह जग करतार सँवारा। चीन्ह पडा वह सिरजन हारा ॥
मानुष फूल सुरस सी नाऊँ। घरि घरि भा परगट सब ठाऊँ ॥
आपुहि भोगि रूप धरि, जगमो मानत भोग।
आपुहि जोगी भेस होइ, निस दिन साधत जोग ॥
अलख प्रेम कारन जग कीन्हा। धन जो सीस प्रेम महँ दीन्हा ॥
जाना जेहिक प्रेम महँ हीया। मरै न कबहूँ सो मर जीया ॥
प्रेम खेत है यह दुनियाईं। प्रेमी पुरुष करत बोवाईं ॥
जीवन जाग प्रेम को कहईं। सोवन मीचु वो प्रेमी कहईं ॥
आग तपन जल चाल समूझो। पुनि टिकान माँटी कहँ बूझो ॥
हौ प्रेमी है प्रेम को, चंचलताइ बाय।
जा मन जामाँ प्रेम रस, भा दोउ जग को राय ॥

कुँअर स्वप्न खंड

एक रात महँ कुंअर सरेखा। सपन बीच दर्पन एक देखा ॥
रहा अमल दरपन उजियारा। जिउ मुख को निरखावन हारा ॥
दरपन मों एक सुंदर नारी। देखहु चदहु ते उँजियारी ॥
रही तइस सुंदर जस चही। दरपन देह बीच जिउ रही ॥
रही न तेहि संग सखिय सहेली। रहिउ मुकुर महँ आप अकेली ॥
ससि बदनी मनु रबि रही, रहा मुकुर जिमि धूप।
तेहि रुपवन्ती रूप सो, दरपन पाएउ रूप ॥

जागा भोर कुअर वहँ पावा। सपन चित मों देवस गँवावा ॥
दुसर रात कस्तूरीय झारा। तासों सुगँध कीन्ह संसारा ॥
तेहि त्रिजमा राय सरेखा। पहिली रात कि मूरत देखा ॥
रहेउ न मूरत दरपन माही। दरपन बहुत रहे अगुवाही ॥
कालिंजरी निर्प नर नाहा। तासो बदन देखा सप माहा ॥
जस दर्पन निर्मल रहे, तस देखा अधिकार।
दरसन एकै नारि को, सब आदरस मझार ॥

पहिली रात महीप सरेखा। मुख पर लट बिथुरी नहि देखा ॥
दूसर रात महीपति ज्ञानी। देखा मुख पर लट छितरानी ॥
देखि बदन लट सुंदरताई। सपने बीच रहा मुरुँछाई ॥
मोहि अचरज हिरदय मो आही। कैसे मुकुर म देखा ताही ॥
यह सपने को को पतिआई। मुकुर सौंह बिनु देखि न जाई ॥
यह सपने की बात पर, अचरज करै न कोइ।
सपने मों सो होत है, जो सौतुके न होई ॥
राजा देखि सपन अस जागा। लागा ग्रीव प्रेम को तागा ॥
तागा पाइ प्रेम को राजा। भा प्रेमी छाड़ा सुख काजा ॥
का जाने सुख भोग भुलाना। प्रेम मरम जब लग अनजाना ॥
जाना जात प्रेम तब भाई। जब मन भीतर प्रेम समाई ॥
कालिंजर को राय सयाना। वह नारी के रूप भुलाना ॥

दृग सों बिछुरी मूरत, हिदैं आइ समान।
जब हिय बीच समानी, हरिगै चिंता आन ॥

राजै राज काज तज दीन्हा। चिंता वह मूरत की लीन्हा ॥
काहै कहाँ वह चन्द लिलाटी। वरु तेहि आगे है ससि घाटी ॥
कहाँ धनुक भौही वह नारी। बरुनी बान चोख जेईं मारी ॥
कहवाँ मृग नैनी वह बाला। प्रेमद दीन्ह कीन्ह मतवाला ॥
होतेउँ दरपन ता मुख केरा। मो महँ ता मुख लेत बसेरा ॥

राजकुँअर भा बाउर, छाड़ेउ सुख रस भोग।
परे सकल संसै मों, कालिजर के लोग ॥

राजकुँअर छाड़ा सुख भोगू। असुखी भए नगर के लोगू ॥
दस संघातिय राजा केरे। रहे सो रहे आठ जस चेरे ॥
परै चित मो आठ सँघाती। आठों कहँ दिन भा जस राती ॥
काहु बात सुनवत जी दीन्हा। कोउ कौतुक पर दिष्ट न कीन्हा ॥
रस सुगंध कहँ छाड़ा काहू। आठो परे बहुत दुख माँहू ॥

राजा के अनमन भए, अनमन भा सब कोइ।
माँगहिं सब करतार सो, मोंद कुँअर कहँ होइ ॥

आठों मो मंत्री एक रहा। राजा मानै ताकर करा ॥
बुद्धसेन रह ताको नाऊँ। जन्म भूमि तेहि मनपुर ठाऊँ ॥
तेहि बिनु सात मित्र अवटाहीं। ताहि मिले सातो सुघराहीं ॥
सुख छाडा सब राय सयाना। बुद्ध सेन मन संसै माना ॥
कहा कुँअर सो अहो नरेसू। दिवस चार सों कस तोहि भेसू ॥

औरै तन मन देखऊँ, औरै चिंता चाव।
सुख अनंद को छाडेऊ, कहौ कुँअर केहि भाव ॥

कहा बुद्ध सों राय सरेखा। रानी एक सपन मैं देखा ॥
पहिल रात अस देखउँ ज्ञानी। दरपन बीच रही वह रानी ॥
दूसर निस बहु दरपन देखेउँ। सब दरपन ता रूप परेखेउँ ॥

सोवत रहिउ नयन के नियरे। जागत आइ समानिउ हियरे ॥
अमल रूप वह नारी केरा। मन हरि लीन्ह कीन्ह मोहि चेरा ॥
तासुख दुति के आगें, अहै सूर ससि छाँह।
काहु निर्प की है सुना, जेहि देखेउँ निस माँह ॥

सुनि बुद्ध राजा कहँ समुझावा। तोहि सपने महँ कौतुक आवा ॥
सपन रूप पर वा बिसवासू। तज मन चिन्त बढाव हुलासू ॥
कुँअर कहा यह सपन न होई। मोहिं लेखे सैतुक है सोई ॥
दरपन मों दरपन मुख ताको। भा जिउ लाग मुकुर सोभा को ॥
मोहि निर्प वह प्रान पियारी। करै चहत है दरस भिखारी ॥
बिथुरी प्यारी नैन सों, हियरे आइ समान।
हिया हाथ मों कीन्हा, भएउ परान परान ॥

मंत्री मरम कुँअर को पाएउ। गुनी चितेरा एक बोलाएउ ॥
अस गुनवन्त चितेरा रहा। जल पर चित्र बनावे चहा ॥
बुद्ध कहा लिखि आनु चितेरा। सुन्दर रूप इस्तिरिन केरा ॥
निर्प सपने एक नारिय देखा। रीझा तापर निर्प सरेखा ॥
होइ अहेर फाँद मो आवै। देखे कुँअर बोध मन पावै ॥
बहु नारिन की मूरतें, लिखा चितेरा जाइ।
बुद्ध बाँह सो राजही, सकल देखाएउ आइ ॥

देखि सकल राजै मुख फेरा। कहा कहाँ वह अरे चितेरा ॥
कहाँ लिखै आवै वह प्यारी। सपने बीच बान जेई मारी ॥
ताको मूरत को लिखि पारै। दिर्ग बान बरुनी को मारै ॥
अधर तेहिक जो लिखै चितेरा। मीठ होइ लिखनी नहि केरा ॥
सुनि अस बात चितेरा हँसा। कहा प्रेम महिपति मन बसा ॥
कहि बुध साथ चितेरा, गएउ सदन कहँ सोइ।
पहिले प्रेम न गाढ़ा, अत गाढ़ पुनि होइ ॥

आना बुद्ध मनुष दस ज्ञानी। राजा नियरें कहैं कहानी ॥
रूप बखान करै बहुतेरा। होइ फिरै मन राजा केरा ॥

राजा के मन बोध न होई। सपन कहानी कहेउ न कोई ॥
जा दिग लागेउ जो रँग नीका। नीको वही आन रँग फीका ॥
जा मन आइ बसै जो कोई। ता कहँ प्रान पियारा सोई ॥
रंचिक ताहि न भावै, कहै कहानी जेत।
परम दवात कहैं जत, दुखद होइ तेहि तेत ॥
राजा की फुलवारिव जहाँ। लीन्ह बसेरा तपी एक तहाँ ॥
मौन रहा गहि तपिय सयाना। सकत तिहिक सब काहुब जाना ॥
रात होत मन मों धरि आसा। गएउ कुँअर तापस के पासा ॥
राजा तपी चरन गहि परा। तापस हाथ पीठ पर धरा ॥
राजहि दाया सहित उठावा। मुख सो बहुत असीस सुनावा ॥
तपी कहा केहि कारन, आवन भएउ लोहार।
राजै सपन सुनावा, चाहा सपन बिचार ॥
तपी कहा अस पार न मोही। सपन बिचार सुनावउँ तोही ॥
पै तेहि कारन राजा ज्ञानी। सत्त लिहैं एक कहउँ कहानी ॥
होइ सुनत उपजय तेहि हियरें। सत्त सनेह होसि तेहि नियरें ॥
कुँअर पाय गहि अस्तुति गावा। दरसन पाइ बोध मैं पावा ॥
जो बच भाषै अधर तुम्हारा। उहई ओषध होय हमारा ॥
तब ज्ञानी राजा सों, कहा तपी मुसुकात।
सुद्ध स्रव के स्रोता, सुनिए बकता बात ॥
है एक देस अगमपुर नाऊँ। मानहुँ सरग बसेउ महि ठाऊँ ॥
देस बडो आगमपुर आही। राजदीप पुनि कहिये ताही ॥
है वह देस सिधु के पारा। होत धरम नित ताहि मझारा ॥
सुभग रूप आगमपुर होई। धरती सरग कहावत सोइ ॥
जैत फून फल पत्रिय चाही। तौवत आगमपुर मों आही ॥
अगम पथ मों सात बन, और समुद्र अथाह।
होत न कैसेहुँ मग मों, अगुवा बिना निबाह ॥
सिधु पार है आगमपूरू। पारतें नियर वारतें दूरू ॥
है आगमपुर जस फुलवारी। तामें फून पुरुष औ नारी ॥

नार पदुमिनी कचन बरनी। होहि तहाँ सब मन की हरनी ॥
हरनि होइ जग को मन हरई। बोलत काज सुधा को करई ॥
है इस्सर कर मडप तहाँ। पूजा होत रात दिन जहाँ ॥

जोगी तपी सनासी, बैरागी ... ।
भोर साँझ निस बासर, जपहिं अलख को नावँ ॥

ऐसे धरम नगर के ठाऊँ। अहै महीपति जगपति नाऊँ ॥
धरति गगन तेहिक जस मानी। इंद्रपुरी सुर कीत बखानी ॥
है धीमान महीपति ज्ञानी। दायावंत सुसील सुबानी ॥
आप धरम देही है राजा। नगर न होत धर्म को काजा ॥
है गज कटक अहै अनकूता। ऊँच भाग को है तेहि बूता ॥

एक हाथ के बल सो, कर समुद्र सों लेत।
एक हाथ सों महीपति, दान जगत कों देत ॥

राजै गढ़ नौ खंड बनावा। ऊँच गगन लग ताहि उठावा ॥
पहिल खड जगमग मनियारा। निस मों दीख चद उँजियारा ॥
चौथे खंड दीप है भानू। ज्ञान मंद किमि कहों बखानूँ ॥
मंदिर एक अहै तेहि ठांऊ। तीरथ मदिर मदिर नाऊ ॥
तासों लोग बहुत फल पावै। सत्तर सहस नए नित आवैं ॥

मठ के ऊपर ठीक ही, घड़ियाली घड़ियाल।
निस दिन बैठे साधैं, घड़ी मुहूरत काल ॥

का बरनों सुख मंदिर ठाऊँ। आठ सदन आठों कर नाऊँ ॥
तिन भीतर बइठइ जे कोई। ता कहँ भूख प्यास ना होई ॥
सुंदर नारी रहँइ घनेरी। भँईं न कामिन काहु अकेरी ॥
है आनंद नाम एक ज्ञानी। ताकर सब मंदिर दरबानी ॥
बिर्छ एक अस डार पसारा। सब निकेत पर पहुँचे डारा ॥

वह सुख बास महीप को, है उत्तम कइलास।
सुख जीवन तासों मिलै, पूजन मन की आस ॥

बरनौं आगमपुर की हाटा। भूलहिं मनुष देखि सै बाटा॥
कतहुँ तमोलिय पान भुलाने। कहुँ पटवा पाटहिं अरुझाने॥
रूप कनक कहुँ गढ़इँ सोनार। कहुँ लोहे की ताव लोहार॥
कहुँ जौहरिये कतहुँ चितेरा। कतहुँ कुँदेरा कतहुँ ठठेरा॥
सब भूले अपने जग धन्धा। का डिठियारू का जो अंधा॥

सब तो अहैं बटाऊ, पै पाएँ सुख भोग।
आपुहि कोइ न जानत, हैं पंथिक हमलोग॥

पुनि बखान सुनु मन तारा को। बसुधा बीच सुधा जल ताको॥
जो मनतारा सम्वर पीऔ। सुख जीवन पावै मन जीऔ॥
आवै नीर भरै पनिहारी। सुंदर आगमपुर की नारी॥
औउर नदी नीर जस छीरू। मद अस भेद सरोवर नीरू॥
मधु अस मीठ जीउ सर पानी। यह बखान समझै नर ज्ञानी॥

जो मानुष अनुरागबल, अचवै चारौं नीर।
निर्मल होइ सरीर तेहि, ब्याध न रहै सरीर॥

पुनि बखान सुनु मत के चेरा। आगमपुर के जोगिन केरा॥
बैरागी सन्यासिय जोगी। साधू संजम तपिय वियोगी॥
कोउ ठाढ़ा है ध्यान लगाएँ। कोउ धरती पर सीस नवाएँ॥
कोउ महिपर माथा धरि रहा। जोग लाग सुख भोग न चहा॥
बहुतन कहँ जगसौं सुधि नाहीं। रीझि रहे करता उपराहीं॥

रसना एक न कहि सकौं, आगमपुर की बात।
धरम धनी है राजा, सुखी छतीसौ जात॥

रहा महीपति घर उँजियारा। बालक दीपक बिनु अँधियारा॥
जाइं ग्रीस मंडप महँ पूजा। बहुत कीन्ह सँग लीन्ह न दूजा॥
सिव सपने मौं दरस देखावा। दरस दान देइ बात सुनावा॥
बालक एकौ लिखा न राजा। देइ न बालक अपचिन काजा॥
राछँ कहा पुत्र जो ताहीं। होइ सुता तो मन अनदाहीं॥

आतमजा जो होत एक, होत सदन उँजियार।
कन्यादान दिहे सों, होतै मुकुत हमार॥

कहा महेस काज एक करहू। रतन एक मडप मो धरहू॥
निसमों राखहु भोरें आएहु। धिर्ज धरेहु जैसो फल पाएहु॥
जैसो इस्सर अज्ञा दीन्हा। तैसो मानि महीपति कीन्हा॥
सिव दाता कहँ बहुत मनावा। तुम करता त्रीलोक बनावा॥
धरती गगन पवन जल आगी। सिर्जेउ सिर्जत बेर न लागी॥

होइ रतन सो कन्या, यह मनसा है मोर।
राज सदन अँधियारो, तासो होइ अँधजोर॥

सिवा अलखसो बिनती कीया। जस है रतन जोत सों दीया।
दीप रतन सम कन्या होई। करइ निकेत अँजोरा सोई॥
भा दयाल दाता तेहि घरा। वोहि रतन कन्या अवतरी॥
भै महेस मडप उँजियारी। उतरी मनहुँ इंद्रपुर नारी॥
भोर होन राजा चलि आएउ। मडप बीच चंद्र सम पाएउ॥

परमद सों मडप भों, पुन्नकेउ राजा देह।
कन्या कहँ अति आदरें, आनेउ अपने गेह॥

पुन सिवरात होन सपनाया। गौरिहु आपहुँ दरस देखावा॥
कहा धरेउ अवतार सुभाऊँ। रतन जोत कन्या कर नाऊँ॥
मोती एक बँटामों कीजे। जलधिम झार डार तेहि दीजे॥
वह मोती काढै जो राजा। सोई वर कन्या कर छाजा॥
मोतो काढ न पारै कोई। काढ़े सोई बर जो होई॥

सिव भाबित के पाछे, सिवा कहा तेहि ठाउँ।
होत भलो इंद्रावति, वह कन्या को नाउँ॥

राजै दोऊ नाम तेहि राखा। रतन जोत इंद्रावति भाखा॥
रूपम्मा धाई तेहि पाला। लाग चलै महि ऊपर चाला॥
भइ जो सयान भई चितगरी। पढ़ि विद्या भई विद्याधरी॥

लागी साथ अगमपुर बारो। जोरेउ स्यामा राज दुलारी॥
जगपति मरम सुता कर पावा। कीन्हा परन जो ईस बतावा॥

बूड़े बहुत समुद्र मो, मोती चढ़ेउ न हाथ।
नहि जानौ को देइ है, सेंदुर ताकी माथ॥

मंडप मो जाते अघ भागे। बरस देवस पर तीरथ लागे॥
जब आगमपुर कहँ मैं गयऊँ। पूजा नित मंडप महँ भयऊँ॥
तति खत भय चहुँ ओर पुकारी। आवत है जगपति की वारी॥
पंथ देउ कोउ रहइ न आगें। जान मँडप कहँ पूजा लागें॥
पंथ छाड़ भा सब कोउ ठाढा। सबके हिये प्रेम रस बाढ़ा॥

पथ छाड़ सब ठाढ भा, नैन भएउ सब देह।
इंद्रावति दरसन नित, सब मन बढ़ेउ सनेह॥

सब मानुष मन प्रीत घनेरी। उपजी इंद्रावति मुख केरी॥
मुकुर बने चाहा सब कोई। जामो आइ परौ मुख सोई॥
सखिन ताथ इंद्रावति आई। बरनि न पारौ सुदरताई॥
रहि न सखी सुंदर जहाँ ताई। जिउ अस लिहे रतन कहँ आईं॥
देह भई सब आगम वारी। जीउ रहो इंद्रावति प्यारी॥

सखी रहीं अतर पट, देखा बिरलै कोई।
मडप बीन्त गई वह, सब को मति नग खोई॥

रंचिक तेहि देखा जो कोई। कीन्ह बखान आप मों सोई॥
कहुव कहा अहै अपछरा। नहिं चितएउ ऐसें मन हरा॥
कहुव कहा दिष्ट जो देती। मन औ प्रान दोऊ हर लेती॥
रूप गगन जग काया वारी। है जिउ है जिउ है जिउ प्यारी॥
जो वहि मुख को परगट देखा। गूँग भएउ भा बाउर भेखा॥

तेहि अस आपुहि होइ रहा, रहा न ताहि विवेक।
जातें जानै एक मैं, औ इंद्राबति एक॥

इंद्रावति घर कीन्ह बहोरा। ससि होइ लै नछत्र चहुँ ओरा॥
आप गई मंदिर कहँ प्यारी। बहुतन को कइ गईं भिखारी॥

जो रंचिक ता दरसन पावा। हाथ मलेउ भानेउ पछतावा ॥
कहा सहेलिन बैरिन भईं। वोटैं वोट किहे लै गईं ॥
आज आइ वह परगट भई। मिला न दरस गुपुत होइ गई ॥
सुमिरेउँ सिरजनहारही, जब देखेउँ असरूप।
ऐसो रूप सँवारहू, धन्य त्रिविष्टपभूप ॥
है पदुमिनि इंद्रावति प्यारी। ताको बदन रूप फुलवारी ॥
कोमलताइ सुंदरताई। सै रसना सों बरनि न जाई ॥
दिगंन हरा मान मृग केरा। मन लजाइ बन लीन्ह बसेरा ॥
ना अति लाँब न छोटी आही। है तस इंद्रावति जस चाही ॥
यह बखान का बरने होई। जो देखा जानहि पइ सोई ॥
कै बखान जोगी कहा, मोहि जाने होराय।
चंद्र बदन इंद्रावति, तोहि सपनाएउ आय ॥
पहिले इंद्रावति सुकुमारी। रहिल रतन दरपन मों प्यारी ॥
जब जगमों अवतरी नवेली। ताको दरपन भई सहेली ॥
है वह दीप सिखा उँजियारी। आपन जोत सखिन मों डारी ॥
है वह रतन खान आभा को। जोत सुरूप रूप है ताको ॥
है आनंद बदन वह प्यारी। छवि तापर है लट सटकारी ॥
इंद्रावति है पदुमिनी, रम्भा तुलै न ताहि।
एक जीभ सों कित मैं, ताको सकों सराहि ॥
सुनत बखान कलिंजर ईसू। तपिय चरन पर डारेउ सीसू ॥
कहा कुँवर हो सिद्ध सरीरा। ओषद दै काटेउ मन पीरा ॥
सपन बिचारेहु मोर गुसाईं। पीरा हरेहु रही जहँ ताईं ॥
जेहि रानी के करहु बखानू। निसचै हरा सोई मन ज्ञानू ॥
तजि कइ राज होब मै जोगी। इंद्रावति पर होउँ बियोगी ॥
हौं मैं चेला तुम गुरू, बिनै करत हौं तोहिं।
आगम पंथ देखावहु, लै पहुँचावहु वोहिं ॥
तपिय कहा तोहि जोग न छाजा। बैठे राज करीजे राजा ॥
अहै कठिन आगम को बाटा। गहिर समुद्र न थाह न घाटा ॥

औ है गुलिक काढिबो गाढ़ा। सिंधु न जानै तट जो ठाढ़ा ॥
है हम कहँ तीरथ बहु करना। कासिय पंथ उपर पग धरना ॥
जाय पयाग करउँ अस्नानो। पुनि महेस को देखेउँ थानों ॥

तपी भेस मैं मानुष, नाम मोर गुरुनाथ।
तब गुरुनाथ कहावउँ, जब आनउँ तप हाथ ॥

कुँवर कहा गुरुनाथ गुसाई। राज रहा मीठा अवताईं ॥
अब निसचै मैं होब भिखारी। तहाँ चलि जाउँ जहाँ वह प्यारी ॥
जिउ को लोभ कछुहु मोहि नाही। ता नित पैठउँ पावक माहीं ॥
अगुवाई जो कीजे नाथा। तो वह मूल होइ मोहि हाथा ॥
ना तो सुमिरत दया तुम्हारी। जाउँ तहाँ होइ तपसि भिखारी ॥

राज पाट सब छाड़उँ, लेउँ अगम को पथ।
पथिक होऊँ अगम को, पहिर जोग को कंथ ॥

जाना तपी तजहि सुख पाटा। हिये सुधान अगम की बाटा ॥
सकल आपनो परगट कीन्हा। देव दिष्टि राजा कहँ दीन्हा ॥
माया रहित कीन्ह मनुसाई। उपवन सो कीन्हा अगुवाई ॥
फुलवारी मो राय सरेखा। पथ सहित आगमपुर देखा ॥
देखा देश अगमपुर केरा। रीझि रहा राजा भा चेरा ॥

अगम पंथ मनं मों बसेउ, भूली दूसर बाट।
हिर्दं चिन्त सोउ तरिगा, राज मुकुट औ पाट ॥

तपिय कहा राजा कुछ सूझा। राजा सुनत मरम सब बूझा ॥
कहा भएउ कृपाल गोसाईं। सूझी बाट रही जहाँ ताईं ॥
सूझा इंद्रावती कर देसू। होएउँ निसचै जोगिय भेसू ॥
सुनि गुरनाथ ऋषेश्वर जाना। पंथ अगम राजहि पहिचाना ॥
गुपुत भएउ पुनि कुँवर न देखा। आएउ मंदिर राय सरेखा ॥

गुरू जानि गुरुनाथही, चेला आपुहिं जानि।
आगम जोत धरा चित, मन परान सो मानि ॥

कालिजर सो भएउ उदासा। भएउ नरक मंदिर-कविलासा॥
सुंदर कहा कत कस जीऊ। कस उदास तेहि देखेउँ पीऊ॥
परेउ सीस ऊपर कछु भारा। ऊदासैं है जीउ तुम्हारा॥
दीन्हा ऊतर सुंदर केरा। सैतुक बीच सपन भा मेरा॥
सुनेउँ आज मैं तेहिक बखानू। सपन देखाइ हरा जेइ ज्ञानू॥
राजपाट धन भोग सुख, सब तजि साधौ जोग।
जाउँ वोही के देस कहँ, होइ सजोग वियोग॥
सुनि कै कहा सुदरी राजा। तुम्हैं भोग तजि जोग न छाजा॥
सुख सपत सब दीन्हा दाता। मारु न छीर भात मो लाता॥
कहा रहेउँ अब लग मैं भोगी। अब मैं होउँ अगम को जोगी॥
जोगी होउँ अगमपुर केरा। लेउ जाइ तेहि गलिय बसेरा॥
भोगै बीच रहउँ जउ भूला। कित मोहि हाथ चढइ वह भूला॥
तुम कामिनी मत हीनी, भोग सुपावहु मोहि।
प्रेम खीच है मो कहँ, सूझ बूझ नहि तोहि॥
राजैं राजपाट सुख तजा। प्रेम आइ मति सों अरबजा॥
मनमों प्रेम बसेरा लीन्हा। बरबस राजा प्रेमिय कीन्हा॥
प्रेम अगिन मन मों उदगरो। तासो दारु बुद्धि कर जरी॥
भार वोही राजा सिर परा। जो नभ औ महि को बल हरा॥
निबर मनुष को धन मनुसाई। जो अस भांरिय भार उठाई॥
प्रेम आग के बाढ़े, मेधा भयो मलीन।
सूर किरिन के आगें, है मयंक दुति हीन॥
रे कलवार आव चलि बेगें। हौ मैं ठाढ़ सिधुजा नेगें॥
है निर्मल मद सदन तुम्हारा। मोहि लेखे सज ठाकुर द्वारा॥
दे मदिरा भर प्याला पीवौं। होइ मतवार कॉथरा सीवो॥
सो काथर काधे पर डारउँ। जोगी होइ जग चाहत मारउँ॥
होइ जोगि तेहि देसहि जाऊँ। है जेहि देस सुप्रीतम ठाऊँ॥
मोहिं यह देस न भावत, छन है बरप समान।
अब तेहि देस सिधारउँ, जहाँ रहत वह प्रान॥

मालिन खंड

जब राजा फुलवारिया आयेउ। तजि पर चिन्ता ध्यान लगायेउ ॥
मालिन सुंदर चेता नाऊँ। आइउ मन फुलवारिय ठाऊँ ॥
भइ सोहैं राजा के ठाढी। मनु समुद्र सों मोतिय काढ़ी ॥
अहो बियोगी भेस भिखारी। इंद्रवति की यह फुलवारी ॥
इहाँ न कोऊ जोगिय आवै। जो आवै तो जीउ गँवावै ॥

कबहूँ कबहूँ आवै, इहाँ पियारिय सोई।
चार दिष्ट होइ जाइही, जाउ जीउ सो खोइ ॥

है मनोरमा जगत कर सोई। है ससि जौ ससि बोलत होई ॥
कुमुक उसीसा लाइ बईठै। मान समेत जगत दिस दीठै ॥
धन के नैन दिष्टि जेहि डारा। सो आतिथ भा भा मतवारा ॥
मुख है फूल कपोल कली है। है छबि औ सोभा बिमली है ॥
फूल अहै पै कलिय समानू। कलिय अहै पै है बिकसानू ॥

है सुकुवार पियारी, है प्यारी सुकुवार।
है फुलवारिय रूप को, अहै रूप फुलवार ॥

राजा कुँवर कहा सुनु प्यारी। आयेउँ भली लाग फुलवारी ॥
जग में मरन हुतें का डरऊँ। एक दिन मरों छार होइ परऊँ ॥
जो इंद्रावति के दोउ नयना। प्रान लेत हैं करि कै सयना ॥
तो मोहिं सोच जीउ कर नाही। होइ सुधा तेहि अधरन माही ॥
बहुर प्रान देई मोहि सोई। नित जीवन पुन मरन न होई ॥

दरस देखि जो जिय तजौ, यातें भलो न और।
एहि कारन मैं लीन्हेउँ, मन फुलवारी ठौर ॥

अहो यह नित बरजेउँ जोगी। जिय न तजहु पै होहु बियोगी ॥
जोग तोर औ गुरू तुम्हारा। जाइहि भूल जासि ठग मारा ॥
जाकि चितवन भए बेहाथा। नाथ मुछंदर गोरखनाथा ॥
तेहि देखत सुधि भूलै तोही। भूलै जोग बसै मन वोही ॥
निदा नौके फेर भुलाहू। सौके देस न बेगहि जाहू ॥

अबहिं अहसि सरेखा, जहँ चाहसि तहँ जासि।
नाँ तो दरसन पाइकै, सुधि गँवाइ बौरासि ॥

ससि कारन तुस लायहु फाँदू। फाँदे बीच न आवइ चाँदू ॥
जीउ चलाउ जहाँ लग हाथा। गगन चढावइ चाहसि माथा ॥
पट बाहर जेइँ पाव पसारा। जाड़ा कठिन अंत तेहि मारा ॥
जो पखी बित बाहर धावा। सो निदान महि ऊपर आवा ॥
अपने जोग ठाव जेइँ लीन्हा। सब कोऊ तेहि आदर कीन्हा ॥
सब काहू कहँ ठाउँ है, अपने अपने मान।
रानी राजा जोग है, ससि जोगे है मान ॥
हौं मैं ता दरसन नित जोगी। भसम चढाएँ भेस बियोगी ॥
ताको प्रेम गुरू है मेरो। जोग सिखाय कीन्ह मोहि चेरो ॥
जब मन बसी धरेउँ तब जोगू। तजि कै सकल जगत सुख भोगू ॥
वहि उत्तम दरसन के कारन। आएउँ नाँधि मेरु दधि आरन ॥
जा दिन मैं दरसन वह पावउँ। होइ आप आहि हेरवावउँ ॥
दरसन देखे कारनहिं, रोम रोम भये नैन।
नीद न आवत निस कहँ, वासर परत न चैन ॥

चैन कहाँ चिन्ता जेहि जीऊ। जीउ दुग्ध भा चिता घीऊ ॥
जब चिता तब नीद न आवै। आवै तब जब चिता जावै ॥
प्रेमी पर चिता कहँ मारै। मारै मन चाहुत जिय बारै ॥
हेरै प्रीतम मुख नहि फेरै। कोरे मित्र मित्र कहँ हेरै ॥
रोवै रकत आँस नहिं सोवै। दरसन लाग रात दिन रोवै ॥
सत्तर सिर मन तीस सै, पाँव एक सै जाहि।
प्रेमी को दुख देत सो, प्रेम अरथ यह आहि ॥
हौ जोगी पै उत्तिम भीखा। प्रेम पाइ माँगै मैं सीखा ॥
जहि मन ऊँच उँच भा सोई। जेहि मन नीच नीच सो होई ॥
कहाँ चाँद कहँ रहइ चकोरा। प्रीत लाग चितवत तेहि ओरा ॥
औ अरबिंद रहै जल माहीं। रवि सेवत तेहि जोगें नाही ॥
दादुर कँवल सनेह न पावै। बनसों मधुकर तेहि नित धावै ॥

दूर देस दिष्टि सों, है समीप गुन मूर।
बिना नैन औ दिष्ट के, नियरें के है दूर॥

मालिन कहा बहुत तुम बूझा। प्रेम पंथ उँजियारा सूझा॥
कवन जात है का है नाऊँ। कहाँ जनम भुम्मी का ठाऊँ॥
कहा रहेउँ मैं जात चँदेला। अब सम जात धूर सिर मेला॥
जनम भुम्मि कालिजर ठाऊँ। राजकुँवर है मेरो नाऊँ॥
प्रेम तेहिक मोहि चेला कीन्हा। राज छोड़ाय जोग गुन दीन्हा॥

हौ जोगी तेहि पथ को, नहिं चाहौ कविलास।
चाहउँ दरसन भिच्छा, राखत हौ नित आस॥

हो जागी मुख आभा तेरी। साखि देत है राजा केरी॥
पै तोहि साथ न सेवक कोई। राजा पर विस्वास न होई॥
औ मोती का ढब हैं गाढ़ा। बूड़े बहुत न काहुअ काढा॥
भीख मिलन गाढी है जोगी। भाग जो होइ तो होहु सँजोगी॥
याहू पर बहुतै तुम कीन्हा। तजि सुख भोग जोग दुख लीन्हा॥

जेहि दरसन के दीप पर, है पतग संसार।
प्रेम तेहिक तुम लीन्हा, मरै न नाम तोहार॥

है इद्रावति बिद्याधरी। बिद्याधरी आप अवतरी॥
है पदमिनि मृगसावक नैनी। ज्ञानवंत औ कोकिल बैनी॥
जो काहुअ पर ठारै डीठी। सो जन देइ जगत दिस पीठी॥
अस रुपवती सुदर आहै। बिनु देखें सब ताहि सराहै॥
खोलै मुख परभात देखावै। खोलै केस साँझ होइ आवै॥

है तेहि चद बदन लखि, जगत नयन उँजियार।
गगन सहस लोचन सो, निखैं तेहिक सिंगार॥

धन दृग मतवारे पैरारे। चितवन बीच सिंधु जा ढारे॥
अधरन सों मुसुकान सोहाई। बात कहत सो झरत मिठाई॥
सखी अहैं दरपन तेहि माही। डारा सुंदर मुख परछाहीं॥

तासों सखी भई छबि धारी। छबि दाता है प्रान पियारी
सै मन अलक बीच हैं बाँधे। तेहि सहस जिउ हत्या काँधे
बहुतन तजि जग धधा, तप साधा तेहि लाग।
अरुझि रहा मन अलकैं, जिउ मारा अनुराग ॥

है तेहि अंस ताक मो दीया। भा उजियारा मंदिर हीया ॥
सीसा बीच दिया है धरा। मनु सीसा तास निर्मरा ॥
है मदिर सोगित फुलवारी। अहै सुगंध मालति वह बारी ॥
तेहि रहैं आखिन पर चेरी। अहैं सखी छाया तेहि केरी ॥
दिष्ट न आवत ताकी छाया। मानहुँ जीव धरें है काया ॥
वोहि डोलैं सब डोलैं, थिरैं थिरै सब कोइ।
काया सो जो होत है, सो छाया मों होइ ॥

सात अंतर पट भीतर सोई। रिहन न देखत अँचिन्ह कोई ॥
बारह मदिर मों यह प्यारी। रहत सदा है सेज सँवारी ॥
हीरा सात सात जस तारे। है मदिर भीतर उँजियारे ॥
दुइ सै औ अढ़तालिस करी। लागे रतन पदारथ भरी ॥
है मंदिर मो तेरह द्वारा। नौ द्वारा नित रहत उघारा ॥
बाय तेज जल पिर्थि, मानहुँ कैयक ठाउँ।
बारह मँदिर सँवारा, जगपत जाको नाउँ ॥

आवै जाइ पवन दुइ द्वारैं। संगी सोदु न सबद सँवारैं ॥
दसईं द्वार खोलत कोई। तब खोलै जग मरमी होई ॥
दस चेरी धन की गुन भरी। सेवा बीच रहे नित खरीं ॥
पाँच मँदिर के बाहर रहई। पाँच मँदिर भीतर गुन गहई ॥
एक सुध पाँचों सों नित लेई। सुध चारों चेरिन कहँ देईं ॥
है सरूप वह रानी, रहै सात पट माँह।
सखियन सों वह प्रगटै, अहैं सखी सब छाँह ॥

सुनि इंद्रावति रूप बखानो। राजकुँवर हिदैं रहसानो ॥
कहा तेहिउँ तेहि कारन जोगू। है महिमानस प्रीत वियोगू।

भायेउ आवत इहाँ अकेला। गुरु न भयेउँ का राखउँ चेला॥
होउँ अब्धि मो होइ मर जीया। तजि जिउ भय पोढ़ा कइ हीया॥
भाग जो होइ जलज निसारउँ। नाँ तो जिउ जिउ कारन वारउँ॥

प्रेम फाँद मों हौ परा, नहि छूटै की आस।
मिलबो चाहौं प्रान को, अहै न भूख पियास॥

जो चाहत संजोग बियोगी। जो मैं कहउँ सो साधहु जोगी॥
खोटे काज के नियर न जाहू। निरमल कथा होइ जस चाहू॥
पर चिंता तजि सुमिरहु ताको। होइ सो भरता मन आभा को॥
ना रहिये आण गुन साथाँ। निरमलता आवै जिउ हाथाँ॥
मन जिउतें सुमिरहु वह नाऊँ। बूझहु प्रान मों ताको ठाऊँ॥

दूसर चिंता छाड़ि कै, तापर लावहु ध्यान।
मन फुलवारी मो रहैं, पावहु दरस निदान॥

आपन है नाही करु जोगी। पुनि है होसि होसि है भोगी॥
नाहीं होइ नाहिं वै हेरा। ना तो मिलत नियर तेहि केरा॥
नियर मिले तें दरसन होई। जोग भूल है तीनउँ सोई॥
जो मर जिया सो भा मर जीया। मोती लिया दिया भा दीया॥
मरिके जिउ पुनि मीचु न आवै। प्रानपियारी बदन दिखावै॥

छिन अंतरपट होइ रही, फुलवारी के फूल।
देखु रंग प्यारी कर, है रंगन को मूल॥

कहि राजा सों भेद कहानी। गइल जहाँ इंद्रावति रानी॥
मैं ब्याकुल प्यारी तब ताईं। जोगी आइ बसा मन ठाईं॥
बाढ़ेउ प्रीति जोगेस्वर केरी। मन पद परी प्रेम की बेरी॥
कहै कहाँ वह रावल प्यारा। दै दरसन मन हरा हमारा॥
सोइब रहेउ जाय सों भला। जामो मिला दरस निर्मला॥

मिला दरस जेहि सपन मों, तापर वारी जाउँ।
जागब मोहिं बैरी भयेउ, कीन्ह दूर दुइ ठाउँ॥

वोही समै मों मालिनि गई। प्यारी कहँ सुख दाता भई॥
पूँछे लाग परान पियारी। है कस आज काल्ह फुलवारी॥
बीता फागुन और पतिझारा। जो निर्पात कीन्ह कुँज डारा॥
जो पच्छिन को जीउ सतावा। पत्र को झारिके छाँह नसावा॥
सो तो अब न रहेउ जग माही। फुलवारी पलुही की नाही॥
बदन उघारा है पुहुप, अली भँवहिं उपराहँ।
की समुझत पतिझार कों, अहै छिपी पट माहँ।
चेता नारी उतर निसारी। हो प्यारी फूली फुलवारी॥
मान पाट पर बैठे फूलें। फूल बास मधुकर मन भूलें॥
देइ के उतर कुसुम को हारा। इंद्रावति के गल मों डारा॥
फेरि कहा दिन बहुत न गयेऊ। सपन तुम्हारो सैतुक भयऊ॥
फुलवारी मों है एक जोगी। रानी दरसन लाग वियोगी॥
है कालिंजर महीपति, राजकुँअर है नाउँ।
नाम तिहारो जपत हैं, मन फुलवारी ठाउँ॥
ए रानी का बरनउँ ताही। धूर लपेटा मानिक आही॥
बहुत सरूप अहइ वह तपा। कथा वीच रतन है छपा॥
होइ हग जिय जो देखनहारी। तो मुख ताको लखै पियारी॥
जावत राजा लच्छन चाहीं। है सब हग रतनारी आहीं॥
अर्द्ध चंद सम भाल सोहाई। रेखा तीन दिष्ट मोहि आई॥
धनुक समाँ है भिकुटी, बरुना चोखी बान।
कीर समा है नासिका, सबद मोर परमान॥
लवर करन को सीर न आहै। राजा सिद्ध होन कस चाहै॥
कुँअर बियोगी उपबन ठाऊँ। निस दिन सुमिरत रानी नाऊँ॥
अहै प्रेम मदिरा मतवारा। जपत साँस मों नाम तुम्हारा॥
लेत न एकउ भूले साँसा। दरसन लाग देह सुख नाँसा॥
जोगी भेस न सकउँ सराही। गोपीचद्र दूसरो आही॥
होत जियत को भरथरी, ताको चेला होत।
आइ बसा फुलवारी, सुनहु खोलि मनस्रोत॥

इन्द्रावति सुनि जोगी नाऊँ। जोगिन होइ चहा तेहि ठाऊँ॥
कहा सपन को जोगी प्यारा। होइ वोही मनहरा हमारा॥
सकल आँक तुम आइ सुनावा। सपन तपी लच्छन मैं पावा॥
एक अचंभे आवत हियरें। है न कहूँ कालिंजर नियरें॥
मों सुनरूप कहाँ ते पावा। जोगी होइ अगमपुर आवा॥

भेंट न होइ न गुन सुनै, प्रेम कहाँ सो होइ।
कैसे मोहिं कारन भयउ, आगम जोगी सोइ॥

अहो पियारी बूझन तोकाँ। तोर बखान गयउ सुर लोकाँ॥
तहाँ सदा सब निर्जर नारी। चरचा तेरो करइ पियारी॥
धरती पर कालिंजर देसू। सुनि बखान भा जोगी भेसू॥
तें धन कली समाँ पट माँही। सैकी लालप तोहि उपराहीं॥
नहिं जानो कस परत पुकारा। जो परगट मुख होत तुम्हारा॥

तुम धन प्यारी पदुमिनी, सुधा भरे अधरान।
बहुत अमी अधरन पर, दिहेनि सुन्धु मों प्रान॥

हो धन जाको नाम सुनायहु। फुलवारी मों दरसन पायेहु॥
मन औ ज्ञान हरा है सोई। होत भलो जो दरसन होई॥
मैं सकुचाउँ जात फुलवारी। भइउँ नयन सों मों हत्यारी॥
चार दिष्टि काहुब सों होई। जात चेत सों मुरछेइ सोई॥
औ परगट मोहि चलत न भावै। अब मोहिं लज्या जिउ सकुचावै॥

गयेउ सखी वह सामै, आँखिन रहो न लाज।
अब यह नैन हमारो, प्रायेउ लाज समाज॥

लाज नही जेहि आखिन माहीं। है वह पसु है मानुष नाहीं॥
घुँघरू पहिरि लाज यह आही। पगु कहँ धीमे राख बचाही॥
औ धन ऊँची सबर्द न बोलै। सुनत बिराने को मन डोलै॥
औंधे नैन लाज सों कीजै। औ मुख ऊपर घूँघट लीजै॥
हो प्यारी अब पहिरहु गहना। पुरुष बिराने सों छिप रहना॥

हौ बारी अलबेली, बारी कैसे जाऊँ।
भेंट होइ काहुश्र सों, खोर और भग ठाउँ॥

जो जोगी तुम देखै चाहा। जोगहि मिलै जोग सों लाहा॥
परगट तुम्है चलै को कहई। तो पट भलो पवन रथ अहई॥
तेहि पर चढि कै चलिये प्यारी। चारो दिस पट लीजै डारी॥
जोगी साथ न दूसर कोई। है अकेल बारी मो सोई॥
है भिच्छुक तेहि दाया कीजै। उत्तम दरस भिच्छा दीजै॥

दर दिखाइ कै दरसन, आपुहि लेहु छिपाइ।
अधिक बढ़ै अभिलाख तेहि, दूसर पंथ न जाइ॥

चलहुँ चलहुँ निसचै फुलवारी। देखउँ जोगी कहँ मन बारी॥
आज देवस औ रैन बितावउँ। प्रात समै फुलवारी आवउँ॥
जोगी पास अहै मन मोरा। भयेउ सीस पर प्रेम झकोरा॥
होइ गये आपन मन पावउँ। मन पाये आनंद मनावउँ॥
पहिले आपन दरस दिखायेउ। पाछें सो मोहि जोग सिखायेउ॥

रहिउँ अचेत भुलानी, लाग राग को बान।
प्रेम निबाहौ जो जियउँ, तेहि ले मरउँ निदान॥

ना ले मरन क नाम पियारो। तोहि मरत मरिहैं बहु नारी॥
जहँ लग हैं नारी रज दीपी। का बिछुरानी काह समीपी॥
तोहि जिय सो जीयत सब कोई। कहु न मरन तो पर लौ होई॥
हैं जहँ लग रजदीपी नारी। जीउ तिन्है है प्रीत तुम्हारी॥
भलो भयेउ जो बाढा प्रेमू। मिलि है प्रीतम होइ है खेमू॥

अति समीप है प्रीतम, अहै न एकौ बाट।
एक पाव दे आप पर, बैठु मिलन के पाट॥

काहे न लेउँ मरन के नाऊँ। मरब एक दिन धरती ठाऊँ॥
केतिको प्रीत जगत महँ होई। देत न साथ मरन महँ कोई॥
जावत जिया जंतु जग रहई। करता बस सबको जिय अहई॥

है समीप वह मित्र हमारा। पै जग धंध दूर मोहि डारा॥
काम क्रोध तिस्ना मन माया। ये रिपु कछहु उपाय न पाया॥

किछु उपाय नहिं आवै, जाते जाहिं नेवारि।
हैं बैरी मोहि गाढ़े, सकों न यह सब मारि॥

अहो तुम राजा कर बारी। अरुझि रहिउ सुख बीच पियारी॥
सुखमो काम क्रोध अधिकाई। तिस्ना मया करइ अगुवाई॥
चारि पखेरू तोहि तन माही। चारों चारा नित उड़ि जाही॥
रेत ग्रीउँ चारो कर प्यारी। मरिकै जियहिं होहि गुनधारी॥
मन दरपन ऊपर चित दीजै। नाही है सो निर्मल कीजै॥

माँज सजो मन दरपन, रात देवस चित लाइ।
स्याम रंग अंतरपट, उठि आगे सों जाइ॥

बोलब सोइब खाइब थोरा। होइ होइ तौ कारज तोरा॥
औ चिहार प्रीतम को लीजै। जो सिखवै सो कारज कीजै॥
औ निसबासर अकसर रहना। सुमिरन जाप बीच दुख सहना॥
पै यह मन है सत्रु सयाना। जान न मारा सुख लुबुधाना॥
मन बरजै कहँ काको करई। मन न मरै बरु पारा मरई॥

मालिन हिता उपाय दै, गई आपने गेह।
इंद्रावति कै मानसें, भयउ समस्त सनेह॥

चलु मन तहाँ जहाँ फुलवारी। तहाँ बसा है दरस भिखारी॥
मित्रहिं भेंटहु देखहु फूलू। है फुलवारी परमद मूलू॥
धन सो मानुष धन तेहि भागू। जेहि मधु मिलेउ खेलि कै फागू॥
जेतो तेहि पतिझार सतावा। तेतो सो बसन्त सुख पावा॥
धन जग माली सिर्जनहारा। कुल पलुहावत है पतिझारा॥

भागवंत सो मानुष, है तेहि धन धन हाथ।
मित्र बदन औ फूल मुख, देखै एकै साथ॥

फुलवारी खंड

इंद्रावति दिन रात बितावा । भोरहिं सखियन कह हँकरावा ॥
भै न बिलब सखी सब आईं । तारा समा रहीं जहँ ताईं ॥
आईं ससि बदनी थोर दीनी । सकल राज दीपी पदुमीनी ॥
आईं समुदै कुल की सुता । बहु व्याहीं बहु अब्याहुता ॥
भोर समय वह नषत सहेली । धन मयंक घेरेन अलबेली ॥

रानी की सब सहचरी, आइ जुरी तेहि पास ।
सब अपछरा समाँ रहिं, भवन भयउ कबिलास ॥

इंद्रावति सखियन सौं कहा । सो दिन गयउ बिछ्रै जो दहा ॥
जग सो पतिझारी रितु गई । पलोहे बिछ्रै नवल रितु भई ॥
काल्ह जनायेउ चेता नारी । फूल रही है मन फुलवारी ॥
चलहु गवन बारी दिस कीजै । फूल देखि परमद रस लीजै ॥
नहिं जानहि सिर परिहै कैसो । खेलहु होइ खेलना जैसो ॥

फुलवारी चाहत है, मन बैरागी मोर ।
चलहु देखिये उपवनै, है बसत रितु थोर ॥

थोरा है कुसुमाकर बेला । चलि देखिहु औ खेलहु खेला ॥
बीतो बेला छूटा बानू । हाथ न आवै फेरै परानू ॥
सकल समै को भेद छपाना । है हम लोगन ताको जाना ॥
मेंटत आ राखत करतारा । जो चाहै है सिरजनहारा ॥
समय खरग है काटन हारी । जात चली तेहि भेंटु पियारी ॥

मधु मीठो है मधु समाँ, मधु दरसन को लेहु ।
हार सरीर ग्रीव को, हार कुसुम को देहु ॥

सब काहू धन आज्ञा माना । फुलवारी दिस कीन्ह पयाना ॥
इंद्रावति रथ ऊपर चढ़ी । दूनो बढ़ी रूप को बढ़ी ॥
चली मानसों ब्राम्हन बारी । बनियाइन नाइन पटहारी ॥
चली सोनारिन कचन बरनी । रजपूती खतरिन मनहरनी ॥
लोनी धन हलवाइन भली । अधर मिठाई बाँटत चली ॥

चलीं सहेली सुंदरी, इंद्रावति के संग।
गीत बसती गावतै, पहिरे दुकुल सुरंग ॥
मन फुलवारी मो सब गईं। देखि सुमन को सुमना भईं ॥
चेता मालिन भेंटेउ आई। चद्रबदन देखै दुति पाई ॥
सुगँध कुसुम को हार सँवारा। सब सुंदरि के गीउ मों डारा ॥
देखि भँवर गन गुंजत तहाँ। एक सखी बोली गन महाँ ॥
धन यह मधुकर धन यह फूलै। किन के ऊपर अलि मन भूलै ॥
जगत मझार सराहिये, भँवर फूल को हेत।
भँवरहिं चिंता फूल की, फुल बास रस देत ॥
सुनि सचेत इंद्रावति रानी। बोली सुनिए सखी सयानी ॥
जग मों प्रीति बखानहु सोई। जीवन मरन एक सँग होई ॥
खोटी प्रीति भँवर की आहै। भँवर आपनो कारज चाहै ॥
आइ भँवात बास रस आसा। लै रस तजत फूल को पासा ॥
लै रस बास भँवर उडि जाई। मरत न जब सुमनस कुम्हिलाई ॥
प्रेमी ताको जानिये, देइ मित्र पर प्रान।
मित्र पथ पर जिउ दिहे, जुग जुग जियै निदान ॥
धन जो प्रीतम पर जिउ वारा। सिर पर चला प्रेम का आरा ॥
धन जो परा हुतासन माहीं। और सहायक चाहा नाहीं ॥
दया दिष्ट प्रीतम तब धरा। पावक फूल भयेउ नहि जरा ॥
धन जो मित्र आपनौ चीन्हा। पुत्र जीउ आगे कै दीन्हा ॥
मुवा न कहो जियत है सोई। अलख पथ जो जूझा होई ॥
मित्र जो हैं करतार के, मरत नाहि है सोइ।
एक मदिर तजि दूसरे, गवनत हैं वै लोइ ॥
गायउ गीत एक धन प्यारी। जग है करता की फुलवारी ॥
आपुहिं माली आपुहिं फूला। आपुहि भँवर फूल पर भूला ॥
आपुहि रूपवत सो होई। प्रेमी होइ रिझत है सोई ॥
आपुहिं परगट गुपुत अकेला। गुरू होइ कहुँ कहुँ होइ चेला ॥
आपुहिं दाता करता होई। दिष्टा स्रोता बकता सोई ॥

सुनि सरवन दै चेत सों, सपन बखाना गीत।
उपजी सब के हिदैं, चतुर सखी की प्रीत॥
एक कहा हो राजदुलारी। है आनंद ठाउँ फुलवारी॥
खेल एक खेलहु सब कोई। जासों स्वात बीच मुद होई॥
एक कहा आनंद न चहऊ। निस दिन आगम सोचमो रहऊ॥
बहुत अनद न चाहौं प्यारी। ना तो परै आइ दुख भारी॥
एक कहा चिता भल नाही। तरुनी चिता सो बिरधाही॥
खेलि लेहु नइहर मो, सब मिलि परमद खेल।
पुनि नइहर के छाडतै, सासुर होब अकेल॥
हम अज्ञात न सासुर चीन्हा। यह नइहर ऊपर चित दीन्हा॥
है जग जीवन खेल समानू। ऊमर नहीं है मरन निदानू॥
हम कहँ पार मीचु सों नाहीं। निसरि गगन महि तट ते जाहीं॥
जानत मरम हमारो सोई। जाको सुमिरत है सब कोई॥
मूरत अलख नही जग ठाऊँ। हम तुम राखा है तेहि नाउँ॥
यह मूरत को तजि कै, चित्त अमूरत देहु।
जाहि अमूरत ध्यान सों, स्वर्ग लोक फल लेहु॥
राजकुँअर फुलवारी माही। धन को आवन बूझा नाहीं॥
चातुर चेता कै चतुराई। सब काहू सों बात जनाई॥
है फुलवारी मो एक जोगी। है काहू को प्रेम बियोगी॥
है यह ठौर वहुत दिन सेती। नहिं जानउ बाउर केहि नेतीं॥
सुनि के सखिन कहा चलु रानी। देखैं हैं कल जोगिय ध्यानी॥
बात सुधानी सखिन कहँ, चली सखिन के संग।
एक एक सब काहू, लीन्हे फूल सुरंग॥
बरजा एक अगम की नारी। तुम सुरूप राजा की बारी॥
अलबेली लागहु भल देखे। तुम तिय जिय अस जिय के लेखें॥
हसितै बारी बिना बियाही। जोगी देखै तोहिं न चाही॥
लागहु तपी नयन मो मीठी। यह जिनि होइ लगै तोहि डीठी॥
नहि जानहिं जोगी कस अहई। आपन कथा केहि नित दहई॥

देखहु मन फुलवारी, जाहु न तपी समीप।
होत पतग तपी वह, देखि बदन को दीप॥
जब यह बात सखी वह कही। सुनि मलीन रानी होइ रही॥
औरन कहा चलहु वहि बोरा। जग करता है रच्छक तोरा॥
रच्छक आप अलख है जाको। एकहु बार न वाकै ताको॥
पै अबही देखहु फुलवारी। फेर चलेहु जेहि ओर भिखारी॥
सुखी भई यह बात सयानी। लीन्ह सुरग फूल एक रानी॥
देखत रहिगै रानी, लीन्हे फूल को हाथ।
एक सखी हँसि बोली, इंद्रावति के साथ॥
हँसि कै मालिन को गुन गावा। धन चेता अस फूल लगावा॥
उतर दीन्ह सुनि चेता रानी। मोहि न सराहौ अहो पियारी॥
सुमिरहु तेहि जो है सुख दाता। जे यह फूल कीन्ह रँग राता॥
जो हमार दोउ हाथ बनावा। जेहि करतें मैं फूल लगावा॥
जग मों जावत है सब बना। तावत करता को दरपना॥
दीठ होइ तो देखऊ, तन आदरस मझार।
बदन विराजत है तेहिक, जेहिक सकल ससार॥

है वह एक जगत उपराजा। जो दोइ होत बनत नहि काजा॥
धरती गगन सँवारा सोई। तासो जोत अउर तम होई॥
करता तीन अउर दुइ नाही। एकै है दोऊ जग माहीं॥
जो किछु करत न पूछा जाई। पूछा जाइ जनम जेइ पाई॥
कीन्हा निस दिन औ रवि चदा। तेहि सुमिरन मों सबहि अनंदा॥
रात दिवस दुइ चिन्ह है, रात मिटत दिन होइ।
याही सो लेखा बरस, जानत है सब कोइ॥
इंद्रावति धन कमल सुबासा। आइ भँवर गूँजे चहुँ पासा॥
कहा सखिन सों डर जिउ पावै। भँवरन मों तन डक लगावै॥
कहेन सखिन तुम कमल पियारी। लेत भँवर हैं बास तुम्हारी॥
मोहे बास पाइ कै तेरी। कहाँ तिन्हे सुधि बिन्धै केरी॥
फूल भँवर होइ आइ भँवाही। तोहि ऊपर तो अचरज नाही॥

भँवर बास के कारने, चहुँ दिस आइ भँवाहि।
पोढा मजकरु रानियाँ, बिन्धैं की डर नाहिं॥
जहँ लग सुंदर रहीं सयानी। फुलवारी देखें रहसानी॥
कहा एक आगम की बारी। धन नइहर जामों फुलवारी॥
फुलवारी औ फूल बिलोकै। बहुत अनंद बढ़ी है मोकै॥
फेर न देखब अस फुलवारी। जब गवनै जावै ससुरारी॥
परै सीस पर भारी भारा। कैसे राखिही कन्त हमारा॥
नइहर अहै पियारा चक चूहट जिय होइ।
सुमिरि गवन सासुर को, दूर परै सब कोइ॥
सुनि इंद्रावति सासुर नाऊँ। मन मों सोच कीन्ह तेहि ठाऊँ॥
कहा जाब निश्चय ससुरारी। नइहर तजब तजब फुलवारी॥
छूटि परैं सब सखी सहेली। जावै सासुर अन्त अकेली॥
अहो सखी आगम मोहि सूझा। सासुर गवन आजु मैं बूझा॥
अस फुलवारी पाउब कहाँ। सासुर नगरी होइह जहाँ॥
तुम्हे समाँ कित पाऊँ, एक बैस की नार।
नइहर खेल ना पाइब, जब जावै ससुरार॥
समुझा सखिन सोच मो रानी। बोलीं सरब बोध की बानी॥
अहो पियारी सोच न करहू। जेहि प्रीतम प्यारे सग परहू॥
ठाउं देइ सुख मन्दिर प्यारी। लाइ देखावहि तोहि फुलवारी॥
देइहै बहुत हमैं अस चेरी। करइ रात दिन सेवा तेरी॥
प्रीतम जिउ सम राखै तोहीं। तोहि सग खेलं खेलइ वोही॥
अस दुख देइहै सासुरे, तोहि कामिन कहँ सोइ।
वैसो सुख नइहर मों, मिला न कबहूँ होइ॥
इंद्रावति फिर बात निसारा। तो सुख देइहै कत हमारा॥
जो नइहर मों जोरब नेहाँ। होवै एक जीउ दुइ देहाँ॥
चलब मान तजि सूधी चाला। तो सासुर अँचउब सुख द्वाला॥
रहवै सत्त सनेह सम्हारें। काम क्रोध त्रिसना कहँ मारें॥
राखब प्रीत सिखब गुन नीका। सुमिरन करब पियारे पीका॥

तो पाइब सासुर सुख, प्रीतम होइह साथ।
सुख अनन्द नित मानब, पिया पियारे साथ॥
धन की करनी जोखइ पीऊ। एहि समुझ डर मानत जीऊ॥
जाकर भारी होइहै तूला। सुख मंदिर द्वारा तेहि खूला॥
जेहि हलुका होइहै दुख सहई। औ दुख अगिन मंदिर मों रहई॥
करनी सिखा जान सब कोई। दाहिन सो पायें भल होई॥
देहिं लिखा बाएँ सों जाकों। बहुत कलेस परै सिर ताकों॥
करनी सेती छोट बड, सब किछु पूछें जाहिं।
सतवती गुनवत पर, डर एकों कछु नाहि॥
सखी एक आँसू कहँ ढारा। पूछेन कहाँ परान तुम्हारा॥
कहा गवन को दिन मैं बूझा। संकट दुख ता दिन को सूझा॥
जब सासुर गवने मैं जाऊँ। देहि सकेत मँदिर मोहिं ठाऊँ॥
दुइ जन पूछहि को पिय तेरा। को है जासों मगु तैं हेरा॥
पूछहिं कवन पथ तैं लीन्हा। डरे सों उत्तर जाइ न दीन्हा॥
उत्तर देउँ तो बाचऊँ, ना तो मारी जाउँ।
यही बूझि मैं रोई, कैसे होइ वह ठाउँ॥
रानी कहा रहइ जिउ कहाँ। पूछहि जदिन गवन घर महाँ॥
एक कहा यह जीउ पियारा। तापल रहइ सरीर मझारा॥
एक कहा जिउ पूछा जाइहि। पूछे बीच न काया आइहि॥
एक कहा दुइ बात न अहई। का पर कया बीच जिउ रहई॥
एक कहा कछु लइ तन कहना। कहना सों लहना चुप रहना॥
गवन मँदिर मों सुख दुख, डर सों टूटै हाड़।
अहै सरग फुलवारी, अहै नरक को गाड॥
बोल उठी एक सुंदर नारी। रहत फूल नित झरत न प्यारी॥
रंग सलोन फूल झरि जाई। चक चूहट उपजत अधिकाई॥
सुमन सुबरन सुगन्ध सोहाहीं। अत झरे माटिन मिलि जाहीं॥
उतर निसारा बूझन हारी। नित जो एकै रहत पियारी॥
जग माली गुन रहत छिपाना। बहुत बरन गुन जात न जाना॥

यह जग है फुलवारी, माली सिरजन हार।
एक एक सों सुदर, ल:वत ताहि मझार ॥
जीरन यह जगती हम पाई। नितु एक आवै नितु एक जाई ॥
केतिक बरन के फूलन फूले। केतिक की लालय मन भूले ॥
केतिकन रुपवंत अवतरे। केतिकन विरह आग सों जरे ॥
केतिकन भईन सलोनी नारी। केतिकन तिन पर भयेन भिखारी ॥
केतिकन विद्यावती भयऊ। केतिकन धनी बली होइ गयऊ ॥
अब हेरें नहिं पाइये, तेन सरीर को चीन्ह।
केतिक रतन पदारथ, मि्चु चोर हरि लीन्ह ॥
हम हूँ चलब अवध के पूजे। फेर न जग मों आइब दूजें ॥
फूल देखि का झँखहु पियारी। हम तुम सबकी आइहि पारी ॥
एक कहा वैरागिन होहू। अहै मरन हम कहँ औ तोहू ॥
होइकै बैरागिन तप करहू। जासो सग्ग सदन मँह परहू ॥
कहकी भेस न फेरै चाही। फेरें भेस भलो नहि आही ॥
पिय की सेवा नित करहु, रहहु सम्हारे नेह।
याते दाता देइहै। आगम दिन सुख गेह ॥
कहेन बहुत अब आगम सूझा। परमारथ सब काहुअ बूझा ॥
अब रानी चलि देखहु जोगी। कैसे राखत भेष बियोगी ॥
चंद्र नखत सँग पाँव उठायउ। जाइ चकोरहि दरस देखायउ ॥
सकल सखिन कहँ जोगी भेषा। जिउ दरवन पायउ जिउ देषा ॥
इंद्रावति औ सखिय सयानी। जोगी रूप बिलोकि लोभानीं ॥
मन लोचन मों चंद दिस, रहिगा चितै चकोर।
चद बिलोकत रहि गयउ, निज चकोर की ओर ॥
जब लग नैन चार रहु चारी। राजकुँवर कहँ ठग अस मारी ॥
दामिन चमक चाह अधिकाई। हुअऊ चितै रहे चित लाई ॥
बहेउ पवन लट पर अनुरागें। लट छितिरान पवन के लागें ॥
परी बदन पर लट सटकारी। तपी देवस भा निस अँधियारी ॥
मोहि परा दरसन कर चेरा। हना बान धन आखिन केरा ॥

प्रेम पथ को पंथिक, पहरें जोग दुकूल।
परी साँझ तेहि मगुमो, गएउ बाट सो भूल॥
हा हा सखिन कहा पछिताई। काहे तपी पर मुरझाई॥
नहि मुरछा मुख देखि सयाना। लट परतहि मुख पर मुरछाना॥
एक कहा लट सों मुख सोभा। होत अधिक लखि मुरछा लोभा॥
एक कहा लट नागिन कारी। डसा गरल सों गिरा भिखारी॥
एक कहा लट जामिनि होई। रात जानि जोगी गा सोई॥
एक कहा निसि जानि के, तपी गयउ जो सोइ।
का जोगी के जोग सों, तप पुरषारथ होइ॥
जोगी सो जो जागै रयना। मन पर धरै ध्यान को नयना॥
ध्यान समेत रयन जो जागै। ताको हाथ मनोरथ लागै॥
पहरू जागत ध्यान न लावा। यातें तेहि कछु हाथ न आवा॥
मन जागै तब जागब नीको। चित फिरि आवै धरती जीको॥
एकै बार न जागै कोई। थोरे दिन मों बाउर होई॥
जाके मन औ नैन मों, दरसन रहा समाइ।
ताको नींद कहाँ परै, चिन्ता आवै जाइ॥
बोली एक सहचरी सयानी। जब मुख ऊपर लट छितिरानी॥
यह मुख यह तिल यह लटकारी। ये तो कहि कै गिरा भिखारी॥
नहिं जानहि आगें कस कहते। चेत समेत तपी जो रहते॥
आवहु आगें अरथ लगावैं। सब कोउ अरथ पंथ पर ध्यावैं॥
सुनि सब सखी चेत दउड़ावा। जोगी हु तें समस्या पावा॥
एक कहा मुख लट तिल, मुकुर फाँद है चार।
जग मनसूबा फँदै कहँ, है एतो उपकार॥
आपुहि देखि मुकुर मों भूलै। दूसर सुआ जानि मन फूलै॥
दूसर देखि देखि कै चारा। कहैं तुरत यह फाँद मझारा॥
एक कहा मुख तिल लटकारी। संबुल भँवर अहै फुलवारी॥
एक कहा मुख ससिहि लजावा। लट जोगी को मन अरुझावा॥
तिल इंद्रावति मुख पर सोहै। तिल नाहीं जासों जग मोहै॥

इंद्रावति दृग लिखत कै, भा विरच मतवार ।
मसि लागउ लेखनी गिरेउ, सोभा भै अधिकार ॥
एक कहा का कोउ सराहै । रूप गरन्थ रानि मुख आहै ॥
तिल है सुन्न गरन्थ मझारा । लट स्यामल सोहत मसिधारा ॥
सबन बखाना जो जस बूझा । इन्द्रावति कहँ आगम सूझा ॥
कहा तपी अस कहते आगे । गरब न करु सुन्दर डर त्यागे ॥
यह मुख यह तिल यह लटकारी । अंत होइ एक दिन सब छारी ॥
कहेन सखी सब आपमों, धन इन्द्रावति बूझ ।
धन अधीनता धन वचन, धन धन धन धन सूझ ॥
दाया सखी गुलाब मँगायउ । छिरिकि कुँअर कहँ बहुत जगायउ ॥
सोइ गये अधिकौ नहिं जागा । वह गुलाब सीतल तेहि लागा ॥
एक कहा यह भा मतवारा । धन के नैन बारुनी ढारा ॥
सखिन कहा हो प्रान पियारी । मारेहु चखुसर गिरा भिखारी ॥
फिर जिउ जो जोगी यह पावै । तोहि तजि औरहि ध्यान न लावै ॥
सखिन न जानहि जागी, है बाउर तेहि लाग ।
तजा राज कालिजर, लीन्ह जोग बैराग ॥
त्राह त्राह मैं आपन मारा । काहे बूझहु दोष हमारा ॥
कहेन दोष नाही धन तेरा । दोष तुम्हारी आखिन केरा ॥
जेहि चितवैं तेहि मारहि बानू । सुमिरि सुमिरि तोहि देइ परानू ॥
फेर सखी सब बात सम्हारा । दोष नैन नहिं दोष तुम्हारा ॥
रूप दरब मुख तोर पियारी । अम्बुक जमल करहि रखवारी ॥
चाहा लेइ तपी दृग, होइ के चोर समान ।
नैन तुम्हारे तस करै, मारा बरुनी बान ॥
कर तसकर को काटा चाही । जीउ न मार दोष धन आही ॥
हैं हत्यारे नयन यह तेरे । खजन मिर्ग अहैं दोउ चेरे ॥
अहै नयन सो उत्तम कानू । तासों बात सुना यह प्रानू ॥
यह नित जो दोऊ जग कीन्हा । रसना एक करन दुइ दीन्हा ॥
की कहु एक बात मति सानी । सुनि दुइ बात आन सो रानी ॥

बहुतन को ससार मों, जो सिर्जा दिन रैन।
छाप दीन मन ऊपर, औ सरवन पट नैन॥
मसि औ पत्र सखी एक आनी। जीउ कहानी लिखा सयानी॥
बहुरि लिखा हो जोगी भेषा। जोग तोर इंद्रावति देषा॥
ताको दरसन पाय भिखारी। मुरछानेउ नहि सकेउ सम्हारी॥
अबहीं तेरो जोग न पूजा। जोग छोड़ि करु काज न दूजा॥
लिखा सोधान सखिन के हियरे। चली राखि राजा के नियरे॥
जीउ कहानी लिख कै, राखि चली तेहि पास।
छोड़ तपी को आई, जहाँ सदन सुख बास॥
जब राजा जागा सुधि पावा। जागि चहूँ दिस दिष्ट लगावा॥
पत्र उठाइ बिलोकेउ ज्ञानी। पढा सँपूरन जीउ कहानी॥
जब बाँचा इन्द्रावति नाऊँ। झंखा बहुत अपन मन ठाऊँ॥
उपजी प्रेम भाव उर दाहा। बहुतै पछताना कहि हा हा॥
सो रानो आई मोहिं आगे। पहिरेउँ यह कंथा जेहि लागे॥
मोहि लेखे एक पल भर, उपबन भएउ बहार।
अब देखेउँ फुलवारी, आइ बसेउ पतझार॥
कहाँ गई वह प्रान पियारी। जेहि कारन मैं भयउँ भिखारी॥
कहाँ गई वह दोप सिखा सी। जाको सै रम्भा सी दासी॥
दिष्ट परी तनु पुनि का भई। देखि न परी परी सम गई॥
रे जिउ कमल सुगंधित अंगू। गयेउ न लागेउ अलि होइ संगू॥
गौरी वह गौरी सम गोरी। नैन नैन सो स्यामा जोरी॥
गहा धिर्ज मन भीतर, लिहे मिलन की आस।
भा कालिजर राजन, विप्र योग को दास॥

नहान खंड

इंद्रावति मन प्रेम पियारा। पहुँचा आइ तीज तेवहारा॥
रहिल जहाँ इंद्रावति प्यारी। आइन राजदीप की बारी॥

होइ कष्ट मन रहा समाना। पै आनन्द सखी नित माना ॥
कहेनि सहेलिन है डर मानू। मन तारा चलि करहिं नहानू ॥
रतन हितू जन के बस भई। सखिन साथ मन तारा गई ॥

केस सुगंधित खोलि कै, राखि चीर सब तीर।
पहिरि नहान दुकुल सकल, कीन्हा सजल सरीर ॥

अब जूरा इंद्रावति छोरा। भयउ घटा मों चाँद अँजोरा ॥
पैठिहु जब जल भीतर रानी। पानिय पायउ तारा पानी ॥
झुलना झूलेहु करत नहानू। लहकि चहेउ चुम्बै अधिरानू ॥
लखि नथ मोती की अमलाई। सुक्र छपाना आप लजाई ॥
मनु तारा भा गगन समानू। भयेउ मयंक समाँ वर प्रानू ॥

सुरज उआ आकासही, चंद उआ जल माँह।
कुमुद तामरस फूले, दोउ मित्र के पाँह ॥

कहा रतन सों एक सहेली। बरनि न पारों तोहि अलबेली ॥
केस कस्तुरी हिर्दै फाँदू। अहै लिलाट अँजोरा चाँदू ॥
अहै भिर्कुटी धनुक समानू। है बरुरी जिसनू कै बानू ॥
नैन सलोन जगत मन हरा। करन सीप मोती सो भरा ॥
नासिक मनहुँ कीर बैठो है। बरुक अकार कला निधि कौ है ॥

चिबुक कूप को पानी, चाहत कीर घरान।
फूल गुलाब कपोल है, तिल है भँवर समान ॥

सीरन लाल अधर रतनारा। दसन पाँत मोती को हारा ॥
मन मेरो लालहि चित धरा। जाइ चिबुक गाड़ा मों परा ॥
रेखा एक ग्रीउँ मों सोहै। का बरनों सोभा मन मोहै ॥
निर्मल बदन आरसी छाजै। गल कंचन को डाड़ी राजै ॥
अमल कनक सो भुजा बनावा। सुन्दर हाथ कमल मन भावा ॥

यह सामै हो रानी, जल औ मुख रबि तोर।
पाइ होऊ कर वारिज, बिकस चले मुख वोर ॥

उरज बीर दुइ मनमथ कोहैं। छबि उपवन दुइ श्रीफल सोहैं ॥

नाहीं नाही चुप यह जानहु। बंटा जमल जोत के मानहु ॥
का बरनो रोमावलि हेरी। सेल्है मदन बाहनी केरी ॥
पातर लक केस की नाईं। नाही सों सिरजा जग साईं ॥
जंघ चरन सो आचम्भो है। रम्भा खम्भ कमल पर सोहै ॥

मानहु खम्भा रूप के, जुगल जंघ है तोर।
चरन बखान न कै सको, नित परसै चित मोर ॥

सुंदरता को लच्छन जेते। प्यारी चेरे तेरे तेते ॥
लट कुंतल अति स्यामल आहै। भौह स्याम जेहि इन्द्र सराहै ॥
स्याम अधिक लोचन सँवराई। स्यामल बरुनी जिश्नु डेराई ॥
ललित अधर औ रसना तोरे। अँगुली सीस ललित रंग बोरे ॥
ललित कपोल गुलाब लजाही। जग मन मधुकर समाँ लोभाहीं ॥

तरवा और हथोरी, आनन रसना छोट।
गल कुंतल दिर्ग लाँब है, बानन मिलै न वोट ॥

दसन सेत औ नैन सेताई। अधिक सेत कछु बरनि न जाई ॥
गोल सीस औ बदन तुम्हारा। गल एडी बिधि गोल सँवारा ॥
ऊँच नासिका ऊँची भौहैं। बरुनी ऊँच बात सम सौहैं ॥
करन छिद्र पायउ सकराई। साँकर नासिक छिद्र सोहाई ॥
आहै साँकरि नाभ तुम्हारी। तोहि बिधि सौपै सानि सँवारी ॥

एतो सुघराई पर, रचिक गरब न तोहिं।
सुंदर सील तेहारो, लागत नीको मोहिं ॥

निज बखान इन्द्रावति पाएँ। रही लजाइ सीस औधाएँ ॥
कहा बखान करहु का मेरा। है मनाक जीवन जग केरा ॥
का अभिमान देह पर करऊँ। एक दिन होइ छार होइ परऊँ ॥
गरब सखी सब ताकहँ छाजा। जो त्रैलोक बीच है राजा ॥
जे निधनी को सग न चाहा। धयेउ न तेन्है अगम सों लाहा ॥

परगट रंग देह को, देखि न गरबै कोइ।
आवै एक देवस अस, छार कलेवर होइ ॥

बोलिन राजदीप की नारी। आवहु जलमों रचै धमारी ॥
जब लग सीस पिता को छाहाँ। खेलहिं कोउ करहि जगमाहाँ ॥
जब चल जाहिं कंत के देसू। कैसो कैसो सहै कलेसू ॥
नइहर देस कहाँ फिर आवन। कहँ यह पंथ चलै यह पावन ॥
सो गुन एकउ हाथ न आया। जासो होई प्रीतम दाया ॥
जानों नहि पिय प्यारा, राखे कौनै मान।
एकौ गुन नहि सीखा, हम बाउर अज्ञान ॥

रानी कहा भेद अब कहना। केहि गुन होइ कत सो लहना ॥
एक कहा सेवा नित कीन्हेउ। चित मूरत सम पिय पर दीन्हेउ ॥
एक कहा लहना तब होई। पिय जो कहै करै धन सोई ॥
एक कहा नित करत सिंगारा। चाहै धन कहँ कंत पियारा ॥
एक कहा जो सूघर होई। पावै लाभ कत सो सोई ॥
इंद्रावति प्यारी कहेउ, ताकहँ चाहै पीउ।
जो पिय की सेवा किहे, गरब न राखै जीउ ॥

समुझ बन्दमो प्रीतम प्यारा। इंद्रावति अम्बुक जल ढारा ॥
नहिं जानो केहि भाँते सोई। दिन औ रात बितावत होई ॥
अरे जीउ दाया तोहि नाहीं। तेरो जीउ परेउ बँद माही ॥
जलमों रानी ठाढ तवानी। सखिन साँत रसमों पहिचानी ॥
पूछै आगमपुर की बारी। सजल नयन केहि लाग पियारी ॥
आन अनंद देवस है, अहै तीज तेवहार।
केहि कारन चिन्ता मों, प्यारी जीउ तोहार ॥

सकल सखिन सो मरम छिपावा। आनहि भाँति कि बात सुनावा ॥
वह दिन समुझ सखी मैं रोई। जा दिन नइहर बिछुरन होई ॥
वह दिन समुझ सखी मैं रोई। जा दिन नइहर बिछुरन होई ॥
बिछुरहु तुम सब सखी सहेली। सब अलबेलि रूप अलबेली ॥
मिलैं कहाँ तुम समाँ पियारी। कहाँ अलिबेल कहाँ फुलवारी ॥
रहै न सासुर आदर मोरा। सासुर लोग करै नक तोरा ॥

सो दिन समुझि परै सो, जल महँ ठाढ तवाऊँ।
नहिं जानों कस होइ है, हम कहँ सासुर ठाउँ॥
रंग न फीको करिये जी को। पी को संग पियारी नीको॥
तब लग नइहर देस पियारा। जब लग मूरखता को पारा॥
जब ही खुलै सेमुखी नैना। सासुर सोच बढ़ै दिन रैना॥
सासुर देस मिलै सब प्यारी। हितू तड़ाग राग फुलवारी॥
पीउ अनन्द मूल जब पावा। सब सुख राज हाथ मों आवा॥
तुम का आपुहि को डरहु, है हमहूँ कहँ त्रास।
पै सासुर कविलास है, रहे जो प्रीतम पास॥
खेलै लागिन तारा माहाँ। कोउ धरि काँध कोऊ धरि बाहाँ॥
सुन्दरता सागर वह नारी। मन तारा मौ रचा धमारी॥
लै जल मुख कै ऊपर मारै। नरम कलोल देहि जब हारै॥
रानी साथ कहा एक नारी। गहिरैं पाँव न धरहु पियारी॥
जो गहिरैं पग राँखइ कोई। नीर सीस तें ऊपर होई॥
गहिर बहुत है आगें, डूबि मरै जनि कोई।
ना तो खेल कोउ मो, महा महा दुख होइ॥
सुनि यह बात सखी एक रोई। आँसु गुलिक जल ऊपर वोई॥
पूछै और आँसु कस ढारे। खेल के बीच अनन्द नेवारे॥
उतर दीन्ह सासुर मगु ठाऊँ। है सागर भौ सागर नाऊँ॥
होइ है जा दिन गवन हमारा। नहि जानौ किम उतरउँ पारा॥
यह नइहर तारा है जाना। जेहि आगे पगु धरत डेराना॥
वह न जान कस होइ है, गहिर गम्हीर अथाह।
इहै समुझि मैं रोइउँ, केहि बिधि होइ निबाह॥
सुनि सब राज दीप की बारी। तजि आनद समुझा ससुरारी॥
आगम सोच कीन्ह सब कोई। सासुर पंथ बीच कम होई॥
बोलिन फेर सोच यह काहै। प्रीतम दाया पंथ निबाहै॥
होइ जलधि तो सेवक लेई। धन कहँ जलधि पार कै देही॥
जा सग ब्याह होत जग माहाँ। पथ निबाहत सो धरि बाहाँ॥

जनम सँघाती होत सो, जाके सग बियाह।
जैस परै तस अगवै, धन को करै निबाह॥

कै नहान सब बाहर आईं। निर्मल अंग परी की नाईं॥
लटकी लट इंद्रावति केरी। दोऊ दिस तैं मुख कहँ घेरी॥
मुख लट सौं सोहै वह रामा। एक चद्रमा दूइ त्रिजामा॥
लट कपोल पर सोहै कैसे। बैठा नाग त्रित्त पर जैसें॥
सोन बिनावट दुकुल रँगीला। कीन्हा अग सो परगट लीला॥

कै नहान घर कहँ चली, वै सब कनक सरीर।
उनकी निर्मलताइ सौं, भा निर्मल मन नीर॥

मन तारा केती रहि रानी। दिउरी एक देखि विथकानी॥
प्रान बाटिका की वह स्यामा। पूछा कवन सती यह ठामा॥
सखियन कहा सती यह ठावँ। रानी कहा सती है नाऊँ॥
तब की बात हमैं सुनि परी। अपने कंत लाग धन जरी॥
जस तोहार तस ता गल नोका। खात तमोल देखावै पीका॥

अब धन जरिकै छार भै, रहे न एकौ चीन्ह।
दिउरी साखी करत है, अगिन छार तेहि कीन्ह॥

इंद्रावति करुना मैं रोई। एक दिन छार होइ सब कोई॥
दिउरी के समीप होइ कहेऊ। हहुँ कैसो यह रानी रहेऊ॥
हहुँ कस रहा चरन औ हाथा। कैसौ रहा ग्रीउ औ माथा॥
कहाँ गई धन मिलै न हेरैं। है ता जिउ दिउरी के नेरैं॥
हहुँ कस रही चाल नारी की। दयावन्ति की मानिनि जी की॥

मन तेवान के ठाढ़ी, रही घरी भर आप।
हिर्दे सॉत रस डूबा, बुझि जगत कहँ स्वाप॥

इंद्रावति जब ध्यान लगावा। सबद एक एक दिस ते आवा॥
मैं का रहिउ रही बहुतेरी। जिनकी रही अपछरा चेरी॥
सोऊ जगत छाड़ि कै गईं। मिलि धरती मौं माटी भईं॥

इहाँ न लहत सिंगारी काया। लहत न गरब लहत है दाया॥
लहत न काया सुन्दरताई। लहत पुन्य मन की निर्मलाई॥

सबद पाइ इंद्रावति, अधिकौ रही तवाइ।
चिन्ता बहुतै कीन्हा, अपने मंदिर आइ॥

हौ मैं पाप भरी जग माही। आस मुकुत की है किछु नाहीं॥
है मोहि बीच दोष जहँ ताईं। डरउँ करै कैसो जग साईं॥
साहस देत परान हमारा। अहै रसूल निबाहन हारा॥
निस दिन सुमिरु मोहम्मद नाऊँ। जासों मिलै सरग मो ठाऊँ॥
करता तोहि मोहमदि कीन्हा। माथ सुभाग अस तोहि दीन्हा॥

ना करु सोच अगम को, राखु हिदैं मो आस।
जाके दीन बीच तैं, सो देइ है सुख बास॥

अरे प्रीतम तैं मन हरा। अहों बियोग बंदमों परा॥
आइ बद सों मोहि छुडावहु। दोऊ जगत भलो फल पावहु॥
मोहि पाछें बैरी बहुतेरे। तेरे सेवक साथी मेरे॥
खरग काढ़ि बैरी कहँ मारहु। बंद कूप ते मोहिं निसारहु॥
अलख सँवारा तुम कहँ वली। चलै जगत मौ कीरत भली॥

दूसर बद न भावत, जहाँ प्रेम को बंद।
जगत बद दुखदायक, प्रेम बंद आनंद॥

जुद्ध खंड

बुद्धसेन क्रीपा कहँ सेवा। जैसे मानुष सेवै देवा॥
राज कुँवर को बंद सुनावा। सुनि क्रीपा क्रीपा पर आवा॥
तब सहाय जगपति सों माँग। सब पायव कछु एक न खाँग॥
क्रीपा चला कटक लै भारी। गोंहन सुभट चले बलधारी॥
पानहु दीन्ह समुद्र हलोरा। लहर मनुज तंबेरम घोरा॥

तबेरम दल सोहै, कज्जल गिर के रूप।
रहेउ अचल कज्जल गिर, ताहि चलायउ भूप॥

कहत न पारउँ तुरै बखानू। रहे चलत महँ पवन समानू॥
औ थिराय कै सामै माही। माटी चाह सो अधिक थिराहीं॥
नीचे जल सम पाँव उठावैं। अगिम समाँ ऊपर कहँ धावैं॥
बाजी सकल पवन के जाये। मानहु चेत भेस धर आये॥
वै सवार है पर केहि मानन। मनहुँ पवन ऊपर पउचानन॥

यह समीर तेन आगें, चलत थकित होइ जाइ।
आगे वै पगु राखही, पाछे पवन थिराइ॥

क्रीपा आवागढ़ नियराया। आया पति दुर्जन सुधि पावा॥
गढ़ भारेउ औ कटक बटोरा। धरेनि अलंग बीर चहुं ओरा॥
तिस्ना कोप सहायक आयउ। आयउ गरब अधिक बल पायउ॥
गढ़ सो छूटन लागेउ गोला। डोला सात अकासहि डोला॥
क्रीपा दिस छूटत अरि चोटा। भयेउ जगत करता की वोटा॥

बाजहिं बाला संजुगी, चहुँ दिस परेउ पुकार।
चार मास तहँ बीता, होत सत्रु सों मार॥

जो करतार पथ पर जूझा। ताकहँ चिरंजीत हम बूझा॥
करता मगु पर जें रन लायउ। ताहि सहाय गगन सों आयउ॥
आयउ नभबासी की सैना। दीख न पारा ता कहँ नैना॥
करता की सेवा के बेरा। होइ जहाँ डर दुर्जन केरा॥
सुमिरन सेवा आधे करही। आधे लोग सत्रु सँग लड़हीं॥

धन जो सिरजनहार मगु, गहि कै राखेउ पाव।
पाव न टारा जुद्ध सों, आय उरद मों घाव॥

गढ़ मों गरब राय मुख खोला। गरब बचन दुर्जन सो बोला॥
जैसो जगपति तस तुम राजा। गढ़ सों निसरि जुद्धि तेहि छाजा॥
एकै एक करहिं मिलि जूझा। जाय सुभट जन को गुन बूझा॥

तब दुर्जन गढ़ सों निसराना। हलकी रज तिमिरार छपाना ॥
चढ़ि मैदान कोप माँ ठाढा। छमा खरग यह दीसों काढ़ा ॥
भयेउ खेत के ऊपर, सीधै सींघ भिड़ाव।
आइ सरीरन संचरेउ, काहे करसों घाव ॥
सुमिरि हियें करता कर नाऊँ। मारा छमा कोप सिर ठाऊँ ॥
जब वह कोप गिरा गा मारा। आयउ मदनसिंह बरियारा ॥
धरम राय यह दिसते धायउ। मदन सिह कहँ बाँधि लियायउ ॥
मदन विमद होइ सेवक भायउ। आपा सुरा उतरि तेहि गायउ ॥
दुर्जन कटक सहित तब धावा। अतरन रकत समुद्र बहावा ॥
एकै भये दोऊ दल, जमल जलधि मैं एक।
कठिन परगटेउ सजुग, मन सो गयेउ बिबेक ॥
भयेउ घटा ढालन सो कारी। खरगन भये बीज चमकारी ॥
गेंदा सीस खरग चौगानू। खेलहिं बीरहिं चढ़ि मैदानू ॥
हाल आपनो, आपनों चाहैं। अरि को शस्त्र चलाव सराहैं ॥
भाला खरग हनै सब कोई। वोडन खरग ठनाठन होई ॥
गगन खरग सो ठनठन गयउ। हिन हिन औ धुन हन हन भयउ ॥
वोनई घटा धूर सो, दिन मनि रहा छिपाय।
तहाँ महाभारथ भा, सबद परेउ हू हाय ॥
साहस राय गयंद सरीरा। औ मन सिंह धरम रन वीरा ॥
खरग हनै जाके उपराहीं। बिनु बिलगें सो बाचै नाहीं ॥
कोउ भये घायल कोउ मारे। भाला खरग सुरा मतवारे ॥
छूंछा बान सों भयेउ निखंगू। भयेउ निखग बान को अंगू ॥
बढ़ेउ कमठ कहँ दाह कराहू। चकाचाक भा धाधक हाहू ॥
जुद्ध करत दोऊ कटक, थाके रहे अघाय।
दुर्जन रिपु मारा परा, ता दल गयेउ पराय ॥
क्रीपा जब दुर्जन कहँ मारा। जाइ के बंद सों कुँवर निसारा ॥
कुँवर कहा क्रीपा जस लीजे। जलज सिंधु दिस गवन करीजे ॥

झीपा कुँवर सहित गा तहाँ। रहा समुद्र गुलिक को जहाँ॥
कहा बहुत राजा जिउ दीन्हा। काहुअ मोती हाथ न कीन्हा॥
बहुत महीप भये मर जीया। मोती काढ़ै नित जिउ दीया॥
दीन्ह कुँवर कहँ झीगा, मोती ठउर बताइ।
औ खेवक हकरायेउ, राहहिं दीन्ह चिन्हाइ॥

राजा जगपति यह सुधि पावा। मरमी जन सों मरम जनावा॥
एक मनुष राजा सों कहा। ना जानहिं जोगी कस अहा॥
राजन ऊपर परन तुम्हारा। नाहीं सबै निसारन हारा॥
यह मोती तेहि काढब छाजा। राजा पुत्र होइ जो राजा॥
बरजि पठावहु बेर न कीजै। जात खोजि कै आज्ञा दीजै॥
भायेउ बात निपं कहँ, भेजा तुरत बसीठ।
फेरि लियाई कुँवर कहँ, दीन्ह जलज दिस पीठ॥

बैठा बिर्छ तरे अनुरागी। चिन्ता कथन हुतासन लागी॥
कहै कवन उपकार बनावउँ। जातें प्रान बल्लभा पावउँ॥
जावक होउँ होइ दुख मेटउँ। तो वह कमल चरन कहँ भेंटउँ॥
कज्जल होउँ नयन लगि रहऊँ। होउँ पवन लट ऊपर बहऊँ॥
होइ मोती बेसर महँ परऊँ। होइ प्रतिबिम्बी छाया धरऊँ॥
जेहि प्रान प्यारी के, अमी भरे अधरान।
ता पगु रज के ऊपर, वारों आपन प्रान॥

मधुकर खंड

इंद्रावति चिन्ता महँ परी। रहै न बिनु चिन्ता एक घरी॥
आइ रैन तेहि बहुत सतावै। कल न सुपेती ऊपर पावै॥
कलगै गलगै जलगै काया। तेहि वियोग को पीर सताया॥
सखिन मता आपुस मों कीन्हा। सब मिलि कै ऐसो मत लीन्हा॥
निस कहँ जहाँ रहै वह रानी। सदा सुनावहु एक कहानी॥

होइ बहोरै जीउ को, सुनत कहानी बात।
चिन्ता जाय सरीर सों, नींद परे वहि रात॥

एक सखी निस होतहि आई। मधुरी बचन असीस सुनाई॥
कहा कहत हौ एक कहानी। सरवन दै कै सुनिये रानी॥
बहुत बचन करतार पठावा। जेहि सुनि कै बहुतन मनु पावा॥
कहा बहुत जेन की मति फेरी। अहै कहानी आगेहिं केरी॥
अहै कहानी पै सुन रानी। है अमृत सानी रस बानी॥

कहा कहानी कहिये, सुनो कान दै ताहि।
जीउ बिरह सो तन महँ, उठत कराहि कराहि॥

मन रानी को पाय सयानी। धन सों लाग सो कहै कहानी॥
मोहनपूर रहा एक गाऊँ। तहाँ महीपत मधुकर नाऊँ॥
जस मधुकर रस रहै सोभाना। तैसे वह रस महँ लपटाना॥
जग रस बीच परा जो कोई। आगम रस नहि पावहि सोई॥
रस पावै जो जेहि करतारा। दया दिष्ट सों हिया उघारा॥

मधुकर के मन्दिर मो, रहै बहुत रनिवास।
संघत करै भँवर सम, लब अम्बुज के पास॥

एक दिन राजा गयेउ अहेरे। देखा एक मिर्ग कहँ नेरे॥
मिर्ग चला मधुकर है हाँका। मिर्ग पवन दहुँ रहै कहाँ का॥
चला मिर्ग के पाछे सोई। छुटा लोग ना पहुँचा कोई॥
जात जात एकै बन महँ परा। देखा बिर्छ एक अति हरा॥
भयेउ कुरग कुरग हेराना। तरिवर तरें आइ पछताना॥

ऊँचा तरवर देखि कै, और गम्हीरो छाँह।
सुख पायेउ दुख भूला, भा अनंद मन माँह॥

सीतल छाहाँ सों सुख पाई। पौढा भुईं पर बसन बिछाई॥
ततिखन दुइ सुक आइ बईठे। बोले बचन आप महँ मीठे॥
पूछा एक कुसल हो प्यारे। केहि धरती सुख वास तुम्हारे॥

जब सों हम तुम बिछुरे होऊ। मिला न तुम्हें समाँ हित कोऊ॥
जेहि भेंटेउँ अनकारी पायेउँ। तासों भागेंउ प्रीत न लायेउँ॥
सुभ बेला यह सुभ देवस, दरसन मिला तोहार।
समाचार आपन कहो, जीउ थिराय हमार॥

दूसर सुआ अधर कहँ खोला। समाचार की बानिय बोला॥
जा दिन छूटा सग तुम्हारा। जाइ परेउँ एक विपिन मझारा॥
तरिवर पर निर्चिन्त बईठेउँ। छल पहरा को एक न डीठेउँ॥
सब अनजान न जानत कोई। गुपुत अंतर पट सो का! होई॥
जिनि यह कहौ करौ असि भौरें। दहुँ अस प्रगटे भोर अँजोरें॥
मैं निचित अपने मन, आइ एक चिरिमार।
खोंचा मारि बझायउ, डारेउ बद मझार॥
लै मोहिं प्रेम नगर के हाटा। बेचेसि चलिगा दूसर बाटा॥
परेउँ रूप राजा वर माहीं। जहाँ दरब कछु खाँगा नाही॥
तेहि के घरे सुन्दर एक बारी। तेहि की सुता सुदर सुकुमारी॥
अति सुगध मालति की काया। जनुविधि सुगंध मिलाइ बनाया॥
मोहिं राजा मालति कहँ दीन्हा। बचनन सों सेवा मैं कीन्हा॥
कीन्ह पियार बहुत मोहि, दायावन्ती होइ।
सेवा किहें पियारा, होइ अंत सब कोइ॥

मालति रूप न बरनै पारउँ। केति कौ अर्थ न चित सँचारउँ॥
अबही तेहि सग भँवर न लागा। मिर्ग नयन लखि आनन भागा॥
मालति बास मालती बासा। मालति पास मालती पासा॥
जानहुँ ससि भुईं पर अवतरा। पुहुमी पर उतरी अपछरा॥
है सुकुमार बहुत वह रानी। बोलत बानी अमृत सानी॥
है मालती सुवासित, सुगध भरे जनु अंग।
ज्ञान भरी सुदर सखी, रहैं सदा तेहि संग॥
एक देवस धन रूप निधानू। निर्मल तारा गइल नहानू॥
सून मँदिर मों पिंजर मोरा। रेवाँ रहा मजारिय तोरा॥

बाँचेउँ रिपु सों हियें डेराना। पिंजर सों मैं निसरि पराना॥
बंद छुटे आनंद मैं पावा। अत पखेरू अहइ परावा॥
जेहि के छलें छुटा सुखवासू। तेहि बैरी कर का बिसवासू॥

अब बन बन फेरा करउँ, समुझि पिंजर को बंद।
काहू कर सेवक नही, मन मो रहत अनन्द॥

सुनि मधुकर मालति कै नाऊँ। भा मालति मधुकर तेहि ठाऊँ॥
उठि कै कहा बिहंग पियारे। बात न बान प्रेम कर मारे॥
तुम पडित बुधवंत गरेवा। उतरहु आइ करउँ मैं सेवा॥
हहु नियरे पै करमों नाही। रहेउ समाइ सकल तन माही॥
आवहु सीस देउँ तेहि ठाऊँ। तोहि लै चलहुँ अपाने गाऊँ॥

जिउ अस राखऊँ तुम कहँ, धरउँ न पिंजर माँह।
जल चारा आगे कै, रहौ जोरि दोउ बाँह॥

कहा सुवा तुम मानुष होऊ। तुम धरती पर ढारहु लोहू॥
आगे अब मानुप नहिं आवा। बहुतन औगुनता पर लावा॥
है मानुष निर्दै हत्यारा। सकै अनुज कहँ जिउ सों मारा॥
सात देह मानुष कर जारै। सात नरक द्वारे महँ डारै॥
चाम जरै तब दूसर देही। मानुष बार बार दुख लेही॥

हौ पडित औ चातुर, कहाँ चलौ तेहि सग।
जिउ पंखी नहि पालै, पाले अंग बिहग॥

तुम मोहि यह सत बात सुनावा। मानुष परसै ऐगुन आवा॥
पै मानुष बुध कै बउसाऊँ। सकलो सिष्ट को जाना नाऊँ॥
मानुष पर दाता की दाया। सकलो सिष्ट को नाम सिखाया॥
करता की नेंव मानुष अहई। का जो दोष पाप मों रहई॥
प्रेम नगर औ मालति बातैं। फेर सुनाउ चतुर महातैं॥

एक एक कै बरनहु, वह मालति की बात।
सुनउ जीउ सरवन दै, हो पंडित सुखरात॥

कहा मोहि प्रान समों जेइ पाला । मन भा तेहि की प्रीत को माला ॥
मरमी भयउँ सदा कइ सेवा । तोहि बेरान से भाषउँ भेवा ॥
सरवन सुनै जोग तेहि नाही । भूल न देखेसि देखेसि छाँही ॥
नरक बीच बहुतन कहँ भरईं । मन राखहि पै बूझि न करईं ॥
नैना होइ न देखहि नैना । सरवन रखहि सुनहि नहि बैना ॥

वे सब पसु के मान हैं, बरू पसु चाह अचेत ।
जेहि के मन नहि चेत है, तेहि को भेद न देत ॥

कहा कहा मेरो तुम मेटा । नहिं जानो का ऐगुन भेंटा ॥
बिनती एक करउँ कर जोरी । मानु दया सों विनतिय मोरी ॥
मोर सदेस कान कै लीजै । प्रेम नगर कहँ गवन करीजै ॥
जायेहु जहँ वह मालति प्यारी । तासो भाखेहु बिथा हमारी ॥
सपत तेहिक जेइ जनमाँ नोही । प्रेम हमार जनायहु वोही ॥

मोहनपुर महँ मधुकर, कहहु निर्प एक आह ।
बहुत बेयाकुल कीन्हा, प्रेम तेहारो ताह ॥

कहा तेहारो बिनती मानेउँ । मालति कर मधुकर तोहि जानेउँ ॥
एक बार तोहि कारन जाऊँ । धन सो कहऊँ तेहारो नाऊँ ॥
आनक सपत दिहा नहि काही । सपन भलो करता कर आही ॥
बहुत सपत जो मानुष खाही । तै जिन रहु तेहि अशा जाहीं ॥
कहौ नाम सुनि कै तोहि लोभा । बिनु देखै मूरत औ सोभा ॥

यह सब कहि उड़िगा सुवा, मधुकर मन पछतान ।
पखी सम चंचल है, काया बीच परान ॥

हेरत सकल लोग औ दासू । आए सब मधुकर के पासू ॥
लोग समेत निर्प घर आएउ । मन महँ प्रेम बसेरा पाएउ ॥
परगट राज करै औ बोलै । गुपुत दिष्ट मालति पर खोलै ॥
परगट सब के जाने भोगी । गुपुत भएउ मालति कर जोगी ॥
परगट रहइ आपने गाऊँ । गुपुत रहै मालति के ठाऊँ ॥

परगट सब सों बोलै, गुपुत जपै वह नाम।
मन महँ रहै व्याकुल, हारेगा सुख बिसराम॥
मालति उहाँ बहुत दुख देखा। जा दिन सो गा सुआ सरेखा॥
कहै कहाँ वह पडित सुआ। कादहुँ हुआ जियत की मुआ॥
छूँछा पिंजर रहिगा रेवा। उडिगा प्यारा प्रान परेवा॥
जो पिंजर की भीतर बोला। औ जानों यह पिंजर डोला॥
सो चलिगा केहि बन ठहराना। रहा आपनो भयेउ बिराना॥
सुवा आनि को मेरवे, पिंजर देइ जियाइ।
का औगुन दहुँ देखा, तजि के गयउ पराइ॥
सखिन बुझावहि सुवा पियारा। ठहरा जब लग रहा तुम्हारा॥
उड़िकै गा रहिगा पछतावा। कहाँ थिरै जब भएउ परावा॥
जो पछताने आवइ हाथाँ। हम पछताहि सकल तुम साथाँ॥
पिंजर देह रहा तेहि भारी। हलुक देह उड़ि लीन्हेसि प्यारी॥
उड़ि कै पन करि भयेउ अहेरी। तेहि डर छूट मजारिन केरी॥
पिंजर बीच रहा सुवा, चारा चिन्त मझार।
अब ऐसे बन मे गएउ, सुख सों मिलै अहार॥
दिन दस बीते सोच मो गयऊ। सुवा जाइ कै परगट भयऊ॥
मालति देखि जीउ जन पावा। प्रान मिलै कहँ आगेहँ धावा॥
कहा प्रान अस नियरें होहू। तोहि नित बहुत पिया मैं लोहू॥
कहा सुवा बाचा मोहि दीजै। मोहि पिंजर के बीच न कीजै॥
मैं बन बीच रहेउँ जब भागा। नरक समाँ अब पिंजर लागा॥
बाचा दीन्हा मालती, सुवा नियर भा आइ।
कठ सुवा कहँ लायेउ, प्रान पियारी धाइ॥
कहा कुसल कहु प्यारे सुवा। तोहि नित आँसु नैन सो चुवा॥
कहो कवन औगुन मोहिं लागे। जेहि नित छाड हमैं तुम भागे॥
केहि बन भीतर रहेउ बसेरा। कहाँ कहाँ तुम कीन्हाँ फेरा॥
सुनि कै सुवा असीस सुनावा। देइ असीस सीस पुनि नावा॥
तुम औगुन सों निर्मल प्यारी। औगुन भरी सरीर हमारी॥

तुम तो निर्मल तारा, गइहु करै अस्नान।
पिंजर धरा मँजारी, गा वह टूट निदान॥

पिंजर टूटा मिला दुवारा। बाहर निकसि पंख मैं झारा॥
रहत न भावा बैरी राँधे। रिपु नित रहै घात सर साँधे॥
परोस जहाँ सत्रु को होई। तहाँ निचिन्त रहै का कोई॥
जाइ परेउँ ऐसे बन माहीं। खाँग जहाँ चारा कर नाही॥
हम तुम छूटि गये तेहि ठाऊँ। इहाँ अहै हम तुम सब नाऊँ॥

आयेउँ दरसन कारने, औ राखउँ एक बात।
सूनो मंदिर होइ जब, बात कही तब जात॥

सून मँदिर तब मालति कीन्हा। सुवा सयान भेद तब दीन्हा॥
उड़िउडि सब कानन महँ भयऊँ। औ सब तरिवर ऊपर गयऊँ॥
मिला एक दिन एक परेवा। मित्र रहा कीन्हा मोर सेवा॥
दोऊ एक बिर्छ पर गयऊँ। छाँहाँ पाय सुखी मन भयऊँ॥
सुवा साथ मैं तुम्हे बखाना। जस तोहार सब वोनहूँ जाना॥

बिर्छ तरें एक मानुष, सुना सकल गुन तोर।
बिनु आज्ञा अब आगें, कहि न सकै मुख मोर॥

कहा पियारे बात तुम्हारी। जीउ देत हैं कहु बलिहारी॥
तुम पंडित जो पंडित होई। अब सकु बात न भाषै सोई॥
सिद्ध रूप तुम सुवा गेयानी। बात तोहार अमीरस सानी॥
सिद्ध बात लाभा की कहई। का जो उलटी बातैं रहई॥
स्वानौ कोकरा जो मरि जाहीं। सिद्ध कहै भल है भल माही॥

आज्ञा का माँगत हौ, भाषहु जो मन होइ।
मिलबो लूट तुम्हारो, मरम न राखौ गोइ॥

कहत बँखान नाम गुन तेरो। सुनि कै वह मानुष भा चेरो॥
बिनती बहुत कीन्ह मोहि साथा। नग संदेस को दीन्हा हाथा॥
कहा जाइ मालति के गाऊँ। प्यारी साथ कहेउ मम नाऊँ॥

मोहनपूर देस है मेरो। मैं मधुकर राजा हित तेरो ॥
मोहिं राजा कहँ प्रेम तुम्हारा। व्याकुल कीन्ह सोच मों डारा ॥
एहि सँदेस तेही कहैं, कछु बसीठ पर नाहिं।
जो सँदेस ले आवही, पहुँचावै चलि जाहिं ॥

यह सुनि कै मालति सुकुमारी। चुप होइ रही न बात निसारी ॥
बिनती कीन्ह सुवा कहँ राखा। दीन्हा ठाँव बिर्छ कहँ राखा ॥
पिंजर भीतर सुआ न आवा। लाग रहै छूटा सुख पावा ॥
रहैं सुवा फुलवारी माहाँ। जहँ फल फूल औ सीतल छाहाँ ॥
जस बैकुंठ बीच फल नियरें। तस नियरे अनदाना हियरें ॥
उड़ि बैठहि तेहि डार पर, जहाँ चलावै जीउ।
मन काया के छौर महँ, सुख अनद भै घीउ ॥

मालति मन पर मधुकर नाऊँ। लिखिगा देखि परै मन ठाऊँ ॥
कवल समाँ मन प्यारी केरा। होइ मधुकर भा मधुकर चेरा ॥
प्रेम फाँद प्यारी मन परा। मधुकर मन मालति मनहरा ॥
मन सों का कहँ सुमिरै कोऊ। सुमिरै ता कहँ मन सों सोऊ ॥
कहा अलख सुमिरौ तुम मोही। सुमिरे सो सुमिरौ मैं तोही ॥
रही सुगंधित मालती, प्रेम भँवर तेहि कीन्ह।
व्याकुल भई जीउ महँ, भेद न काहू दीन्ह ॥

दुर्बल भइ जब मालति बारी। धाई धाइ कहा बलिहारी ॥
कवन कलेस समान सरीरा। कहत सरीर सो आपन पीरा ॥
कहा कलेस न एकौ मोहीं। कवन कलेस सुनावउँ तोहीं ॥
कहा भई दुर्बल तै बारी। बिनु दुख दुर्बल होत न प्यारी ॥
हो री मात समाँ है तोरी। भोरी मरम न गोवहु गोरी ॥
जो दुख होई पिंड महँ, सो मोसें कहि देहु।
धाइ करौ उपकार सै, दुख कर ओषद लेहु ॥

कहा सुवा वोही दिन जो आवा। मोसे मधुकर नाँव सुनावा ॥
है जो एक देस मोहनपुर। मधुकर राय तहाँ जस सुर ॥

सुवा सुनायेउ तेहिक संदेसू। हौं तेहि कारन प्रेमी भेसू ॥
हौं माता सुनि मधुकर नाऊँ। भा मन मधुकर उड़ि कै जाऊँ ॥
मोहि मालति कहँ मधुकर नेहा। कीन्हा मधुकर नेही देहा ॥

तुम माता दाया भरो, दाया ऊपर आउ।
मोहि मालति कहँ मधुकर, कै उपकार मोराउ ॥

सुनि धाई दाया पर आई। मालति सों उपकार सुनाई ॥
सौंपहु काज आपनो ताकों। सिरजनहार नाम है जाकों ॥
पुरुब पछुम को पालन हारा। है सो पुरवै काज तुम्हारा ॥
सुमिरहु ताहि बिसारहु नाहीं। सुमिरन बड़ो अहै दिन माहीं ॥
बहुरि सुवा सों बिनती कीजै। बिनती कै जिउ कर महँ लीजै ॥

भेजहु तेहि मोहनपुर, मधुकर आनै आस।
आने प्रेम बढाइ कै, तेहि मालति कै पास ॥

एक दिवस मालति मति पागी। बिनती करै सुवा सों लागी ॥
कोमल बात जीभ सों खोला। फाँद भलो है कोमल बोला ॥
कोमल बात कहै कहँ दाता। कहा अहै भल कोमल बाता ॥
धरती ऊपर जाउ परावा। कोमल कहे हाथ महँ आवा ॥
तुम हौ सुवा प्रान जस प्यारा। जैसे प्रेम बान तुम मारा ॥

तैसे महि घायल कहँ, औषद फाहा देहु।
लैआवहु मधुकर कहँ, यह पूरा जस लेहु ॥

सुवा कहा सुनु बारी भोरी। अहै सीस पर आज्ञा तोरी ॥
मैं पखी वह मानुष आही। मनुष बसीठ मनुष दिस चाही ॥
सो जेई कीन्हा जगत अँजोरा। मानुष भेजा मानुष वोरा ॥
मानुष मानुष बचन समूझै। सुवा सुवा की बातैं बूझै ॥
औ मोहनपुर देखेउँ नाहीं। अकस जाउँ भूल बन माहीं ॥

होइ साथ जो मानुष, जाउँ मोहनपुर देस।
दोऊ मिलि समुझावैं, आवै इहाँ नरेस ॥

दुई समुझायें समुझई सोई। दुइ जन मिले बूत भल होई॥
जेहि बसीठ कै जीउ डेराई। लीन्ह सहायक आपन भाई॥
गा तेति दिस जासों डर माना। भाषा साँची बात सयाना॥
दुइ मन एक होइ गिर तोरैं। कटक बिदारत बदन न मोरैं॥
जेइ मन तोरा सोगा तोरा। मन तोरा कहि तोरा मोरा॥

प्रेम नाम बन जारा, बसै तुम्हारे गाउँ।
ताके संग पठावहु, मोहनपुर कहँ जाउँ॥

माना बात मालती रानी। धाई साथ जनायसि ज्ञानी॥
धाई गई प्रेम दिस धाई। बिनै सुनाई बात जनाई॥
दीन दरब औ आसा दीन्हा। प्रेम सीस पर आज्ञा लीन्हा॥
दरब करै सब कारज पूरा। उद्दित करै दरब जिमि सूरा॥
जो न दरब को निर्मल करई। अगिन होम होइ गल मों परई॥

करता अपने पथ पर, दरब कहा है देइ।
जो नहि देई सो एक दिन, लाछ दरब सों लेइ॥

सँग ले सुवा प्रेम बनिजारा। मोहनपूर पथ पगु ढारा॥
अहै बनिज को उद्दम भलो। पै जो करै बनिज निर्मलो॥
सिर्जनहार आप को बेला। आवत तजै बनिज को खेला॥
बेचब लेब कहा है भलो। अहै बियाज नही निर्मलो॥
सुन्दर रिन करता कहँ देहू। वह जग मूल लाभ सँग लेहू॥

बिनु पद दरब जो आन को, जो कोउ अगमों खात।
आनहु अगिन सो खात है, है यह साची बात॥

काटत पंथ सुवा बनिजारा। पहुँचे मोहनपूर मझारा॥
मधुकर उहाँ वियाकुल हीयें। ध्यान रहै मालति पर दीयें॥
बेकल बहुत भा मधुकर राजा। गा सब छूट राज को काजा॥
मरम की कली फूल बिकसाना। बास पाय सब काहुअ जाना॥
छपि ये प्रेम कस्तूरी दोऊ। अंत बास पावै सब कोऊ॥

लोगन बहुत बुझावा, फिरा न मधुकर प्रान।
भयेउ प्रेम के बाढ़े, बाउर भेस निदान॥

सुवा प्रेम कहँ मरम सिखावा। बेचहु हम कहँ जानि परावा॥
हाट चढ़ाइ मोल करु भारी। लै न सकै बैठै सब हारी॥
तब राजा मधुकर मोहिं लेई। भारी मोलि बेगि तोहि देई॥
मित्र जो होई सो मोल बढावै। बैरी जन सौ औगुन लावै॥
अति सुंदर कहँ बैरी लोगू। बेचा थोरै पर बिनु जोगू॥
मधुर बचन मैं बोलऊँ, मधुकर लेइ निदान।
रहि राजा के सग महँ, करों हाथ मो प्रान॥
पेम जबै दूसर दिन पावा। लैकै सुवा हाट महँ आवा॥
हाट नगर मो भयेउ पुकारा। पेम नगर का है बनिजारा॥
बेचत है एक सुवा सरेखा। वैसो पंडित कीर न देखा॥
गाहक आये मोल उधारा। भारी मोल सुनत सब हारा॥
मधुकर पेमनगर कर नाऊँ। सुनि आनन्दित भा मन ठाऊँ॥
आएउ मधुकर हाट मो, लीन सुवा कहँ मोल।
सुवा अधर कहँ खोला, बोला कोमल बोल॥
मनिमय पिंजर बीच परेवा। राखा मधुकर कीन्हा सेवा॥
भयउ अहार सुवा की बातैं। मधुकर राजा कहँ दिन रातैं॥
एक दिन प्रेमहि पास हँकारा। सून सदन कै बात निसारा॥
है मालति रानी वह देसाँ। रूप बिहाय कला निधि भेसाँ॥
वह रानी कर सुनत बखानू। सुरत सनेही भयेउ परानू॥
तुम आवहु वहि नगर सों, ताकर कहौ बखान।
एक सुवा सो मैं सुना, उडिगा सुवा निदान॥
सुनि यह बात पेम तब हँसा। हँसा फूल मानहुँ महि खसा॥
जो एक मोल निर्प तुम लीन्हा। मोल गुलिक नग मानिक दीन्हा॥
येही सुवा मालति गुन कहा। अब अनचीन्ह तुम सों होइ रहा॥
उहइ सुवा है तुम नहिं चीन्हा। पंडित जान मोल तुम लीन्हा॥
सुवा का पिंजर नियरें राखौ। तब रसाल बच को रस चाखौ॥
सुनि रहसाना मधुकर, पिंजर लीन्ह उतार।
पूछा कुल कहा कुसल है, है जब कुसल तुम्हार॥

पेम सुवा दोऊ गुन गावा। एकै मुख होइ बात सुनावा॥
हम मालति के भेजें आयें। दरसन देखि बहुत सुख पाये॥
मालति तुम्हैं दिन रात सँवारा। भा अब मन तोहि ऊपर भँवारा॥
तुम कहँ आनै हमैं पठावा। प्रेमहि निर्ष को ताहि जनावा॥
बनिज हमार तुम्हीं हौ राजा। अब वह देस गवन तोहि छाजा॥
रटत चातकी होइ रही, चलि दरसन जल देहु।
ना तो प्रान देइ धन, यह अपराध न लेहु॥
सुनि मधुकर जानहु जिउ पावा। कहा तुम्हैं मोहि लाग पठावा॥
छाजत सीस अकास लगावउँ। सीस चरन कै तेहि दिस धावउँ॥
अब लग रहेउँ भरम मद माहीं। रही पथ की सुधि मों नाहीं॥
तुम हुइ अगुवा चतुर सयाने। मिलेहु करउँ तेहि ओर पयाने॥
है धन दिष्ट भाग को मोहीं। सुमिरन मोर चढ़े चित वोहीं॥
रोवत दिन मोहिं बीता, अब हँसि करेउँ अनन्द।
सोइ रोवाइ हँसावै, जेइँ कीन्हा रवि चंद॥
तजा राज कहँ मधुकर राजा। सकल समाज चलै को साजा॥
पिंजर सों बाहेर भा सूआ। पेम आप मिलि अगुवा हूआ॥
बहुत लोग राजा संग लागे। मानहुँ सोवत कै सब जागे॥
सोअत है जग मँह सब कोई। जब मरि जाहिं जाग तब होई॥
यह जीवन कहँ छोटा जानहु। जीवन बड़ो अगम पहिचानहु॥
जस जियहू तैसैं मरहू, उठहु मरहु जेहि भाँत।
जग चाहुत के ऊपर, काह दिहे हौ दाँत॥
बहुत देवस को करत पयाना। एक समुद्र आइ नियराना॥
चढ़े पोत ऊपर सब कोई। गाढ़ी प्रेम नगर मगु होई॥
बोड़य बूड़ भये सब कोऊ। सुवा उड़ा जनि बिछुड़न होऊ॥
जाको राखत सिर्जनहारा। जल सुखाई मगु लाइ उतारा॥
यह जनि जानहु नीर डुबावै। चाहै धरती बीच धसावै॥
एक बार जल थल भवा, राखा चाहा जाहि।
आगे कहि कै भेजेउ, नाव बनावै ताहि॥

बड़े गरब कोप औ माया। भरमित और काम की काया॥
एक दिस बहै बुद्ध औ बूझा। मधुकर पेम बहे नहिं सूझा॥
मन पछिताइ सुवा गा तहाँ। चितवत पंथ मालती जहाँ॥
मिली कहा कहु कुसल पियारे। पंथ निहारा नैन हमारे॥
कहा कुसल का बूड़ी पोता। होत कुसल जो जन मन होता॥
मधुकर आवत तेहि दिस, बहा सिन्धु के धार।
बूड़े सकल सघाती, कोउ न लाग गोहार॥
सुनि यह बात मालती रानी। मन पछतानी सोच सयानी॥
धन लेखै जनु परलै आई। यह परलै केहि दिसतें धाई॥
काहे यह परलै परगटे। आयो द्वाय बरम्हा के छटे॥
की बिरंच को एक दिन बीता। सोयेउ भै परलै की रीता॥
नहिं निसरे वै हुइ बरियारा। जाकर अवध लिखा करतारा॥
बीचहिं देखहुँ परलै, धरती भयेउ असिष्ट।
की मन मोर फिरा है, उलटि बिलोकन दिष्ट॥
सुवा बुझावै बूझहु रानी। जीवन हार न बूड़ै पानी॥
करै जो किछु करता कोई। अन्त काज वह सुन्दर होई॥
भेद छिपा तोहि कारन माहीं। सो जानहि हम जानहिं नाहीं॥
ज्ञानी एक एक बालक मारा। औ एक नाव जलधि मों फारा॥
साथी ताकर भेद न जाना। भेद रहा तेहि बीच छिपाना॥
धर धीरज मन भीतरें, होइ जियत वह होइ।
जो मति सों छूँछा अहै, छाड़ै धीरज सोइ॥
मालति कहा देहु तुम बोधू। मोहि पहरा पर आवत क्रोधू॥
कहा करत पहरा कछु नाहीं। वह करता नाहीं जग माहीं॥
जेइँ पहरा को करता जाना। सो मूरख जग बीच भुलाना॥
सो करता जो सब पर बली। दीन्ह मनुष को काया भली॥
वह पूरब सो सूर निसारै। को पच्छुम सों आनै पारै॥
कोप न करु पहरा पर, धरु धीरज मन माँह।
देखु जगत मों करता, कस बिस्तारा छाँह॥

धीरज बात कहत हौ सुआ। मोहिं वियोग सो आँसू चुआ॥
अब अस करहु बहोरह ताही। मन औ ध्यान बीच को आही॥
कहा बहोरन हारा सोई। जेहि अज्ञा जीवै सब कोई॥
पै तोहि लाग फेर उड़ि जाऊँ। हेरों बन परबत सब ठाऊँ॥
जियत होई तो हेरि निसारउँ। नाँ तो बैठ रहउँ चुप मारउँ॥

जियत मिलत है एक दिन, मुवा मिलत है नाहि।
मानुष मुवा मिलै तब, जब निर्मल होइ जाहिं॥

इड़ा नाउँ लै उड़ा परेवा। हेरा इड़ा अड़ा वह सेवा॥
मधुकर वहि तट ऊपर भयऊ। चलि सैरंगपूर मों गयऊ॥
हेरत ताको सुवा सरेखा। तेहि सैरंगपूर महँ देखा॥
रोये ऐसे दोउ दुख भरे। तेन रोवत कुज के दिल झरे॥
जो दिल झरै अलख तेहि जानै। दूसर पत्र बिछ्छे महँ जानै॥

रोये मधुकर औ सुवा, बहुत मानि मन हान।
साथी कारन भा बेकल, मधुकर निर्प सयान॥

सुवा भयेउ अगुवा औ चला। पाछें चला बिरह कर जला॥
मगु मों मिला पेम बनिजारा। और लोग जो रहा पियारा॥
पेम नगर मों मधुकर गयऊ। जनु तप साधि सरग मो भयऊ॥
है तेहि नित बैकुंठ सँवारा। जो भल काज कीन्ह मद जारा॥
पहिरैं कनक कड़ा औ बागा। चोटगें पाट उपर मनि लागा॥

मालनि फुलवारी रही, रहेउ सनेही नाउँ।
सुवा कहा मधुकर सों, लेहुँ इहाँ तुक ठाउँ॥

मधुकर लीन्ह बास फुलवारी। सूआ आप गवा जहँ प्यारी॥
पूछा धन कहु कुसल पियारे। देखि जुडाने नैन हमारे॥
कहा कुसल जब कुसल तुम्हारी। नीको भाग तेहारो बारी॥
मधुकर राजा को मैं आना। फुलवारी मों दीन्हेउँ थाना॥
है दरसन का भूखा राजा। अब तेहि दरस देखाउब छाजा॥

तुम मालती वह मधुकर, दोऊ एक सँजोग।
रहसे देखी निर्प को, प्रेम नगर के लोग॥

दरसै देखावै कहँ तुम कहा। मोहि वहि दरसन पर चित रहा ॥
दरसन जोग कियेउ वहि काजू। राजा रहा तजा सब राजू॥
जो दरसन दाता को चाहै। काज करै भल सत्त निबाहै ॥
औ करता की सेवा माही। दूसर साझै मेरवै नाहीं ॥
वह सुमिरेउ है एकहि मोही। छाजत दरस दोवाहु वोही ॥

पै अबहीं नही उचित, परगट देउँ देखाय।
देखै मेरो छाया, ऐसो करहु उपाय ॥

कहा बात भाषा तुम भली। अबहीं लाज लिहे रहु लली ॥
है फुलवारी बीच अटारी। जाइ अटारी चढिये प्यारी ॥
मधुकर हाथ देउँ मैं दरपन। छाया डारि देखावहु दरसन ॥
तै परगट तेहि लखु उरबसी। वह देखै तोहि ससि की ससी ॥
परगट दरसन को दिन औरै। है प्यारी केतौ दिर्ग दवरै ॥

इहइ उपाय भलो है, यह दिन देहु बिताइ।
मोर होइ जब दूसर, दरसन दीजै जाइ ॥

दुसरे देवस मालती प्यारी। सखियन सँग आई फुलवारी ॥
आप दच्छ वह सुवा सयाना। अटा तरें मधुकर कहँ आना ॥
दरपन दीन्ह हाथ महँ लीन्हा। मालति बदन झरोखहि कीना ॥
झाँका दरपन मों परछाही। परी बदन की बिछुरी नाहीं ॥

देखि बदन की छाया, मधुकर भये अचेत।
मालति कली भँवर लखि, बिकसि रही सकेत ॥

जब सचेत भा मधुकर ज्ञानी। मन्दिर गइ तब मालति रानी ॥
दरसन दैकै गइल पियारी। तेहि दोहाग भई अधिकारी ॥
मीलन लाग दोऊ दुख माहीं। परी हाय सुख एको नाहीं ॥
सुवा संदेश दोऊ कर आनै। दोऊ संग सनेह बखानै ॥
कबहुँव पाती कबहुँव बातैं। आनै सुवा चतुर दिन रातैं ॥

प्रेम बिरह बैराग मों, बहुत मास गा बीत।
कबहूँ दुख कबहुँ सुख, कठिन प्रेम की रीत ॥

रूप जानि मालति बरजोगू। नेवता राज बंस के लोगू ॥
रचा सयम्बर ठौर बनाये। राजकुमार देस के आये ॥
एक एक सुन्दर राजकुमारा। कोऊ रवि कोऊ ससि तारा ॥
मधुकर बिनु नेवते गा तहाँ। रहे राज बंसी सब जहाँ ॥
मधुकर रूप देखि सब लोभा। सोभा तहाँ सभा को सोभा ॥

मड़िमाला मालति लिहें, आई सभा मँझार।
बहुत सहेली गोहने, भयेउ सभा उँजियार ॥

लगी आस सब के मन साथा। यह चंचला चढ़ै केहि हाथा ॥
वह चंचला चॅचला से समाँ। चहुँ दिसि फिरी लिहे मनि छमाँ ॥
ताकर ग्रीउ डली वह माला। ठारेउ जो मातेउ तेहि हाला ॥
गये सकल निर्प अपनें घर कों। मालति ब्याह गई मधुकर सों ॥
दुख सहि के सुख पायन दोऊ। वस सुख तुम्हे पियारी होऊ ॥

सखी कहानी कहि गई, इन्द्रावति के लाग।
कल ना परै प्यारी को, बाढै अधिक दोहाग ॥

विरह अवस्था खंड

धन सो धन जेहि विरह बियोगू। प्रीतम लाग तजै सुख भोगू ॥
नेह बीज मन धरतिय बौवै। रैन न सोवै दिन कहँ रोवै ॥
धन जेहि जीउ होइ अनुरागी। वारै प्रान सो प्रीतम लागी ॥
तजै भोग सुख सुमिरन नाहीं। जागै निसि कहँ सोवइ नाहीं ॥

धन सों जन धन मन तेहिक, जाके मन दोहाग।
परै दोह की आग सों, मानस भोसै दाग ॥

रोइ दीप सुन डावै धोई। अभिलाषिन अनुरागिन्न होई ॥
इंद्रावति सुकुवार कुमारी। भार बियोग परा तेहि भारी ॥
प्रेम सरीर बेयाध बढ़ाया। [illegible]र पीत भयेउ धन काया ॥
पान न खाय न पीवै पानी। भूख पियास भुलायेउ रानी ॥

व्याकुल भई रात दिन रोवै। बदन करेज रकत सों धोवै ॥
प्रेम आग तन काठिय जारा। भारै चाहा मन को पारा ॥

भइउ दूबरी रानी, भै बिबरन तन रंग।
वैरिन होइकै लागेउ, व्याध अग के सग ॥

दुर्बल भइउ व्याध सों नारी। बल घटि गा भा जीवन भारी ॥
चित्त ध्यान प्रीतम पर राखा। चाखा प्रेम बढ़ेउ अभिलाखा ॥
बैरागिन कीन्हा बैरागू। अनुरागिन कीन्हा अनुरागू ॥
सुमिरै सोवत बैठी ठाढी। मन असमर्थ अवस्था बाढ़ी ॥
प्रेम झकोर भयऊ तेहि सीसू। बैरी बूझै निस रजनीसू ॥

सुक्ख भयउ दुख दायक। सुध मति रहेउ न साथ।
परी जगत प्रानेसरी, जडता केरी हाथ ॥

सुंदर बाक मनाक न भावै। गगन चाक उदबेग सतावै ॥
बिरह आग सों भै उर दाहू। धन ससि कहँ भा मंदिर राहू ॥
भावर लाय न सिच्छा मानी। छिन छिन कहै आन की बानी ॥
उन्नमाद सों रोवइ हँसई। आँसू धरती मोती खसई ॥
जियत रहइ धेयान के बाहाँ। ना तौ होत मरन पल माहाँ ॥

धन कहँ अतरपट भयेउ, गगन ऊँच महि नीच।
छाड़ि सकल धधा कहँ, परि गुन कत्थन बीच ॥

वह रावल जग मित्र नवेला। मन परान कहँ कीन्हा चेला ॥
वह विदग्ध सुकुमार पियारा। रूप गगन सविता उँजियारा ॥
चिंता कथन बीच धन परी। चिंता करै घरी औ घरी ॥
केहि उपकार दरस वह पावउँ। केहि उपकारे के ढिन धावउँ ॥
होत भलो होतिउँ जरि छारा। देह चढावत रावलु प्यारा ॥

बड़ो भाग सारंगी, रहती प्रीतम पास।
मोहि कलेस बिछुड़न को, है प्रछन्न परकास ॥

ब्याह खंड

धन्य ब्याह जासो धन प्यारी। होइ कंत सँग खेलन हारी ॥
होइ सुहागिन प्रीतम पायें। पिय ढिग जाइ सीस निहुरायें ॥
माजें बइठि सरीर बनावै। पिउ रस लेइ पीउ रस पावै ॥
निर्मल होइ होइ सुकुवारू। पानो फूल को करइ अहारू ॥
माजें महँ पर चिन्त नेवारै। नित प्रीतम को जाप सँवारै ॥

सत्त सहित धन जो धरै, प्रीतम को अनुराग।
प्रीतम अपने हाथ सो, धन कहँ देइ सोहाग ॥

निपं सयम्बर लगन धरावा। सब काहू कहँ नेवत पठावा ॥
भयेउ अनंद अगमपुर नगरी। भइ मुद चरचा नगरी सगरी ॥
बाजै लाग बियाहुत बाजा। जन परजन मन परमद बाजा ॥
रचा चित्र सों मंदिर द्वारा। लगेउ होन सो मंगल चारा ॥
सुभ माँडव छायन उपराहाँ। जासों होइ सुबर सिर छाहाँ ॥

ससि बदनी सब कामिनी, गावैं मंगल चार।
लीन्ह अनंद बसेरा, जगपत सदन मझार ॥

इंद्रावति माँजे महँ भई। चेत मालिन नियरें गई ॥
पूछा हिये लजानिय नाही। कैसें रहिये माँजेय माहीं ॥
कहा रहो मन निर्मल कीहैं। चित प्रीतम प्यारे पर दीहैं ॥
मन सों दूसर चिन्त नेवारी। पिउ पर ध्यान लगावहु प्यारी ॥
निस दिन मन को खेत बनावहु। पिय की प्रीत को बीरौ लावहु ॥

अलप अहारिहु जीयै, सुमिरहु पिय को नाउँ।
रहौं अकेली रात दिन, प्यारी माँजे ठाउँ ॥

माँजे मों इंद्रावति रानी। आइ असीसहि सखिय सयानी ॥
देहिं असीस सखी हित प्यासी। रमा निरंत्र रहै तोहि दासी ॥
हो प्यारी बिलसहु पिय प्यारा। पिय मेरवत है सिर्जन हारा ॥
जो सजोग चहा तुम रानी। भेंट तेहिक अब आइ तुलानी ॥
ब्याहु नसेनी मिलन सदन को। मिलै सिघर अब मिलन सजन को ॥

सुख अनंद सों रानी, बेलवहु पिया संजोग।
भये कंत संजोगिनि, आवै कर सुख भोग॥

सखिन असीस बचन सुनि रानी। कहा पिता घर रहिउँ भुलानी॥
खेलौ कोड में देवस बितायेउँ। कुछहूँ प्रीतम मरम न पायेउँ॥
खेलहि बीति गई लरिकाई। बाढ़ेउ दरा होत तरुनाई॥
भूलिउँ खेल सखी के साथा। चढ़ेउ गगुन कर मानिक हाथा॥
गुन नहिं एक त्रास मोहि हियरें। कैसे होब कन्त के नियरें॥

हौ अजान औ निर्गुनी, ज्ञान रूप वह पीउ।
हाथ छूछ गुन ज्ञान सो, सखी सोच महँ जीउ॥

मोहि गुन बुद्ध सखी है नाहीं। यह नित सोचत हौ मन माहीं॥
जेहि गुन बुद्धि हाथ महँ होई। तापर प्यार करै सब कोई॥
रहत न बुद्धि पियें मद हाथा। या नित दोष लाग मन साथा॥
सत्रु चतुर जो जिउ कर होई। है भल मूढ मित्र सों सोई॥
गुन सों मानुष होत पियारा। गुन कर गाहक है ससारा॥

विष कहँ अमिय करत हैं, है ज्ञानी जो कोइ।
मूरख जन के हाथ सों, अमृत विष सम होइ॥

मानमती वह सखिय पियारी। बोली सुनिये राज दुलारी॥
यह जग बीच अहो रुपवन्ती। पिय जेहि रीझा सो गुनवन्ती॥
तुम पर अस रीझा पिय सोई। चाहा एक बार एक होई॥
पै यह लट औ आँख तुम्हारी। धरा बियोग बीच तेहि प्यारी॥
गुनि मति काँत सहज औ रूपा। सब तोहि रीझ कंत गुन भूपा॥

प्रीतम भै का भै हियें, तोहि नित बाउर पीउ।
तो लट औ अधरन मों, प्रीतम मन औ जीउ॥

रतन जोत पुनि बात निसारा। भयउ रतन सों मम अवतारा॥
एक सोच मोहि आवत सजनी। तासों सोचत हौं दिन रजनी॥
पिय औगुन लावै मोहि रामा। सानुष जन मन तेरो वामा॥

मानव मानुज उदर सों होई। मनुज उदर बिनु मनुज न कोई॥
पितु को परमद अमु जब आवै। मात उदर तब नर भौ पावै॥

जनम मोर अस नाही, सखी सोच मैं लेउँ।
पिय ऐगुन जो लावे, कौन उतर में देउँ॥

कहा सखी कछु सोच न कीजै। ध्यान अमूरत ऊपर दीजै॥
तोहि करतार रतन सो कीन्हा। कर महँ रतन ज्ञान कर दीन्हा॥
जो करता कहँ करबेइ होई। हौ तेहि कहै होइ तब सोई॥
बिर्ध पुरुष और बन्ध्या नारी। तासों सुत पायन सत धारी॥
बाज पिता सो बालक कीन्हा। अमृत बचन जीभ मो दीन्हा॥

कीन्ह बिमल माटी सों, बहुर बुंद तेहि कीन्ह।
तासों रकत मॉस करि, हाड़ फेर जिउ दीन्ह॥

अलख अमूरत सिर्जनहारा। मूरख जगत अलेख सँवारा॥
तेहि छाजत सिजै जस चाहै। दोऊ जग आपुहि करता है॥
जनक जननि बिन सिजैं पारै। जातें चाहै जनम सॅवारै॥
आद पिता के पिता न माता। ऐसें सिर्जा वह जिउ दाता॥
प्रीतम तोहि गुन ऐसो लोभा। लखै न ऐगुन देखै सोभा॥

मित्र मित्र को ऐगुन, पहिचानत गुनमान।
तेरो सकल अवस्था, गुन बूझैं पिय प्रान॥

दायावत है कंत तुम्हारा। है अपराध छिपावन हारा॥
जो गुनवत अहै जग माही। सो ऐगुन हेरत है नाही॥
जेहि गुन सो गाहक गुन केरा। जेहि ऐगुन सो ऐगुन हेरा॥
आपुहिं बीच जो ऐगुन पावा। सो न कहा अपराध परावा॥
जो अपराध छिपावइ कहा। जोग बसन ताके तन रहा॥

जो मुख पर ऐगुन कहै, महा मित्र है सोइ।
ताको मित्र न जानये, ऐगुन राखै गोइ॥

राजकुँवर जब मोतिय पावा। सात सखा कहँ नेवत पठावा॥
मिर्तक रहे जीव उन पाए। धाये सकल अगमपुर आए॥

सात मित्र राजा कहँ भेटा। सरसन बिछुरन सकट मेटा ॥
राजा के कालिञर ठाऊँ। मित्र पराक्रमा प्रेम तेहि नाऊँ ॥
रहा बहुत दिन सो परदेसा। आये नगर धनी होइ भेसा ॥
देखि सून कालिजरै, मरम कुँवर को पाइ।
रहि न सका राजा बिनु, लीन्ह जोग चित लाइ ॥

सुनि के राजकुँवर को जोगू। भा जोगी त्यागा सुख भूगू ॥
प्रेम के साथ लगै सैसगी। रावल भेस लिंहे सारगी ॥
आगम संचर राखेन पाऊ। आगमपुर के भयेन बटाऊ ॥
सीस जटा धरि खप्पर हाथा। आये मिले राज के साथा ॥
भेंटेन प्रेम राय कहँ राजा। भा मन मुदित मोद उपराजा ॥
भयेउ जोग को राजा, राजा वह गन माँह।
जगपत दाया दुर्म को, सव सिर आयेउ छाँह ॥

सीतल छाहा पावइ सोई। जो तप किहे जगत महँ होई ॥
जेहि मन करता की डर भारी। तेहि नित लागै दुइ फुलवारी ॥
दोऊ बीच दुइ झरना बहई। सब फल फले दोऊ महँ रहई ॥
औ सूवर नारी तेहि ठाई। बनी रतन मोती की नाई ॥
दूसर फल भल को है नाही। मन कोमल फल दोउ जग माही ॥
जो आवै करता दिसि, एक भलाई साथ।
वोही भलाई के सम, दस आवै तेहि हाथ ॥

कुँवर पास क्रीपा चलि आयेउ। जगपति दुकल समेत पठायेउ ॥
आइ कुँवर सँग क्रीपा बोला। क्रीपा रस मै भाषित बोला ॥
अहो लला जत साधेउ जोगू। तत अब मानहु परमद भोगू ॥
धरु सारंगी गहु क्रीपानू। उदित भयेउ मनोरथ भानू ॥
कंथा काढ़हु पहिरहु बागा। जोग मुकुट धरि बाँधहु पागा ॥
काढ़हु माला जोग को, पहिरहु मानिक हार।
दैव दिष्ट सनमुख भयेउ, होहु तुरंग सवार ॥

काढ़त माला कथा राजा। चकचूहत मन मो उपराजा॥
माला गनि सुमिरेउँ वह नाऊँ। काढत छोह भयेउ तेहि ठाऊँ॥
जोग चिन्ह वह कथा पाया। कढ़त उपेजेउ करुना माया॥
क्रीपा बूझि कहा हो राजा। नन कंथा मन माला छाजा॥
जोग न पूजै तजै न जोगू। पूजा जोग लेहु अब भोगू॥
जल में दूहद आप गा, मारै मोद तरंग।
दुख को सागर बीतेऊ, अब सुख दिन को रंग॥
दुकुल अहै मानुष की सोभा। चीर बाज सोभाधर को भा॥
बिनु गुन काया अबर घालें। काठ कि खरग अहै परयालें॥
तत औ जोग के आहसि चेरा। करु पवित्र अबर तन केरा॥
बस्तर लेहु भोग के जोगू। जोग जोग अब है भल भोगू॥
सुमिरन पूजा है तब ताईं। जब लग नहि निश्चै मन ठाईं॥
है सब बस्तर मनिमय, मन मो करहु अनंद।
पहिरहु लखि कै सोभा, लाजै रवि औ चद॥
पहिरेउ असुक कुँवर सयाना। सुना सीर लखि रूप लोभाना॥
औ सो सुंदर अंसुक सोहा। दूलह देख तजत मन मोहा॥
जड़िता सेहरा सै छबि लहई। चौका चमकि चौधि चखु रहई॥
ऐसे रूप बिराजा राजा। देखि मयक अरज मा लाजा॥
चेल पहिर सब चेला सोहे। अस्व सवार भये मन मोहे॥
सब साथी राजा सँग, भयेउ तुरग सवार।
तारन मों तारापती, भयेउ कुँवर सुकुमार॥
बाजन बाजै साजन साजैं। लाजन लाजैं काजन गाजैं॥
सग न सोहैं अंग न मोहैं। अग न गोहैं भंग न होहैं॥
सबै रीझ देखै बर प्यारा। दृष्टि बिछावन मगु पर डारा॥
बर कै अधर पान रँग राता। लखि मानिक औ लाल लजाता॥
रहसि कहैं आगमपुर लोगू। धन धन बर इंद्रावति जोगू॥
जो देखा सोइ रीझ, धन धन सब सुख होइ।
बिनु मोहे बिनु रीझे, एको रहा न कोइ॥

सखी एक चितवन देहिं नाऊँ। कहा कुँवरि सों मैं बलि जाऊँ ॥
देखेउँ हरबर बर मैं तेरा। तो बर देई देव जिउ मेरा ॥
सुनि इद्रावति मन भा चाऊ। धवराहर दिस ढारा पाऊँ ॥
सखी सहित वह प्रान पियारी। चढ़ि धवराहर दृष्टि पसारी ॥
कन्यापति सब लोगन माही। दृष्टि ताहि दिस आवहि जाही ॥
राजकुँवर मुख ऊपर, रहेउ सकल छबि छाइ।
आगमपुर की दारा, देखि रही मुरझाइ ॥
चितवन कहेउ कि देखहु रामा। वह तेरो दूलह अभिरामा ॥
पूरन रूप सपदा जाको। करन रहे चित चितवन ताको ॥
आज निबेसन ते सुख पाया। सोभा अधिक चढी तेहि काया ॥
देखत प्रीतम मुख वह रानी। प्रेमा गोद गिरी मुरछानी ॥
मान सखी को रहेउ न प्रानू। कन्यापति चखु मारेउ बानू ॥
छोड़ेउ धीरज धीरजा, चेत न चेता देह।
आप आप कहँ वोहीं, मारेउ प्रेम अनेह ॥
देखि अचेत भईं सब बाला। अँचयन चोखा दरसन हाला ॥
सबन कहा यह मानुष नाहीं। अहै महादेवत जग माहीं ॥
रहा न चेत पाँव औ माथा। नीबू काटत काटेन हाथा ॥
मानुष रूप देखि अस होई। रहेउ न चेत बीच जब कोई ॥
करता जा दिन दरस देखावै। जैसों होइ नही कहि आवै ॥
कीन्ह रूप मानुष को, अपने रूप समान।
याते ज्ञान हरत है, मानुष रूप निदान ॥
प्रेमा जाप चेत जब पायेउ। इद्रावति कहँ तुरत जगायेउ ॥
पूछा मुरछानी केहि लेखें। कित कुम्हिलाइ कमल रवि देखें ॥
आज अनन्द रूप प्रगटाना। छाजै तुम्हैं कहा मुरछाना ॥
प्रेम उतरि कुँवरी तब दीन्हा। रवि सनेह अबुज मय लीन्हा ॥
मित्र बदन सोभा बर सोहै। नहीं अचर इंद्री बर मोहै ॥
प्रीतम हित यह जग मों, जा धन के मन प्रान।
दरस समै आनन्द सों, मुरछै प्रिया निदान ॥

पाय दरस मुदुता भै रानी। तन न समाय चीर हुलसानी ॥
हुलसे नैन देखि पिय सोभा। हुलसे स्वाँत पाय छबि लोभा ॥
पिय को बदन जीउ अस पाया। हुलसे रतन जोत सब काया ॥
दिनमनि रूप गगन उपराहाँ। देखि कमल निकसे जल माहाँ ॥
पीउ बदन सोभा सों भावा। जिय दरपन इंद्रावति पावा ॥

इंद्रावति मन उपवन, आस कली बिकसान।
मन मों रहेउ न बिसमों, आइ अनन्द समान ॥

सखि एक होइ सचेत पुकारा। धरती उवा सुरुज उँजियारा ॥
एक कहा मानुष नहिं होई। यह सुर भेस धरे है कोई ॥
एक कहा रजनीपति आही। मेंडर अवहि न छेंका ताही ॥
एक कहा यह सोभा धारी। जगत कलेवर जिउ है प्यारी ॥
जेहि जस रहेउ दृष्टि औ ज्ञानू। तैसा देखा कीन्ह बखानू ॥

कुँवर सनेह सकल मन, उपजेउ रूप बिलोकि।
लोचन चितवन मगु सों, एक न पारै रोकि ॥

सखिन बचन सुनि कै वह रानी। समुझा आगम सोच समानी ॥
कहा सखिन सो प्रीतम प्यारा। है मोहि संग लगावन हारा ॥
भयें बियाह गवन पुनि होई। नइहर के बिछुड़ें सब कोई ॥
परदेसी की लालप अहई। कहाँ एक थल पर थिर रहई ॥
परदेसी है कंत हमारा। देस चलै को राखै पारा ॥

रहनो अत न होइहै, नइहर देस मँझार।
परदेसी है सहचरी, लोना पीउ हमार ॥

कहेन सोच रानी केहि लागें। यहि दिन है हम सब के आगें ॥
हम रोये जनमत सनसारा। जनम देस कित रहन हमारा ॥
नइहर नगर अन्त नहि रहना। सीखु सोइ जेहि सासुर लहना ॥
जनम निबाह भलो पिय पासा। बिनु पीतम न लहै कबिलासा ॥
मिलै नरक जो दरसन पीकों। नरक भलो बैकुंठ न नीको ॥

मिलै तहाँ हो प्यारी, नइहर देस पियार।
जेहि अस्थान बसेरा, चाहै पीउ तोहार ॥

जब बनवास राम कहँ भयऊ। सीता सती गोहेन महँ गयऊ ॥
सदन नरक भा पिय बहुराते। बन्न बैकुंठ भयेउ तेहि जाते ॥
पिय बिनु फीका सुखरंग जीका। पिय गोहन नीका सुख तीका ॥
जो प्रीतम सँग प्रीत लगावा। सो दोउ जगत बीच सुख पावा ॥
श्रज्ञा माथे ऊपर लीन्हा। पिय कर अज्ञा भेंट न कीन्हा ॥

पीउ जहाँ है सुख तहाँ, जहाँ न प्रीतम होइ।
तहाँ सुखद को दरसना, कहाँ बिलोकै कोइ ॥

बनि बरात द्वारे जब आयेउ। अमम ठाउँ बइठै कहँ पायेउ ॥
बइठेउ कुँवर पाट उपराहाँ। ऊपर सीतल साखी छाहाँ ॥
सुर नर देखि आसिषा देही। निरखैं रूप रहसि फल लेही ॥
जे तो सुख तजि साधा जोगू। वे तो अलख दिहा सुख भोगू ॥
थोरे दिन का कुँवर सलोना। लोना अम्बुक किन्हेउ टोना ॥

रूपवंत राजा कुँवर, सकल बरातिन माँह।
सुदरता पति होइ रहा, मान पाट उपराँह ॥

जेवन बने सहस परकारा। जेवैं नित भा निर्प हँकारा ॥
बइठें लोग आइ सब तहाँ। दीन्ह ठउर जेवै नित तहाँ ॥
भोजन केतो सुंदर होई। उदर भरे पर खाय न कोई ॥
त्रिषा छुधा पर अँचवै खाई। तब जल जेवन करै भलाई ॥
छुधावन्त कहँ देहु अहारा। देइ नाक फल सिरजन हारा ॥

कहत न पारै रसना, सब पकवान बखान।
सै सवाद एक कवर मो, मिलै खात पकवान ॥

बराबरी सों करइ न पारा। बराबरी सूरज ससि तारा ॥
जत जग बीच भले पकवानू। रहे सकल कित करउँ बखानू ॥
बरनत रसना लोनी होई। जानै सो भच्छै जो कोई ॥
बिनै किहेन राजा कै लोगू। है पकवान न तुम सब जोगू ॥
जो पवित्र भोजन करतारा। दीन्ह तुम्हे सो करहु अहारा ॥

जेंवै लागे जेवनहिं, लै दाता को नाउँ।
एक कवर में पावैं, सै सँवाद तेहि ठाउँ ॥

भा अज्ञा जब बाजन बाजा। रजित चला बियाहै राजा॥
तूर दमामा बाजै लागै। अम्बर गये सबद सुर जागे॥
माड़ौ के तर कुँवर पहूँचा। रहा गगन लग माड़ौ ऊँचा॥
हरषि गीत नारी सब गावैं। घर घर सो सब देखै आवैं॥
पर त्रित दिष्ट परत भल नाही। तैसेइ पर पूरुष उपराहीं॥
रहा उदित होइ रूप सों, दूलह भान समान।
वोहि समय माँड़ौ तर, आयेउ चंद्र छिपान॥
उश्नरसम कहँ देखत नियरे। रहसा नीरज अपने हियरें॥
लाज मयंक देखि सकुचाना। परगट होइ नाहि बिकसाना॥
तन तन सों तो रहा वियोगू। मन मन सों तो रहा सँजोगू॥
दुइ मन प्रीत रीत सो जानै। अपने नेह जो मन मो आनै॥
रवि दूलह मुख परगट कीन्हा। ससि दुलहिन मुख पर पट लीन्हा॥
पढ़ैन वेद बामन सब, बर कन्या के नाउँ।
रहेउ पर्न नैरित्त जो, भयेउ सकल तेहि ठाउँ॥
भा बियाह कन्या बर साथा। आयेउ सुख को मानिक हाथा॥
भयेउ कुँवर जगपत को प्यारा। सब काहू मिलि आइ जोहारा॥
दाया सों आगमपुर ईसू। डरा छाँह कुँवर के मीसू॥
जैसे राजा त्याग तप कीन्हा। बैसो अलख भोग सुख दीन्हा॥
पायेउ बहुत दास औ दासी। सेवक भये अगमपुर वासी॥
भयेउ नगर वासी कहँ, कुँवर प्रान को प्रान।
सबतें जोरेउ मित्रता, कुँवर सनेह निधान॥
रहिन सखी सुन्दर जहँ ताईं। इंद्रावति के नियरे आईं॥
सकल सखी मिलि दीन्ह असीसा। प्रीतम छाँह रहै तोहि सीसा॥
इहइ लाभ बियाह सों होई। तोहि लाभ हरषित सब कोई॥
जुग जुग रहै सोहाग तुम्हारा। चाहै तुम कहँ कन्त पियारा॥
तोहि गुन ऊपर रीझा रहई। कोमल बात प्रीत की कहई॥
सदा रहै तोहि बस महँ, करता के परताप।
तोहि पिय को सुमिरन रहै, पियहिं तुम्हारो जाप॥

अधरन मों मुसकानी रानी। होइ अभिमानी बोली रानी ॥
है मोहि रूप बिमल उँजियारा। बस मँह रहै सो प्रीतम प्यारा ॥
ऐगुन भये न रूठै देऊँ। तनु मुसुकाय हाथ कै लेऊँ ॥
अमन होइ करउँ असमानू। प्रीतम देइ हाथ महँ प्रानू ॥
पाहन समा कठोर जो होई। करउँ सिंगार होइ जल सोई ॥
अब किछु चिन्ता है नहीं, प्रीतम भा मोहि हाथ।
अमन कबहुँ न होइ है, नित रहि है मोहि साथ ॥

सखियन अँगुरी दाँतन दाबा। प्यारी गरब न हम कहँ भावा ॥
मैं न भली मैं भल जो भाखा। तेहि करतार दूर कै राखा ॥
अगिन सीस जो ऊपर करई। देखहु उनत नीच होइ परई ॥
माटिय सीस नीच कै परई। तबहि अनेक लाभ सों भरई ॥
नयन आप कहँ देखत नाही। सूझि परा तेहि सब जग माही ॥
सो डूबा जो भापा, मैं जग सिर्जनहार।
पार भयेउ जेइ जाना, है एकै करतार ॥

प्रीतम आपन नाहिय प्यारी। अहै समुद्र लहर सो भारी ॥
सेवा नाव चढै जो कोई। पार समुद्र सो उतरै सोई ॥
नाव चढ़त सुमिरै एक नाऊँ। कहै उतारहु मोहि सुभ ठाऊँ ॥
करता आयसु बोहिम पायेउ। तबहि समुद के ऊपर धायेउ ॥
पिय सो गरब न कबहूँ कीजै। आये सुमार्थे ऊपर लीजै ॥
गरब बात तुमत बोलिउ, करता करै न कोप।
फिरु प्यारी अभिमान सों, ऐगुन होइ न लोप ॥

कै घट काज फिरा जो कोई। मनु घट काज न कीन्हा सोई ॥
खुला दुवारा है तब ताईं। रवि न उअै पच्छिम जब ताईं ॥
आवही फिरु मानै करतार। जब लग खोल फिरै को द्वारा ॥
हम मद .पियब तियागा प्यारी। पै तुम्हरी अँखियाँ मतवारी ॥
हम कहँ खीच सुरा दिस आनैं। त्राहि कहैं हम नैन न मानै ॥
इंद्रावति समुझा बचन, धरती लायेउ भाल।
तुम करतार जगत के, दाता दीनदयाल ॥

ए प्यारी सुमिरत हौं तोहीं। दरसन बेग देखावहु मोहीं॥
धन आनंद राज सुख आही। एकै दाया दरसन चाही॥
बहुत वियोग सुरा मैं पीया। सजोगी मद चाहत हीया॥
संजोगी प्याला अब दीजै। अधर सुधा सतवाला कीजै॥
आज ठौर आखन मों देऊँ। होइ निसंक अंग भरि लेऊँ॥

मोहिं संजोग सलील को, है प्रीतमा पियास।
अनुकम्पा कै दीजै, पूजै मन की आस॥

भइउ सपूरन आधी कथा। मानहुँ ज्ञान सिंधु मैं मथा॥
तीन सहस चौपाइय भईं। देखु आईं फुलवारिय नईं॥
पुनि आगें जो सुख सो रहऊँ। तीन सहस चौपाइय कहऊँ॥
हौ अबही थोरे दिन केरा। बात बहुत दिन कर मैं हेरा॥
विद्या ज्ञान बहुत जेहि होई। अर्थ छिपागे बूझै सोई॥

नूर महम्मद यह कथा, अहै प्रेम की बात।
जेहि मन सोईं प्रेम रस, पढ़ै सोइ दिन रात॥

शेख निसार

जीवनवृत्त

हिंदी के मुसलमान कवियों मे हम यह विशेपता देखते हैं कि वह अपनी रचनाओं मे अपना सक्षिप्त व्यक्तिगत परिचय तथा रचना काल आदि का कुछ व्योरा दे देते है जिससे संपादक को बड़ी सुविधाएँ हो जाती है। काश की यही प्रथा हिंदी के अन्य कवियों मे भी होती तो आज गड़े मुर्दे उखाड़ने मे जो दिक्कते हो रही है; विभिन्न कवियों के काल निर्णय के संबध में विद्वानों मे जो भीषण मतभेद की सृष्टि हुई हैं, और समालोचकों मे आये दिन जो व्यर्थ का झगड़ा और विद्वेष हो रहा है वह न होता, और समय तथा विद्वत्ता का इतना दुरुपयोग न होता। तमाशा यह है कि तुलसी, भूषण आदि हमारे अधिकांश प्रमुख महाकवियों के ही संबंध मे अभी तक सर्वसम्मति से सब बातें नही तय हो पाई है। अस्तु,

सौभाग्य से इन अख्यानक कवियों ने अपना परिचय तथा रचना काल का स्पष्ट उल्लेख कर बड़ी दूरदर्शिता से काम लिया है।

कवि निसार का रचनाकाल देहली के अंतिम मुग़ल सम्राट् शाह आलम के समय मे था।

रचनाकाल

आलम शाह हिंद सुलताना। तेहि के राज यह कथा बखाना ॥

× × ×

साथ ही यह भी लिखते हैं कि उस समय अवध में नवाब आसिफ़ुद्दौला राज्य करते थे। और उनके हिंदू मंत्री बड़े न्यायनिष्ट तथा राजनीतिकुशल थे।

चहुँ दिसि अध धुंध सब छावा। अवध देस कौं दियो बिहावा ॥
येहिया खॉ आसिफ़ उद्दौला। तासु सहाय अहर नित मौला ॥

हिंदू सचिव वह बली नरेसा । तेहि के धरम सुखी सब देसा ॥
तेहि के राजनीत जग छाए । धरम दान को सरवर पाए ॥

× × ×

निवासस्थान और वंश

शेख़ निसार का जन्म अवध के अंतर्गत शेखपुर नामक एक क़सबे मे हुआ था। डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर से पता चलता है कि शेख़पुरा नाम का एक कसबा ज़िला रायबरेली परगना बड़रावाँ और तहसील महराजगंज मे है। यहाँ शेख़ों की अच्छी बस्ती है। पिछली मर्दुमशुमारी मे वहाँ शेख़ों की संख्या ८,७१९ थी।

कवि निसार ने कहा है कि शेख़पुर उनके पूर्वज शेख़ हबीबुल्ला द्वारा बसाया गया था।

शेखपुर इत गाँव सुहावा । शेख निसार जनम तहँ पावा ॥
शेख हबीबुल्लाह सुहाये । शेखपूर जिन आन बसाये ॥

× × ×

फिर आगे चल कर कवि कहता है कि सम्राट् अकबर के समय मे वे (शेख़ हबीबुल्लाह) देहली से अवध आये और तीस वर्ष तक वहाँ रहे। इनके पुत्र शेख़ मुहम्मद हुए। इनके पुत्र का नाम गुलाम मुहम्मद था और यही शेख़ निसार के पिता थे। फिर निसार ने अपने पूर्वज शेख़ हबीबुल्लाह को प्रसिद्ध मौलाना रूम का वंशज माना है।

पातशाह अकबर सुलताना । तेहि के राज कर जगत बखाना ॥
अवध देस सूब होय आए । बीस बरस तहँ रहे सुहाए ॥
तेहि के शेख मुहम्मद बारा । रूपवंत भू के अवतारा ॥
ता सुत गुलाम मुहम्द नाऊँ । सो हम पिता सो ताकर गाऊँ ॥

वंस मौलवी रूम के, शेख हबीबुल्लाह ।
जेहि के मसनवी जगत महँ, अगम निगम अवगाह ॥

× × ×

अपनी शिक्षा-दीक्षा तथा ग्रन्थ रचना आदि के संबंध मे भी कवि स्वयं पर्याप्त सामग्री दे देता है। अरबी, फारसी, तुर्की, और संस्कृत आदि कई भाषाओं मे कवि की गति थी और इन्होंने सात ग्रन्थ रचे थे जिनमें तीन गद्य, एक दीवान, एक अलंकार ग्रन्थ तथा एक भाखा काव्य ('युसुफ-जुलेखा') मुख्य थे। कवि की पंक्तियों से यह व्यक्त होता है कि इनके ग्रथ फारसी, अरबी और संस्कृत मे भी थे, पर इनका हमें अभी तक पता नहीं लग सका है।

ग्रन्थ

सात गरथ अनूप सुहाए। हिंदी औ पारसी सोहाए॥
संस्कृत तुरकी मन भाए। अरबी और फारसी सुहाए॥
हीर निकार के गेहूँ खाने। रस मनोज रस गीत बखाने॥
औ दिवान मसनवी भाखा। कर दोइ नसर पारसीराखा॥

निसार कवि कहते है कि बुढौती मे उन्होंने युसुफ जुलेखा लिखी। सात दिन मे वह ग्रंथ लिखा गया और उस समय उनकी अवस्था सत्तावन वर्ष की थी। ग्रन्थरचना का समय १२०५ हिजरी दिया हुआ है। प्रतिलिपि में संवत् १८२७ पर हिसाब लगाने पर यह संवत् १८४७ होता है क्योंकि उसके अनुकूल जो ईसवी संवत् दिया गया है वह 'सतरह सै नब्बे ईसा का।' नब्बे मे सत्तावन जोड़ने से १८४७ ही बैठता है। स्पष्ट है कि यहाँ लिपिकार ने भूल की है। फ़ारसी लिपि में 'सैतालीस' का 'सत्ताइस' पढा जाना या लिखा जाना दोनों ही संभव है। जायसी के संबंध मे भी ठीक इसी तरह की भूल हुई है जहाँ कि ९४७ हि० का ९२७ पढा गया था। अस्तु इस प्रकार हम देखते है कि कवि का जन्म १८४७—५७=संवत् १७९० में मानना चाहिए और तदनुसार ई० सन् १७२२ इनकी जन्म तिथि हुई।

कवि का समय

वार वैस महँ कथा बनाए। हीर निकार अनूप सोहाए॥
रस मनोज रस गीत सोहावा। सभै बात का भेस बतावा॥
सत्तावन बरस बीते आयू। तब उपज्यो यह कथा क चारू॥

सात दिवस महँ कथा समापत । दुरमति नाम रह्यो सो संमत ॥
हिजरी सन बारह सै पाँचा । बरनेउँ प्रेम कथा यह साँचा ॥
अट्ठारह सै सत्ताईसा । संवत् विक्रम सेन नरेसा ॥

× × ×

आलोचना

काव्य रचना का निमित्त

'यूसुफ-ज़ुलेखा' काव्य की रचना का संबंध कवि के जीवन की एक दुःखद घटना से है । काव्य के अंत में कवि ने इस करुण घटना का उल्लेख किया है । इनके एक मात्र पुत्र लतीफ की मृत्यु २२ वर्ष की अवस्था में हो गई । कवि कहता है कि उसके निधन से मैं पागल सा हो गया था। मृत्यु शय्या पर पडे हुए उसने मुझे रोते देखकर कहा था कि पिता तुम रोते क्यों हो, बड़े लोगों को सदा दुःख सहना पड़ता है । नबी यूसुफ को दुःख भोगना पडा था, राम को दुःख सहन करना पड़ा । दुःख मे ही मनुष्य की परीक्षा होती है । आगे-पीछे एक दिन सबको जाना है । जबसे उसकी मृत्यु हुई मैं नित्य याकूब की याद करता था । उसी की भाँति पुत्र-शोक मे अकालवृद्धत्व को प्राप्त हुआ । उसी के विरह मे रो-रोकर मैंने यह गाथा लिखी । ससार के रहस्य का कुछ पता नही । अब तो ईश्वर मुझे जल्दी ही मौत दे और मेरे सांसारिक दुःखों का अंत हो । मैं तो रहूँगा नहीं पर यह कहानी सदा रहेगी । जो इस कथा को पढे सुनें उनसे बिनती है कि मुझे आशीर्वाद दें कि मेरी सद्गति हो । कथा के अंत का यह भाग करुण रस की कविता का एक अपूर्व नमूना है । कुछ पंक्तियाँ यहाँ उद्धृत की जाती हैं ।

जब ते जनम लीन्ह जग माहीं । छुटि दुखि अवर सो देख्यों नाहीं ॥
अवर दुःख मैं सब कुछ सहा । भयो एक दुख बाउर, महा ॥
पुत्र अनूप दई मोहिं दीन्हा । रूप अनूप बुधि आगे कीन्हा ॥
बाइस बरिस रहा जग माहीं । छुट विद्या उन जान्यो नाहीं ॥
नाम लतीफ अनूप सोहाये । सभ गुन ज्ञान दई अधिकाये ॥

बाइस बरिस के बैस महँ, छाँड़ि दीन्ह उन देह ।
मुरत अनूप गुलाब सो, जाय मिले पुन खेह ॥
तब मैं भय बाउर भेसा । करौ सदा अँतकाल अँदेसा ॥
जब मैं लतीफ कर मरम बिसेख्यों । तप संपत अमिरथा देख्यौ ॥
रोम रोम यह बिरह बखानी । कोउ न रहा जग रहै कहानी ॥
देहु दया मोहै कब मोखू । हरहु मोर अन अवगुन दोखू ॥
पढ़ै प्रेम कै अच्छर कोई । देइँ असीस मोर गति होई ॥
हम न रहब आखर रहि जाई । सब हि लोग होइहि सुखदाई ॥

× × ×

सात दिवस में कथा सोहाई । कीन्ह समापत दीन्ह बनाई ॥

इत्यादि ।

कबि निसार सैयद इंशाअल्ला खाँ के समसामयिक थे । इसका पता भी आभ्यंतरिक प्रमाणों से मिल जाता है, साथ ही यह भी पता चलता है कि 'हस-जवाहिर' नामक मसनवी काव्य भी इनके समय मे प्रचलित था ।

हस जवाहिर प्रेम कहानी । कहा मसननी अँविरत बानी ॥
हंसा कहे जहाँ लह भेदू । औ सब कथा जहा लह बेदू ॥
झूंठ ज्ञान सम तिन मन भाषा । अब यह साँच कथा चित लागा ॥

× × ×

कथा का साराश

यूसुफ जुलेखा की कथा का आधार है प्रसिद्ध फारसी काव्य 'यूसुफ-जुलेखा' । कवि निसार ने इसको भारतीय जामा पहिनाने की चेष्टा की है पर इस चेष्टा मे यह अधिक सफल नही हो सके है । मूल कथा यों है ।

नबी याकूब किनआँ नगर मे रहते थे जो कि 'नूह' साहब का बसाया हुआ था । नबी 'लूत' की लड़की से इसहाक ने शादी की थी जिससे 'ईस' और 'याकूब' नाम के दो बेटे पैदा हुए थे । याकूब की सात बीबियाँ थी और उनसे बारह बेटे हुए। इनकी 'रोहेल' नाम की बीबी से 'यूसुफ़' नामक पुत्र और 'दुनियाँ' नाम की कन्या हुई । याकूब यूसुफ़

को बहुत ज़्यादा चाहते थे और इससे अन्य सब लड़के इनसे भयानक ईर्ष्या करते थे। बात यहाँ तक पहुँची कि शेष सब भाइयों ने मिलकर यूसुफ का प्राणांत करने का निश्चय किया। इस विचार से जब वे जगल मे भेड़ चराने जाने लगे तो पिता से कह सुनकर यूसुफ को भी ले गये। वहाँ इन लोगों ने उसे कुएँ मे ढकेल दिया।[1] उसका एक कुरता छीनकर बकरी के ख़ून में रंग दिया और घर मे पिता के सामने कुरता पेश करते हुए कहा कि यूसुफ को भेड़िये ने मार डाला।

उधर यूसुफ़ कुएँ मे पड़े रहे। एक दिन कुछ सौदागर उधर से गुज़रे। इनमे एक ने पानी निकालने को डोल डाला जिसे यूसुफ ने पकड़ लिया और तब सबों ने इन्हे मिलकर बाहर निकाला। सौदागरों के सरदार ने यूसुफ के रूप और काति पर मुग्ध हो इन्हे अपने साथ ले जाना चाहा, पर इतने ही मे इनके हत्यारे भाई भी उधर आ पहुँचे और उन्होंने कहा कि यह मेरा ग़ुलाम है और भाग आया है तुम चाहो तो इसे ख़रीद सकते हो। सौदागर ने मुँह माँगा दाम देकर यूसुफ को ख़रीद लिया। इस प्रकार इन भाइयों ने यूसुफ को अपने राह के कंटक के समान दूर तो किया ही, साथ ही अच्छी ख़ासी रक़म भी वसूल की।[2] ख़ैर सौदागर ने मिस्र की राह ली।

उधर मग़रिब (पश्चिम) देश मे तैमूस नामक एक सुलतान राज्य करता था जिसके ज़ुलेखा नाम की एक अनिंद्य सुदरी बेटी थी। संसार मे कोई उसके समकक्ष नही थी। दुनियाँ के कोने-कोने से बड़े से बड़े

---

[1] इस स्थल की यूसुफ़ की कही हुई बाते और उसका व्यवहार ईसा या मुहम्मद की उच्चता को याद दिलाते हैं; साथ ही यहाँ की कविता भी उच्च कोटि की बन पडी है।

[2] बिदा होते समय फिर यूसूफ़ ने बड़े करुण शब्दों में केवल यही कहा कि भाई मेरा अपराध क्षमा करना और कभी-कभी याद करना, और पिता को कहना मेरे लिये दुःखी न हों। पर भाइयों ने भेद खुलने के डर से यूसुफ़ का मुँह बंद कर दिया।

बादशाहों के विवाह के प्रस्ताव आये पर सुलतान ने सबको कोरा जवाब दिया।

इधर .ज़ुलेखा ने स्वप्न मे यूसुफ को देखकर मन ही मन उसे ही पति बनाने की प्रतिज्ञा की। पर उससे मिलने का कोई उपाय न देख वह दिन-दिन घुलने लगी। वैद्य, हकीम सब थक गये पर उसकी अवस्था शोचनीय हो चली। उसकी धाय बड़ी चतुर थी और .ज़ुलेखा ने उससे अपनी सब बाते प्रकट कर दी। उसने राय दी कि यदि फिर कभी स्वप्न मे उस पुरुष के दर्शन हों तो उसका 'नॉव गाँव' सब पूछ लेना। और हुआ भी ऐसा ही। फिर जब स्वप्न हुआ तो बहुत जिद करने पर यूसुफ ने कहा कि मिस्र के सचिव के यहाॅ आवो तो मुझसे भेंट होगी। धाय ने यह भेद सुलतान पर प्रगट किया कि यदि आप अपनी लड़की की जिंदगी चाहते है तो मिस्र के वज़ीर के साथ इसकी शादी कर दीजिए।

सुलतान बड़ा दुःखी हुआ, क्योंकि वज़ीर की हैसियत उससे कहीं नीचे थी। पर आख़ीर क्या करता। पैगाम भेजा गया और मिस्र के वज़ीर ने बहुत झेपकर इसे मजूर किया और शादी हुई। .ज़ुलेखा रुख़सत हुई। रास्ते में धाय से इसने आग्रह किया कि एक बार 'उन्हे' दिखा दो। पर जब उसने पति को देखा तो मानों आसमान से गिरी। वह तो स्वप्न में आनेवाला वह सुदर पुरुष नहीं था। अब घोर संकट इसके सामने उपस्थित हुआ। बात यह हुई थी कि स्वप्न वाले मनुष्य ने यह तो कहा नहीं था कि मै मिस्र का वज़ीर हूँ। यह तो सिर्फ़ उसके यहाँ मुलाजिम था। पर .ज़ुलेखा ने समझा कि वही वज़ीर है। इसी ग़लतफहमी पर कथा की सारी दिलचस्पी निर्भर करती है।

ख़ैर, आख़िर ज़ुलेखा मिस्र के वज़ीर के हरम मे दाख़िल हुई। पर अपने सतीत्व की रक्षा के लिये उसने धाय की सलाह से एक उपाय सोच निकाला। वह बीमारी का बहाना करके पड़ रही। धाय ने वज़ीर को समझा दिया कि इसको यह रोग है। इस तरह से बड़े दुःख के साथ ज़ुलेखा के दिन कटने लगे।

इधर वह सौदागर यूसुफ को लिये हुये मिस्र पहुँचा। वहाँ

उसने ग़ुलामों के बाज़ार मे बेचने के लिए यूसुफ को खड़ा किया। उसका अपूर्व रूप-सौदर्य देख कर सारा मिस्र हैरान था। सारा देश उसकी एक झलक देखने के लिए उमड़ा पडता था। बड़ी-बड़ी कीमतें लग रही थीं। ऐसी शोहरत सुन धाय को लेकर ज़ुलेखा भी उसके दर्शन को चली। देखते ही उसने पहचान लिया कि यह तो वही पुरुष है जिसने स्वप्न मे अपनी सूरत दिखा उसका मन हर लिया था। ख़ैर, धाय की सलाह से यह तय पाया कि वज़ीर से कह कर इस दास को ख़रीदवाया जाय। वज़ीर ने ज़ुलेखा को ख़ुश करने के इरादे से यूसुफ को ख़रीद कर उसकी सेवा के लिए रख दिया।

अब ज़ुलेखा कुछ ख़ुश रहने लगी। धीरे-धीरे ज़ुलेखा अपने मनो-भाव यूसुफ पर प्रगट करने लगी पर वह इस पर कुछ ध्यान न देता। वह अधिकतर उदासीन ही रहता। पर क्रमशः ज़ुलेखा की चेष्टाएँ बहुत स्पष्ट होती गईं और एक दिन यूसुफ बहुत कामातुर हो गया और ज़ुलेखा को पकड़ने को बढ़ा पर उसी समय उसके पिता की मूर्ति उसके सामने खड़ी हो गई। वह तुरत सँभल गया और उल्टे पॉव भागा। पर भागते समय ज़ुलेखा ने उसका कुरता पकड़ लिया और झटके मे वह फट भी गया पर यूसुफ निकल भागा। इससे ज़ुलेखा ने अपने को अपमानित समझ कर वजीर से यह शिकायत कर दी कि यूसुफ की निगाह ठीक नहीं है, उसने उस पर हमला किया था। प्रमाणस्वरूप उसने उसके फटे कुरते का टुकड़ा पेश किया। पर कुरते के पीछे का हिस्सा फटा देख वजीर ने असल बात का पता लगा लिया पर ऊपर से चुप रहा और ज़ुलेखा का मान रखने के लिए यूसुफ को सिर्फ कारा-वास का दड दिया।

अब ज़ुलेखा को अपने ऊपर बड़ी ग्लानि हुई। वह बहुत सतप्त रहने लगी। कारागार मे यूसुफ के लिए भाँति-भाँति के प्रयत्न गुप्त रीति से करने लगी पर वह इन सब हरकतों से बिलकुल उदासीन रहने लगा और कभी ज़ुलेखा की चेष्टाओं पर आकर्षित न होता था।

एक दिन एक सवार किनआँ नगर से मिस्र आया। यूसुफ ने

कारागार की खिड़की से उसे देखा और अपने देश का आदमी पहचान कर उसे बुलाया और अपने नगर और अपने पिता का हाल चाल पूछना चाहा, पर वह यूसुफ को न पहचान कर इसकी बातों पर कुछ ध्यान न देकर आगे बढ़ना चाहा पर न जाने किस दैवशक्ति से उसके ऊँट के पाँव ही आगे न बढ़ते थे। आख़िर उसने यूसुफ़ से कहा कि मैं व्यापार करने मिस्र आया हूँ। यूसुफ ने पिता के लिये अपना संदेश कहा और कहा कि वे ईश्वर से प्रार्थना करे कि मै जेल से छुटकारा पाऊँ। उसने लौटकर याकूब से यह संदेश कहा भी। उधर यूसुफ ने कई पत्र पिता के पास भिजवाये पर कोई भी उनके पास तक न पहुँचा।

इधर मिस्र मे ज़ुलेखा की बड़ी निंदा होने लगी। सब स्त्रियाँ उसे दुरचारिणी कहतीं। आख़िर जब ज़ुलेखा से न रहा गया तो उसने शहर की बहुत सी औरतों को दावत दी और सब को एक कतार मे बैठा कर सब के सामने एक-एक तरबूज और एक-एक चाकू रखवा दिया। जब सब तरबूज काटने मे लगीं तब ठीक उसी समय ज़ुलेखा ने यूसुफ को बुला कर उनके सामने से गुज़ारा। सब उसके रूप को देख कर इतनी तन्मय हो गईं कि सबों ने चाकू से अपना हाथ काट डाला। इस प्रकार ज़ुलेखा ने यह सिद्ध कर दिया कि यूसुफ का रूप ही ऐसा है कि उसे देख कर कोई अपने बस मे नही रह सकता। आख़िर यूसुफ के चले जाने पर सब स्त्रियाँ बड़ी लज्जित हुईं और सबों ने ज़ुलेखा से क्षमा माँगी।

यूसुफ सात साल तक जेलख़ाने मे सड़ता रहा। ज़ुलेखा उसे मुक्त कराने के उपाय सोचा करती पर उसकी कोई तरक़ीब कारगर न होती थी। इसी बीच मिस्र के सुलतान ने एक बड़ा बेढब सपना देखा जिसका कोई अर्थ ही न बता सकता था। यूसुफ के पाण्डित्य और अनोखी सूझ-बूझ की बड़ी शोहरत थी। आख़िर इस स्वप्न-फल के विचार के लिए सुलतान ने इन्हे तलब किया। इन्होंने बताया कि इसका अर्थ यह है कि सात साल तक वर्षा न होगी और यदि शांति का समुचित प्रबन्ध किया जायगा तो प्रजा के प्राण बँच जायँगे। इस पर सुलतान ने समुचित

प्रबन्ध करना शुरू किया और बहुत बड़े पैमाने पर अन्न वस्त्र एकत्रित करने लगा। इसी सिलसिले में सुलतान ने यूसुफ के क़ैद होने का कारण पूछा और प्रसंगवश ज़ुलेखा ने अपनी सारी आत्म-कथा साफ़-साफ़ सुलतान पर प्रगट कर दी। मंत्री ने क्रोधवश ज़ुलेखा को त्याग दिया।

पर इस सुलतान ने यूसुफ को ही इस मंत्री के पद पर बड़े आदर से बैठाया। इधर ज़ुलेखा तप करने लगी। मंत्री होने पर सात साल तक अच्छी खेती हुई। यूसुफ ने बहुत सा अन्न तथा खाद्य द्रव्य इकट्ठा कर लिया। इसके बाद घोर दुर्भिक्ष का समय आया चारों ओर त्राहि-त्राहि मची। इस अकाल के पाँचवे साल वह मिस्र का पुराना वज़ीर मर गया। यूसुफ का मान और भी बढ़ गया और सुलतान ने सारा राज-काज इन्हीं के हाथ सौप दिया।

इधर यूसुफ की जन्म भूमि किनआँ में भी अकाल पड़ रहा था। याकूब ने अपने लड़कों को अन्न लाने और यूसुफ का पता लगाने के लिए मिस्र की ओर रवाना किया। दसों भाई मिस्र पहुँचे और यूसुफ ने सब को पहचाना पर अपने को इन पर प्रगट नही किया। सब का हाल-चाल पूछकर और बहुत सा अन्न आदि देकर बिदा किया और साथ ही यह भी कहला भेजा कि अपने छोटे भाई इब्न अमीं को लाओ तो और भी बहुत सा सामान देंगे।

सभों ने आकर पिता से सब हाल कहा। उन्होंने बड़े दुःख से इब्न अमीं को जाने दिया क्योंकि यसुफ के बाद यही सबसे प्यारा बेटा हो गया था।

आखिर ये लोग फिर यूसुफ़ के पास पहुँचे और इन्होंने सब का बड़ा स्वागत किया। सब एक साथ भोजन करने बैठे। छः थालियाँ लगीं और एक-एक मे दो-दो भाई एक-साथ भोजन करने बैठे। इब्न अमीं अकेला पड़ता था, ख़ुद यूसुफ उसके साथ बैठ गया। इस मौके पर इब्न अमीं यूसुफ को पहचान गया। विदा होते समय यूसुफ़ ने फिर सबको बहुत सा अन्न वग़ैरह दिया पर इब्न को रोकने की ग़रज़ से

उसके कपड़े मे बाँट रखवा दी जिससे वह चोर समझ कर पकड़ा गया। कहते है कि इस पर किनआँ और मिस्र वालों मे घोर युद्ध हुआ और किनआँ वाले हार कर बंदी कर लिये गये और सुलतान ने सब को मरवा डालने का हुक्म दिया पर यूसुफ ने किसी तरह माफ करवाया। बाद को सब भाइयों ने यूसुफ को पहचाना और सब गले मिल कर बहुत देर रोये और सबों ने अपनी पिछली करनी पर बड़ा दुःख प्रकट किया। बाद को सब किनआँ गये पर यूसुफ ने इब्न और यहूदा दो भाइयों को रोक लिया था। किनआँ पहुँचने पर सब को यूसुफ का पता चला और याक़ूब के साथ सारा किनआँ यूसुफ के दर्शन को चला। यूसुफ ने सब की बड़े प्रेम से ख़ातिर की और तीस वर्ष बाद पिता पुत्र मिले। मिस्र का सुलतान भी बड़ा सुखी हुआ। वह निस्सतान था और क़ाफ़ी बूढा हो गया था अतः उसने इस मौके पर यूसुफ को अपने सिंहासन पर बैठा कर राज्याभिषेक कर दिया। यूसुफ अब सुलतान था।

इधर ज़ुलेखा को यूसुफ के विरह मे तप करते ४० वर्ष हो गये थे। वह बूढ़ी और रोते-रोते अंधी हो गई थी। वह अपना सब कुछ खो चुकी। थी अब वह पथ की भिखारिन थी।

एक दिन शहर मे यूसुफ की सवारी निकली। यद्यपि नेत्र-हीन थी, उसे यूसुफ के अंतिम दर्शन की बड़ी अभिलाषा हुई और बड़ी ख़ुशामद के बाद कुछ औरतों ने उसे यूसुफ के रास्ते मे खड़ा किया। संयोग से यूसुफ ने इसे तुरंत पहिचाना और इसे बड़ी दया आई। यूसुफ ने पूछा तुम्हारा यह हाल क्योंकर हुआ। उसने कहा सब तुम्हारे कारण। याक़ूब को भी सब हाल मालूम हुआ। उन्होंने ज़ुलेखा को दुआ दी जिससे वह फिर षोड़षी रूप मे परिणत हुई और रूपलावण्य पहले से भी उज्ज्वलतर हुआ। अंत मे दोनों का विवाह हुआ और याक़ूब ने दोनों को दुआ दी।

पर जब सब कुछ हो गया तब आख़िर को ज़ुलेखा को कुछ शरारत सूझी। उसने यूसुफ को छकाने की ठानी ताकि उसे कुछ पता तो चले कि कैसे हमने ये ४० बरस बिताये है। आख़िर को यूसुफ को

नाकों चना चबवा कर तब अंत मे जब उसके मरने की नौबत आई तो ज़ुलेख़ा ने आत्मसमर्पण किया।

कथा का आधार तथा उसकी विशेषता

'यूसुफ-ज़ुलेख़ा' की कथा पद्मावत आदि अन्य कथाओं से एक महत्त्व-पूर्ण विभिन्नता रखती है और उस पर ध्यान देना आवश्यक है। अन्यः सभी प्रेमगाथा या आख्यानक काव्य जो अभी तक प्राप्त हो सके हैं, किसी न किसी लोकप्रसिद्ध भारतीय ऐतिहासिक घटना का आश्रय लेकर रचे गये है। अंतर इतना ही है कि कुछ में यह आश्रय केवल नाम मात्र का और कुछ मे ऐतिहासिक तथ्यों के सामंजस्य का आद्योपात यथाशक्ति ध्यान रक्खा गया है। हाँ कविता की आवश्यकताओं को ध्यान मे रखते हुए जितनी निरंकुशता का अधिकार इस कोटि के महाकाव्य लेखकों को हो सकता है इसका किसी ने बहुत दुरुपयोग किया है, किसी ने कम। पर यूसुफ-ज़ुलेख़ा की कथा भारतीय इतिहास या संस्कृति से कोई संबंध नहीं रखती, इसका आधार या आश्रय पूर्णतया विदेशी है। इसमे जिस समाज का चित्र खींचा गया है वह भी भारतीय न होकर ईरानी या मिस्री है। इसकी प्रेम-परंपरा का कोई संबध भारतीय-जीवन से नहीं है। वह सोलह आने ईरान या अरब आदि इस्लामी देशों की है। यूसुफ-ज़ुलेखा की प्रेम-कथा तो नही किन्तु यूसुफ के बेचे जाने और मिस्र मे अधिकार प्राप्त करने की कथा तथा अकाल के कारण उसके पिता और भाइयों के मिस्र जाने की बात बड़ी सजीवता से दी गई है। प्रेम कथा का रूप देने मे निसार की कल्पना अधिक है। कुछ फारसी काव्य-परम्परा का भी प्रभाव है। जामी ने फारसी में यूसुफ-ज़ुलेख़ा लिखी थी। इसमें पुत्र-वियोग की जो कथा दिखाई है गई उसमे निसार की आत्मा बोलती दिखाई देतो है। वह स्वय भी पुत्र-वियोग से व्यथित था और पिता की वियुक्त दशा की पूरी-पूरी अनुभूति रखता था।

स्वप्न में किसी अपरिचित पुरुष को देखकर उसके प्रेम में पागल हो जाना, भारतीय काव्य और रस-पद्धति के लिए

जुलेखा की प्रेम-परंपरा एक नई बात है। प्राचीन संस्कृत या हिंदी काव्यों मे हम इस प्रकार के प्रेम पर आधारित कोई बड़ा काव्य नहीं पाते। 'ऊपा-अनिरुद्ध' की बात छोड़ दीजिए, वह एक दूसरे ही ढंग की चीज़ है। उसमें चित्रलेखा के कौशल द्वारा खोज में चित्र दर्शन का भी सहारा मिल गया था। गुणश्रवण तथा चित्रदर्शन आदि ढंग तो हमारे यहाँ मिलते हैं, और अधिकतर प्रेमगाथाओं में अपनाये गये हैं। 'स्वप्नदर्शन' पर आधारित प्रेम बहुत अंश तक अस्वाभाविक होता है और वास्तविक जीवन मे असंभव सा ही है। वन, वीथी, तड़ाग आदि कहीं पर नायक-नायिका का एक बार परस्पर साक्षात्कार हो चुका हो, निगाहे चार हो चुकी हों, उसके बाद स्वप्न-दर्शन होना स्वाभाविक है, और ऐसा वास्तविक जीवन और काव्य दोनों ही मे हम प्रायः देखते है। पर जिसको कभी न देखा न सुना, न चित्र ही देखा, उसे स्वप्न में देखना और सदा के लिये उसी मे अपने को लीन कर देना यह फारस की ही देन है।

फिर दूसरी विभिन्नता यह है कि पदमावत आदि मसनवी काव्यों में गुणश्रवण या चित्र-दर्शन आदि जिस किसी कारण से भी प्रेम आरभ होता है, दोनों ओर नायक-नायिका मे समान रूप से आरंभ होता है। यहाँ सब कुछ जुलेखा की तरफ से ही है। यूसुफ इससे बिलकुल बरी रक्खा गया है। इसने कभी न स्वप्न ही देखा न इसकी याद मे अस्थि-पिंजर मात्र ही दिखलाया गया, इधर जुलेखा इसके कारण अपमानित और लांछित होकर परित्यक्ता हुई और ४० वर्ष तक तप करते-करते अधी बूढी और मरणासन्न अवस्था को प्राप्त हुई, इधर यूसुफ दास से मंत्री, फिर मिस्र का सुलतान तक हो गया। इसे मानों पता भी नहीं कि जुलेखा इसकी याद मे मर रही है। अगर इत्तफ़ाक से जुलेखा की कुटिया की तरफ से उसकी सवारी न निकलती तो शायद जुलेखा मर ही जाती और कोई यूसुफ़ तक उसके मरने की ख़बर तक पहुँचानेवाला न था।

इस प्रकार की अस्वाभाविकताओं का हम एक ही कारण देखते है। इस कथा में नायक दो रूप में चित्रित किया गया

लौकिक और अलौकिक

है—लौकिक और अलौकिक। 'राम-चरित-मानस' के नायक के संबंध मे भी महाकवि तुलसीदास ने जाने या अनजाने मे ऐसा ही किया है। उनके संबध में 'कवि' तुलसी और 'भक्त' तुलसी दोनों अपनी-अपनी बात बारी-बारी से कहते है। पर कवि निसार के सबंध मे यह बात नहीं है। उन्होंने भगवद्‌भक्ति से प्रेरित होकर यह कथा नहीं लिखी है। पर इस्लाम की दुनियाँ मे यूसुफ 'नबी' या ईश्वर के प्रतिनिधि, मनुष्य रूप मे माने गए है; और इनकी कथा फारसी 'यूसुफ-जुलेख़ा' में वर्णित है। इस मौलिक ग्रंथ का कहाँ तक अनुकरण निसार ने किया है यह जानने का हमारे पास कोई साधन नहीं है। पर इतना हम जानते है कि जहाँ-जहाँ चाहे जिस किसी भी जाति या भाषा के कवि नायक मे एक साथ ही 'मनुष्यत्व' और 'ईश्वरत्व' का आरोप करते हुए चले है वहाँ इसी तरह का गपड़चौथ हुआ है। कविकुलगुरु तुलसी की प्रतिभा असाधारण थी। उन्होंने दोनों का निर्वाह कर ही दिया है, एक प्रकार से, और उनकी बातें इतनी खटकीं भी नही।

चरित्र-चित्रण

पर यही बात हम निसार के संबंध मे नहीं कह सकते। यूसुफ के चरित्र-चित्रण मे कवि ने किसी हद तक उसे 'हर्ष-विषाद-रहित' महामानव के रूप मे चित्रित करने का प्रयास किया है पर सफलता नहीं मिल सकी है। वह 'उदात्त' गांभीर्य हम यूसुफ में नही पाते। कहीं-कहीं तो इनका व्यवहार काफी निम्नकोटि का सा भी बन पड़ा है। अब जैसे युसुफ के हृदयमे जुलेख़ा की प्रबल काम-चेष्टाओं से कामातुर होकर उसको आलिंगन करने को दौड़ पडना, फिर यकायक पिता की तस्वीर सामने आ जाने पर सँभलना और उल्टे पाँव भाग खड़ा होना और जुलेखा का उसे रोकने के लिये झपटना और कुरता थाम लेना, कुरते का फट जाना आदि कुछ ऐसी बाते है जो नायक और नायिका दोनों के चरित्र को बहुत नीचे गिरा देती है। पर जुलेख़ा का चरित्र तो यहाँ बहुत ही निम्नकोटि का कर दिया गया है। कहा गया है कि ऐन मौके पर यूसुफ के भाग

निकलने से उसे इतना घृणित क्रोध होता है कि वह अपने पति से शिकायत करती है कि यूसुफ ने उस पर बलात्कार की चेष्टा की थी, पर उसने किसी तरह अपनी इज्जत बचाई। अपने कथन की सत्यता में वह यूसुफ के फटे कुर्ते का भाग पेश करती है। यह व्यवहार तो कुछ-कुछ मुग़ल कोर्ट की रखेलियों और बाँदियों के छल-कपट और प्रेम-षड़यंत्रों की याद दिलाता है। पर इसके लिए हम निसार को कहाँ तक उत्तरदायी ठहरावे ? यह तो फारसी काव्य-पद्धति और इस्लामी समाज-चित्र की बातें है, जिनका कवि ने अवधी मे वर्णन मात्र कर दिया है।

नायक, नायिका के सिवा धाय का चरित्र विशेष ध्यान देने योग्य है। मुसलमान बादशाहों मे अंतःपुर मे दाई या धाय जैसी होती थी उसका सच्चा चित्र हम देखते है। गुप्त प्रेम मे शाहों और सुलतानों की बेटियों को ये दाइयाँ डूबते को तिनके के सहारे की भाँति थीं। ये दूती का काम करती थी और आख़ीर तक साथ देती थीं।

भाइयों के पारस्परिक द्वेष का निकृष्टतम उदाहरण उस काव्य में मिलता है। बाप यूसुफ को और भाइयों से ज्यादा मानता था इसलिये उन्होंने बिचारे को खपा ही डाला और बाप से आकर कह दिया कि उसे भेड़िये ने खा डाला। फिर वह किसी तरह से कुएँ से निकला भी तो उसे अपना दास कह कर बेच डाला और अच्छी ख़ासी रकम वसूल कर ली। नबी के सगे भाइयों का यह हाल है। विमाता के पुत्र भरत और शत्रुघ्न की याद बरबस आ जाती है। कितना असम्भव पार्थक्य है! किन्तु इसके लिए निसार को दोषी नही ठहरा सकते हैं क्योंकि भाइयों के द्वेष की बात ऐतिहासिक है।

यह हम पहले भी कह चुके हैं कि इन सभी मसनवी कवियों की

कविता

कविताएँ प्रायः एक ही ढर्रे की हुई है। वही अवधी भाषा। वही दोहे-चौपाइयों की छदावली और वही विषय। पर निसार काव्य-भाषा और विषय दोनों

ही दृष्टि से अन्य मसनवी काव्यों से काफी पार्थक्य रखता है। विषय या कथावस्तु का पार्थक्य हम ऊपर दिखा चुके हैं।

निसार की भाषा मे हमें साहित्यिक अवधी के परिमार्जित रूप का आभास मिलता है। 'पद्मावत' के ढंग के ग्रामीण या ठेठ प्रयोग जुलेखा मे शायद ही कहीं मिलते हों। 'मानस' की अवधी से भी कुछ अंशों मे निसार की भाषा परिष्कृत है। अरबी, फारसी के शब्द प्रायः आते रहते है। इन्होंने अपनी रचना मे विशेष कर ऋतुवर्णन और बारहमासा वर्णन के समय कवित्त और सवैये भी ख़ूब लिखे हैं जो कि प्रेमगाथा कवियों के संबंध मे एक अनहोनी बात है। इनके कवित्तों में ब्रज-भाषा की छाया भी प्रचुर परिमाण मे मिलती है। एक उदाहरण दिया जाता है।

मासा भादों महँ सुहावन जगत सुख छायो सभै,
रितु फलत फूलत और तरुवर गैल सों पूरन भए।
भुवन सीतल छाँह सुंदर सुख सँजोगिन के रहै,
कवन हरियर करै पिउ बिन बेल बिरही सो डहै॥

इस तरह का छंद 'पद्मावत', 'चित्रावली,' 'मृगावती' आदि किसी मे न मिलेगा।

अलकार आदि बाहरी सजावट निसार के काव्य मे कम है। अनुप्रास का शौक़ भी इनको न था। हाँ, रस का परिपाक अच्छा हुआ है। इस काव्य मे करुण रस का प्राधान्य आद्योपांत है। यों तो विरह वर्णन सभी सूफी कवियों का मुख्य विषय रहा है और इस संबंध में ये लोग प्रायः ऐसी उड़ान भरने के अभ्यासी रहे है कि पढ कर रसबोध के स्थान पर हँसी आये बिना नही रहती। सारा कथानक ही उप-हासास्पद हो जाता है। पर जायसी और निसार इसके अपवाद हैं। निसार ने इस काव्य की रचना एक नितात दुःखद (पुत्र शोक) सांसा-रिक घटना के बाद की थी। वह इस समय स्वयं ५७ वर्ष के थे और इस समय उनके एक मात्र सुयोग्य पुत्र का निधन निश्चय ही एक

दुखात घटना थी। इस मर्मातक घटना को यथाकथंचित् भुलाने के उद्देश्य से ही उन्होंने इस कथा की रचना मे हाथ डाला था।

× × ×

उद्देश्य

जायसी आदि अन्य मसनवी शाखा के कवियों का उद्देश्य लौकिक प्रेम के मिस अलौकिक का निर्देश करना होता था, पर यहाँ हम वह बात भी नहीं पाते। दो एक स्थान पर हम 'अलख' आदि ऐसे शब्दों का प्रयोग पाते है पर उस अध्यात्मतत्व या रहस्यवाद का पता कहीं नहीं चलता जिसके लिये जायसी और उनके 'पदमावत' की इतनी ख्याति हुई। इस श्रेणी के प्रायः सभी काव्यों मे कवि अत मे स्पष्ट रूप से कह देता है कि यह सारी कथा, 'अन्योक्ति' के रूप मे कही गई है और पाठकों से स्पष्ट अनुरोध रहता है कि वे कथा मे वर्णित प्रेम-कहानी को इसी रूप में ले। नायक को साधक, नायिका या माशूक को खुदा या ईश्वर, राह बताने वाले 'सुआ' को गुरु, इसी प्रकार 'शैतान' माया, सासारिक बंधन आदि सभी के प्रतिनिधि स्वरूप कोई-न-कोई कथा का पात्र होता है। पर इस कथा मे हम इस तरह की कोई बात नही देखते। यहाँ 'प्रेम की पीर' पहले नायिका पर ही चोट करती है और वही नायक की तलाश मे, जिसके नाँउँ-ठाँउँ का कोई पता नही, बाहर निकलती है। सूफी परंपरा मे ईश्वर की कल्पना माशूक के रूप में की गई है और एक 'गुरु' की अनिवार्यता पर बहुत जोर दिया गया है। पर कितना ही खींच-तान करने पर भी यहाँ इस तरह की कोई 'अन्योक्ति' ठीक बैठती नहीं; और न कवि कहीं इस तरह का कोई स्पष्ट निर्देश ही करता है। इस काव्य के उत्तरार्द्ध मे जुलेखा की एकाङ्गी प्रेम और उसकी अंतिम सफलता अपना विशेष महत्त्व रखते है। शुरू मे जुलेखा मे यौवन और अधिकार मद दिखाया गया है किंतु अत मे वह प्रेम की कसौटी पर खरी उतरती है। वह रूप के दर्शन की इच्छुक है, धन दौलत और पद की इच्छुक नहीं है। यह मौलिक प्रेम अन्त मे अलौकिक की ओर जाता है और 'पदमावत' की भाँति यह ग्रन्थ छार मे छार मिलाकर एक अपूर्व

वैराग्यमय वातावरण उपस्थित कर देता है। यह वातावरण कवि की मानसिक स्थिति के अनुकूल था।

खाय पछार जो छार पर, करै आह एक बार।
पंछ प्रान सो उड़ि गयो, रहे छार महँ छार॥

इसमे आध्यात्मिक संकेत केवल इतना ही है कि सच्ची तपस्या निष्फल नहीं जाती है और लौकिक प्रेम अलौकिक प्रेम में परिणत हो जाता है।

इस संग्रह मे कथा का प्रारंभिक भाग और अंतिम भाग लिया गया है। बीच के कुछ भाग इस ढंग से सगृहीत है कि कथा का संबंध ठीक बैठ जाता है। यह ग्रंथ अभी तक अप्रकाशित है और यह संग्रह पहले-पहल प्रेस मे जा रहा है। इसकी फ़ारसी मे लिखी हुई प्रति-लिपि पहले पूरी सपादन के निमित्त एकेडेमी मे आई थी, और मुझे तथा श्री सत्यजीवन वर्मा को इसका भार सौपा गया था, पर अभी तक यह पूरी प्रकाशित न हो सकी। इसकी पाडु-लिपि फ़ारसी मे होने के कारण पाठ मे असंख्य गड़बड़ियों का होना स्वाभाविक है। तुलना के लिये नागरी अक्षरों मे लिखी हुई कोई दूसरी पांडु-लिपि अभी तक नहीं मिल सकी है।

यूसुफ़- .ज़ुलेखा

आदि खंड

सुमिरौ प्रथम स्वरूप सुहावा। आदि प्रेम निज तन उपजावा ॥
उतपति प्रेम अगिन उपजावा। बहुरि पवन अंबुअ उपजावा ॥
आगिन तें पवन पवन ते पानी। पुनि पानी ते खेह उड़ानी ॥
यहि सब मे उपज्यो संसारा। धरती सरग सूर ससि तारा ॥
चारि तंत में सब कुछ साजा। पँचबे सन आकास बिराजा ॥
मुनि रिष गॅध्रब दूत बिठाये। जंगम अस्थावर उपजाए ॥
प्रेम अगिन तेहि काहुँ सँभारा। रचा मनुष बहु विधि बिस्तारा ॥
तेहि सौपा वह प्रेमक थाती। दीपक माँह धरा जस बाती ॥
तेहि बाती महँ आय छिपाए। होय परछिन पुनि देह जराए ॥

प्रभुताई के बीच तें, को गत लीखन पार।
कहाँ स उत्तम अंस वह, कहँ निकसत तेहि झार ॥

रचा मनुष तेहि रूप सोहावा। प्रेम अस तेहि हिएँ छिपावा ॥
अस गुनवंत दयाल सयाना। तेहि निरगुन नर सब अग्याना ॥
जाकै रूप न रग न रेखा। ताकिय रचना आव न लेखा ॥
वहै रूप वपु प्रेम क साना। दीन्ह झार कहि अलख सुजाना ॥
यहि बिधि सब जग परगट कीन्हा। एक ते एक उदित कर दीन्हा ॥
जब वह नेस्त करै पुनि सोई। एक ते एक अलोपित होई ॥
पानी खाइ खेह का लेई। पुन पानी कहँ आगिन हरेई ॥
पवन अगिन कहँ करे सँघारा। मिले आन तेहि अंस अपारा ॥
वह के संग जगत कर लेखा। नेस्त हेस्त सभ करे सरेखा ॥

अलख अमर अबिनासी, घट घट व्यापक होय।
सरब मई सुखदायक, दुख भंजन है सोय ॥

वह पूरन चौदह खॅड माँहीं। वह बिन जिया जंतु कोउ नाहीं ॥
सब मँह आप सु खेले खेला। नट नाटक चाटक जस मेला ॥

ना वह मरे न मिटे न होई । अपरम मरम न जाने कोई ॥
जाकी रति सें सुख नित साजा । तन तिरिया महँ आय बिराजा ॥
कहँ रसना तेहि अस्तुति जोगू । रचा ताहि जो चीन्हे भोगू ॥
गुंजत ज्ञान ओ भेद अपारा । अगम आव घट तिन दहुँ सारा ॥
कबहूँ आय अकेला रहई । कबहूँ यह रचना चित चहई ॥
नाटक खेल रच्यो ससारा । जा कहँ देख ज्ञान बल हारा ॥
एक रूप चारिहुँ दिस देखा । दूसर अवर न जाय बिसेषा ॥

अगनित बार सँवारा, तेहि जग अगम अपार ।
जहाँ अलख ससार सब, जहँ जग तिन्ह करतार ॥

वहि कर दरस दुओ जग पूरा । नर बाउर सो गिनहि अधूरा ॥
वह निर्गुन सौगुन सोउ रूपा । परघट गुपत सो दुओ अनूपा ॥
जो निर्गुन कहँ चाहिय देखा । अलख अमूरत जाय न देखा ॥
चौसर गगन तो रूप विसेपे । रूप अपार हिये जग देखे ॥
पै जब आप देखावै चाहिय । दिव्य दिष्ट निरभावै ताहिय ॥
पूरन चहुँ दिस जोत अपारा । बिना दिष्ट कोउ लिखे न पारा ॥
जो यह जग वह रूप न लेखा । वह जग केहि बिध जाय बिसेखा ॥
अनहद सबूद सुने सब कोई । का नहि दरस दिये तिन्ह सोई ॥
कत सरवन सुन बचन हुलासा । काहे ते नयन सो रहैं निरासा ॥

सुने सबूद सब कोऊ, अनहद दस परकार ।
ताकर रूप देखें, कारन कवन बिचार ॥

तैं दयाल सुखदायक राजा । जिन अस मोहिं गरीब निवाजा ॥
हतेउँ नेस्ति आधीन मिले ना । तैं करतार रहे मोंहि कीन्हा ॥
मूरख हतेउँ कीन्ह सज्ञाना । गुन विद्या सब कीन्ह निधाना ॥
गौरी सहन बंस अतवारा । दीन्ह स्वरूप भाउ उँजियारा ॥
तिन मोंहिं दीन्ह सदा सुख भोगू । तिन्ह का देहुँ अहहुँ केहि जोगू ॥
संकट गाढ बड़े जब सहही । तिन पल महँ हर लेहि गुसाईं ॥
मैं तो अधम पातकी आहा । तैं निरभान कीन्ह जस चाहा ॥

गुंजत ज्ञान गिरा अनेक, दीरघ दया अपार।
तोरे गुन केहि लेहि कहे, तूँ दाता करतार॥
बरनौं ताहि आदि बेहि साजा। तेहि के जोनि जगत उपराजा॥
आदि साज तेहि अनत पठावा। बोहित साज सो पार लगावा॥
तेहि के जोति सब सिष्ट सँवारा। जिया जतु जोहि वार न पारा॥
जो अस पुरुष न जग महँ आवत। ऊँच नीच को पार न पावत॥
जग बोहित वह सेवक देवा। केहि गुन पार उतारे खेवा॥
जिन अवतार सो सबहि सरेखा। कोउ निर्गुन कोउ सर्गुन देखा॥
अस अवतार काहु नहि लीन्हा। जिन निर्गुन सरगुन दोउ चीन्हा॥
कोट कलॉत करे जो भावे। बिन वह नाम मुगति नहिं पावे॥
वह कर नाम लिए एक बारा। पावे मोख मुगति निस्तारा॥
आदि जोति जाके रचे, तेहि तें सब कुछ कीन्ह।
मोख मुगत गुन पावे, जब नाम मोहम्मद लीन्ह॥
चार मीत जस चार गरथा। चारिउ सभा चारि सो पंथा॥
पहिले अबूबकर मग चीन्हाँ। नबी परापत राज जेहि कीन्हाँ॥
दूजे उमर खिताब सोहाये। लिख सर्पंथ इबलीस पुराए॥
तीजे उसमान पूरन लाजू। आदि करी चढि कीन्हेउ राजू॥
अली बली गुन कारत भारी। आद इमाम जो पर उपकारी॥
खंड खंड जेहि खंड अखडा। लीन्हौं दंड मंड भुज दंडा॥
दीन नबी कर प्रोहित कीन्हा। मारि सत्रु कहँ सब जग कीन्हा॥
तिन इमाम जग खेवक आये। पाप हरे गुन पाप लगाये॥
हसन हुसेन महा जग तारन। दीन्ह सीस उम्मत के कारन॥
होय असहाब सो करि चढ़े, वहि दीन सो प्रोहित कीन्ह।
आद अत लहि जगत सब, अगम निगम करि दीन्ह॥
आलम शाह हिन्दू सुलताना। तेहि के राज यह कथा बखाना॥
देहली राज करे औ नीता। उमरावन तेहि कीन्ह अनीता॥
कादिर खान सो अधम रुहेला। सो अपराध कीन्ह बद फेला॥

पादशाह कहँ आँधर कीन्हा। सुत उतारि सब दुख तेहि दीन्हा॥
कीन्ह अपत तैमूर घराना। राज प्रताप अधम तेहि माना॥
वह चडाल अधम अन्याई। पातशाह तें कीन्ह बुराई॥
जस वै कीन्ह नेक फल पावा। देइयँ चरित खेल दिखरावा॥
नेह विटप पुन जहर मिलाये। पातशाह सर छत्र भराए॥
अधधुंध सभ जग करि दीन्हा। तस आपुन देहलीपति कीन्हा॥

कीन्ही राज प्रताप जुत, रहिअ उतै कछु नाहँ।
तब सेवक साँई भये, साँई दुखित जग माँह॥

चहुँ दिस अधधुध सब छावा। अवध देस काँ दियो बहावा॥
येहिया खाँ आसफुद्दौला। जासु सहाय अहइ नित मौला॥
हिन्दू सचिव वह बाली नरेसा। तेहि के धरम सुखी सब देसा॥
दुऔ गुन ताह सो धर्म बिधाना। धरम नीत जग इदु समाना॥
करै नीत कुछ और न भावे। धरम दान को सरवर पावे॥
तेहि के राज नीत जग छाये। सूर सुजान न सके सताये॥
करै न नीत धरम सुन्हि होई। मनुष समान सो परगट होई॥

धरम नीन सब जग करे, परजा सुखी सरीर।
जुग जेग रहे सुदेस भी, यहि नव्वाब उजीर॥

सेखपुरा उत गाँव सुहावा। सेख निसार जनम तहँ पावा॥
चारिउ ओर सुघन अमराई। अगम अथाह चहूँ दिस खाँई॥
सेख हबीबुल्लाह सोहाये। सेख पूर जिन आन बसाये॥
बादशाद अकबर सुलताना। तेहि के राज कर जगत बखाना॥
अवध देस सूबा होय आये। वीस बरस लहि रहे सुहाये॥
तेहि के शेख मुहम्मद नाऊँ। सो हम पिता सो ताकर गाऊँ॥
तेहि घर हौ बिधनैं अवतारा। चारि दीप जस चौमुख बारा॥
सभै बली सुपुरुष सुज्ञाना। रूपवत औ विद्यामाना॥

बंस मौलबी रूम कै, सेख हबीबुल्लाह।
जेहि के मसनवी जगत मह, अगम निगम अवगाह॥

अब आपन गुन करौ बखाना। हौ निरगुन कुछ भेद न जाना ॥
सबुहे गुरू कर गुरू सुहावा। सो हम गुरू वह जग महँ आवा ॥
जेहि सो गुरू कि दोउ जग आसा। अवर गुरू की भूख न प्यासा ॥
चहै गुरू वह पार लगावै। चहै तो बार बार भटकावै ॥
वह कर प्रेम हिएँ महँ गोवा। अवर प्रेम सभ चित तन खोवा ॥
अच्छर एक पठावा सोई। बहुर गुरू वह कियो बिछोई ॥
भयो हिया जस समुद अपारा। किये गरथ अनूप सँवारा ॥
झूँठ कथक कहि रैन बिहाये। अब यह समै भौर कै आये ॥

बस मौलवी रूम कै, मौलै लावा पथ।
होय सिद्ध बुध मसनवी, निरगम अगम गरंथ ॥

सात गरंथ अनूप सोहाये। हिंदी और पारसी सोहाये ॥
संसकिरत तुरकी मन भाये। अरबी और फारसी सोहायें ॥
हीर निकारि के गेहूँ खाने। रस मनोज रस गीत बखाने ॥
औ दिवान मसनवी भाखा। कर दोइ नसर पारसी राखा ॥
बार वेस महँ कथा बनाये। हीर निकारि अनूप सोहायें ॥
रस मनोज रस गीत सोहावा। सभै बात कर भेद बतावा ॥
हंस जवाहिर प्रेम कहानी। कहा मसनवी अमृत बानी ॥
इंशा कहे जहाँ लह भेदू। औ सब कथा जहाँ लह वेदू ॥
झूँठि जानि सब ते मन भागा। अब यह साँच कथा चित लागा ॥

तीन नसर एक मसनवी, औ निसाब दीवान।
सर दुई हीर निकार तिन, रस मनोज रस खान ॥

हिजरी सन बारह से पाँचा। बरनेउ प्रेम कथा यह साँचा ॥
अठारह सै सताईसा। सवत बिकरम सेन नरेसा ॥
सतरह सै बारह पुनि साका। सतरह सै नब्बे ईसा का ॥
सत्तावन बरिख बीते आयू। तब उपज्यो यह कथा बँचाऊ ॥
सात दिवस महँ कथा समापत। दुरमति नाम रहे सो सम्मत ॥
गयो तरुन को तेज उमंगा। साथी गये छाँड़ि सब संगा ॥

बाएँ अँस उठि के जग माहीं। बिरिध दिवस अब कुछ रस नाहीं॥
बना जनम को गोरख धधा। अबहुँ न समझै यह मन अँधा॥
बार बंस औ वरुन सोहावा। गयो बीत तीसर पन आवा॥

बजे नगारा कूँच का, करहु सुचेत सँभार।
अगम पंथ साथी नहीं, केहि बिधि उतरब पार॥

बिरिध वैस महँ कीन्ह बिचारा। केहि विधि होय मोर उद्धारा॥
कहयों तो तंत्र कथा उत साँचा। जो कुरान मा सुना औ बाँचा॥
सभ भाषा महँ कथा सोहाई। बरनन भाँति भाँति करवाई॥
इबरी औ अरबी सुर बानी। पारस औ तुरकी मिसरानी॥
भाषा माँ काहू ना भाखा। मोरै अंस दइव लिखि राखा॥
सो अब कथा कहौ चित लाई। जेहि तन मोख मुगति होइ जाई॥
यूसुफ नबी विदित जग आवा। तारा गन्ह महँ चद सोहावा॥
जहँ लहि महा सिद्ध अवतारा। सब महँ रूप दीन्ह उँजियारा॥
कथा अनूप जगत महँ सोई। प्रेम भगति सत धरम समोई॥

यूसुफ नबी अनूप जग, प्रगट भये संसार।
जाकी कथा तत अब, बरनऊँ भजि करतार॥

जो यह कथा सुनै चित लाई। नासै पाप पुन्न अधिकाई॥
बाँझिन सुनै सो संतति पावे। अकट तरुनि माँझहि फरिआवे॥
निरधन होय, होय धन आकर। निरगुन सुने होय गुन सागर॥
दुःखी सुने सुक्ख अधिकाई। बदी सुने तो मोख होइ जाई॥
विछुरे परे सो देय मिलाई। रोगी सुने रोग हरि जाई॥
निरदायी कहँ दाया आवे। जोगी सुने जोग अधिकावे॥
कैसेउँ विपति गाढ़ जो होई। सुनै कथा बुध डारै खोई॥
सुने सती दिन दिन सत बाढै। बिरही बिरह दीन दुख दाढ़ै॥
प्रेमी सुने प्रेम अधिकावें। पंडित सुने महा रसं पावें॥

जो कोइ सुनै पढ़ै लिखै, होय सिद्ध संसार।
वंस सुनत सुख पावे, देइ असीस निसार॥

कथा अनूर अहै जग माही । दूसर कथा सो यह सँघ नाही ॥
नबी लागि यह कथा सुहाई । सरग लोक तिन दैव पठाई ॥
एक दिवस जबरैल जो आये । हसन हुसेन को दुःख सुनाये ॥
मारिन्ह तिन बैरिन निरदाई । पानी बूँद न दीन्ह कसाई ॥
सुनि के मरन नबी दुख माना । रोवै लाग दुखित होइ प्राना ॥
तब जबरैल कथा यह लाये । आन अरथ यह बाँच सुनाये ॥
जो इमाम कहँ उम्मत मारिन्ह । यूसुफ बंधु कूप महँ डारिन्ह ॥
कथा सत्त अब कहौ सुहाई । जेहि विधि सरग लोक तेहि आई ॥
चूक होय तो लेहु सँभारी । सुद्ध असुद्ध सो लिखहुँ बिचारी ॥

बरनौ कहा अनूप अब, प्रेम भरी औ साँच ।
मोख मुगति गति पावहि, जो रे सुनावै पाँच ॥

किनाँ नगर जो 'नूह' बसावा । तहाँ नबी याकूब सोहावा ॥
जग महँ महा सिद्ध अवतारा । पूजै ताहि सकल संसारा ॥
लूत नबी की सुता सुहाई । सो बियाहि इसहाक के आई ॥
भय इसहाक के दुइ सुत सगा । एक उदर दुइ रवि ससि रंगा ॥
एक ईस याकूब सो दूजा । तप जप विद्या कोउ न पूजा ॥
महा सिद्ध ता कहँ विधि कीन्हा । इसराईल नाग तिन्ह कीन्हा ॥
उपजे श्याम देस दोउ भाई । रहे किनाँ याकूब सोहाई ॥
भेजै ताह अलख सदेसा । लावै निगम पथ सब देसा ॥
नीच ऊँच कहि मारग लावै । औ गुरु मुख सब भेद बतावै ॥

करे तपस्या रैन दिन, जप तप बरत औ नेम ।
जबराइल आवहि तहाँ, आन बढ़ावै प्रेम ॥

सात इस्तरी सुखद सोहाई । बारह पुत्र दई अधिकाई ॥
रुबिया औ राहेल सुहाये । दोउ दुहिता सुत लूत के जाये ॥
दौहित विधनै नारि कुलीना । पाँच सहेली सुघर नगीना ॥
दुइ दुइ पुत्र दुहूँ के भये । आठ पुत्र दासी सन कहे ॥
बहुत गरंथ माँह अस हेरी । दोइ नागर तेहि के दुइ चेरी ॥

धरम दीन्ह राहेल स्वरूपा। महा सती औ ज्ञान अनूपा ॥
तेहि के कोख कीन्ह अवतारा। यूसुफ इब्न अमीन दोइ बारा ॥
प्रथम दुहिता दुनियाँ नाऊँ। पुनि यूसुफ मानै तेहि ठाऊँ ॥
यूसुफ नबी जनम जब लीन्हा। परगट जोग जगत महँ कीन्हा ॥
दुइ अंसा यूसुफ नबी, पायो रूप अपार।
एक अंस बिधि रूप महँ, दीन्ह सबै संसार ॥
बुधि सरूप जब उतपति कीन्हा। दोइ अंसा यूसुफ कहँ दीन्हा ॥
एक अस महँ सब जग पावा। धन वह रूप जो दइय बनावा ॥
यूसुफ नबी लीन्ह अवतारा। घर बाहर होइगा उँजियारा ॥
जो उपमा कबि दीन्ह बखानी। रूपवन्त जस यूसुफ सानी ॥
तेहि स्वरूप कर कहौ बखाना। जेहि कर रूप सो कीन्ह बखाना ॥
जब तिन जन्म सो यूसुफ लीन्हा। अलख सबहि सुख तिन्ह सो दीन्हा ॥
सत्रु अनेक भयो जरि छारा। जो इमलाक यहूदा मारा ॥
बड़े बस सब बली सोहाये। एक तें एक सरिस अधिकाये ॥
सैन धनी गहि गदा पवारहिं। बन महँ सौह सिह कहँ मारहि ॥
दस दिग्गज दस बंधुवै, दल गजन बलवान।
सेवा करैं सु तात कै, जगत काज सुज्ञान ॥
दस भाई जो तरुन जुझारा। दुइ भाई लखि बालक बारा ॥
इब्न अमीन जब लीन्ह अवतारा। माता मुई छाँडि दुइ बारा ॥
निस दिन रखै नबी निज पासा। छिन बिछुड़े जब होय उदासा ॥
बहु विद्या औ ज्ञान सोहावा। नितै पुत्र का सभै पठावा ॥
और पुत्र जो एक छिन आवै। वेद पढ़ाय सोकाज बढ़ावैं ॥
यूसुफ कहँ दिन रात पढ़ावैं। छिन नैनन नहिं ओट करावैं ॥
जबराईल प्रान तजि दीन्हा। तब यूसुफ कहँ फूफहि लीन्हा ॥
प्रान ते अधिक रखै दिन राती। निस दिन रखैं लगाये छाती ॥
औ याकूब चहै मन माँहीं। फूफिहिं एक छिन छाँड़हि नाहीं ॥
बहुत समय यूसुफ लिए, जायँ भूलि तप जोग।
तेहि कारन बिधि कोप कै, दीन्हा पुत्र बियोग ॥

भगिनी बंधु रहै अस रीती। दोउ बाउर सम यूसुफ प्रीती ॥
बसन एक इसहाक सोहावा। बँधहिं फाँट सो लीन्ह कढ़ावा ॥
एक दिन सोवत माँह छिपाये। यूसुफ फाँट सो फेंट बँघाये ॥
ऊपर और दुकूल पिन्हावा। ओ याकूब के पास बिठावा ॥
लाय सो भूलि फेंट कै चोरी। बसन बधु तें बरबस छोरी ॥
भूलहिं तेहि बहु सुख ते पाला। नैन ओट छिन होय बेहाला ॥
एक दिन यूसुफ बैठ्यौ पाटा। रूप तेज मनु बरै लिलाटा ॥
काहू केर मुकुरनी लीन्हा। तब अभिमान हियें महँ कीन्हा ॥
जो मोहि का बेंचै लै जाई। को लै सकै दरब कहँ पाइ ॥
उदय अस्त लहि दरब पटोरा। मोरै मोल जोग सब थोरा ॥

यूसुफ कहँ निस दिन पिता, राखै प्रान समान।
आन तें अधिक सपूत सुत, सुंदर सुघर सुजान ॥

नीक न लाग दइअ कहँ बाता। काहुक गरब न रखै बिधाता ॥
एक दिन यूसुफ रिस अधिकारा। कोपित भयौ दास कहँ मारा ॥
औ मातहि मारा तिन दासा। भयौ हियें वह दास निरासा ॥
औ याकूब मियाँ के मारें। बोध न कीन्ह सो दास पुकारे ॥
करता कोप हिएँ महँ आने। दास होय तब यूसुफ जाने ॥
आयो एक सुरेख भिखारी। आन बार याकूब पुकारी ॥
कहा नबी तुम्ह आसन करहू। पावहु भोग छुधा कहँ हरहू ॥
कहि यह बात सो गयौ भुलाई। यूसुफ प्यार मतें बिसराई ॥
ताके भूख रहै सुध नाही। दीन्ह सराप तपा हिय माँही ॥

बरस चारि महँ भूलहि, जब कीन्हा सरग पयान।
तब पावा याकूब तेहि, हिया अधिक हुलसान ॥

वह मन भावन रूप सोहावा। ओ जेहि दीन्ह रूप जग पावा ॥
आन स्वरूप हेत जो लाये। वह मन भावन ताहि सुहाये ॥
औ याकूब सिद्ध अवतारा। निस दिन यूसुफ रूप निहारा ॥

अलख सहाय क्रोध तब कीन्हा । यूसुफ बिरह सोग तेहि दीन्हा ॥
आँखी ओट पिता नहिं करई । छुधा त्रिषा मुख देखत रहई ॥
निस दिन रखै प्रान सम पासा । और पुत्र मन रहैं उदासा ॥
आवहिं पुत्र करहि सब सेवा । काहु के ओर न देखै देवा ॥
चालिस सहस मेष चुन लीन्हा । तिर तिर सहस सबहुन कहँ दीन्हा ॥
सात सहस यूसुफ कहँ दीन्हा । सो दुंबे सब महँ चुनि लीन्हा ॥

सबहुन हिये लखि क्रोध भा, देखि पिता कर प्यार ।
लघु बालक कहँ दून तिन, दीन्हँ अस अधिकार ॥

नबी के अँगन एक द्रुम्म सुहावा । कलपवृच्छ सम ताकर छावा ॥
जब याकूब नबी सुत पावे । सुंदर सुना वृच्छ उपजावे ॥
ज्यों ज्यों पुत्र होय वहि बारा । त्यो त्यो बढ़े वृच्छ के डारा ॥
बालक तरुन होय सुख पावै । काट डार वह छड़ी बनावै ॥
यहि बिधि तेहि निकसे दस साखा । दसौ पुत्र पायो बैसाखा ॥
यूसुफ जन्म लीन्ह जग माहीं । लोना द्रुम महँ निकसे नाहीं ॥
कह्यो तात तिन पुत्र सोहाये । सबहि बधु कहँ छडी सोहाये ॥
कस न दइव मोहि आसा दीन्हा । तब अरदास दई तें कीन्हा ॥
आये जबराइल कै आसा । हरिहर रतन शाख कैलासा ॥

सो आसा यूसुफ नबी, पावा अभय हुलास ।
लखि भाइन्ह कहँ क्रोध भा, जरें हियें आभास ॥

हत्यो जो बधु यहूदा नाऊँ । गये बंधु सब तेहि के ठाऊँ ॥
हम सब पितैं करहि बड़ काजू । दिन दिन बढ़े सो ओकर राजू ॥
दिन भर रहैं सघन बन माहीं । भूख प्यास कुछ जानहि नाही ॥
यह बालक कुछ करे न काजू । इन्हे दीन्ह दून कर साजू ॥
कछु दिन महँ सौंपे घर बारा । हमहि रहहि सेवक तिन्ह हारा ॥
बालक कुटिल पितैं बौरावा । तेहि ते करन्ह सो बैग उपावा ॥
अबहि बिरिछ ना मूल सँभारे । डारहिं उलत ताहि उखारे ॥

जब वह मूल करै बिस्तारा। कैसेउँ कहै न चूक कुल्हारा ॥
देख अनुज कहँ कोपित ताता। बोला मरद यहूदा बाता ॥

वह बालक वै विरिध मैं, वै सौं पिता वह भाय।
दोऊ कै दुख हिये महँ, दोऊ जगत नसाय ॥

यूसुफ रैन सपन एक देखा। बहुर पिता तिन कहा सरेखा ॥
जानहु गरह एकादस आए। रबि ससि मिल मोहि सीस नवाये ॥
सुन याकूब सु कीन्ह हुलासा। राज पाट सुख भोग विलासा ॥
जग महँ होहु महीधर राजा। सुद्ध बुद्ध नित आगर साजा ॥
पै यह सपन सुनै नहि भाई। नाहिन होहि शत्रु दुखदाई ॥
मुख तिन बान निसारे कोई। अनत भेद वह परगट होई ॥
का होनार अनुज सों कहा। करहु बिचार सपन कस अहा ॥
बधुन कहा खोट यह बारा। पितें ताह मुँह लाय बिगारा ॥
रबि ससि मात पिता निरभाई। नखत एग्यारह हम सब भाई ॥

कीन्ह मता दस बधु मिल, डारहि ता कहँ मार।
नाहि तो हम सब दास सम, वह ठाकुर घर बार ॥

पिता आदि हम सब सिर नावहि। सपन झूठ कहि नेह बढ़ावहिं ॥
हत्यो निरिप इमलाक हठीला। देव कहावे सुबर नवीला ॥
पिता सदा सो तासें लड़हीं। औ कबहूँ सरबर ना करहीं ॥
ताहि यहूदें छिन महँ मारा। घर कोपहिं महँ सिला पबारा ॥
जो अस बज्र न टारे टरई। ताहि मारि निहचिन्त सो करई ॥
ताहि सो पुत्र कर आदर नाही। यूसुफ हित राखै हिय माही ॥
बसीकरन जो पितहि पठावा। सोइ पिता पर मन्त्र चलावा ॥
जो वह झूठ कहत है बाता। जानहिं साँच सो ताकहँ ताता ॥
हम कोटिन, जो बात सुनावें। उनहीं कू परतीत न आवें ॥

तेहिं यूसुफ कहँ मारिये, जहाँ न पावै नीर।
रक्त पिएँ मिट जाय रिस, जो कुछ क्रोध सरीर ॥

करिकै मत आपस महँ सारा। पिता पास आए भिनसारा ॥
जो राउर हम आज्ञा पावहिं। लै यूसुफ कहँ बनै सिधावहि ॥
जेहि बन महँ नित मेष चरावैं। यूसुफ देखि हिये सुख पावैं ॥
बालक देख सो मन हुलसाहीं। वे खेलहि हम मेष चराहीं ॥
कहा जाउ हम भेड़ चरावै। यूसुफ का कहुँ बिक लै जावै ॥
मोर हिये उपजै यह ससा। जिन लैहि जाहु संग यह मसा ॥
तब सबहू मिलि यूसुफ पहँ आए। खेल कूद कै बात सुनाये ॥
यूसुफ जाय पिता तिन कहा। हम हिय बहुत लालसा अहा ॥
सब भाइन्ह सँग बनहिं सिधावैं। दिन भर खेल कूद घर आवैं ॥

औ यूसुफ याकूब सन, बालक सम हठ कीन्ह।
दसो बंधु दस ओर नित, जत अँदोर करि लीन्ह ॥

हम यक यक अस बल बरबंडा। हैं गयंद बली भुज दंडा ॥
भागै सिंह हाँक एक मारैं। दसो बंधु दस दिग्गज टारैं ॥
मैंमँत गयँद न आनहि लेखै। काँनहि गैंडा सिंह बिसेखै ॥
का हम सौंहैं जो करै सु आना। बृथा सोच तुम हियें समाना ॥
यूसुफ तात सों बहुत हठ कीन्हा। होय ब्याकुल तब आज्ञा दीन्हा ॥
अपने हाथ सों केस बनाए। ओर पितै बागा पहिराए ॥
बार बार लै हिये लगावा। माया ते चख जल भरि आवा ॥
चले तात यूसुफ के संगा। जस दीपक सँग फिरै पतिंगा ॥
करै बिदा तेहि हिये लगावै। बिछुडे प्रान महा दुख पावै ॥

केहि बन महँ लै जाहि तोहि, मन न धरै अब धीर।
कोमल गात गुलाब सम, सहै सो घाम सरीर ॥

लागहि छुधा जो बन के माही। तिरखा तें तुम अधर सुखावहिं ॥
तुम बालक वह बन अँधियारा। बिक जंबुक हैं भूत बैतारा ॥
पवन तेज ते तन कुम्हिलाई। धूप देख काया *मुरझाई ॥
लागहि प्यास जो बारमबारा। होय घाम देखि बिकरारा ॥
खड़े खड़े मुँह दूभर भारी। होय कंठ सो प्रान दुखारी ॥

आयहु बेग न लावहु बारा। होइहि तात मो दुखित तुम्हारा ॥
चारि याम होय जुग चारी। साँझ परे सुठ होब दुखारी ॥
कहा पुत्र उपदेस हमारे। गाढ़ परे जिन दिहेउ बिसारे ॥
मन सु सतै कछु होय जु ताता। सँवरहु एक निरंजन दाता ॥

कहा पिता रुवैल ते, सौंपहुँ तुम्हे परान।
दिन आछत लै आयहु, कियहु न साँझ निदान ॥

जो बिधि लिखा आन सो पूजा। करि न सकै कोऊ अब दूजा ॥
महा सिद्ध अब भए अधीरा। भूला अलख दयाल गँभीरा ॥
नीर छीर दुओ भा जनु भरा। सभउँ कहँ दीन्हों चित हरा ॥
जब वह प्यास लगे तब दीन्हो। ओ आरत बहु भाँति सो कीन्हो ॥
बाहर नगर बिरिछ एक आहा। द्रुम बिछोह नाम तेहि काहा ॥
परदेसी जो कहूँ सिधारे। कुटुँब हितू तेहि लग पग धारे ॥
रोय रोय समधै तेहि लोगू। चख जल सीचहि बिरिछ बियोगू ॥
तहँ याकूब जो रोदन कीन्हा। ओ यूसुफ जल मारग लीन्हा ॥
बहुत बेर लगि ठाढ़े रहै। तरवर बिरह बात जस कहै ॥

आगम बिरह बिछोह का, दीन्हा बिरिछ जनाय।
रोम रोम दुख व्याप्यो, लाग हिये पछताय ॥

डारहिं डार ओ पातहि पाता। सुना वृच्छ तिन बिरहक बाता ॥
जब लहि पिता दिष्टि भर हेरे। आरत कीन्ह झूठ बहुतेरे ॥
काहू अनुज सीस पर लीन्हा। काहू आप कहँ पाहन कीन्हा ॥
कोउ चूमै कोउ हिये लगावै। कोउ चूमैं कोउ काँध लगावै ॥
काहुन पीठ पर ताह चढ़ावा। जस तुरग लै चहुँ दिस छावा ॥
कोउ कहै सिरताज हमारा। कोउ कहै सम प्रान अधारा ॥
जब लै गये दिष्ट के ओटा। सिर से डार दीन्ह जस मोटा ॥
कोउ मारै कोउ बाँधै हाथा। कोउ साँसै बहु कोप कै साँसा ॥

तुम्ह बालक अस निडर भए, रचि रचि बचन अनेक।
हम ते पिता बिमुख रहैं, यह तुम कीन्ह न नेक ॥

रचि रचि बचन पितैं बौरावा। तुम बालक अस विख बिखरावा॥
भै भै मरहि करहिं सब काजू। औ बैठे चुप बिलसहु राजू॥
अब सु कहौ का करौ उपाई। टूक टूक करि दै हियँ भाई॥
जब मारहिं चहुँ दिसि निरदाइय। रोय रोय एक एक पहँ जाइय॥
मरतहि लात परहि तेहि दूरी। धावहिं लै निकासि कै छूरी॥
लै पाँवरि उन काटि बहावा। नाँगे पाँव नबिय दौड़ावा॥
कँवल चरन महँ परै फफोला। प्यास ते जीभ भई जस ओला॥
यूसुफ नबी बंधु के आगे। साँसत देख सो रोवन लागे॥
बधु तुम्हारा अहै लघु भ्राता। तुम्ह सो तात सन्ह सौपेहु ताता॥

मोहि मारे तुम दुख है, पिता मरहि तेहि रोय।
तेहि से अब दाया करहु, धरहु छमा रिसि खोय॥

चहुँ दिसि तिन भाइन्ह तेहि मारा, भयो पियास तें बहु बिकरारा॥
यूसुफ तबहिं पाय के आसा, गयो भागि रोहेल के पासा॥
मोहिं पितैं सौपि तुम्ह दीन्हा। कौने दोख क्रोध तुम कीन्हा॥
मारि लात उठि दूर पवारा। कहा बोलावहु एकादस तारा॥
चद सूरज जिन तोहि सिर नाए। तेहि सँवरहु जो होहि सहाए॥
तब समयू ते माँगा पानी। रोय दिखावा जीभ सुखानी॥
भाजन दीन्ह भूमि मँह डारे। क्रोधवंत होय मुख महँ मारे॥
गात गुलाब सछत करि डारा। क्रोधवंत होइ मुख महँ मारा॥
छुरा काढ़ि सिर काटन लागा। तब यूसुफ लादे पहँ भागा॥

होय तरास लाग्यो कहै, जिन काटहु तुम सीस।
देहु डारि मोंहि कूप महँ, करै जो कछु जगदीस॥

लातैं मारि जो दीन्ह पवारी। गयो पान कहँ ठाढ पुकारी॥
तुम्ह पानी कर अहौ पियासा। हम प्यासे तुम खून के आसा॥
वे निरदाइ न दाया करहीं। जीना सबै सपन करि देहीं॥
गुफतालून जाद कै पासा। कहै बंधु मैं अहौं पियासा॥
कहै बंधु मोंहि पानी देहू। मरौं पियास से धरम सो लेहू॥

चाहा देहि यहूदा पानी। ढरकावा समयूँ रिस मानी॥
सबहि बंधु बोलहि बिख बानी। चंद्र सूरज तें माँगहु पानी॥
गरह एकादस लेहु बोलाई। जो तोहिं पानी देहि पिलाई॥
नौ भाई कोपित भये, कहै बंधु सन बात।
बैरी छोट न जानिये, ना छोटे दिन रात॥

कोउ कहै यहि डारहु मारी। पियहि रकत रिस मिटै हमारी॥
कोउ कहै बिष घोरि पिलावहि। कोउ कहै बन छाड़ि सिधावहिं॥
कहा यहूदा बधु के मारे। होय बिनास नरसहि कुल सारे॥
पुनि मत कीन्ह सो होइ इकठाईं। डारहि कूप माहँ बरियाईं॥
बन माँ कूप अहै अँधियारा। चला जाय जो परै पतारा॥
कुरता काढ़ि रक्त महँ भरही। पिता पास चलि रोदन करहीं॥
कहहिं कि बिक यूसुफ कहँ खावा। कहा तुम्हार सो आगेहि आवा॥
यह कुरता लोहू कर भरा। हेरा बहुत सो पावा परा॥
दिन दस पिता करहि दुख सोचू। पुनि मिटि जाय पुत्र कर सोचू॥
बनजारा कोउ आइहि, लेइह ताहि निसार।
लेइ जाइहि परदेस कहँ, मिटै अँदेस हमार॥

यही मता आपुस महँ कीन्हा। कुरता काढ़ि अंग तिन लीन्हा॥
यूसुफ नबी जो रोदन करही। निरदाई कुछ दया न करहीं॥
मोंहि कहँ नगन करहु जिन भाई। बसन समेत मोंहि देहु बहाई॥
मृतक देइ बसन सब कोई। मोहि नगन मारे का होई॥
रस्सी तासु गले महँ पिरुई। बहु मिनती माना नहिं कोई॥
आधे कूप जो पहुँचा बारा। समयू काट गुनी वहि डारा॥
भाई सत्रु कूप महँ डारी। चलै सुचित होय काज बिगारी॥
दीन्ह काटि जब गुन निरदाई। तब जबरैल सँभारेहु आई॥
लै सो कूर्प महँ ताहि उतारा। भये जबरैल पिता अनुहारा॥
कहा कि जिन चिंता करहु, धरहु हिये संतोष।
सिद्ध कीन्ह करतार तोहि, करिय सबहि बिधि पोष॥

किये प्रबोध भोग फल धरे। बसन पिन्हाय सोच सब हरै॥
यूसुफ नबी पिता कहँ देखै। रूदन कीन्ह ओ पिता बिसेखै॥
करुना कीन्ह पिता हिय लाये। तब जबरैल सो उठ्यो छोहाये॥
जो निस दिन तुम्ह जोयहु गाता। सो अब कीन्ह रक्त रँग राता॥
अधर पीत जामुन सम किये। गात लोग बदभेल सो भये॥
नाँगे चरन धरमि दौरावा। रस्सी बाँध कूप लटकावा॥
जेहि भाई पहँ रोवै जाई। मारि लात वह दूर पराई॥
आधे कूप जो पहुँच्यो जाई। दीन्हा काट गुनी निरदाई॥

जस दुख दीन्ह सो बंधु मोहि, बैरिहु नाही देय।
गात सछत गये डारि, प्यास प्रान हरि लेय॥

सुनि जबरैल न कियो सँभारा। लागे बहै नैन जल धारा॥
मैं न होउँ याकूब सोहावा। हौ जबरैल सरग तें आवा॥
बाँधहु सत्त हिएँ औ धीरा। एक दिन दैव लगावहि तीरा॥
दुख बैराग बीत सब जाई। औं याकूब तें देइ मिलाई॥
करहि बंधु तोरिय सेवकाई। होहु नबी जग राज कराई॥
सब दुख हरै करै तोहि राजा। बंधु दास होय करिहैं काजा॥
जो करतार करहि निज दाया। का सो करै बैरिय निरमाया॥
कोटि सत्रु जो कीन्ह उपाइय। इब्राहिम कहँ लीन्ह बचाइय॥
बैरी सबहि किये सहारा। भयहु ताह फुलवरी अँगारा॥

दिये बहुत दुख सत कहँ, करै बहुत उद्धार।
जैसे कंचन कीजियै, खरा अगिन महँ डार॥

करिकै नगन अगिन महँ तावा। इब्राहिम कहँ कुरता आवा॥
सो कुरता न याकूब सुहावा। चित्र समान सो बसन बनावा॥
जंत्र समान भुजा महँ बाँधा। भूत बयारि न आवै राँधा॥
तब जबरैल नगन तेहि देखा। भये दुखित लखि नगन सरेखा॥
तब कुरता बाजू तन खोला। पहिरायौ सो बसन अमोला॥
चौकी एक अनूप लै आया। तेहि पर यूसुफ कहँ बैठावा॥

जो अमरित ना सुना न देखा । सो यूसुफ कहँ दीन्ह सरेखा ॥
कहहु भोग सँवरहु करतारा । हरै दुख सो बेग तुम्हारा ॥
करि परबोध सो सरग सिधारा । यूसुफ तिन सों कह्यो कै बारा ॥
महा सिद्ध तुम होहु कै, महाराज जग माँह ।
माँत पिता हत बधु कुल, करहु तो सब पर छाँह ॥
अवया मार रकत रँग धारै । कुरता लै सो चलै हत्यारै ॥
बिरह बिछोह जो नगर निसारा । तहाँ ठाढ याकूब दुखारा ॥
औ यूसुफ कै भगिनी दीना । पिता सग वहि हती मलीना ॥
भइय साँझ नहि यूसुफ आये । केहि कारन तेहि बिलँब लगाये ॥
बार बार वहि बाट निहारी । ओ यूसुफ कहँ पिता पुकारी ॥
यही समय आये हत्यारे । रोदन करत झूँठ वै सारे ॥
सुनि रोदन यह भा बिकरारा । हिरदै मनहुँ बान अस मारा ॥
दुनिया कहै कुसल है नाहीं । बिरन मोर नाही उन्ह माहीं ॥
बिन बीरन यह नगर सब, भयो सून अँधियार ।
पिता मुए घर ऊजरा, काह कीन्ह करतार ॥
लखि दुनिया सो छार चढाई । कहाँ छाँडि आयो मोर भाई ॥
रोय रोय दुनियाँ गोहरावा । आवहु यहाँ पिता दुख पावा ॥
रोवै लाग देखि कै ताहाँ । सबहू आयो मोर बीरन काहाँ ॥
रोवत गये पिता के पासा । बहु बिलाप वै किय परगासा ॥
काह कहै कछु कहा न जाई । हम सब गये सो छाँड़ि चराइय ॥
पसुन पास यह खेलत अहा । तहाँ सो आन भेडहिं वह गहा ॥
ढूँढत फिरै सभै बन झारा । तव लहि बिक तेहिं कीन्ह अहारा ॥
रकत भरा कुरता वह पावा । देख हिये करुना होइ आवा ॥
तेहि ते पिता करो संतोखू । हम काहू कर आह न दोखू ॥
बात तुम्हारे जीभ कै, कैसे अबिर्था जाय ।
बिधि कर लिखा को मेटै, यूसुफ कहँ बिक खाय ॥
सुनि याकूब सो मुरछित भयऊ । मानहु प्रान काल लै गयऊ ॥
जबराइल धरयो मुख हाथा । हरै साँस लखि धूमिल माथा ॥

खाय पछाड यहूदा रोवा। वृथा प्रान पिता कर खोवा॥
का अस मरम बंधु तुम कीन्हा। पिता सिद्ध कै हत्या लीन्हा॥
रोय रोय दुनियन सिर फोरा। भयो कठिन दुख रोज अँदोरा॥
दिन भर बाट बिलोकत हारे। गये बार खिज बार सिधारे॥
व्याकुल पिता पुत्र कै काजा। सिर पर पडे अचानक गाजा॥
दिन भर रहै बिलोकत बाटा। साँझ भये तेहि आयो घाटा॥
भये साँझ यह दुख कै कारी। को मेटै यह निस अँधियारी॥
बीरन मोर कहाँ पहँ गयऊ। जेहि बिन घर अँधेर सब भयऊ॥

वह बीरन जेहि बिन भयो, घर बाहर अँधियार।
दहुँ आये तजि सुघन बन, कै दहुँ कुप महँ डार॥

अस अज्ञान न कुरता मारा। लहू लाय ते आये सारा॥
ज्ञानी लोग जो कुरता देखै। करहिं बिचार ओ झूठ बिसेखै॥
जो बिक खात रहत कत सारा। टूक टूक होय जात नियारा॥
निस भर रहै बिकल बिसँभारा। आयो प्रान होत भिनसारा॥
जब जागै तब यूसुफ कहा। कहैं लोग कत यूसुफ कहा॥
तब रोवहि अस छाँड डफारा। सरग दूत रोवहि एक बारा॥
तब जबरैल भूमि पै आये। तो याकूब नबी समझाये॥
अब संतोष किये बनि आवै। रोदन किहे कोऊ न पावै॥
तुम्ह अवतार सिद्ध कर लीन्हा। सहौ दुख जो साईं दीन्हा॥

पुत्र गये संतोष करि, प्रान देहु जिन रोय।
रोदन करहु सदा हिए, पुत्र जो कियो बिछोह॥

तब याकूब सु चित्त सँभारा। रोवै लाग सँवर करतारा॥
कहा कि कहो पुत्र का भयऊ। प्रान न गयो प्रान कत गयऊ॥
तुम्ह कछु मरम दुखी कर जाना। करहु बोध कर सिस्ट बखाना॥
जीयत अहै कि मिरतक भयऊ। जेहि बिन घर अँधियर हीय गयऊ॥
कहा कि मैं कछु भेद न जाना। बिन अज्ञा का करहुँ बखाना॥
मरन जियन जानै जमराजू। कै जानै जिन जग उपराजू॥

तब याकूब कहा सिर नाई। पूँछहु तुम यमराज ते जाई ॥
कहो जाय याकूब सँदेसा। जहाँ होय यमराज नरेसा ॥
बोला जम यूसुफ कर प्राना। मोरे पास न दूतन आना ॥
तब जबरैल सुनावा, बै संदेस अपार।
जेहि सौंपा तुम्ह पुत्र कहँ, तेहि सौ माँगहु बार ॥
सुनि याकूब डरै मन माही। अलख त्रास ते सुठि बिलखाही ॥
डरै हिएँ सिर दै मुँह मारा। मोंहि ते चूक भई करतारा ॥
मैं बाउर बड अवगुन कीन्हा। चहौ दुःख जो उत दुख दीन्हा ॥
कहा कि अब कीजै संतोषा। समरहु ताह करहिं जो मोषा ॥
तब याकूब सो कुटी बनावा। बाहर नगर तहाँ चलि आवा ॥
घर औ बार छाँड़ि सब लोगू। निस दिन करै कुटी महि जोगू ॥
काहू दरस ना देय सोहावा। औ कोऊ तहँ जाय न पावा ॥
रोदन भवन नाम तेहि राखा। यूसुफ नाम करै नित भाखा ॥
जो सोए तो यूसुफ कहै। जो जागै यूसुफ मुख छहै ॥
यूसुफ कहै भूख जब लागै। यूसुफ कहै प्यास तन भागै ॥
नीद भूख ओ प्यास महँ, यूसुफ नाम अधार।
सँवर सँवर मुख पुत्र का, रोदन करै अपार ॥
नींद भूख तज साधहि जोगू। करहिं तपस्या बिरह बियोगू ॥
नित कुरता वह नैन लगावै। औ यूसुफ कहि कहि गोहरावै ॥
रोवत नयन भये दोउ अंधा। फाट न हिया सँवर चित बंधा ॥
गये नैन दोउ पुत्र वियोगू। जोगउ तें साधा तब जोगू ॥
यह बिध देख पिता कर हाला। भयै पुत्र सब हिए बेहाला ॥
रोदन जब याकूब करेई। सरग दूत कर जाप हरेई ॥
जब याकूब रोय जिव खोवहि। जाय भुलाय दूत सब रोवहि ॥
कहाँ प्रान् तोहि भाइन्ह डारे। कहाँ छाँड़ि आये हत्यारे ॥
केहि दिस जाउँ कहाँ तेहि हेरौ। कौने बाट नाम कहि टेरौ ॥
निस दिन हिये लगाये, मैं तोहि सोवत पास।
सब निस जाग भयावन, रहौ बिचारत साँस ॥

मुख तुम्हार अब देखत नाही। ताते प्रान रखै घट माहीं ॥
एक घडी जो दरस न पाऊँ। रोवत फिरौ चहूँ दिस धाऊँ ॥
जब लहि नाव लिये ना कोई। तब लहि जीवन दूभर होई ॥
अब तोर कौन सुनाइय नाऊँ। तोहि बिन सून भयौ सब ठाऊँ ॥
भयो भवन तोहि बिन अँधियारा। काटेब खाय सबहि घर बारा ॥
केहि बन महँ तुम्ह काँ परहेले। तुम्ह बालक कत फिरहु अकेले ॥
मोरे साथ रहे मन माही। मुख तुम्हार कुछ देख्यो नाही ॥
केहि बन करौ सो खोज तुम्हारी। कवन देस होय जाऊँ भिखारी ॥
अब केहि बिधि दिन बीतहि मोरा। केहि बिधि रैन बिहायहि मोरा ॥

यूसुफ नाम रैन दिन, लेत रहै याकूब।
दिन भर पलक न लावे, पुत्र बिछोह अनूप ॥

केहि सो साँझ लै हिये लगाउब। भोर होत केहि लाल जगाउब ॥
केहि के सुनब मधुर रस बाता। केहि कर हिये लगाउब गाता ॥
केहि के देखब चाल सोहाई। जेहि काँ देखि हस मुरझाई ॥
केहि ते भेंट करब दिन राती। केहिं काँ देखि सिराइह छाती ॥
जब याकूब सो होहि अधीरा। आवहिं जबराइल तिन्ह तीरा ॥
कहहि कि तुम रोउब जिय खोवहि। काँपे सरग दूत सब रोवहि ॥
तुम अवतार कि सिद्ध सरीरा। ऐसे दुख जनि होहु अधीरा ॥
तब याकूब सो छाँड़ि डफारा। कहा कि काह करूँ करतारा ॥
ऐसे पुत्र काहे कहँ दीन्हा। मनहरिया फिर कस हर कीन्हा ॥

दाया कीन्ह अनेक बिधि, दीन्ह पुत्र अस मोहि।
देखि रूप गुन बिसुध भयो, तब मोहि दीन्ह बिछोहि ॥

तब काहे का अस चित लावा। जो अब हाथ रहा पछतावा ॥
अलख ठाढ़ चित उन सो लावे। ताकर फल मानुस अस पावे ॥
दीन दयाल करै अस दाया। दिये अनूप सुखी कैरि साया ॥
तेहि दयाल कहँ दइय बिसारे। देखे निस दिन नस्ट बिचारे ॥
फुलवारी बहु फूल बनाये। एक ते एक सुरंग बनाये ॥

जो मन पुहुप एक तिन लावे । जाय सूख कुछ हाथ न आवे ॥
चित्र अनेक जो रच्यो चितेरे । मोहित होय रूप रँग हेरे ॥
आवे चित्र काज कुछ नाहीं । चित्र काज सँवरहु मन माँही ॥
काहे न चित्र चितेरे लावहु । चित्र विचित्र रूप निरमावहु ॥

जो कुछ रहे न हाथ महँ, तेहि चित दीजिय काउ ।
जो न मरे नहि बीछुडे, तेहि ते प्रीत लगाउ ॥

भोर होत फिर बन कहँ गये । अनुज सँघार सुचित मन भये ॥
यूसुफ मया मीत मन भयऊ । चोरिय एक यहूदा गयऊ ॥
जाय कूप महँ ताहि पुकारा । कह्यो बीर का हाल तुम्हारा ॥
यूसुफ नबी कहा बिकरारी । कहा यहूदा रोय पुकारी ॥
का पूछो अब हाल हमारा । परे अकेल कूप अँधियारा ॥
बिच्छू साँप भरे तिन माँही । दिन एक जियन भरोसा नाहीं ॥
जब लग सुदिन न दीपक बारा । जाय न देई पिता तिन बारा ॥
का अवगुन अस कीन्ह तुम्हारा । जो अस कूप अंध महँ डारा ॥
कूप अध दुख भयो सँघाता । का पूछौ दुखिया कर बाता ॥

परे अँधेरे कूप महँ, कोऊ न संघी भाय ।
बिच्छू साँप भरे तहाँ, केहि बिधि कुसल कराय ॥

मात पिता केहि सुख ते पाला । भाई अंध कूप महँ डाला ॥
कह्यौ पिता ते जाय सँदेसा । पुत्र तुम्हार गयो परदेसा ॥
मरत नाम जिन कह्यौ सुनाई । मरै पिता निज प्रान नसाई ॥
कियो पिता की बहु बिधि सेवा । जेहि ते पार लगे तुम खेवा ॥
छुधा तृखा जब लागे भाई । भूख हमार न दिहयो भुलाई ॥
जब दुख पड़े बिपत अवगाहा । सँवरहु बंधु मोर दुख दाहा ॥
बसन हीन तन नगन हमारा । सँवरहु बंधु औ किहयो बिचारा ॥
सेवा किहेउ पिता कै भाई । जेहिते हम दुख जाइ भुलाई ॥
जब मिरतक कोई देख्यो भाई । सँवरेहु मूरत मोर सुहाई ॥

सुन यूसुफ उपदेस यहु, रोय यहूदा भाय ।
कहा कि सँवरहु अलख कँह, जो दुख माँह सहाय ॥

समयू बहुरि पकरि बिक लावा । करि मुख बिकर्तें रकत लगावा ॥
लैके ठाढ पिता पहँ कीन्हा। यूसुफ खाइ यही बिक लीन्हा ॥
आयो आज फेरि वहि ठाऊँ । लायो ताहि पकरि कै पाऊँ ॥
तब याकूब सु छाँड़ि ढफारा । कहैं लाग का तोर बिगारा ॥
यूसुफ मुख लखि दया न आई । केहि बिधि लीन्ह सो तेहिं कहँ खाई ॥
कैसे मन पतिआयौ तोरा । लीन्हसु खाय परान तुम्ह मोरा ॥
औ याकूब सीस भुइँ लावा । अय दयाल सुखदायक रावा ॥
अज्ञा होय कहे बिक बाता । यूसुफ रकत अहै मुख राता ॥
पूँछि लेहुँ सम अरिन्ह अयारा । तिन्ह यूसुफ कहँ कीन्ह अहारा ॥

भय आज्ञाँ जगदीस कै, बोला बिक धरि सीस ।
कह्यो अरथ युसुफ कर, लेहु हमार असीस ॥

यूसुफ कहँ खायौ केहि ठाऊँ । देहु बतायै तहाँ चलि जाऊँ ॥
यूसुफ केस तहाँ एक पाऊँ । लेउँ सुदान बैन महँ लाऊँ ॥
लाखन अजा मेख हमारे । का तोहि मिला प्रान के मारे ॥
वह मुख देख दया नहि लागे । उठे न घात मया के आगे ॥
कहै लाग सुन बिक नरनाहा । दोस न लाग कछू हम माँहा ॥
जहँ लै सिद्ध ओ साध सरीरा । तेहि मानुस दुःखित हम पीरा ॥
तुम अज्ञाँ तिन सघ न देखै । वहै पुत्र परान बिसेखै ॥
यूसुफ रूप देख सर नावहि । तेहि कैसे हम खाय उड़ावहि ॥
हम ते घाट भये कछु नाही । देहु असीस धरहु अब जाहीं ॥

सावक मोर बिछुड गयो, ढूँढत फिरौं बेहाल ।
पुत्र तुम्हार पकरि कै, लाय कीन्ह मुख लाल ॥

तब याकूब सँवरन लागे । विक ते पूँछन लाग सुभागे ॥
तुम यूसुफ कर खोज बतावहु । कहौ सत्त संदेह मिटावहु ॥
लाल हमार कहाँ लै डारा । जीयत अहै कि मारि• सँघारा ॥
सावक तोर दई तोंहि दिये । यूसुफ सुधि कहै जस लिये ॥
तब बोला बिक भुँई धरि माथा । का हम से पूछहु नरनाहा ॥

पिसुन सरूप धरे मुख रहही। हम काहू कर दोख न करहीं॥
दोस होय अवगुन के लाये। पाप्र परावा परें सुनाए॥
आन उपाय कहै जो कोई। पातक तासु ताहि सिर होई॥
औ हम का जाने फिर भेदा। जानै सोइ रच्यो जिन भेदा॥

तुम्ह सुअस करतार के, आवहिं दूत तोंहि पास।
का पूँछहु हम से बिथा, पूछों दइयँ जो आस॥

बिक टीले चढि जाय पुकारा। किन यूसुफ कहँ कीन्ह अहारा॥
यूसुफ बंधु सो हत्या लावा। कहहि कि बिक यूसुफ कहँ खावा॥
हैं याकूब नबी रिस मॉहा। रोदन करै मरै नरनाहा॥
जो वह सराप देइ करतारा। सब बिक मरहिं होहि जरि छारा॥
मैं करिया देइ भयौ अदोखा। अब ढूँढहु तुम आपन मोखा॥
सुनि सारे बिक आरन केर। आन बार याकूब सुधेरे॥
कहा कि तुम नाहिय कछु दोखा। करै अलख तुम सब कर मोखा॥
कुटिय के आस पास चहुँ ओरा। मारहि कूक ओ करहि अँदोरा॥
सुनि अँदोर याकूब दुखारा। आयो निकसि बिरह कै मारा॥

चहुँ दिस बिक रोवत चले, देखि नबी कर रोज।
कहै चलहु अब कीजिये, यूसुफ नबी कर खोज॥

बिक अजया याकूब पहिं आई। रोवै लाग सीस भुँई लाई॥
सहस जगम बन महँ अहे। हमें दोख केहि कारन कहे॥
पुत्र तुम्हार हमें दुख दीन्हा। रकत हमार सुदोखित कीन्हा॥
सो कुरता लोहूकर भरा। तुम्ह अपने नैयनन्ह पर धरा॥
राउर नैन ज्योति हरि गई। यहि हत्या हम्ह सिर पर भई॥
जनम जनम मैं औगुन दोखा। केहि बिधि करै दैव हम मोखा॥
तब याकूब बोध तेहि कीन्हा। तुम्ह कहँ दोष दइय नहि दीन्हा॥
दोष तॉह जो तुमका मारा। यूसुफ बसन रकत रँग धारा॥
कत कुरता यूसुफ कर सारा। अजया मार रकत सों भारा॥

तुम्हे दोख कछु नाहिन, वै दोषी हत्यार।
जिन्ह यूसुफ तें मोहि कहँ, कीन्ह बिछोह निसार॥

सात दिवस दुख भयो अपारा। उतरे तेहि बन माँ बनजारा॥
मालिक नाम महा अस नायक। जात मिसर कहँ वहि सुखदायक॥
आगे वै सपना महँ देखा। होय लाभ यह बन उन देखा॥
सदा आप नायक यह बासा। करै सो वही बनै महँ बासा॥
तोहि महँ आये एक बनजारा। जल हित डोल कूप महँ डारा॥
यूसुफ नबी डोल गहि लीन्हाँ। रोवत ताहि हाँक पुनि दीन्हा॥
डारि डोल भागा डर खावा। औ नायक तें जाइ जनावा॥
जंतु एक है कूप के माहीं। डोल अडोल है डोलत नाही॥
तब नायक वहँ आपसि धावा। तेहि के सँघ मानुस बहु आवा॥
अंध कूप तें ताह निसारा। होयगा बन सगरो उँजियारा॥

पानी खोज जो कूप मँह, डारा डोल 'निसार'।
तँह यूसुफ कहँ पावा, धन नायक व्योपार॥

नायक देख परान अस पावा। होय मोहित लै चला सोहावा॥
लै यूसुफ कहँ चल्यौ चलाई। तब लहि पहुँचे वै दस भाई॥
धाय आन सब कीन्ह पुकारा। कहाँ जाँव लै दास हमारा॥
दिन पाँचक ते भाग परावा। खोजत फिरौ कहूँ नहि पावा॥
यूसुफ चहा कहै निज बाता। नायक ते बरनै दुख आता॥
तब समयूँ इब्री महँ कहा। बोल ब बचन जो जीवन चहा॥
यूसुफ नबी मौन तब साधा। लाग्यौ कहै बंधु दुख बाधा॥
भागे सदा दास बिन मारे। करे न काज भये हम कारे॥
भोग न करै रहै नित रूसा। कब ताहि रखें सो घाल मँजूसा॥

दास हमार वो चोर हैं, सुन नायक निज बात।
मोल देहु लै जाहु तुम, मिटै कोर दिन रात॥

मन महँ कहै लाख लहि देहू। यह बालक कहँ पुत्र करेऊँ॥
मालिक कहा कहौ सो देही। यह सुदास दोखी कहुँ लेहीं॥
वह यूसुफ कर मोल न जाना। थोर दाम माँगा अज्ञाना॥
तीन दोख यह मँह बड़ मारे। भाये चोर रोय बद कारे॥

कहा लेउँ मैं दोषी दासा। जाय तो जाय रहे तो पासा ॥
मोरे पास रोकट है थोरा। ब्रिसह्यौं मोल हस्ति औ घोरा ॥
बसन अतर ओ पाट पटबर। मृग कसूतूरी केसर अबर ॥
कहा कि रोकर होय सो देऊ। यह सु दास दोषी कहँ लेहू ॥
तीन दरम रोकर हम पासा। सो तुम लेहु देहु यह दासा ॥

अस कोरे हम दास तें, भय नायक दिन रात।
जो तुम देउ सो लेब हम, अवर न अब कहु बात ॥

कहा कि जो कुछ देहु सो लेहीं। का दोषित कर मोल करेहीं ॥
तुरतेहि दीन्ह न लायसि बारा। तब यूसुफ पुनि कीन्ह जोहारा ॥
मालिक कहा दाम भर लेहू। लै मोंहि कहँ कागद लिखि देहू ॥
तब समयूं कागद लिख दीन्हा। मालिक मोल यूसुफ कहँ लीन्हा ॥
हम सब मोल दाम पर पावा। दास चोर कहँ बैंचि अडावा ॥
लै कागद यूसुफ कहँ चला। कहा कि करम हत्यो मोर भला ॥
लागे कहै कि भागे दासा। रखियो बँद मँह निसि दिन प्यासा ॥
जो बह भागि जाय कहुँ नायक। हमे न दोख दियो सुख दायक ॥
तेहि ते डारि देहु पग बेरी। ऊँट चढ़ाय फिरहुँ चहुँ फेरी ॥

गयऊ सँकर पग बेरी, हाथ हथकडी नाय।
टाट भूल पहिराय के, फिरहु सो ऊँट चढ़ाय ॥

कँवल चरन महँ बेरी नवावा। कुसुम्ह बाँह हतकरी पिंहावा ॥
टाट भूल यूसुफ कहँ दीन्हा। बसन अनूप काट तिंह लीन्हा ॥
जब वह बेंचि चले निर्दाई। यूसुफ रोय उठा अकुलाई ॥
आज्ञा देहु जाउँ उन्ह पासा। आवै समुद सो अस सो आसा ॥
नायक कहा मया तोहिं आई। वे जस सत्रु अहैं निरदाई ॥
कहा कि करत कोटि अनरीती। मोरे हितयें जाय न प्रीती ॥
पहने टाट-झोल अस भारी। बेंरी पकरि चला बनवारी ॥
यूसुफ बिदा होय तहँ कीन्हा। एक एक वहँ अंकाम दीन्हा ॥
वह रोवै वे हँसैं निर्दाये। टाट भूल लखि मन रहसाए ॥

भूँख प्यास दुख मृत्यु मँह, भूलि न जायहु मोह।
सँवरेहु सदा हिये मौंहि, हम दुख विरह बिछोह॥

अनुज दास कहँ सँवरेहु भाई। तुमहि सपथ जनि दिहेहु भुलाई॥
अब हम जाहि कहाँ किन देसा। कते रे मिलन कत जियन अँदेसा॥
दास चोर बँधुआन बनावा। दहुँ आगे का चहिय दिखावा॥
अब हम कहाँ, कहाँ तुम्ह भाई। जनम संघ देइ बिधि बिलगाई॥
तात चरन सिर लायहु भाई। मोरे ओर तें कहेउ सुनाई॥
पिता न दिहेउ प्रान तुम्ह रोई। देहु असीस भेंट जेहि होई॥
मोर मृत्यु जिन्ह ताह सुनायहु। फिर फिर सिर चरनन्ह लै लायहु॥
मरहि न पिता करेउ अस काजू। नाहित होय दुओ जग लाजू॥
रोय रोय सब बरन सुनावा। तब नायक तेहि बोलि भेजावा॥

मात पिता जन परिजन, लोक कुटुँब परिवार।
यूसुफ चला बिदेसु कहँ, किनआ नगर जोहार॥

रोवत चला ऊभ लै साँसा। रहे न पिता मिलन की आसा॥
चलै फेर देखहि उन ओरा। मकु भाई पूंछहिं दुख मोरा॥
भाइन्ह कहा विलम्ब जिन लावहु। नायक संघ विदेस सिधावहु॥
यूसुफ नैन मघा झर लाये। नायक पास गयो बिलखाये॥
यूसुफ हिये सँवर यह बाता। मुकुर देख मुख आपन राता॥
ऐस रतन संपत उन्ह पावा। चला बेगि नहिं बार लगावा॥
मन महँ जस कीन्हे अभिमाना। तस सुमोल आपन हम जाना॥
तेहि अवगुन यह दुरगत भयऊ। दास चोर बँधुवा होय गयऊ॥

चला सँगहि लै नायक, यूसुफ ऊँट चढ़ाय।
फिरि फिरि करै जुहार वह, किनआँ देस सिर नाय॥

नायक पंथ मिसर का लीन्हाँ। चहै दास यूसुफ सँग कीन्हाँ॥
लियै जात सँग वै निरदाई। मात गोर पर पहुँचा जाई॥
यूसुफ नबी नैन भरि हेरा। रोय रोय माता कहँ टेरा॥
लखि माता की कबर सुहाई। होय बिकरार गिरा मुरझाई॥

पुत्र तुम्हार जात परदेसा । भएहुँ दास देख्यो नहिं भेसा ॥
वै चरनन महँ देखहु बेरी । टारि भूल जो कबहुँ न हेरी ॥
लोटै पड़ा कबर पर रोई । खाय पछार जीव कत खोई ॥
देखि कबर पर दास अभागा । क्रोधवंत होइ मारन्ह लागा ॥
यहि अवगुन यह मोल बिकाने । अबहूँ त्रास हिये नहि माने ॥

बेचनहारन्ह सत कहा, भागि जाय यह दास ।
मस्तक मारि सो लैचला, पकरि सो नायक पास ॥

जब सो दास यूसुफ कहँ मारा । माता कबर काँपि एक बारा ॥
प्रान हमार भयो तुम दासा । मारि तुम्हे करि दास निरासा ॥
पदुम बरन जो चरन तुम्हारा । तेहि चरनन महँ बेरी डारा ॥
कौन देस तोहिं कहँ लै जाहीं । जहाँ सुमात पिता कोउ नाहीं ॥
काँपैं कबर ओ यूसुफ रोवा । दास पुत्र तें मात बिछोहा ॥
आँधी उठी भयौ अँधियारा । सूझि परै नहिं हाथ पसारा ॥
घन गरजै बादर चढ़ि आए । दामिनि कौंध चमक दिखराए ॥
आवै चमक जो नायक पासा । लखि मालिक मन भयो तरासा ॥
मैं तो दोष कीन्ह कुछ नाही । केहि कारन दामिनि डरपाहीं ॥
बार बार जो आवै जाई । मालिक देखि हिए डर खाई ॥

कौन पाप मोहि परगट्यो, कीन्ह दइय अस कोप ।
जानि परै अँधकार महँ, सब मिलि होब अलोप ॥

तब एक दास आगे चलि आवा । औ मालिक ते भेद जतावा ॥
दास जो मोल लीन्ह तुम आजू । भयो कोप बिधि तेहि के काजू ॥
जैसे तेहि मारा बिन दोखू । तेहि सुदास तैं माँगहु मोखू ॥
हत्यौ कबर पर रोवत दासा । तेहि मारत अँधेर चहुँ बासा ॥
तब मालिक यूसुफ पहँ आवा । नाय सीस कर जोरि मनावा ॥
करहु छमा औ देहु असीसा । जेहि तें छिमा करै जगदीसा ॥
तब यूसुफ दोउ हाथ पसारा । मिटि गा गरज कौंध अँधियारा ॥
कीन्ह बहुत हठ बेचन हारे । तेहि कारन बेरी पग डारे ॥
बैरी पाँव ते काटि बहावा । करि असनान बसन पहिरावा ॥

मालिक देखि अधीन भा, कीन्ह बहुत अरदास।
जैसे पकरि मँगाय कै, सौंपि दीन्ह सो दास॥

लै आए यूसुफ कै पासा। कहा कि है दोषी यह दासा॥
जो तुम कहौ सो साँसति करहीं। जेहि तें सबहि दास तोंहि डरही॥
यूसुफ नबी बोल यह चेरा। निज बाहुन तेहि आनन फेरा॥
हत्यो जो रंग स्याम अँधियारा। चाँदी सम होयगा उँजियारा॥
मालिक देखि सो अचरज कीन्हा। वह सुदास यूसुफ कहँ दीन्हा॥
पुत्र समान रखै तेहिं लागा। कहै कि भाग मोर अब जागा॥
नित नवीन बागा पहिरावै। अपने संग सो भोग खवावै॥
यूसुफ नबी करै नित रोवा। सँवर सँवर याकूब बिछोहा॥
मालिक भेद बहुत निरभावे। छुटि सुदास नहिं और बतावे॥

मालिक साज समाज के, चला मिसिर के देस।
कहूँ बिरह दुख ताकर, कीन्ह जो मिसिर परबेस॥

जुलेखा बरनन खंड

अब बरनौ यह कथा सुनावा। जासु बिरह तेहिं मिसर लै आवा॥
मगरिब देस सो नगर बखाना। तहँ तैमूस शाह सुलताना॥
सबहू कछु ताहि दीन्ह करतारा। राज पाट सब कटक सँवारा॥
संतति और न दीन्ह गोसाईं। सुता एक अछरी कै नाईं॥
सो कन्या हुत बार कुमारी। नाम जुलेखा दई सँवारी॥
भई तरुनि जग बास बसानी। रूप अनूप जगत सब जानी॥
देस देस के नृप सुलताना। कीन्ह चाह सुलतान न माना॥
दुहिता जोग रूप कहँ पावा। जेहि तें होय सँजोग मरावा॥
कहँ यह जोग जगत महँ कोई। जो यह कन्या कर बर होई॥

सात दीप से चाह उत, लागे आवे जाय।
काहू देय न उतर नृप, तौ लै गरब सुभाय॥

अब नख सिख बरनौं तेहि केरा। बाउर होय जो दरसन हेरा ॥
प्रथम कहौ मॉग कै रेखा। सूरसती जमुना बिच देखा ॥
खरग धार वह मॉग सोहाई। सेंदुर तहाँ न रकत लगाई ॥
औ ता महँ गूँथे गज मोती। राहु केत महँ नखत के जोती ॥
दुओ दस घन बादर जस छावा। मध्य कौध चमकै दिखरावा ॥
दामिन अस वह मॉग सोहाई। केस घमंड घटा जस छाई ॥
जस जमुना के नदी अपारा। माँग बाँध तिन्ह सुघर सँवारा ॥
सेत बंध तस माँग सोहाई। बिरही नैन बार जनु पाई ॥
जो न होत वह माँग अनूपा। डूबत नैन स्वरूप अनूपा ॥

मॉग सुहाई सुख बँधी, भाग अधिक तेहि दीन्ह।
राहु केत दोउ दस तहाँ, मनहु किरन रब कीन्ह ॥

केस सीस का करौ बखाना। तच्छक देखि सो ताहि लजाना ॥
मुख पर लरहिं जो होइ बेकरारा। तब संदेह करै संसारा ॥
कोउ कहै अहै तम राजा। सोहै तहवाँ जोत बिराजा ॥
कोउ कह अहै दिनेस सोहावा। बरत हेत कालिंदी आवा ॥
कोऊ कहै कि नागिन कारी। दीन्ह छाँड़ि मन सो उँजियारी ॥
कोऊ कहै श्याम अलि मोहा। पुहुप पराग आय तेहिं सोहा ॥
पुहुप चित्र महँ मृग मद बारा। खींची चित्र चितेरन्ह मारा ॥
केस सीस मानो निसि कारी। प्रात काल मुख कै उँजियारी ॥
केस रचत तज आस न पासा। को तेहिं जाय सो पावै बासा ॥
सिरिस फूल तहँ सोभा देई। औ चोटी लखि मन हरि लेई ॥

बेनी गूँथी लरी से, जग नागिन बन लीन्ह।
मूँगा चौकी पीठ पर, भान छाँड़ि तेहि दीन्ह ॥

अब लिलाट बरनौ सुखकारी। राका ससि तासों उँजियारी ॥
कनक खोर सो टीका दीन्हाँ। ससि गुरु कमल अंध ग्रह कीन्हाँ ॥
मंगल बूँद सुरग सोहावा। ससि गुरु भुम्म एक ग्रह पावा ॥
राहु केत गज दोउ दस कारे। मध्य सोम पूरन उँजियारे ॥

तहाँ सो झलक किनारी देखा । जस ससि महँ दामिनि परबेसा ॥
इत अवरोध उधुंध सुहावा । दुओ दस राहु गुपुत दिखरावा ॥
गुर सुर कुज ससि कै यक ठाईं । सोहैं सदा लिलाट सोहाईं ॥
गिरवर गढ़ सोहै तिन्ह सारा । होय बिकल तेहिं देखन हारा ॥
जोत कहिय मन झूठि कै जाना । उन कै अंग बिकल भै आना ॥

चंद लिलाट न सोहै, पूरन जोत अपार ।
वह कलंक बिकलंक नहि, वह षट बुध लहि सार ॥

भौह धनुक का बरनै कोई । जाय सो ग्यान तहाँ लखि खोई ॥
बरनै सर वह धनुख समाना । ताहिं देख जग डरपै प्राना ॥
भौह कमान चढै नित रहै । सर संधान सो मारन्ह चहै ॥
गाछ गाछनै सुदर सोहैं । लखि भृकुटी सो सूर मन मोहैं ॥
इन्द्र धनुक तेहि देखि लजाना । खीन बान होइ बेगि बिलाना ॥
धनु महँ जीव आप परबेसा । दुओ दस केस सोहावन, केसा ॥
भौह सरासन भृकुटी बाना । नैन बान इत बाँधहिं बाना ॥
देखि ताह थिर रहै न ग्याना । जाय भूलि सब सुद्धि पराना ॥
तिन्ह बेंदा कोटिन छबि देई । धनि मानहु जीवन हरि लेई ॥

धनु भौहैं बिधनै रच्यो, भृकुटी सनमुख बान ।
देखि सरासन सिर चढ़ै, काँपे जगत परान ॥

नैन देखि मन होय बेहाला । जासु कटाछ हिए महँ साला ॥
सेत साम ओ अरुन सोहावा । बिख अमिरित मधु घोर दिखावा ॥
जाकहँ लखै भये चख राता । मरि मरि जियैं रहै मदमाता ॥
अबुज बरन दिधिग अरुनाई । भानु बरन होय गयो लुभाई ॥
अञ्जन जोर सदाँ मतवारे । घूमहिं निस दिन प्रेम अखारे ॥
दौ बोहित दोउ नैन सँवारा । लाज सनेह बोझ दोउ भारा ॥
दुअ अँबिरित कै सुभग कटोरी । ता महँ सरब हलाहल घोरी ॥
लहर कटाछ न जाय बखाना । जिन देखा तिन निश्चय माना ॥
दोइ खंजन सारद रितु माहीं । राका ससि निरभरै लडाहीं ॥

दुओ सुनैन जग में किए, जाल सितासित साज।
लाय बिछावा मधुर बिध, मन्न मोहन के काज ॥

दोउ सरवन दुइ सीप सुहाये। मोती भरा सदा दिखराए ॥
करनफूल और पात सुहाए। बाली तेहाँ अधिक छबि आए ॥
बरनि न जाय सरब रस ताके। प्रेम बचन सुनि निसि दिन जाके ॥
प्रथम प्रेम कर सरवन बासा। बिन नैनन कर करहि पियासा ॥
बहुरि हिए महँ करि बर बेसा। करहि ताहि बाउर कै बेसा ॥
पुनि सरूप सरवन सुख दाई। करन करन का बरन सोहाई ॥
कान अनूप सो प्रेम नगीना। कानन ते उपज्यो नित हीना ॥
कान न करहि सो कान सोहाए। सुनहिं बचन सो वह मन भाए ॥

सरवन अधिक सोहाने, दुअ दस रूप अनूप।
बिन कटाच्छ करतार कहँ, दुओ दस रतन सरूप ॥

नासिक रसिक सदा रस गाहक। बास सुबास लिए जेहि लाहक ॥
नथ बेसर छबि खेल कराए। मोती डोलत हिया डोलाए ॥
मानहु हाथ सिकन्दर केरा। रूप भँवर ते लहरन फेरा ॥
मोती पड़सि अधर पर आई। चिनगी मनो चकोर चुराई ॥
सबूह मुख कै सोभा वह नासिक। सब रस लीन्ह औरहिं सो बासुकि ॥
जस चपै की कली सोहाई। खड़ग धार तेहि मन बिकसाई ॥
नासिक रसिक महा सुकुमारा। निरखहिं मनुस अनेक अपारा ॥
धन नासिक की रीत सोहाई। गुन अवगुन सबूह दीन बताई ॥
सभै बदन कर अहै सिगारा। बाँधै काम खरग कै धारा ॥

नासिक सोभा का कहैं, सब मुख सोह बढ़ाय।
तापर ऊँच सुहाए, उत समुंद्र अधिकाय ॥

अब कपोल बरनौ सुख दाई। गात गुलाब देखि मुरझाई ॥
सबहि कपोल सुरंग सुहावा। देखत काम ताहि छबि आवा ॥
कँवल कपोल न जाइ बखाना। कहँ ससि पर जग ताहि समाना ॥
बेसर देख सो ज्ञान लजाए। कहँ तेहि सम जेहि उपमा लाए ॥

ता में दसन अनूप सोहावा । तिल कपोल छबि बरनि न आवा ॥
बिसुकरमै लखि सुघर कपोला । दीठ परै तिल दीन्ह अमोला ॥
ईंगुर जान कपोलन साना । उत सुरंग तिन्ह भँवर भुलाना ॥
सिहर सुहावन बोल अनूपा । जाय रूप लखि जाय सुरूपा ॥
रचा चतुर बिधि सुघर चितेरा । परी बूँद खसि केरिन हेरा ॥

कँवल कपोल सोहाने, तिन सोहै तिल स्याम ।
जस अलिन्द अरबिद पर, आन कीन्ह बिसराम ॥

अधर सुधा घर बरनि न जाई । भये अनूठि वै जूँठन पाई ॥
अँबिरित सम देवतन कर जूँठा । वह सो अधर पुहूप अनूठा ॥
जानि न परहि अधर उत खीने । नित भाखैं वै मधुर नवीने ॥
सुनत बचन वै अधर सोहाए । ऊख पियूख बनूख सुखाए ॥
अधर सजीवन मूर सुहावा । सुधा पिडाक बिरंचि बनावा ॥
अधर खोल जब वह मुसकाई । खान सजीवन की खुलि जाई ॥
जब मुसकाय सखिन्ह से गोरी । झरहिं फूल औ होहि अंजोरी ॥
अरुन मृदू औ अमिय सुधारा । रहत अधर पियूख अधारा ॥
जो वह अधर मधुर मुसकाई । तो मिरतक कहँ देत जियाई ॥

अधर सुधाधर मधुर उत, कीन्ह सुरँग सुख भाग ।
जेहितें बोलैं औ हिये, सदा सजीवन पाग ॥

चिबुक सो ताहि का बरनै कोई । सिद्धि सदन महँ कूप सो होई ॥
देखत कूप होय बिकरारा । बूड़ै मरै जिऐ इक बारा ॥
प्यारे बदन सिद्ध करतारा । तहाँ कूप महँ चिबुक अपारा ॥
चहै दिष्टि मुख देखै लागै । पडे कूप महँ जाय सो थाकै ॥
भँवरन पड़ै डीठि वह जाई । टक टक रहे सो थाह न पाई ॥
चिबुक गाड़ उत सुडौल सँवारा । मज्जहि जग मानुस बिसतारा ॥
वह सुभलक जेहि उपमा पाही । बूड़हिं तड़पहिं चित तेहि माहीं ॥
परे जबहिं डूबहि उतराहीं । पार घाट तेहि पावत नाही ॥
गाड़ अनूप बार बिसतारा । चमकै सुभग सो दई सँवारा ॥

चिबुक सुहावन सुंदर, गाड़ अनूप अपार।
को तिन महँ बूड़हि तरहि, कतहुँ न पावे पार॥

गिवँ अनूप बरने का कोई। देखत पाप जाय तेहि धोई॥
गीव सुहावन सुभग अनूपा। जातरूप डरि जाइ सुरूपा॥
कुंदन चाक चढ़ाय बनाए। देहि अदेहिन गार सों सुहाए॥
चमकै अरुन सुहावन गीऊँ। कनक खोट जेहि लखि जीऊँ॥
बिसुकरमै उत सुंदर साजा। गीवा देखि हिये महँ लाजा॥
लखि सुगींव थिर रहै न ज्ञाना। साँचे ढार रचा सज्ञाना॥
चंपक कली उर बसै अनूपा। कहँ भूखन जो गिवँ रस रूपा॥
सभै अंग बिधि आप सँवारे। सभ ऊपर वह गीव निवारे॥
कंठ अमोल गोल उत सोहा। मुनि गँधरब रिषि ता लखि मोहा॥

गीव उठाने गरब तें, पड़ै कूप अभिमान।
रंभा सिध औ उरबसी, रमा मनोज लजान॥

उर चमकै जस उदित जुन्हाई। तिन्ह उरोज दुइ मुरति सुहाई॥
कोमल कुंच बन्यौ धरनीसा। बरन लरै फल रंग महीसा॥
नारंगी सो उरज कठोरा। कुछ उपमा तेहि जाय न जोरा॥
उर कुंदन पानी जस डारा। दुइ मूरति महँ आप उतारा॥
दोउ लाल कै मूरति साजा। देखि सो लाल रंग वह लाजा॥
कुंदन बागन क्यारि बनाई। दुइ अँबिरित फल तहाँ सोहाई॥
कँवल कोबिदहि उरज सोहाई। चख अलिद रस लीन्ह लुभाई॥
मुरत मनोज देखि कै हारा। निज अँवधाय सो रख्यौ नगारा॥
घुँघची सम तेहि रंग सोहावा। तहाँ स्यामता उत छबि पावा॥
तहाँ हार औ मोहन माला। होय प्रान हाल बेहाला॥

कुच कठोर देखत हरै, सुर नारी एक बार।
काम कला पूरन तहाँ, कीन्ह आप बैपार॥

छतिय अनूप दुइ लहै सँवारा। पान फूल कै रहै अधारा॥
रोमावलि रेखा तिन्ह सोहै। नैनन्ह देखि ताहि मन मोहै॥

अँबिरित कुंड सो नाम सोहाई। रहै नागिनी मुख लपटाई॥
देखि गरुड़ वह चकिरित भई। नागिनि ठहकि तहाँ रहि गई॥
अँबिरित कुंड नाभिमुख पूरा। रहि पाछे मुख फेरि न मोरा॥
छतिय निहारि सखिन्ह ललचाहीं। सुर नर मुनि कोउ देखा नाही॥
जो देखे वह छतिय सोहावा। पूरन काम सो आन सतावा॥
ता पर पीठि अनूप सँवारा। होय मलीन दीठि कै मारा॥
कोमल बिमल पेट निरमाया। रोमावलि बेनी कै छाया॥

रोमावलि बेनी बिरह, सोहै छत्र अनूप।
गात सोहावन उत बिमल, छाया अतुल सरूप॥

का बरनै भुज सोभा कोई। रचा चित्र महँ चित्रित सोई॥
भुज ते कर अँगुरिन लहि सारा। चढ़ा उतार सु चिंत्रित धारा॥
पुहुप छत्र वह दंड सोहावा। काम चितेरै चाक फिरावा॥
भुज भूखन कर भूखन सोहै। अँगुरिन मुंदरि लखि मन मोहै॥
दोउ कर सोहै ललित कलाई। भले देख अच्छ पाय अछाई॥
वह सावक चदन कै साखा। लपटे रहैं करैं अभिलाषा॥
कर भुज ते उत सुदर साजा। रोम रोम छबि सिस्ट बिराजा॥
भुज भूखन नौ रतन सोहावा। कर पहुँचीन जरत छबि पावा॥
चित्त हरा लखि पावन रूपा। धनि पावन कर रूप अनूपा॥

इंदु बुद्ध अरु मेंहदी, रतनक जनु तेहि बान।
तेहि ईंगुर छबि देखि कै, रहै मोहि मन मान॥

पीठहिं तेहि कर गोल बेयारी। ता पर परी जो चोटी कारी॥
मूँगे की चौकी छबि देई। तिन बैठे नागिन छबि देई॥
पीठ के तन को सकै निहारी। डसै डीठ महँ नागिन कारी॥
वह सो पीठि जेहि तजै न डीठी। देखा करै सदा वह डीठी॥
देखत रहै पीठि चख हारी। पाछ परे रह डीठ न पारी॥
सुंदर पीठि कनक रँग धारा। बिसुकरमैं जस साँचै ढारा॥
पीठि देखि मन चक्रित होई। कुसल छेम लखै का कोई॥

दुअ दस पीठि अपूरब देखा। सोहै बुद्ध कनक कई रेखा ॥
सो रेखा लखि ज्ञान हराई। कदलि रेख के पटतर लाई ॥

पीठि दीठि देखत सदा, होय हिए बिकरार।
नागिन बेनी तिन्ह बसी, डँसी पीठि एक बार ॥

निसँक लंक बरनी नहिं जाई। डीठि भार कत सकै उठाई ॥
रहैं मखी अचरज कै माही। कोउ कह आह कोउ कह नाहीं ॥
बार चाह कटि कोमल बेनी। देखि न सकै सो डीठि बिहूनी ॥
नारिन संग जहाँ पग धारा। लचि लचि जाय बार कै भारा ॥
चलत नारि मन संग करेई। दुमची लचि धनु हिया डरेई ॥
कनक तार अस लंक सोहाई। कोंप दीठि सो रहै डराई ॥
धन चरित्र वह सुघर सँवारा। सहैं नारि सभ तिन कै भारा ॥
सभ तन देखैं नैन सोहाए। अंग संग लखि तेहि डर खाए ॥
कटी भाग छबि देइ अपारा। मोहहि सुर मुन तेहि झँकारा ॥

निरगुन सुरगुन पाव जस, तस कटि परै न देखि।
अवर अंग देखैं नयन, भागहिं लंक बिसेखि ॥

जघ तंत का करौं बखाना। कँवल अमोल सुभग सुर ताना ॥
भारी जघ तत सोहावा। पिंडुरी जहाँ अधिक सुख पावा ॥
मूँगा की यह जंघ सुहाई। तस पिंडुरी अस चाँक सुहाई ॥
का बरनै ताकै सुकुमारी। सभ तन सोह तासु अधिकारी ॥
औ पिडुरी सोहै उत गोरी। नैनन भार होय मति थोरी ॥
पिंडुरी जंघ लखि रहै न ज्ञाना। लखि तँत जंघ तजहि सब प्राना ॥
जैस तंत तस जंघ सोहाए। तस पिंडुरी अस चाक फिराए ॥
चाक चढाय सँवार्‌यो ताही। होय अधीर नैन लखि जाही ॥
तिन्ह पायल पैजनी सोहाई। घुँघरू बिछिया बुद्धि हेराई ॥

जंघ सोहावन देखि कै, सत्त धरम भजि जाहिं।
पिंडुरी निरखत पाप दुख, हरै पला छिन माहिं ॥

नख अमोल कछु बरनि न जहहीं। कँवल चरन लखिं संपुट गहहीं ॥
जस अरबिंद सुरंग सुहावा। तस वह चरन अनूप बनावा ॥
देखि कमल होय रग बिहीना। वह सुचरन सुख रँग रस लीना ॥
चरन बरन तेहि जाहि सोहाए। देखत पाप सोभाग हेराए ॥
औ अँगुरिय तेहि सुंदर आनी। मेहँदी ईंगुर ही के पानी ॥
यक नूपुर बिछिया उत सोहै। कोकिल सुनत सबद वह मोहैं ॥
रूपौ चरन सब सोभा साथा। देखत चित्त रहे तेहि हाथा ॥
उत कोमल एँड़ीय सोहाई। देखि महाउर हिए लजाई ॥
जब तरुनी भइ राजकुमारी। काम अनंग अंग संचारी ॥

उत एँडी सुकुमार तेहि, अँबिरित लाल लगाय।
धरत पाँव वह बाल के, वासुकि देखि लजाय ॥

सखिन्ह जो चाहे पाँव पखारा। चकित ज्ञान रंग लखि सारा ॥
रूप अधिक तैं हिए उछाहा। भूखन रचि तिन गँधरब लाहा ॥
निस दिन सखिन्ह संग फुलवारी। करै कुलाहल कोट घमारी ॥
मदन प्रवेस हिए महँ कीन्हा। पेम सुरग अग महँ कीन्हा ॥
देख सरूप सखिन्ह ललचाहीं। पवन बास तिन्ह पावत नाही ॥
धाइ खिलाई सखिय सहेली। तेहि के संग करहि सुख केली ॥
साज सिंगार औ अभरन जोरा। रूप गुमान न काहुन जोरा ॥
मता पिता के प्रान अधारी। समय सोच नहिं जानै नारी ॥
और रोग तेहि तैं मुरझाहीं। गात तंत उन्नत अधिकाहीं ॥

भय बालापन बारी, सदा रूप अधिकाय।
मात पिता वहि तरुनि लखि, लागै हियैं लजाय ॥

स्वप्न खंड

एक रात जो करै सोहावन। प्रेम स्वरूप बिरह उपजावन ॥
प्रेम भरी रजनी उँजियारी। सखिन्ह साथ सोवै सो नारी ॥

आधि रात लहि जागि कुमारी। प्रेम कै बात सुनत सुखकारी ॥
आई नींद तमसि अलसानी। सोइ गई सब सखी सयानी ॥
सोवा पहरू औ कोतवारा। सोवा सो उत घट बजन्हारा ॥
सोवै सुखी दुखी नर नारी। सोवै खग मृग खेत करारी ॥
सब सोवा कोउ जागत नाहीं। जागत एक प्रेम जग माही ॥
सोवै लगि तेहि समय जुलेखा। यूसुफ कहँ सपने महँ देखा ॥
मीठी नीद सबै लग सोवा। प्रेम बीज हिय जा महँ गोवा ॥

भाँन सरूप तहँ आय गय, देखि रहै टक लाय।
लीन्ह प्रान तिन्ह काढि कै, रूप अनूप दिखाय ॥

देखत नारि बिमोहित भई। निरख रूप बाउर होइ गई ॥
नैन बान ते बेधा हीया। बात न आउ मौन भइ तीया ॥
छिन एक ठाढ रहा रँगराता। पुन मुसकाय कीन्ह अस बाता ॥
हम तुम्ह का चाहा चित लाई। तुम्ह हियँ ते जिन देहु भुलाई ॥
कहि यह बात चहा उर लावा। जागि परी कुछ दिष्टि न आवा ॥
जागत कै चकचौंहट लागा। जस पंछी कर तें उड़ भागा ॥
हिरदै लाँगि प्रेम की गाँसी। भयौ सुज्ञान हानि तन नासी ॥
सोवत सुख जागत दुख पावा। रोम रोम तन बिरह अकुलावा ॥
मूरत एक सुदिष्ट दिखाई। हिए माहि जस गई समाई ॥

प्रेम फंद अरुझाने, गई ज्ञान मति भूल।
सँवर रूप अकुलाय मनु, उठै हिये महँ सूल ॥

उठि बैठी मुख सँवरत सोई। नई लगन कहि सकै न कोई ॥
जब सँवरै मुख तब बिलखाई। लै मुलाज तें रोय न जाई ॥
बिरह बान बेधा एक बारा। रोम रोम व्याकुल तेहि छारा ॥
चिनगी बिरह आगि कै लागी। सुलगै लाग हिए महँ आगी ॥
सखिन्ह देखि, धन बदन मलीना। मन व्याकुल तन सुध बुध हीना ॥
पूँछै कत तुम्ह चित्त उदासा। कवन सोच तुम हिरदै बासा ॥
तुम्ह सब कर जग प्रान अधारा। काहै लाग भई बिकरारा ॥

सम सुख तुम्हहिं बिधाता दीन्हाँ । मन मलीन केहि कारन कीन्हाँ ॥
पान न खाहु न सूँघहु फूला । अभरन अबर सिंगारहु भूला ॥

दिन भर मौन किये रहै, भूख प्यास गये भूल ।
पान न खाय न रहि सकै, काँट भए सब फूल ॥

भूखन रतन उतारि जो डारा । दुख दायक भये सबहिं सिंगारा ॥
मन महँ सोच करै मुरझाई । लैगा प्रान स्वरूप दिखाई ॥
नाउँ ठाउँ कछु जानत नाहीं । कहाँ सो खोज करूँ जग माहीं ॥
नियरें ठाढ़ि रहै वह मूरति । जेहि बिन तन मन प्रान बिसूरत ॥
रूप दिखाय सो चेटक लावा । मधुर बचन कहि अधिक लुभावा ॥
सेज परे जागै फिरि लखै । लखै न रूप उठै फिर रोवै ॥
ना वहि मूरत ना वहि ठाऊँ । कौन हत्यो वह का नहि नाऊँ ॥
छूटै आँसु चलै जस मोंती । कहै के अय मनभावन जोती ॥
कहाँ गयो वह रूप दिखाई । नट नाटक अस लाई ॥

तोहि संपति वहि दइ किये, जिन्ह कीन्हाँ तोंहि भूप ।
एक बार फिरि आवहू, आनि दिखावहु रूप ॥

ज्ञान हेराय तो सुरत हेरानी । लागत आगि न बरसै पानी ॥
जातवेद होय सेज जराई । जानि बेघ सब बेद भुलाई ॥
पावक झर से पवन जो लागे । रोम रोम लै सरागन दागे ॥
खिन उठ सेज परै बिकरारा । खिन उठ कै बैठे विसँभारा ॥
खिन तम डहै से अगिन उदाना । खिन बरसै चख ऊँदक झराना ॥
खिन सो उठै विरह कै ज्वाला । खिन मुख सँवरत होय बेहाला ॥
कहै कि ए बैरी दुख देवा । का मै कीन्ह चूक अस खेवा ॥
खिन रोवै खिन नैन छिपावै । खिन सोवै पै नींद न आवै ॥
बिकल सरीर भयौ जस पारा । बिरह अगिन तें सुठि बिकरारा ॥

खिन चख बरसै अगिन जल, करत न बनै पुकार ।
कल न परै पल ना लगै, सहै दुकूल न भार ॥

यहि बिधि निसि बीतै दिन आवै। सखिन्ह देख चख नीर छिपावै ॥
अधिक बिकल होय प्रान गॅवावै। रोवत बनै न कहत सोहावै ॥
बैठिहि मौन साध बैरागी। हिये सँभार बिरह कै आगी ॥
उठ धाई सभ सखी सहेली। करत सदा जस कूकत बेली ॥
देखा आप जो प्रान पियारी। सखिन्ह होंह अधिकौ बिकरारी ॥
निस दिन खोज करै सभ कोई। कँवल भेद का जानै कोई ॥
धाई लखा पेम कै पीरा। चरचा देखि मलीन सरीरा ॥
जब सु एकँत भई तब कहा। केहि बिधि अंबुज संपुट गहा ॥

कहौ भेद धनि आपन, जो कुछ बिरह बियोग।
करौ उपाय सो रोग कै, लै मेरऊँ तेहि जोग ॥

मैं तोहि का केहि चाह से पाला। दिन दिन देखि सो होउँ बेहाला ॥
बालापन तोहि हिएँ चढ़ाये। फिरौ चहूँ दिसि तोर फिराये ॥
पख्यो सो तन छीर अधारा। प्रान तें अधिक सो प्यार तुम्हारा ॥
नित छाती पर तोहि सोलावा। नैन ओट मोहि चैन न आवा ॥
तोर सो दुःख हरयो मोर चैना। कैसे दुखो लखो निज नैना ॥
सुनि यह बात चरन सिर लावा। आपन अरथ सो बरनि सुनावा ॥
तुम माता तें अधिक पियारी। तोहि छुट अवर न हितू हमारी ॥
और तोहिं सम कोउ नाहिं सयानी। तोहि सब बेद भेद जग जानी ॥
पै दुख मोर कठिन है धाई। जेहि दुख कर कोउ नाहि सहाई ॥

कहा हौं मोह्यौ अछरी, कहु मानुख केहि मान।
जेहि कै नित मोहि आस है, कत दुख सहै परान ॥

कह्यो लाज तें कहा न जाई। जो न कहौ कत प्रान रहाई ॥
प्रान जात का भेद छिपाऊँ। कहौं बिथा जो औषध पाऊँ ॥
धाय कहा तुइँ प्रान अधारा। तोरे लाग तजौ घर बारा ॥
सौ देखो तोहिं चित्त उदासा। कहाँ मोहि अब रहै हुलासा ॥
सो जानहु हम गुन अधिकारी। कस न कहहु तुम भेद उघारी ॥
जानहु प्रेम कीन्ह तन रेखा। काहुन कहँ तुम नैनन देखा ॥

तेहि कर करों सो ओखध खोजू। हरौं सकल दुख डारौं रोजू॥
कहा ज़ुलेखा सुन मोर बाता। मोर हिया कुठाउँ सुराता॥
सपने महँ वह रूप बिसेखा। जो कबहूँ ना सुना न देखा॥
करौ जतन अब धाय, न तो मरौ जिव खोय।
कहा भेद मैं तुम्ह तें, सुने न दूजा कोय॥
तेहि कर बिरह बान मोरे लागा। लागत रोम रोम तन जागा॥
चहहु प्रान तो करहु उपाऊ। हौ पंखिय जेहि प खन पाऊ॥
मोहि बारे बिधि हिये सँवारा। लाज न मरो न जाय उघारा॥
जो निलज्ज होय प्रान लुटावँहु। जन परिजन महँ लाज गँवावँहु॥
धाई सुना प्रेम कै बाता। उपज्यो रोम रोम दुख गाता॥
कहा बिरह पद कठिन अपारा। जेहि के प्रेम वार नहि पारा॥
भये सपने लखि प्रान उदासा। पूँछि न लिह्यो नाउँ औ बासा॥
नाउँ ठाउँ जेहि कर कुछ नाहीं। को जानै कछु उन जग माहीं॥
कै दुहुँ सरग लोक कर कोई। दैगा दुख दिखाय सुख सोई॥
कै तुहुँ कछु चाटक देखरावा। झूँठ साँच कोउ जान न पावा॥
काह करौ कत जाउँ चलि, कसों कहौ दुख रोय।
बिना नाउँ औ ठाँउ कर, का जाने को होय॥
सुनि यह बात सो भई अधीरा। बाढै अधिक प्रेम कै पीरा॥
भई अधीरज औ अज्ञाना। कहा कि कौन अहै सुलताना॥
अहै सो मोर जीव लेनहारा। देउँ प्रान तो वहि हत्यारा॥
आई सखी धाय चहुँ ओरा। लियें भोग औ कनक कटोरा॥
बैठी रहै मौन की नाईं। सखिन्ह खवावहि भोग बरियाईं॥
वह जिय अवर भोग कै जोगू। बिरह बिथा औ प्रेम बियोगू॥
भूला खेल औ भोग बिलासा। भूला सुख औ खेल हुलासा॥
भूला बेद औ कथा कहानी। प्रेम के पथ बँधहु अरुझानी॥
भूला अभरन राग सुहागा। सखिय भईं दारुन बिछनागा॥
भूला खेल कोलाहल, सुख संपत गय लूट।
प्रेम फंद अरुझाने, अवर फंद सब टूट॥

चार जाम दिन यहि बिधि खोई। बोलत बात सिखिहि मुख जोई ॥
निस काँ सेज बिछावै रोगी। धाइ पड़ै पट ओढ़ बियोगी ॥
चलै आँसु जस झलझल सेजा। रोय बुझावै तपत करेजा ॥
सखिन्ह पाँव जो चापै बैसे। बेधहिं बान सुदारुन ऐसे ॥
कहैं कथा जो सखिन सयानी। चित्त बियोग को सुनै कहानी ॥
फूल सो आन बिछावन सेजा। दहकै देंह औ तपै करेजा ॥
चदन आनि बदन महँ लावैं। लागि आगि तन दुगुन दुखावैं ॥
भवन भाकस अस घर खाये। अभरन तनु जस काल डँसाये ॥
रोम रोम जारै दुख दीन्हाँ। भा तन फाँस बरन वह नेहाँ ॥

होय ब्याकुल बिलखाय, पल न लगे बेहाल।
तज धीरज चख मूँदि कै, बिनवै दीनदयाल ॥

बूड़हि देहु थाह मँझधारा। बिछुडे तोहिं मिलावन हारा ॥
कहाँ मुरत औ ताकर वासा। कवन हतो जिन कीन्ह उदासा ॥
का तेहि नाँव ठाँव तेहि कीन्हीं। कलपौ नाथ जाऊ मैं ताही ॥
कहाँ रूप उपज्यौ करतारा। कहाँ सो अहै जीव लेनहारा ॥
पियुखन कै अस बचन बतावा। लैगा प्रान सो बोल सोहावा ॥
केस सीस बै कहाँ बनाये। कवन जल तिन्ह प्रान फँसाये ॥
यहि बिधि रोवत जोवत आसा। सब निसि जात भरत ऊसाँसा ॥
निसि बीते यह दग्ध अपारा। बिरह बिहाय होय भिनुसारा ॥
कहाँ नैन औ रसभ कपोला। कहाँ सो अधर सुधाधर बोला ॥

मरै जियै लाजय डरै, करै न बिरह उधार।
जेहि पर परै सो जानै, लगन कै अगिन अगार ॥

दिन भर सखिन्ह संग मुख जोवै। निसि एकंत होय झलझल रोवै ॥
भीजे सेज औ पाट बिछावन। सँवरै हिये रूप मन भावन ॥
नींद भूख सगरौ परिहरै। सोय रहै नित मोती भरै ॥
छुट रोदन औषदहिं अपारा। और न कुछ तेहि नींद अहारा ॥
बिरह बिथा हिय अंदर राखै। लाज खोय न काहू तें भाखै ॥

यहि बिधि दिन बीतै निस आवै। रात दिवस धन रोय गँवावे ॥
देखैं सखी कँवल कुम्हिलानी। पै कछु भेद परै नहि जानी ॥
पूछे भेद कहै कछु नाही। बैठी रहै भवन कै माहीं ॥
कहाँ रैन वह चैन कै होई। जो फिर दरस दिखावै कोई ॥

दिन भर रहै सो बंद महँ, सूर जरावत दीन्ह।
दिन तें पीर बढ्यो सखि, निसि तें बढै सनेह ॥

बीता बरख हरख तन त्यागा। रह्यो अकेल बिरह बैरागा ॥
भए अस दुखित छूटिगा भोगू। जोगउ तें साधा सुठ जोगू ॥
चरचै बिरह सो सखी सयानी। जेहि के मरम परै नहिं जानी ॥
माता देख भई बिन प्राना। कौन तुसार कँवल कुँभिलाना ॥
लीन्ह बुलाय हिये महँ लाई। लाय हिये महँ धीर बँधाई ॥
माता भेद सखिन्ह से पूँछे। का वै कहैं भेद सो पूँछे ॥
डरहिं सखिय तेहि देखि सुभावा। रहा निकट दुख कठिन नियावा ॥
निसि दिन जरै बिरह कै जारे। उतपत प्रेम भये सुख कारे ॥
देखि सुता जननी अकुलानी। आरत करै आप सुग्यानी ॥

चढ़ी माय कैलास पर, भोग दई से हाथ।
सेवा करै अनेक बिधि, राखै निसि दिन साथ ॥

कोटि जतन कै हारी सोई। एक दिवस बिधि आन सँजोई ॥
मूँध चहै हिय परगट केरा। खोलन चह हिय केर अहेरा ॥
सोवै तन जागै वह जीऊ। हिये नैन ते देखै पीऊ ॥
जेहि बिधि आदि परघट भो सोई। आवा फेर ना जानै कोई ॥
धाय नारि पाँव लै परी। हाथ जोरि आगे भइ खरी ॥
कहा कि प्रीतम लेहु न प्राना। देहु बिछोह किहेउ तन हाना ॥
तोरे दरस परस कै आसा। रह्यो आस घट पजर साँसा ॥
तुम अस कंत भुलायो मोहीं। मैं नित जरयौ सपन लखि तोहीं ॥
निस दिन सीस चढ़ायों खेहा। भसम बिरह तोहि अंबुज देहा ॥

तुम अस निठुर बिछोही, बहुरि न लीन्ह्यो चाह।
मुयौं सो विरह बिछोह तें, अब कछु करहु निवाह ॥

कहा कि अस मोहि उपज्यो सोगू। तुम्ह तें अधिक सो बिरह बियोगू॥
तुम पर कौन बिथा अस बीती। हौ जस सहौ सो प्रेम पिरीती॥
तोरें बिरह भयो अज्ञाना। छाँड्यो देस औ नगर अपाना॥
तोरै लाग भयो परदेसी। मिला न कोई प्रेम सँदेसी॥
सो तुम मोहिं भुलावहु नाही। राख्यौ प्रीत सदा हिय माहीं॥
सदा मोंहि तुम नियर विसेखो। दूजे पुरुख और जनि देखो॥
जो चाहो हम दरसन राता। दूजे तें जिन बोलहु बाता॥
जब सँवरों तब हौ तुम्ह पासा। हम तुम्ह आस रहौ तोरे आसा॥
होय बिलब सोच जनि मान्यहु। प्रेम न कतहुँ अबिरथा जानहु॥

मोहिं भूल्यहु जिन प्यारी, औ सँवरहु दिन रैन।
करो सदा बैराग चित, तब पावहु सुख चैन॥

कहि यह बात चहा उर लावा। जागि परी कुछ दिष्टि न आवा॥
वहे सु सेज वहै सोउ नारी। अधिक भई व्याकुल बेकरारी॥
उठि बैठी औ लागी देखै। देखै सभै न ताहि विसेखै॥
कहा कि अरे प्रानपत मोरे। बँध्यो प्रेम फाँस मैं तोरे॥
कब देखहिं भरि नैन अघाई। केहि दिन हिय की प्यास बुझाई॥
कब वह घड़ी सो पल फेरि आवै। जेहि दिन दरस परस उन पावै॥
मैं बाउर कछु सुध न कीन्हाँ। नाऊँ औ ठाऊँ पूँछ नहिं लीन्हाँ॥
कहि तें कह्यौ सो आप न हारा। पूँछ न लिहयौ सो अरथ अपारा॥

प्रेम आय हिय में बसा, बसा सो आठौं अंग।
दिन दिन वह बिरहिन दहै, कौन सु चरचै संग॥

दिन भर रहै मौन की नाई। रैन जाग और रोय बिहाई॥
परसन भयो जो सपने माही। नाऊँ ठाऊँ कुछ जान्यों नाहीं॥
अब की बेर फेर तोहिं पाऊँ। बरुनि सजल पग साँकर नाऊँ॥
राखौ नैन घालि बिलँमाई। मूदौं पलक देहुँ नहिं जाई॥
आवत लख्यों न गोपित देखा। भयौ मोर बाउर कै लेखा॥
कहँ बिधिना अस करै सुभागा। मिलौ कनक जस कौंटि सुहागा॥

तोर जोति मोर हिये समानी। दूसर और कहा मै जानी॥
पिउ आए मै पापिन छूँछी। नॉउ ठॉउ कछु लेहु न पूँछी॥
जब लहि आवागवन करेहूँ। तब ल'हि अधिक बिरह दुख देहूँ॥

यह बिधि बीती रैन सभ, भयो चराचर रोर।
धाई आइ निकट उठि, और सखिन चहुँ ओर॥

तब धाई ते कना उघारी। सपने दरस फेर चख चारी॥
कहा कि दरस भयौ परकासा। पूँछि न लेउँ नाउँ औ बासा॥
रखै लाग चित अबिरम जोगू। भये मोहित ल'खि बिरह बियोगू॥
चित बैराग औ हिये उदासा। रही लूटि होय नाउँ कै आसा॥
वहि के हिये सो विरह बियोगू। जानहि लोग भयौ कुछ रोगू॥
औषद देहि पिलावहिं मूरी। औ सुख चैन दीन्ह तिन दूरी॥
माता देखि भई बैरागी। तन मन उठै कोख कै आगी॥
दुहिता रोग सुना सुलताना। और सब नगर देस कुल जाना॥

भयौ प्रगट सभ जगत महँ, दुहिता रोग बिराग।
बेल अँकूरे हिये महँ, बाढि सरग कहँ लाग॥

भइ बाउर तन सुध बुध त्यागी। चाहा जाय सु घर से भागी॥
पातसाह तब बैद बुलाये। होय ब्याकुल नाड़िका दिखाये॥
औषद भाँति भॉति कै कीन्हा। काढ़ा औ चूरन रस दीन्हा॥
तेहि ते अधिक बिथा तेहि बाढ़े। भागे बैदन कहि दिन गाढ़े॥
प्रेम पीर तें भई अधीरा। होय ब्याकुल तन फारे चीरा॥
उठि उठि चलै छॉड़ घर बारा। तन पर लागि चढावै छारा॥
पातसाह तब लाज लजावा। दुहिता पग बैरी लै आवा॥
बेरी परी न मानै नारी। निसि दिन सखी रहैं रखवारी॥
कहै कि ए मन मोहन प्यारे। पग सॉकर देखौ अनियारे॥

मोरे मन सँकरी परी, तन सँकरी केहि मान।
निज नैनन देखौ निरख, यह तन मन कै हान॥

यक दिन पहरु धौराहर सोये । सँवर सँवर मुख ब्याकुल होये ॥
सँवरै वही स्वरूप अमोला । दुख ते नैन जल परलै खोला ॥
कहा कि ऐ मोरे प्रान अधारा । भल दिये दरस बिछोहन मारा ॥
कहि के सपथ अय प्रीतम प्राना । जिन्ह तोहि दीन्ह रूप औ ग्याना ॥
नाँउ ठाँउ अब देहु बताई । एक बार फिर दरस दिखाई ॥
कै किरपा औ सहसन दाया । निज दासी पर फिर कर माया ॥
तोरे बिरह मरौ अब रोई । सोऊँ सेज रकत जल बोई ॥
सखी सहेली न जिऊँ सोहाई । मात पिता कुल कान गँवाई ॥
छाँड्यो भोग भुगत तोरे नेहाँ । छाँड़ सिंगार चढ़ायो खेहाँ ॥

छाँड्यो सब सुख दुख सह्यो, किह्यो जोग तेहि लाग ।
एक बार फिर आवहु, आनि बुझावहु आगि ॥

एक रैन फिर आन तुलानी । आये समुख नींद अलसानी ॥
तीसर सपन फेर वै देखा । वहै रूप जो आद बिसेखा ॥
जानहु आप फेर अस बोला । अमीकुंड अधरन तैं खोला ॥
मैं तोहि लाग तज्यो घर बारा । पर्‌यों कूप महँ मोहि निसारा ॥
मोर तोर प्रीत आदि लिखि राखा । करहु सो अत भोग अभिलाखा ॥
तब दुख हटै होय सुख सारा । जब पाऊँ मैं दरस तुम्हारा ॥
यह सुन नारि भई तब ठाढ़ी । अरुझी बेल प्रेम की गाढ़ी ॥
अब की बेर जाय नहिं देहूँ । जब लहि नाउँ पूँछ नहि लेहूँ ॥
अब लहि यहि जिव निकसि न गयऊ । जो फिर दरसन प्रापत भयऊ ॥

नाउँ ठाउँ बतलावहु, पठऊँ जहाँ सँदेस ।
होय जोगिन बैरागिन, चलि आवहुँ वहि देस ॥

तब मुसकाइ कहा सुन प्यारी । मिस्र देस महँ बास हमारी ॥
मिस्र साह कर सचिव सोहावा । आवहु वहँ तब होय मेरावा ॥
सचिऊ नामँ जगत नित सोहै । और नाम बिरला कोउ कहै ॥
मैं अपने बस महँ हौ नाहीं । आवहु वेगि मिस्र कै माहीं ॥
कछु दिन सहौ विरह दुख दाहू । बिन दुख प्रेम न प्रापत काहू ॥

जो दुख तें नहि होय उदासा । अंत होय सुख भोग बिलासा ॥
जस चाहौ तुम मों कहँ प्यारी । तस चाहौं तोहि अनत कुँवारी ॥
सपने महँ सुनि भई हुलासा । जागि परी कोउ आस न पासा ॥
रोय उठी गहबर अकुलानी । नाउँ ठाउँ सुनि कै बिलगानी ॥

जिऊँ तो जाउँ मिसिर कहँ, मरूँ तो मारग माहँ ।
छार होहुँ उड़ि जाउँ अब, जहाँ बसै मोर नाहँ ॥

जुलेखा बिरह खंड

सदा जुलेखा रोदन करै । यूसुफ रूप हिए महँ धरे ॥
रूप दिखाय कंत छल कीन्हाँ । बिरह बियोग जोग दुख दीन्हाँ ॥
झूठ बात कहि मोहन बाता । काहे कियो सो छल कै बाता ॥
मैं तोर बचन साँच परमाना । लाज गँवाय मिसिर महँ आना ॥
जो तेहि हते जराऊँ साधा । जरतिउँ बैठि तऊ दुख बाधा ॥
रहत सत्त मोर यह ससारा । अब का करौं कठिन दुख डारा ॥
मिटै रोग आवै हम पासा । सत्त धरम कर होइ बिनासा ॥
हौ आपत पत राखहु लाजू । प्रान गए जीवन केहि काजू ॥
खायों कुल कै लाज सुहावनि । भयों निलज जग ढीठ कहावनि ॥

लाज धरम सब छाँड़ि कै, आयों मिसिर के देस ।
चहौ प्रान पत मोर जो, करहु बेगि परबेस ॥

जेहि कारन मैं लाज गँवावा । सो न भयो सब हत्यो छलावा ॥
रोगिनि भई रहौ कब ताईं । यक दिन मरौं रोय हिय माहीं ॥
तोर रूप मैं सपने देखा । भयो मोर अब तिहि कर लेखा ॥
हेरै गयो हुमाय जो कोई । उलू मिला जो सरबस खोई ॥
पानी हेरै गयो पियासा । रेती देखि सो भैयौ तरासा ॥
कोइ बोहित चढ़ि चाहत पारा । बोहित फट्यौ जाइ मँझधारा ॥
बहा जात भा व्याकुल प्राना । आगे आनि काठ उतराना ॥

भयो काठ वह प्रान अधारा। बूड़त बहत सो ताहि सँभारा ॥
जब वह काठ नियर भा आई। काल सरूर भयौ दुख दाई ॥

करम हमार है पातर, को अब करै सहाय।
गहिर अहै मँझधार महँ, परेउ काल बस आय ॥

यूसुफ मूरत हिएँ उरेखै। धरै ध्यान निज आगे देखै ॥
करै बिलाप कहै दुख सारा। का मोहिं बिरह अगिन महँ जारा ॥
देहु दरस औ आस पुरावहु। कबहुँ न मिसिर नगर कहँ आवहु ॥
करै मोर दुख परसन पाऊँ। निसि बासर दुख रोय गँवाऊँ ॥
जो मोहिं आसा देत न दाता। करत्यौ वहै दिवस अपघाता ॥
जेहि दिन दरस न तोर बिसेखा। सूर के ठाऊँ राहु मैं देखा ॥
काहे क अब लहि जरत्यौ जारे। मरत्यौ वही दिवस बिन मारे।
एक सपन दूजे सरग के बानी। किहेउ न तेहि असा जिवहानी ॥
निसि दिन तोहि भरोस जिव राखौ। बार बार बिनती यह भाखौ ॥

जेहि विधि सपन देखावहु, लायहु चित सो चित्त।
तेहि विधि आनि जिआवहु, मरौ तोहि बिन नित्त ॥

कबहूँ कहै पवन ते रोई। करै बिलाप अधीरज होई ॥
मारुत सदा करहु परबेसा। फिरहु राति दिन देस बिदेसा ॥
कवन ठाउँ जहँ तुम नहि जाहू। काटहु मोर बिरह अधिकाहू ॥
जाहु जहाँ वह पीतम प्यारा। कहहु जाय दुख दुखद अपारा ॥
कहौ कि सपन माहैं गहि बाँहाँ। दिहेउ भुलाइ फेरि कस नाहाँ ॥
दै धोका मोहिं मिसिर बोलायहु। तुम अजहूँ लगि लाल न आयहु ॥
मैं जोऊँ नित बाट तुम्हारी। रहौं बंद महँ बिरह के मारी ॥
केहि कारन अस बाचा कीन्ह्यौ। देस छुड़ायो सुधि नहि लीन्ह्यौ ॥
नैहर तज्यौ न पायों तोही। तेहि पर धरम करम करमोई ॥

धृक जीवन पिउ प्रान बिन, धृक बिन धरम परान।
दुअ जग करिआ होय मुख, होय सत्त कै हान ॥

षड़ ऋतु खंड

रितु बसंत बन आदिन फूला। जोगी जती देखि रँग भूला॥
पूरन काम कमान चढ़ावा। बिरही हिएँ बान अस लावा॥
फूले फूल सिखी गुंजारहि। लागी आगि अनार के डारहिं॥
कुसुम केतकी मालति बासा। भूले भँवर फिरहि चहुँ पासा॥
मैं का करूँ कहा अब जाऊँ। मो कहँ नाहिं जगत महँ ठाऊँ॥
टेसू फूल तो कीन्ह अँजोरा। लागी आगि जरै चहुँ ओरा॥
तुन फूले और आँब फुलाने। करुना करौं दिस बास बसाने॥
फेरी त्यागि भिरिंग दुख दाहे। कानन भाँवर सदा सुनाए॥
पीतम भूल गए सुख पाई। निरमोहीं कहँ दया न आई॥

यह रितु चित कैसे रहै, सहै बिरह कै पीर।
पूहुप देखि बसत रितु, कैसेहु धरै न धीर॥

कबित्त

भागे सोच वियोग बँजार सभै, बिन कान कुलाहल चाखहिं।
चाखे जोगी जती अनुराग, सौं भॅवर पतिंग सभै रस पावहिं॥
पाखे पेम सुरंग में दीन्ह, सनेह भरित ऋतु लाज जो लागहि।
लागहिं टेसू दवा चहूँ दिस, कौन दिसा होइ बिरहिनि भागहिं॥

सोरठा

हरे हरे ऋतुराज, बनि आवें लोहित भए।
आवे कौने काज, कंत न पूछे बात मोंहिं॥

ग्रीषम ऋतु उत परहिं अँगारा। घेरि अगिनि बिरहिन कहँ जारा॥
यह ऋतु महँ सब जाय सुखानी। बिरह बेल अजहूँ न लहानी॥
ग्रीषम तेज बिरह के आगे। मोरे हिए दाँउ अस लागे॥
मंदिल छाय उसीर सोहावा। रवन भवन आवनै मन भावा॥
उमड़ि घुमड़ि घन चढै अकासा। सजोगिन मन मुदित हुलासा॥
बरै लाग पावस कर डेरा। फिर घिर (घर) कामक मठ घेरा॥

तम तन मैन जरावै जीऊ। काह करै निरमोही पीऊ ॥
फल अँबिरित बौरे चहुँ ओरा। हम कहँ बिरह हलाहल घोरा ॥
निठुर कत नहिं पूँछहि बाता। का हियँ लगे फल अँबिरित राता ॥
नीर घटा उमड़ी घटा, घटा मोर चख नीर।
नैना घट समझहि सदा, घट घट ढेर सरीर ॥

कबित्त

सूखि समुद्र गए रबितेज, सूखि गए सरिता जल धारी ॥
सूखि गए पुहुमी पति मंदिल, सूखि गए जल मेघ सुखारी ॥
सूखहिं कूप तड़ाग लता द्रुम, बेलि बली वन औ फुलवारी ॥
सुखहिं 'निसार' अंबुनल सूखहि, नाहिन ये अँखियान दुखारी ॥

सोरठा

सूखि भए बेचैन, ग्रीषम ऋतुद्रुम बेलि बन।
एकन सूखे नैन, नित तरसहिं बरसहि सखी ॥
ऋतु पावस घन घोर बिराजे। घोर घमड घटा चढ़ि गाजे ॥
घन गरजै दामिनि लौकाही। नारि कंत के गोद छिपाही ॥
ज्यो ज्यों चमक गरज अधिकाई। त्यों त्यों नाह नारि उर लाई ॥
हम केहि के गिउ लावें बाही। पावस समय देहि बल नाही ॥
खग मृम कबि औ मानुष सारा। साजि सदन सुख करहिं अपारा ॥
घर हमार सब भरिगा पानी। उत राजा हम बहि उतिरानी ॥
जिन के छिन पिउ तजहिं सुनाहीं। सुखी नारि पावस ऋतु माही ॥
करम हमार भयो दुख दाई। का प्रीतम कहँ आस लगाई ॥
दोस हमार जो अवगुन कीन्हाँ। निरमोही का मन चित दीन्हाँ ॥
पावस घन अँधियार महँ, कैसे बचिहे प्रान।
होय रैन बज्जर कै, जो जागे सो जान ॥

कबित्त

बोलहिं मोर बियोग भरे, कोकिल कूल हिया निज घोलहिं।
झूलहिं स्याम बिना घन स्याम, घमड ते मेघ चहूँ दिस झूलहिं ॥

डोलहि आसन जोगी जती के, 'निसार' महारस घूँघट खोलहिं ।
खोलहि मेघ बियोगिन के दुख, डूबहिं चित जो पिया मग कूलहिं ॥

सोरठा

दादुर मोर अँदोर, एक ओर घन घोर उत ।
सती पवन झकझोर, सूने मँदिल न जाइ रहि ॥

सारद समै रैनि उँजियारी । हँसि हँसि पिय हिय लागहिं नारी ॥
देखि बियोगिन कंचन जोरी । सारद लाय दीन्ह जस होरी ॥
भा परकास अगस्त दिखरावा । सरिता सागर नीर सुखावा ॥
सरद चाँदनी निरमल देखा । भा हमार बाउर कर लेखा ॥
सब निसि बीती गिनत तराईं । सुख सोवहि जिन के घर साईं ॥
सेज अकेल सोभ तन जारी । जस घायल कहँ चाँदनि मारी ॥
सरद समय पिउ चाहन सेजा । धृक जीवन हिय फटै कलेजा ॥
सखिऊ के साजहि सुख साजा । बरन चाँदनी निसि उपराजा ॥
सेत बादला सेत किनारी । हीरा मोति चंद घन सारी ॥
सभै सेज होय दुख अधिकाए । सेत बहुत सो घन कहँ भाए ॥

सेत भभूत रमाय मुख, कर जोगिन कै तत ।
धूनी लाऊँ जाय तहँ, जहँ निरमोही कत ॥

कबित्त

हिव सो जरे बिरहानल तें, दिन प्रीत रखै वह आगि जराए ।
घायल प्रेम के बान मोही, करि है बिन प्रीति सरूप लखाए ॥
घायल और जरो न जिए, सभ लोग सहैं सन जोत दिखाए ।
काहे ते प्रान तजो सजनी, नित रार करे सैं संमुख धाएँ ॥

सोरठा

लगे प्रेम के बान, जरै बिरह की अगिनि सों ।
केहि बिधि तजै परान, सरद चाँदनी के चुनी ॥

अब हेमत परघत्यो पाला । हिम तन उठहि बिरह कै ज्वाला ॥
आवत जात न दिन निर माईं । रैनि पहाड़ परै पुनि आईं ॥

भए जुरावन सभै सँजोगिन। औ कुफनू भय जरै वियोगिन॥
बदन जुरावा सभ नर नारी। बिछुरे प्रान जाय दुखारी॥
यक यक पंछि दुहूँ के होए। मिलि कै उठहि उटेरे सोए॥
कुफनु पंछि सम यह रितु नाहीं। नित तन बिरह अगिनिं निकसाहीं॥
अपने मुख तें पावक छारा। अपने अगिन होय जरि छारा॥
होय चकई निसि जागि बितावे। जस बूड़त महँ थाह न पावे॥
बाढा बिरह रैन जस बाढ़ै। अरुझे पेम फाँस हिय गाढ़े॥
निसि हेवत पहाड़ भय, बिन पिउ कटै न रैन।
जागि बिहाऊँ रैन दिन, जाड़ करै बेचैन॥

कबित्त

छाय गयो सब सेत 'निसार', लगे खग खग घिर सरसों।
कैसे कटे यह रैन पहाड़ सों, बँधे जो हिया हिया सरसों॥
देखिए कौन बसंत समय जब, धाँक सती से बसें सरसो।
हेवत गये अपने बिन संगहिं, अब आँखिन भूलि गई सरसों॥

सोरठा

हेवँत ऋतु उत गाढ, बिरह जनावे आन तन।
घटा दिवस निसि बाढ़, जागे बिरह बिहाय तब॥
लाग सिसिर ऋतु चित बैरागी। पवन उदास भए अब लागी॥
लाग बसन सो लाग सुहावे। सिरी पंचमी चाह जनावे॥
राग हिएँ अँग कीन्ह अलसाहा। नर नारी हिय उपजे थाहा॥
भए हरख डफ बाजन लागे। कामिनि काम आय तन जागे॥
चहुँ दिसि उड़ैं गुलाल अबीरा। केहि बिधि धरैं सुहियरें धीरा॥
पुरब जनम कर पाप कमावा। जो यह समय बिरह दुख पावा॥
पहिरहिं सखिहिं बसती बागा। परगट भयो प्रेम अनुरागा॥
खेलहि फाग जो साँवरि गोरी। हम तन लाय लीन्ह जस होरी॥
बौरें आँब बास महकाने। फूले कुसुम चाह अधिकाने॥
तिय से तैसे अउर भए, बौरे आँब लतान।
मैं बौरी दौरी फिरौं, सुनि कोयल की तान॥

सवैया

लाग तुषार परै चहुँ ओर, सखी तेहि अंबुज देह डहे को।
पिउ बिन रैन दुहेली बिहाय, कैसे अकेली ह्वै दुःख सहे को॥
आवे जाड़ जनावे तुषार, हिए बिरहानल जुआब भए को।
बौरी सभै दौर फिरे ललिता सखि, बौरी लता फिर कैसे रहे को॥

सोरठा

चहुँ दिस बेल निसान, हिऐं आन जागा मदन।
केहि विधि रहे परान, बिरह बान बेधे सदा॥

यूसुफ जुलेखा मिलन खंड

यूसुफ भयो मिसिर कर भूप। न्याव दान नित करै अनूपा॥
यक दिन हिये कीन्ह अस ज्ञाना। मो कहँ दई कीन्ह सुलताना॥
बिन मंत्री जो होय महीपा। जैसे सदन होय बिन दीपा॥
पै कोइ ऐस दिष्ट नहिं आवे। जाह सचिव कै कोरे चढ़ावे॥
जबराइल तेहि अवसर आवे। सचिव कुरी कहँ अरथ जनाये॥
भोर मँदिर तें बाहर आवहु। पहले मिले सो सचिव बनावहु॥
यूसुफ़ भोर जो बाहर आवा। लकड़ी लिये जो मुख देखरावा॥
उत दुरबल औ नृप बल हीना। महा दुखी औ जीरन दीना॥
तब मन महँ निज कीन्ह बिचारा। कत उठावे यह जग कर भारा॥
भये सोच महँ डाह तबाँई। जबरैज़ तब आइ सुनाई॥

कौन सोच हिरदै करो, औ मन होहु अधीर।
सचिव करहु यह पुरख कहँ, दुरबल दीन्ह सरीर॥

इन तुम्ह तें बहु कीन्ह भलाई। दई चहे तोहि उरिन कराई॥
यूसुफ कहा बहुत गत कीन्हा। दियो अरथ मैं ताह न चीन्हा॥
कहा कि है बालक यह सोई। ताकर मरम न जानै कोई॥
मिसिर सचिव तोहि चहा सँघारा। दै साखी तोर प्रान उबारा॥

तैं मानुस कर बालक अहा। जिन मुख बचन न्याव को कहा ॥
सो बालक यह दुरबल दीन्हा। जहँ नाहि श्रो रूप बिहीना ॥
सचिव ज्ञान कर चाहै आगर। सो यह होय बुद्धि कर सागर ॥
तब यूसुफ तेहि हिये लगावा। श्रो ता कहँ हम्माम भेजावा ॥
करि असनान पन्हावा जोरा। तॉस बादला जोत अँजोरा ॥
कॅलगी श्रो नवरतन पेन्हावा। ताह सचिव कै कोरि चढ़ावा ॥

अलख निरंजन न्याव कर, एकहि एक बिचार।
काहू कै सेवा नृ-फल, करै न तनिक 'निसार ॥

अब बरनौ वह बिरह बियोगिन। यूसुफ लाय भई जो जोगिन ॥
चालिस बरस जोग जिन्ह कीन्हा। दरब भँडार खोय सभ दीन्हा ॥
जेहि दिन नॉव लिये कोउ आए। तेहि दिन खंजन भोग कराए ॥
जेहि नाँव सुनै तहिं नारी। रोय रोय काटै निस सारी ॥
कुछ न रहा तब जोग कमाई। दरब अरथ सभ दीन्ह लुटाई ॥
रोवत नैन भये अँधियारे। रोम रोम तन बिरहिन जारे ॥
जब लहि नैन हुते वह केरे। तब लहि दरस प्रीतमहि हेरे ॥
गये नयन भइ रंक भिखारी। बिरइ स्वरूप भई वह नारी ॥
कूबर निकसि पीठ महँ आवा। वक्र अग मा सूध सोहावा ॥

लै लकुटी हेरत फिरै, नित यूसुफ कै बाट।
जो कोइ नॉव सुनावे, भुइँ महँ धरे लिलाट ॥

बालक झूठि सुनावहि आई। यूसुफ नॉउ सुनत बौराई ॥
कहैं कि निकसी आज सवारी। धाई फिरै होत बलिहारी ॥
जब लहि हत्यौ दरब श्रो दाना। दीन्ह नाँव सुनि कौटि समाना ॥
यूसुफ काज सबहि कुछ दीन्हा। कुछ न रहा तब काहु न चीन्हा ॥
तब सब लोग सो बाउर कहैं। विपत परे कोउ संग न रहैं ॥
पावहिं अरथ दरब पहिरावा। खाहिं भोग लै नाम सोहावा ॥
जब न रहा कुछ सभ अलगाना। हत्यौ नेत्र सभ भये बेगाना ॥
जेहि तें कहै बात पर नारी। सो रिस खाय देइ तेहि गारी ॥

लगुटी लिये गली गली, फिरै मत्रि के आस ।
सुनत सवारी मत्रि कै, धाइ फिरै चहुँ पास ॥

गई निकसि सभ दासी चेरी । अपने यक प्रीतम कहँ हेरी ॥
सेवक दासी रहा न कोई । बिपत पड़े कोइ साथ न होई ॥
रहै बहुन महँ अकसर दुखी । होय अदरार रहै बिक मुखी ॥
जो कुछ रहा सो सबहै गँवावा । पिया प्रेम बिन अवर न भावा ॥
हर्यो भोग सुख नीद बिलासा । हरयो चैन औ हरयौ हुलासा ॥
जोबन हर्यो रूप हरि गयो । बिरध स्वरूप सभै तन भयो ॥
भयो अंग सबहु ढील समाना । पै न गयो तेहि प्रेम को बाना ॥
भये तेज तन पौरुख हारा । नैनन मेटि गयो उँजियारा ॥

नास कीन बिधि, सब गयो, खोये सुख अरु चेन ।
जोबन रूप न थिर रहा, रहा बिरह तन मैन ॥

एक दिन एक नारि पहँ जाई । रोवे लागि सँवरि सुख दाई ॥
तेहिके चरन सीस लै आवा । आवा पुनि सभ भेख देखावा ॥
यूसुफ़ नबी कै मोंहि सवारी । देहु दिखाय होंहु बलिहारी ॥
सँवर नार पाछिल दिन सोई । लाखन दरब लीन्ह सब कोई ॥
उठै मया भइ तेहि के सगा । जो दीपक सँग भई पतिंगा ॥
चहुँ दिसि फिरै सग लै नारी । अकस्मात मिलि गई सवारी ॥
उठै धूम तिल ऊपर भयऊ । चहुँ दिस अरध अवध होय गयऊ ॥
लै सो पाट पर ताहि बैठावा । कहा चेत अब यूसुफ़ आवा ॥
ओ यूसुफ तैं कहा पुकारी । बैठे पाट जुलेखा नारी ॥

नाम जुलेखा नार मुख, पड़ा जो यूसुफ कान ।
मया मोह जब उपजै, हियें प्रेम कर मान ॥

देखा बिरिध भई वह बाला । ना वह रूप न रग न हाला ॥
कंठा एक करै महँ सोहे । पूछे लोग कि यूसुफ को है ॥
नैन नाह जो देखै नारी । पौरुख नाह जो होय बलिहारी ॥
लगुटी लियें बाट पर ठाढ़ी । बक्र पथ मँह चिंता गाढ़ी ॥

रोवत ठाऊँ ठाठ जो कोरी। जोबन रतन लीन्ह क्यों छोरी ॥
हर गये जोत नैन से पानी। मॉर्ग झुरान नसैं अरुझानी ॥
अंबुज रंग हरिद रँग भयऊ। रती मॉस सभ झूरा भयऊ ॥
जो देखै सो निकट न जाये। देखि बिरिध मुख जाय हेराये ॥
जो सवार आये तेहि पासा। कहे न आव मंत्र कै बासा ॥

सब्ह सवार के पाछें, यूसुफ नबी जो आय।
कहा भये हैं यूसुफ। जिन मोहि ऐस बनाय ॥

लखि यूसुफ मन भयो दुखारी। कौन हाल तुम्ह कीन्हों नारी ॥
औ कैसे मोहिं छीन्यहु बाला। नैन अंध औ हाल बेहाला ॥
सब्ह सवार आये तुम्ह पासा। काहू देखि न कियो हुलासा ॥
कहा नारि सुन प्रेम पियारे। चालिस बरस बिरह दुख जारे ॥
जब तुरंग हम सौह चलावा। चारिव घरी सो हिये चढ़ावा ॥
तुम्ह दौड़ाय तुरीं लै आये। हम ऊपर खुर खद कराये ॥
चालिस बरस बिरह कै आगी। मोरे हिये रैन दिन जागी ॥
कठिन बिरह को ताह सँभारे। छिन मँह अगिन जागत कँह जारे ॥
जो यह अगिन समुद्र मँह डारै। सोख समुद्र मघवानल जारै ॥

डारौ अगिन समीर पर, तो अजन होय जाय।
धन सो हिया अति मूरख, जेहिं यह आगि समाय ॥

जस सो अगिन महँ रहै समुदर। औ समुद्र महँ बसै जलंधर ॥
तस होऊँ यह समुंदर माहाँ। जीवन मोर अगिन कै माहाँ ॥
जो यह अगिन न हिय महँ होती। जस घट महँ वह पूरन जोती ॥
तो कत जीवन होत हमारा। बिरह अगिन मोर प्रान अधारा ॥
निस दिन अगिन हिये सुलगावै। हिय पसीज चख आँसू आवै ॥
बड़वानल तस प्रान हमारा। जिन यह अगिन प्रेम संभारा ॥
चित डौडी बुधि फेरी लावै। मन दूनौ कै भीड़ उठावै ॥
वह सो अगिन कर अहै पसीना। धरहिं नैन तैं तेज बिहीना ॥
बिरह बुद्धि दोउ करहिं लराई। जस पारा लखि अगिन हेराई ॥

बसै समुँदर अगिन महँ, ताको जीवन सोय।
छिन बिछुड़ै तन लागे, पुन सो निजीवन होय॥

यूसुफ कहा कि बात अपारा। हियें अगिन को राखै पारा॥
राखि न सकै आगि यह कोई। दगधै तनु जरि छार सो होई॥
तुम्ह महँ हाल रहा कछु नाही। एक सो झूठ रहा तन माहीं॥
झूठ प्रेम कर का फल पावै। झूठ बात कहि धरम नसावै॥
कहा नारि सोचहु मन माही। जग महँ अगिन कहाँ है नाहीं॥
अगिन धुंध जेहि ओर न छोरा। पूरन वहै अगिन चहुँ ओरा॥
देखहु अगिन बीच कै छारा। सूरज अगिन जगत सब्ह जारा॥
अगिन भार जरत होय लोका। गरज गरज महँ देख भभूका॥
मधवानल वहि अगिन समानी। अगिन अगस्त सोखावत पानी॥

आगिन सरग रबि ससि, चन्दन घन नखत निहार।
कत मानुख वहि अगिन तैं, रहा न लोह 'निसार'॥

अगिन तरुन नित लावत दाऊँ। अगिन बिरिछ महँ लावहिं ठाऊँ॥
अगिन बिपत तें करै प्रकासा। भूमि अगिन चढ़ि जात अकासा॥
सब महँ अगिन परघट परचंडा। गूदर बाँस सरहर सरकण्डा॥
जो नाही आगे दुख देखहु। काह माँह वह अगिन विसेखहु॥
का कि तुम सब्ह पढ़ा औ जाना। प्रेम अगिन तेहि हिये समाना॥
सुन यह बात जुलेखा रोवै। परघट अगिन हिये जो गोवै॥
तोरे हाथ कुछ यूसुफ आहै। कहा कि जाकहँ ताजिना कहै।
कहा कि मोह देहु पकराई। बिरह अगिन तब देहुँ दिखाई॥
फुदन लीन्ह कोंड़ कर हाथाँ। लै लायो ताकहँ हिय साथाँ॥

फुंदन जरा तजियाना जारा, दस्ता जरै जो लाग।
डार दीन्ह तब यूसुफ, देखि बिरह कै आग॥

कहा जुलेखा सुन नर नाहा। राख्यों अगिन जो हिरदै माँहा॥
जबहीं बुध मानुख उपराजा। चार तत्त कर पंजर साजा॥
यहै अगिन जो आद सँवारा। आद जोत वह अगिन सँचारा॥

तेहि छुट दूत होय ससि सूरू । कोउ न सकेहु रखि प्रेम अँकूरू॥
चकमक ते जस पथरी झारै । उठा भभूका हियें परचारै ॥
आद पिता कहँ अगिन सो दीन्हा । जेहि ते सभ नर परगट कीन्हा ॥
सब्ह तेहि सकेउ न आग सँभारी । पेमै हियें रख्यो पर चारी ॥
सो पावक मैं हिये निचोवा । चालिस बरस बीस जस गोवा ॥
तेहि सो आग कै एक चिगारी । जगनायक यक सकेहु सँभारी ॥
पूरन चहुँदिस अगिन बिसाला । खालमाँहवदिहअगिनकैज्वाला॥

देख अवस्था नारि कै, औ हिरदै कर आग ।
सभै लोग अचरज करहि, प्रेम हिये महँ जाग ॥

धन यह नार आग जिन बोई । बिरह बीज जस हियें निचोई ॥
अहै अगिन वह प्रेम कै थाती । दीपक माँह जरै जस बाती ॥
धनि वह हिया अगिन जिन राखा । धनि वह नारि प्रेम रस चाखा ॥
पीठि औ पेट सरापन लागा । अबहुन मिटेहु बिरह बैरागा ॥
ज्यो ज्यों बिरध होय सरीरा । लाजन बढ़ै औ होय अधीरा ॥
यह मन कबहूँ मरे न मारा । जब वहि पड़े न तन पर भारा ॥
मन मारै सोई बड़ साई । धाय निसार पड़ै तेहि पाई ॥
भयो अँग सब्ह ढील समाना । निकसन तेहि तें प्रेम को बाना ॥

नैनन रूपन देखहुँ, कानन सौह न बात ।
केहि कारन पछिता करौ, भयौ रैन परभात ॥

धन संबत औ शब्द सुख साजा । बिनु पौरख सभ कौने काजा ॥
अब तन नैन गये सब्ह खोई । तबहुँ न दरस परायत होई ॥
तो कहँ देखि आय कहँ रोवा । मोरे लिखत सबै तुम खोवा ॥
कहाँ रूप वह जोबन जोरा । कहाँ नैन जस समुद हिलोरा ॥
कहाँ अधर सुरंग अमोला । कहाँ मदन वह सिहर कमोला ॥
कहाँ कठ वह कोकिल बोली । कहँ कठोर गुजराती चोली ॥
कहाँ लंक जो बारमूबारा । लचि लचि जायँ बार कै भारा ॥

,हाँ चरन वह कँवल सोभावा । कहाँ अँग वह सूध सोहावा ॥
कहाँ कपोतहि जोबन भाला । सदा जो सौतिन कै तन साला ॥
कहाँ सरवर कहँ हँस, वह मोती चुन चुन खाय ।
लाग चुनै अब काँकर, भूरे में मरि जाय ॥
का भा तोर सरूप सोहावा । चाँद सुरज जेहि देखि लजावा ॥
कहा कि रूप तुम्हे सब्ह दीन्हा । तोरे बिरह अगिन हर लीन्हा ॥
कहा कि तें जो कीन्ह निठुराई । मैं जोबन ओ जोर गँवाई ॥
कहा कि वह जीवन औ जोरा । जाकै सौंह न काहुन जोरा ॥
कहा कि नैन कटाच्छ सोहाये । कहा गये कोऊ हियें न लाये ॥
कहा कि रोय रोय में खोवा । गये नैन तोर बिरह बिछोहा ॥
कहाँ गये वह अमिरित बानी । जेहि तें भये आग ओ पानी ॥
तोरे प्रेम सभै हरि लीन्हा । सभै बात मैं तोहि कहँ दीन्हा ॥
कहाँ गये लाल जवाहर मोती । लेइ तेहि झलक सो रब कै जोती ॥
सुनेउँ नाँउ तोर मैं, दीन्हौं सभै लुटाय ।
सभ कुछ गयो न कुछ रहा, रहा प्रेम चित छाय ॥
कहाँ गये वह दासी चेरी । रूपवंत जो काहून हेरी ॥
तास बादला रग हरीरा । असावरी कर करै को चीरा ॥
कहा कि टूक टूक करि डारा । तोरे बिरह बसन सब फारा ॥
अब तन पर कामरी टूका । हियें फिरावहि बिरह भभूका ॥
तेहि कमरी पर देसी सोहै । प्रेमै लोग देखि तेहि मोहै ॥
कहाँ गयो वह गरब तुम्हारा । जेहि तें न काहुक ओर निहारा ॥
दरब गरब औ जोबन जोरा । सब्ह यह अहै हरा मन तोरा ॥
नैन अधीन औ रंग नियावा । गरूड़ै कोऊ बैरन खावा ॥
तोरे प्रेम सभै कुछ खोवा । एक प्रेम निज हिरदै गोवा ॥
तोरे बिरह हरयो सभै, नैन बैन गुन ज्ञान ।
सब कुछ गयो न रहा कुछ, रहा एक तोर ध्यान ॥
लागै कहै रोय पर नारी । चालीस बरस बीत कै सारी ॥
निस दिन अगिन सो हियें निचोई । सुलगत रहै न चाँपा कोई ॥

रैन घटी दिन बहुत बढ़ावा। बिरहिन आग अग लै लावा॥
कठिन धाम तन जरै हमारा। भूखँन मदिल श्रो सपर सँवारा॥
सीसी लै गुलाब डरवावहि। श्रो कुमकुम कहिं श्रंग लगावहि॥
रोवँ रोवँ श्रौ सुख अधिकाये। बिसै करत अंग सुख पाये॥
बात कहत निसि जाय बिहाई। दिन कहँ भोग भगत अधिकाई॥
चैत मास बिरहिन कहै जारा। दीन्हा आग लाय संसारा॥
बरखा हितु अब तपै करेजा। करेज भयो रगरेज क रंजा॥

ग्रीषम रितु अगिन बैठ, ढूँढहि सीतल छाँह।
ऐसे समय बियोगिन, भाग सोख दस जाँह॥

कवित्त

जेठ ग्रीषम विषम आगम पान भोग बिना करै।
'निसार' बियोगी छाँह तपिहै अग कै सीतल करै॥
भुवन सीतल पवन आवै रोवँ रोवँ मैं चित धरै।
गुपुत परघट एक पिव बिन बिरहिनै निसि दिन जरै॥

सोरठा

जेठ जरावे देह, नेह माहँ मारै सखी।
चहुँ दिस उठै सनेह, बिरहिन कै दारुन सभै॥

लाग असाढ़ सो गाढ़ जनाई। घन गरजै दामिन चमकाई॥
उमड़ घमंड घन घोर बिराजै। काम बिसाल नवो खँड बाजै॥
कूँधत माँह चकूँधत जीऊ। केहि के कंठ लगै बिन पीऊ॥
पँछिय पतिग सबहि घर साजा। जगत काम कर बाजन बाजा॥
मोर कुटी को छावै पीऊ। केहि बिधि दय देइ मोंहि जीऊ॥
दादुर मोर जो करहि अँदोरा। नार कथ छिन तजहि न कोरा॥
बिछुड़े मुये सो दुश्रो दुखारी। बिकल जरा भा सभ नर नारी॥
कोकिल कूक लूक हिय लावे। कुकनू सम भभूक रचावै॥
कैसे कटै सो यह रितु भारी। बिन पिव घमँड़ घोर अँधियारी॥

माँस असाढ़ सोहावें, पिव भावे निज सेज।
देख घटा श्रौ दामिनी, काँपै मोर करेज॥

कवित्त

रितु असाढ घन घेर आयो, लाग चमकै दामिनी।
रितु सोहावन देख मन, महँ हरख बैठ भामिनी ॥
रितु घमंड सों मेघ धाये, दिवॅस भई जस जामिनी।
रैन दिन करुना करै, घर में अकेले सामिनी ॥

सोरठा

बीतो जात असाढ़, कंत भूल सुख महॅ रहे।
बिरहिन यह दिन गाढ, पिव बिन कहु कैसे कटै ॥

आयो सखी सोहावन सावन। भावन रैन बिना मन भावन ॥
घर घर का'मन साज हिडोला। देख समै सरगुर चित डोला ॥
जोगी जती को आसन छूटा। साध संत को मका टूटा ॥
काहु को चित रहा थिर नाही। हरषित चित यहै रित माहीं ॥
भवन बियोगिनि काटै खाई। देखि देखि यह समै सोहाई ॥
परहिं जो आँसु भूमि पर टूटी। रेंग चली जस बीर बहूटी ॥
जुगनू चमक चमक देखराही। बरसे अगिन जो सावन माहीं ॥
सावन मास सोहावन बीना। तन तन काम अपरबल बीना ॥

सावन मन भावन नही, जोवन बिरथा जाय।
काल न आवे यह समै, कैसे रैन बिहाय ॥

कवित्त

भा सावन रितु सोहावन भावन मन भावे नहीं।
काम कला पावा सखी छिन यक कल्पावे नहीं ॥
बैस बीती जात सजनी सेज सुख पावा नही।
जाहु सावन बहुर आवन कंत घर आवहिं नहीं ॥

भादौं भुवन बेहावन भयो। देखत घटा प्रान हरि गयो ॥
दिन औ रैन जाय नहि जानी। उनई घटा रहे भरि पानी ॥
जल थल पूर सो नीर अपारा। होय गये एक नदी औ नारा ॥

जल परवाह जगत माँ बाढ़ा। बिरही बिरह परा दुख गाढ़ा ॥
घन गरजत लरजत तन मोरा। दामिन दमक चहै पिव कोरा ॥
गरजै कूँध लखि मरि मरि जाई। बिना कंत को लेइ जियाई ॥
ऐसे समय सो नारि अकेली। निठुर कंत जिन दुख परहेली ॥
धन अकेलि औ भादौं राती। धन सो अहै बजर कै छाती ॥
घन भादो कै मास सँचारा। तासो नार ओ पुरुष सँचारा ॥

भादौं रैन बिहावन केहि बिधि रहौ अकेली।
धृक जीवन तेहि नार का जेहिं सामी परहेली ॥

कवित्त

मास भादों रैन कारी देख कर दूभर भई।
कंत बिन सखि सेज सोई नीद नैनन सें गई ॥
मन हमार निपट व्याकुल स्याम बिन सब दुख हिये।
बिरह सरिता उमड़ि आई कैस कै बचिये दई ॥

सोरठा

भादों केहि रँग भीर, धरै धीर केहि बिधि हिया।
बाढ़ै बिरह-क पीर, कथ न पूछै बात मोहि ॥

लाग कुआर सरद रितु आए। घटा जुनीर सब अग सुखाए ॥
जहँ तहँ पथी तुरी पलाना। पीय प्रान बाहर बेहराना ॥
जो कहु छाय रहे बंजारा। सो फिर कै परदेस सिधारा ॥
हम पंछी तेहि सोच हमारे। ऐसे समय सो दीन्ह बेसारे ॥
रहे नगर महँ लाल हमारा। नैनन मोंह कोट पहारा ॥
जो निरदई करे नहिं दाया। का भो निकट रहे निरमाया ॥
सहस कोस तेहि पाछे आवे। माया मोह हिया उपजावे ॥
रहे मँदिर महँ करे न दाया। सहस कोस ता कहँ निरमाया ॥
मास कुँआर घटा जल सारा। भय परकास मिटेहु अँधियारा ॥

सारद समय सुहावन, मन भावन नहिं पास।
भय सूरत लखावनी, जो हिय नही हुलास ॥

छंद

कुआर मास अब लाग सुंदर, चाँदनी निरमल भई ।
सरद रंग बेमाल सोहित, सरद आवत निरभई ॥
जल अग सब सब सोन लीन्हो, नींद नैनन सो गई ।
चख बियोगिन के नहिं सूखै अवर जल सोखै दई ॥

सोरठा

यह रितु सोख्यो नीर, जब अगस्त ऊदित भयो ।
नयनन भयो अधार रितु, रात दिवस पूरन रह्यो ॥
कातिक मास महा उँजियारी । संजोगिन सुख समय पियारी ॥
देख चाँदनी करै हुलासा । जिनके कंत रहैं नित बासा ॥
चहुँ दिस होहि हरष अनुरागा । कामिन काम एक महँ लागा ॥
यह रित महँ सोहै उँजियारी । कैसे जियें बियोगिन नारी ॥
पिय कै लगन हिये अधिकाई । गगन नखत सखि रैन बेहाई ॥
सभै लगन संजोग समाना । काटे खाय न जाय बखाना ॥
बिरहिन बिरह अगिन से जारी । चंद चाँदनी डारै मारी ॥
घायल बिरह बियोगिन बाला । निरख चाँदनी होय बेहाला ॥
सरद समय बहु दुख अधिकारी । बिरहिन प्रान जुआ जस हारी ॥
मोही निदित जगावा, पिय मोही के लाग ।
कहँ मोहन अस पावा, मिटै हिये कै आग ॥

छंद

मास कातिक सुठ सहेला, चाँदनी लखि चित हरै ।
देख कै यह रितू सुदर, नार कथ पिव परहरैं ॥
दुओ दिस बिरख फूले, देख कै बिरहिन चरै ।
सरद रितु की चाँदनी में, बिरह के मारे मरै ॥

सोरठा

कातिक बेहावन घन बैठ, भोग रजनी बैठ ।
बिरहिन बदन मलीन भय, देख रंगै सखी ॥

अगहन दिवस घटा निस बाढ़ै। बिरहिन बेल तुसारन डाढ़ै ॥
जाड़ आन तन माँह समाना। घर धरें असन बसन अधिकाना ॥
साजहि सौर सपेती नारी। हरियर सब मसियत रतनारी ॥
भयो चार ते प्रीतम प्यारी। जेहि तन तें नहि होय निनारी ॥
पवन उदास बहै अब लागी। हम कुकनू सम झारहिं आगी ॥
भाँति भाँति के बसन सोहाये। सयोगिन प्रीतम सँग धाये ॥
सरसो फूल रही चहुँ ओरा। लाग तुसार परै निसि भोरा ॥
बाढ़ै रैन बढ़ा सँग भोगू। लागे केल करै सब लोगू ॥
बिरहिन भई रैन बहु भारी। जगत जाय सो बिरह दुखारी ॥

अगहन मास सोहावन, भा दूभर बिन कंत।
सेज अकेले रैन महँ, मिलै न आवत कत ॥

छंद

मास अगहन जाड व्यापै, देह लागै थर थरे।
कत बिना दूभर भये ढहि, रैन होय करवट परे ॥
निठुर कत नहिं बात पूँछे, मास अगहन हर हरे।
सुख सोहागिन सेज सोहैं, एक दम बिरहिन जरे ॥

सोरठा

हेवँत रितू अनग, जाड़ कँपावे देह कहँ।
मोहि प्रीतम की चाह, बात न पूँछे निठुर वह ॥

पूस जाड़ अधिकौं तन लागा। घर घर नारि पुरुष अनुरागा ॥
बाढ़ै रैन तन काम समाना। घटा दिवस सुख साज हेराना ॥
लाग परे जग माँह तुसारा। कँवल बदन हम बिरहिन जारा ॥
अबुज बदन भयो जर कारा। प्रगट जाड़ में काँपहि दारा ॥
छिन बिरही जिनके तेहि सामे। उनका यह रित कथ बिसरामे ॥
हम का करहिं जाहिं कब भागी। चहुँदिस जारी बिरह की आगी ॥
रैन पहाड़ न जाय बेहाई। काँप काँप तन उठै झुराई ॥

है रे निठुर नाह दुख दाता। कबहूँ न पूँछा हम दुख बाता ॥
निठुर नाह नहि दाया आवै। हमहिं जाइ दिन रात सतावै ॥
पूस मास दिन घन अब, आवै जाय न बार।
बिरहिन निस दारुन भये, हाय के परे निहार ॥

छंद

पूस मास भये निस दिन, रैन जग सम होय गये।
तन तुसार सम कवल के जर, छार बिरहिन के भये ॥
कत तोहिं बिन सेज सूनी, रैन दूभर निरमई।
ऐस रितु में लाल बिन, कैसे जिवैं ललिता दई ॥

सोरठा

पूस भयो दिन छोट, रैन बेहाय न कंत बिन।
बिरहिन लाँग न खोट, निठुर कंत पूँछे नहीं ॥

माघ मास सोहै सुख साजा। तिल तिल दिन बाढा दुख भाजा ॥
जेहि दिन पवन नीच अधिकाये। तेहि दिन देहि तुसार कराये ॥
कैसे बीते मास सोहावा। निठुर नाह नहि दरस देखावा ॥
सिरी पचमी बौर सोहाये। माली बौर देखाये आये ॥
रंग बसंत सो लाग सोहावा। बिरह बियोगिन दुख अधिकावा ॥
यह सो मास बिन कंत बेहावै। प्रेम काज अब हिया जरावै ॥
दारुन बिरह जरावे देहाँ। सून बसंत बिन उपजै नेहाँ ॥
अब कैसे यह दिवस बेहाऊँ। बिना पीउ रँग बसँत गवाऊँ ॥
धावै काम कमान चढाये। बिरहिन हिया बोझ सिर लाये ॥
माघ बिछोहैं कत जेहि, धृक कामिन तन सोय।
ऐसे रितु अकसर रहे, कैसे जीवन होय ॥

छंद

माघ थिर थिर देह काँपे, निस अकेले सोय।
नीद नैनन में न आवे, सँवर प्रीतम रोय ॥

बैस सुंदर जात पिव बिन, आँसु से मुख धोय।
कंत बिन बिरहिन तपै तन, प्रान वर तेहि खोय ॥

सोरठा

मोहन आये नाहि, कवन छाँह हम (कहँ) करै।
कठिन समै अवगाह, कैसे कै धीरज रहै ॥

फागुन मास कीन्ह परगासा। घर घर उपज्यो रग हुलासा ॥
बाजे डफ मृदंग सोहाये। काम आय निज रूप देखाये ॥
लागे पवन बहे हरिहरा। तरुवर पात सभै खसि परा ॥
निस बिरहिन पुन भा पतझारा। रोम रोम तन बिरहिन जारा ॥
संजोगिन सभ खेलहिं होरी। रंग गुलाल सो भर भर झोरी ॥
डारहिं रग सोरंग हँकारहिं। दुख दारिद कहँ मार निसारहि ॥
जिवँ जिवँ पवन तेज अधिकाई। बिरहिन हिये न रंग समाई ॥
धृक जीवन जेहि कत नियासा। मरे बियोगिन दरस के आसा ॥
यह रित माँ भा सुख परगासू। बिरहिन जेर बिरह दुख बासू ॥

फागुन सभे सोहावने, मन भावन नहिं सेज।
रन तुरग अरंग कहि, बिरहिन जरै करेज ॥

छंद

मास फागुन सुठ सहेला, आन सुख परघट भयो।
काम पूरन जगत छावा, सोग दुख जग से गयो ॥
यह सभै पिव बिन सखी, यह देह बिरहिन के तयो।
दुख पुराये रह गयो यह, मास सभ सत कुछ गयो ॥

सोरठा

खेलहिं लाल सु फाग, केसर बीर उड़ावहीं।
जरहिं बियोगिन भाग, फागुन सुक्ख न पावहीं ॥

एक बरिस दुख बरन सुनावा। यहि बिधि चालिस बरिस बितावा ॥
सदा बसंत ओ पावस आवे। मोहिं कहँ उठि बिरह जरावे ॥

निस दिन लाग रहै जस होरी। दिये जराय बिरह तन कोरी ॥
बहै रैन वह दिन नित आवे। मास मास रितु अवर दिखावे ॥
मोंहि कहँ सदा गिरीषम रहा। बिरहानल दुख जाय न कहा ॥
चालिस बरस बिरह अधिकाना। नित उठ हिये लाग जस बाना ॥
दिन दिन विरह तेज अधिकाई। चालीस बरस सो रोय गँवाई ॥
वहै भोर साँझहिं सो आवै। निस दिन बिरहिन हिये जरावै ॥
तुम प्रीतम कुछ कीन्ह न दाया। अस तुम्ह भूल गयो निरमाया ॥

प्रीतम बिरथा जाय जग, मैं सो जर्यौ जेहि लाग।
तुम्हरे मन उपज्यो नही, धिरिग मोर बैराग ॥

कहा ज़ुलेखा प्रेम कहानी। नैन भरे जस पावस पानी ॥
रोय रोय सभ बरन सुनावा। सुन यूसुफ मन उठ्यो छोहावा ॥
सेवक सँघ कै मँदिल पठावा। आय अहेर खेल लहरावा ॥
आयो मँदिर सेज पर गयऊ। हिये ज़ुलेखा सो रत भयऊ ॥
कहा बोलाय चहो का नारी। सो अब देऊ जो होहु सुखारी ॥
जो माँगहु सो देऊँ मँगाई। सोन रूप नग बसन सोहाई ॥
कहा ज़ुलेखा एक न चाहौ। धन लक्ष्मी सभ झार बहावौं ॥
मँदिर गाँव मोर बाग सोहाये। जो माँगै तेहि देउँ मँगाये ॥
लेउ गाँव ओ मँदिल सोहावा। चेरी दास लेउ चित भावा ॥
महा सिद्ध कै सुत कहलावहु। औ तुम्ह सिद्ध सदा सुख पावहु ॥
कीन्हो बहुत तपस्या जोगू। अलख तृसा तुम कीन्ह न भोगू ॥

माँगहु तुम्ह करतार तें, देहि नैन कर जोत।
जेहि तें देखहुँ तोर मुख, चहौ न हीरा मोत ॥

तब याकूब यूसुफ तें कहा। जो कुछ अरथ भेद सब रहा ॥
सुना ज़ुलेखा नबी कर नाऊँ। परे जाय याकूब के पाऊँ ॥
महा सिद्ध औ पर उपकारी। सुनहु कान दै बिथा हमारी ॥
जेहि का अंग बिरह दुख भेजे। सो दुखिया दुख दीन्ह पसीजे ॥
तुम्ह जस जरयो सो बिरह कै आगी। तेहि तें अधिक जरयो वहि आगी ॥

तुम्ह समुझ्यो मोरे दुख कै पीरा। पुत्र बिरह तुम डह्यो सरीरा॥
वह निरदई न जाने प्रेमा। जानहिं सो जेहि धरम औ नेमा॥
तुम्ह सभ कुछ तेहि पंथ न पावहु। कस तेहि ते तुम प्रेम छिपावहु॥
चालीस बरस जरायो देहाँ। वहि के हियें न उपज्यो नेहाँ॥
तुम्ह अब न्याव हमार करेऊ। निरदाई सुन कहँ सुख देऊ॥
सबहि गरथ तेहि देहु सिखाई। प्रेम के अच्छर न देहु पढाई॥

जेहि ते जानहि प्रेम वै, बेग पढ़ावहु सोय।
देहु असीस उठाय कर, नैन जोत जेहि होय॥

अब कुछ और न चाहूँ नाथा। रहौं सदा चेरी के साथा॥
पाऊँ नैन दरस जो देखहुँ। जब लगि जिवौं सरूप बिसेखहूँ॥
किह्यों जनम भर मूरत पूजा। तेहि छुट अवर न जान्यो दूजा॥
अब तेहि पर कीन्हों अनखानी। फोरयो सीस रोय बिलखानी॥
यूसुफ अलख सो अहै सोहावा। जेहि सेवक से भूप बनावा॥
मैं सो जन्म भर सीस नवावा। तुहँ दर दर मोंहिं भीख मँगावा॥
तुहँ मोर अलख किये यहि हाला। दर दर माँगहु भीख बेहाला॥
जब मोर आस पुराई नाही। भयो क्रोध मोरे हिय माही॥
तब रिसाय मैं मूरत फोरा। टूक टूक फेंक्यो चहुँ ओरा॥
यूसुफ अलख तें अव मन लायो। औ मूरत ते हाथ उठायो॥

वह दाता करतार जिन्ह, सभ यूसुफ कहँ दीन्ह।
तेहि सो अलख आनंद कहँ, ग्यान ध्यान मैं कीन्ह॥

तव याकूब सो हाथ उठावा। तेहि अवसर जबरैल सोहावा॥
कहा जुलेखा कहँ लै जाहीं। कहो तखिन हम्माम कराहीं॥
नार अनेक संघ कै दीन्हा। तब बरबस हम्माम सों कीन्हा॥
मंजन औ अस्नान करावा। ईंगुर अँग चंदन तन भावा॥
जब अस्नान कीन्ह वह नारी। चौदह बरस-क भई कुमारी॥
आइ रूप जस इत्यो सुहावा। तेहि तें अधिक रूप छबि पावा॥
चौदह बरस क भई कुमारी। नैन कटाच्छ तेज अधिकारी॥

लाय सखी यक आरसि दीन्हा । देखत रूप सो अचरज कीन्हा ॥
धन करता हरता सुखदाई । तुईं सभ हीन्ह सो कहत नियाई ॥
प्रेमी प्रेम न निरफल गयऊ । कस सो निरास जुलेखा भयऊ ॥

मैं तो तोहिं न जान्यो, जनम अकारथ खोइ ।
धन्य गरीब नेवाज तुईं, को अस दूसर होय ॥

ई गुर अँग मंजन असनाना । हरिहर मानख सुघर सुजाना ॥
लागे षट्-दश होय सिगारा । चोटी गूँध सो माँग सँवारा ॥
तेल फुलेल लाय के साजा । पाटी पार माँग उपराजा ॥
बार बार गूँधे गज मोती । सेंदुर दीन्ह सुरज कै जोती ॥
गुल गेसुत कपोलन लावा । दै अंजन खजनै बढ़ावा ॥
मेंहदी कर पग सोहाग सँवारा । बीर बहूटी कै रग घारा ॥
दाँतन स्याम सो मसी जमाए । चमक सोभाग मो बरन न जाए ॥
मुख तँबोल गह्यो अपने पाना । अतर लगाय कीन्ह अरगाना ॥
फूल सो लाय पेन्हावें जोड़ा । पुहुप माल तन सोहे कोरा ॥

आयसु रहा सिगार के, बारह अभरन लाय ।
दीन्ह नार कुमार कहँ, सभ अभरन पहिराय ॥

बारह अभरन साज बनावा । सहस फूल औ मंडन भावा ॥
बेसर औ कनफूल सोहावा । करन भूखन सब्हन पहिनावा ॥
कंठा भूखन सोहे जेहि ताईं । गर भूखन उर पास सोहाई ॥
कंठ माल बाजूबँद साजा । कर भूखन सो पहुँची बिराजा ॥
अँगुरी मुँदरी उत छबि देही । नेवल बद गुन ज्ञान हरेहीं ॥
साज सिगार सखी सब्ह मोहैं । रूप अपछरा तासो सोहैं ॥
धन वह अलख रूप जिन दीन्हा । भर के बार कुमार सो कीन्हा ॥
लाय सेज पैठारहि कोरी । मिले न तीन भुवन महँ जोरी ॥
उर केसर फिर अधिक सोहाए । मगल बूँद सो रंग बनाए ॥

बैठी सेज सुनार, भूखन साज सिंगार ।
अब नख सिख का बरनौ, सभ सुदर सुघर निसार ॥

अब माथे गूँधे गज मोती। राहु केत मनों चंद के जोती॥
दुओ दस घन बाद जस छावा। मध्य कौंध चमके देखरावा॥
दामिन अस वह माँग सोहाये। केस घमंड घटा जस छाये॥
जस जमुना कै नदी अपारा। माँग बाँध जस सुघर सँवारा॥
सेत बंद जस माँग सोहाए। बिरहिन रैन परे तेहि पाए॥
जो न होत अस माँग अनूपा। डूबत नैन स्वरूप सरूपा॥
चमके माँग माँग के बानी। सेंदुर रकत रंग तहँ सानी॥
पहले कहूँ माँग के रेखा। जमुना बीच सरसुती देखा॥
खरग धार वह माँन सोहाए। सेंदुर तहाँ रकत रँग लाए॥

माँग सोहावन सुख भरे, भाग अधिक तहँ दीन्ह।
राहु केत दुओ दस तहाँ, रब-कि किरन अस कींन्ह॥

केस सीस का करौं बखाना। नागिन देख सो ताहु लजाना॥
मुख पर परै जो होय बेकरारा। तपा सदा करै संसारा॥
कोऊ कहै अहै तुम राजा। सोहै तहाँ जीत चँद राजा॥
कोउ कहै सो दई सोहावा। ... ...॥
कोऊ कहै स्याम अति मोहा। पुहुप परान आय तहँ सोहा॥
पुहुप छत्र महँ मग मद तारा। खीचें चतुर चित्र तहँ मारा॥
केस सीस मानो निसि कारी। सोहैं परत काल उजियारी॥
सो प्रभात पर भयो दिखाये। स्याम लाय नित हाथ छिपाये॥

बेनी गूंध लिलाट तें, मनो नागिन मन लीन्ह।
मूँगा चोकी पीठ पर, तहाँ छाँड़ तेहि दीन्ह॥

अब लिलाट बरनौ सुख कारी। रब, ससि, निसि औ उँजियारी॥
केसर खोर... ...। ...
तब जबरैइल कहा तेहि बाता। रूप नैन तेहि दीन्ह बिधाता॥
देखहु जाय, जुलेखा सोई। प्रेम न सकत अबिरथा होई॥
को अस पुरुष प्रेम करेई। सुफल प्रेम पग दिन दुख हरई॥
दूसर जनम जुलेखा लीन्हा। सो दयाल अब तुमकाँ दीन्हा॥

तुम पूरुख वह नार तुम्हारी। दूजै बार सो दई सॅवारी॥
जेहि तें रहै सो सुरत हुलौसा। रहहु जुलेखा के नित पासा॥
वह के सुख दयाल सुख मानै। दुखी भये परभू दुख मानै॥
वह अज्ञा तज किह्यो न काजू। वह समान यह जगत न राजू॥
ना अस रूप न प्रेम न ज्ञाना। दई दीन्ह सब्ह ताह सुजाना॥

सुन यूसुफ सिर नाइ के, कीन्ह ब्याह कै चार।
बाजै लाग जो नौबत, नाच गौड़ झंकार॥

जो कुछ होत ब्याह कै चारा। सो सब्ह कीन्ह राग रॅग सारा॥
सुफल घरी भा ब्याह सोहावा। दुखिया दान दरब बहुपावा॥
आन्यो भोग छतीसो जाती। भये किनआँ के लोग बराती॥
तब याकूब निकाह पढ़ावा। देख जुलेखा बहु सुख पावा॥
बाढ़ा प्रेम धन नार सोहागिन। धन्य अलख जिन कीन्ह सोहागिन॥
सेज्ज सँवार सो रंग सोहाए। दुलहिन ब्याह दुलह पहॅ आये॥
यूसुफ देख हिए हुलसाना। धन वह अलख दीन्ह जिन दाना॥
जस मैं रूप आदि निरमाया। तेहि तें जोबन रूप सोहावा॥
रहस नार कहँ कँठ लगावा। जनम जनम दुख बिरह नसावा॥

प्रेम जुलेखा कहँ मिट्यो, यूसुफ कहॅ दुख दाह।
भई जुलेखा भगत अब, यूसुफ कहॅ दुख दाह॥

दिन दुइ चार कीन्ह रस भोगू। लागी करै जुलेखा जोगू॥
मैं बिरथा यह जनम गँवावा। प्रेम विपत मानुख सो लावा॥
काहे न प्रेम अलख तें लाऊँ। जेहिं तें मोख मुगत पुन पाऊँ॥
का मानुख मानुख का चाहै। चाहै अलख मुगत कर लाहै॥
निस दिन लाग तपस्या करै। जब जोगित ते प्रीत छबि धरै॥
अलख काज छुट अवर न काजू। यूसुफ देख बाढ़ डर लाजू॥
निस बासर जप पत कै माहीं। एको छिन प्रभु बिसरै नाहीं॥
यूसुफ प्रेम हिये तें भागा। अलख पेम आठौ अँग जागा॥
कुछ यूसुफ कै चिंता नाहीं। कबहूँ न सोच करै मन माहीं॥

निसि दिन वह तप जप करै, सँवरै अलख सुजान।
जेहि की दाया तें मिला, अर्ब रूप बैस गुन ग्यान ॥

यूसुफ नबी सो रहे अधीरा। बाढ़ै हिये प्रेम कै पीरा ॥
जब लहि दरस देइ नहि नारी। तब लहि यूसुफ रहे दुखारी ॥
वह निस दिन राखै तेहि प्रीती। भई जुलेखा आन सो रीती ॥
कहै कि सँवरो वह करतारा। अंत काल जो लावै बारा ॥
मैं मानुख का प्रीत हमारी। जोबन रूप रहै दिन चारी ॥
बहुर न यहि जोबन नहि रूपा। सँवरहु पुरुख अकाल अनूपा ॥
यूसुफ नबी करें मनुहारी। होय न सुचित जुलेखा नारी ॥
कहा जुलेखा मोहि न सतावहु। जाय सो ध्यान अलख महँ लावहु ॥
मैं जोबन अरु रूप उतगा। देख लीन्ह कुछ रहे न सगा ॥

जाय फूल कुँभिलाय, जब रहै रग न बास।
तेहि ते सँवरहु एक वह, जेहि के दुओ जग आस ॥

यूसुफ कहा सुनो अब प्यारी। जतन नाह नित रहौ दुखारी ॥
बिन देखे मोहि कल न परई। दारुन बिरह कठिन दुख धरई ॥
दया करो औ दरसन देहू। मोहि दुखित जिन रार करेहू ॥
प्रान तें अधिक तुम्हे मैं जानहु। रूप तुम्हार हिये महँ आनहु ॥
निस दिन रहे सो ध्यान तुम्हारा। मन अधीन जस ब्याकुल पारा ॥
जस तुम्ह बिरह अगिन ते जारा। तस अब करहु भोग सुख सारा ॥
मोहि दुखित जिन राख्यो प्यारी। छया मोख दुख देहु निनारी ॥
दई बढावा हम तुम प्रीती। राखहु दया प्रेम की रीती ॥
दई देह यह रूप सोहावा। मोहि कारन तुम्ह फिर कै पावा ॥

मोहिं तें होह न निठुर अब, हिये लखहु अब और।
कहै जुलेखा नाम सुनहु, दास तुम मोर ॥

एक दिन बहुत कहा नहिं माना। कहा जान मोहिं दास समाना ॥
जस आगे तुम्ह राखब प्रीती। राखहु दया हिये तें रीती ॥
अब सो अलख कर दीन्ह सँजोगू। देहु मिटाय बिछोह बियोगू ॥

जस दुख सबहि करै अब प्यारी। जाय भुलाय बिरह दुख भारी॥
चालीस बरस कीन्ह तप जोगू। रात दिवस तुम छोह बियोगू॥
करहु सेज सुख भोग बिलासा। निस दिन होय सो दुख कै पासा॥
कोट बिनति कै यूसुफ हारा। चाहा हाथ गले माँ डारा॥
कहा जुलेखा मोहि ना भावै। अलख ध्यान छुट आन न भावै॥
मोहि को एक अलख कै आसा। बिरथा यह सुख भोग बिलासा॥
दिना पाँच का रूप सिंगारा। होइह अंत देह तेहि छारा॥

जोबन रूप सिगार सब, सब जाय तेहि खोय।
काहे न सँवर सो अलख कहँ, जानो मुकत कब होय॥

अब मोंहि का सुख भोग न भावै। मृत्यु भये कुछ काज न आवै॥
यहि जग मा छुट जीवन थोरा। अब जिन करहु खोज तुम मोरा॥
निसि दिन लेहु अलख कर नाऊँ; जेहि ते मिलै सरग माँ ठाऊँ॥
मैं अब निज़ु जान्यो तेहि साईं। जिन सबुह दीन मोहि बरियाई॥
सो साईं तज अवर न भावे। बिरथा सुक्ख भोग चित लावै॥
यूसुफ नबी बहुत समुझावा। एक जुलेखा कान न लावा॥
तब बरबस उठि हाथ चलावा। भागि जुलेखा यूसुफ धावा॥
दामन फार रहा तेहि हाथाँ। गई भाग वह दार के हाथाँ॥
धन चरित्र वह अलख देखावा। यह कर करा सो वह कर पावा॥

एक दिन हत्यो जुलेखा, फारा यूसुफ पाट।
अब यूसुफ के हाथ ते, धन कर दामन फाट॥

यह बिधि रहै जुलेखा भागी। यूसुफ लगन रहै नित लागी॥
निसि दिन रहै नार से ध्याना। नार हिये उपज्यो अब ज्ञाना॥
राज काज कुछ ताहि न भावे। नित चित हित बनिता ते लावै॥
बरबस करै नारि से भोगू। आवै ताह जाय ओ जोगू॥
यूसुफ कहैं भयो तोहि काहा। का भा तोर प्रीत ओ चाहा॥
कहा सुनो सामी सब बाता। तब सों मोर मन तोहँ सो राता॥
मूरत तोर हिये महँ आन्यो। छुट तोर प्रीत आन नहिं जान्यो॥

तब सो अलख कहँ जान्हों नाही । मूरत तोर रहै हिय माहीं ॥
अब सों अलख हिये तर बासा । तेहि कर ध्यान हिये परकासा ॥

एक हिये हुई प्रेम अब, कैसे कहो समाय ।
जग सामी कै प्रीत अब, रहै हिये महँ छाय ॥

बरबस करै भोग सुख सारा । सुत नित दिये तेहिं करतारा ॥
पाँच पूत दुई दुहिता भयो । जब तप करै प्रान पर छयो ॥
दुहिता सुत सामी नहि भावै । नित उठ चित्त अलख से लावै ॥
धाई कोर रहे सुत बारा । औ प्रतिपाल करै करतारा ॥
करै जुलेखा निसि दिन जोगू । भावै न तेहिं सुख औ भोगू ॥
धन करता कहँ खेल सोहावा । करै सोय जो वह मन भावा ॥
कबहुँ पुरुष कहँ नारि कै चेता । कबहुँ नार कहँ पुरुष कै मीता ॥
वहिक पास यह मन नित आवै । जेहि... ...सोहावै ॥

बारह बँधु के बस पुन, भये बहुत अधिकार ।
करै राज सुख भोग सब, बढ़ै बहुत परिवार ॥

भये याकूब सुखी मन माहाँ । निशि दिन करै पुत्र पर छाहाँ ॥
सब सुख देख कुटिल परिवारा । तब लहि आय पुन काल हमारा ॥
बिरथा तेज नबी जब भयो । सेवा का यूसुफ चलि गयो ॥
सभै पुत्र का पास बोलावा । कीन्ह बहुत उपदेस सोहावा ॥
औ यूसुफ कहै सब परिवारा । सो तब आप सिवलोक सिधारा ॥
जब याकूब देह तजि दीन्हा । तब यूसुफ बहु रोदन दीन्हा ॥
औ रोवें सगरो परिवारा । बारह पुत्र ... सारा ॥
रोवै सभै सुतन की नारी । औ रोवें दुहिता पुन सारी ॥
दुहित पुत्र कै बस सोहाये । रोय रोय सिर छार चढ़ाये ॥

भा अँदोर सभ नगर महँ, रोवैं नर औ नार ।
ऐसे पुरुष सो चलि बसे, को दूसर ससार ॥

रोई बहुत जुलेखा नारी । सँवर मुरत तज भई दुखारी ॥
यूसुफ पिता अन्हवावा । औ पुत्रन सभ साज बनावा ॥

चले साज कै पिता जनाजा। दुख बाजन घर-घर महँ बाजा ॥
मिसिर नगर महँ परै अँदोरा। नारिन करै रोट चहुँ ओरा ॥
औ यूसुफ का भा दुख भारी। रोवैं बहुत सो छाँड डफारी ॥
छाड़ सो लोग कुटँब परिवारा। होय अकेल अब पिता सिधारा ॥
बहुत बंस कुछ काज न आए। अकसर पिता सो सरग सिधाए ॥
सुत बिन बधु पुत्र ओ नारी। सबूह तजि गयो गयो पैयारी ॥
कोऊ न सँघ जाय तोहि गैला। गयो अकेल छाड़ सबूह खेला ॥
छिन बिछुरे दुख होई। छिन-छिन राख सकै नहि कोई ॥

... . सभ साथ।
... ... राख न सकै कोऊ हाथ ॥

गयों समूल छाड़ कै नाऊँ। रहा सूख सबूह ठावैं ठाऊँ ॥
यूसुफ नबी साज सब साजा। स्याम देस लै गये जनाजा ॥
अयस नाम याकूब कै भाई। एक सँग बिधि जनम गँवाई ॥
तेहि दिन अयस मरे तेहि देसा। ओ याकूब पहुँच परबेसा ॥
एकै संग वै दूनौ भाई। रहै सोय दुओ खुमार समाई ॥
एकै सग जनम वै लीन्हा। एकै संग प्रान तजि दीन्हा ॥
एकै सग रहै यक पासा। एकै संग गये कैलासा ॥

जगत धन्ध सब छाड़ कै, गय अकेल निज धाम।
लोग कुटुँब परिवार सबूह, कोऊ न आयो काम ॥

दोउ पिता कै गत पत कीन्हा। मुरत अमोल छार रख दीन्हा ॥
खावा भोग ओ भूल अँदेसा। धंधा लाग करै सब देसा ॥
फूल चढ़ाय फिरे सभ लोगू। लागे खाय अन्न ओ भोगू ॥
महा सिद्ध जग रहै न कोई। दूसर कौन अमर जग होई ॥
यूसुफ नबी बहुत दुख माना। बेद भेद को करे बखाना ॥
अब न पिता देखब जग माँही। कवन करै हमहि अब छाँहीं ॥
कहि तें दुख सुख बरन सुनाऊँ। केहि तें अपरम मरम सो पाऊँ ॥
कवन करै हम कौ उपदेसा। कवन सुनाइह अलख सँदेसा ॥

काटिय गाढ सो कवन हमारी। कूट बतन बरनै को भारी ॥
गाढ परे केहि सँवरब, कूट साँच उपदेस।
अब ना पिता को देखियब, गये सो कौने देस ॥
तब जबरैल सरग ते आए। यूसुफ कहँ सुठ बचन सुनाए ॥
करहु पिता कर अब संतोखा। जेहि दैं होय दुओ जग मोखा ॥
पैठी तुम सो पिता के ठाऊँ। सँवरहु सदा अलख कर नाऊँ ॥
औ सुख देहु करहु सुख सारा। पूजै तुम्हे सभै संसारा ॥
तुम का नबी अलख अब कीन्हा। बुद्धि सुद्धि सभ तुम कौ दीन्हा ॥
तब यूसुफ सभ नगर बोलावा। अलख सँदेस सो वरन सुनावा ॥
सभ जग आय सो सीस नवावा। औ सुख भयों मत्र सभ पावा ॥
तुम सो अहो याकूब के ठाऊँ। हम आधार सो राउर नाऊँ ॥
जस वे बेद भेद बतलावहिं। हिन्दु तुरुक कहँ राउर नाऊँ ॥
सभ जग सीस नवावा, दीन्ह नबी कहँ हाथ।
दीन्हा सभ सुख पूजा, अवर भये सब साथ ॥
भयो बिरिध बालक घटयो राहा। घटयो चाह और घटयो परहारा ॥
रूप रंग बल बुध सुख खाँगा। यूसुफ मीच देवतन्ह माँगा ॥
उपज्यो क्रोध औ काम हेराना। कामिन देख सो नैन लजाना ॥
रह्यो न रूप सो सभ जग चाहा। रह्यो न बल जेहि करब बेसाहा ॥
रह्यो न केस भँवर अस कारी। रह्यी न दसन दाडिवँ जेहि हारी ॥
रह्यो न सरवन सुरत अमोला। रह्यो न सुदर स्वभाव कपोला ॥
रह्यो न द्रग मृग खंजन भंजन। रह्यो न बानी कोकिल गजन ॥
नार पुरुष नहिं आदर करहीं। नारि बिरिध कर नाउँ सो धरही ॥
जेहि के ओर आहे चख हेरा। देख बिरिध सो अब मुख फेरा ॥
रहै न हाथ पावँ के सोभा। जेहि का देख सभे जग लोभा ॥
रह्यो न रंग रूप वह, जेहि चाहे ससार।
कवल- बदन कुँभिलात, नित मनसा तब गा हार ॥
जो मन चाहत रँग सोह गा। सो सब... ... ॥
जो मन चाहत उड़न खटोला। लागे ... नहि ... डोला ॥

हुस अमोल जो सरवन सोहा। जा कहँ देख सती जग मोहा ॥
बिन पानी अब हंस पियासा। लखि सरवर मन भयो उदासा ॥
कहाँ गये बे दिवस सोहाये। रूप रंग दिन दिन अधिकाये ॥
अब दिन दिन वह रोब घटाहीं। बल बुध जाह सो जात हेराई ॥
रहे न सुदर मुरत न मानी। ठौर ठौर रह गये निसानी ॥
गये रैन भूला सुख चाहू। भयो भोर उठ गयो बटाऊ ॥
मोती लर जस चमक बतीसी। सो सँग चाड़ भयो परदेसी ॥

रूप भाव नहि रह गये, डार कंठ ले हाथ।
भूल बात सब चल बसे, गये झाड़ कै हाथ ॥

हँस हँस झूल झुम्म खसि परै। देख सकामिन रोदन करै ॥
फूले फुल भये पत झारा। यहै हाल अब होय हमारा ॥
तब लहि मोर बात नहि मानै। जब पत झार होय तब जानै ॥
औ दयाल तुई सबूह कुछ दीन्हा। सब दाता सोई मोहिं कीन्हा ॥
दीन्ह जनम मोर नबी के बारा। नबी के सुन नहिं मोर अधाग ॥
वहै रूप सबूह जग उपराही। वहै.. .. जग माहीं ॥
भाइन मोहि कूप महँ डारा। नबी कृपा कर मोहि निसारा ॥
बहू देस सब गाहक मोरा। बंद डार तुम कीन्ह बहोरा ॥
भये राज बाढा सभ भोगू। मात पिता कीन्हे सयोगू ॥
भाई लोग सभ भये अधीना। पिता मिलाय सभै दुख दीन्हा ॥
दीन्हा नार जगत उमराही। दीन्हा सुख संतति जग माहीं ॥

सभ कुछ दीन्ह दयाल तोहि, कछु हींछा अब नाँह।
करौ कूच अब जगत सें, करो सो महि पर छाँह ॥

यहि जग मा जस कीन्हे दाया। वह जग करो अभय निधि माया॥
मुनि रिखि सिद्ध रहे जेहि ठाऊँ। तहँ मोर अलख कहावहु नाऊँ ॥
अब मोहिं अवर न इंछा मोहे। यही जगत मन व्याकुल होये ॥
अब तहँ चलूँ जहाँ कै आसा। रहौं सदा जेहि मँदिल उदासा ॥
अब यह जग मोहिं तनिक न भावै। चलौं अंत जहँ सब कोउ जावै ॥

अब दिन दिन अवगुन अधिकाई। गयो रूप जेहि जगत लुभाई ॥
अब जीवन से भला सो मरना। रस धावन ... ... ॥
तेहि तें बेग उठावहु मोही। देखहु पिता जो कियो बिछोही ॥
भोर आय नियराया, लेउँ न रैन बसेर।
ज ... ... , चलना तहाँ सबेर ॥
पुन दस बरस जो यूसुफ जिया। सत्त सोभाव जगत महँ किया ॥
धरम नीति सें कीन्ह सो काजू। दीन्ह सुधार दुखी कर काजू ॥
दरव दान दुखिया कौ कीन्हा। नीत छाँह परजा पर कीन्हा ॥
धरम नीत औ न्याव करेही। बेद भेद सब्ह कौ सुख देहीं ॥
पुत्र सयान हिये सुख माहीं। मात पिता के सर परछाहीं ॥
बेद भेद सब सुख निरमावा। बंधु बंस कहँ बेद पठावा ॥
यूसुफ नबी कौ अमर न बारा। जेहि घर माँ मूसै अवतारा ॥
ता कों अलख नबी अस पावा। आद गरंथ तुरत भेजावा ॥
दीन्हा अलख बस अधिकारा। बारह कुटी बैठ ससारा ॥
बारह पुत्र के बस वै, इसराईल कहाहि।
मिसिर नगर, लों बसा अधिकाहि ॥
पातसाह सब के सुत आवा। सो फिरोज जग माँह कहावा ॥
इबन अमी सुत कै सुत मूसा। डार दीन्ह जग जान मँजूसा ॥
सो पुन कथा अहै बिस्तारा। कहौ कथा यूसुफ कर सारा ॥
दसमें बरस आय जमराजू। यूसुफ नबी प्रान कै काजू ॥
कहा अलख जो आशा कीन्हा। चहौ प्रान तोर मैं लीन्हा ॥
यूसुफ कहा जो आज्ञा होई। तो सम लेउँ सीस पर सोई ॥
देख लेउ मैं दरस जुलेखा। तब हम करहु जो अवगुन लेखा ॥
तब जमराज कहा यह बाता। आज्ञा नाह लखो मुख राता ॥
अब तुम तजो प्रेम वहि केरा। करहु प्रेम जो करहि निबेरा ॥
बहुत भाँति बिनती कै हारा। पाव न जुलेखा रूप निहारा ॥
यूसुफ चाहा बहुत मन, लखै जुलेखा रूप।
पै जमराज न माना, अज्ञा अलख अनूप ॥

जब लहि आय जुलेखा पासा। तब लहि फूल गयो तजि बासा ॥
आय नार जो पीव के तीरा। दखै परा सो सून शरीरा ॥
पुन निहार यूसुफ कहँ देखा। रह्यो न रूप रंग न रेखा ॥
मूँदे नयन खुलै अब नाही। बैन हरे मुख बोलत नाहीं ॥
हाथ पाँव मुख सरवन नासा। सब तें हरत गए जस बासा ॥
सून सरीर परा बिन जीऊ। ठहक मार देखहि मुख पीऊ ॥
घँसक अहै हिय माँह समाना। गयो छाँड़ देहँ सें प्राना ॥
मुरछ रहै नार बस फिरै । ... ... ॥
नार देख पिउ कर तन सूना। बिना प्रान सभ पिंड बिहूना ॥

कौन हंस सरवर हत्यो, केहि दिस गयो हेराय।
जेहि पुन सून सरीर भै, काहु न कहा सोहाय ॥

परी जुलेखा होय बिन जीऊ। बहुर न देखा आपन पीऊ ॥
तब नहलाय साज सभ कीन्हा। लै गये सौंप घर कहँ दीन्हा ॥
छार मिलाय सो छार उड़ावा। थाती सौंप लोक फिर आवा ॥
जो जाकर तेहि सौंपा सोई। साथी सग रहा नहिं कोई ॥
तीन दिवस दुख रह्यो अपारा। रही जुलेखा अतिहि बेकरारा ॥
पिव गवनब कछु जानत नाही। रहै सोनार सूख पट माही ॥
तिसरे दिवस भोर होय गयो। तब पुन चेत जुलेखा भयो ॥
देखा खोल नैन चहुँ ओरा। कहा कि आज भयो कस भोरा ॥
पिउ जागत सब मोहि जगावै। आज सखी कहुँ दिस न आवै ॥
अब मैं आज भोर कै जागी। अयो पीऊ कस अकसर भागी ॥
पिऊ कर मुख नहि देखहु आजू। मोहिं तज अजहूँ करत न काजू ॥

जब लगि रहौ सेज पर, कंत न छाँड़हि मोंह।
अब राज त्याज कहाँ गयो, लाल सो मोहिं बिछोह ॥

कहा सखी उन सरग सिधारे। हम कों बिरह आग महँ जारे ॥
सुन यह बात सो खाई पछारा। फिर फिर सीस भुम्म पर मारा ॥
जहाँ सो पीउ होय निहि चिता। तहँ लै चलो जहाँ मोर मिता ॥

चलै सखी सँग व्याकुल नारी। जहाँ कथ सोवै सो नारी॥
तेहि के ठहर जाय सिर नावा। परथम केस तोर छितरावा॥
छितराइस मोतिन कै हारा। जूड़ा टूक टूक कर डारा॥
बार खसोट तुरतहि डारा। अभरन तोर बहु सह सिंगारा॥
चूरी फोरा सीसन तब फोरा। झार मिलाय दीन्ह वह चूरा॥
परै ढेर पर झार उड़ावहि। बिपताबिपत मुख बैन सुनावहिं॥

नैन काढ़ दोउ लिहिस, दीन्हेसि ढेर पर डार।
जेहि नैनन पिउ तोहि लखौ, देखौ काह निहार॥

कहा कत तुम कहँवा गयऊ। नैन बैन मुख सून सब भयऊ॥
गात गुलाब देख मुरझाई। सो तन झार लीन्ह अब खाई॥
जेहि मुख बोलत अमिरित बानी। अमृत बोल वे कहाँ हेरानी॥
नित मो प्रीतम करत जो दाया। कस अब लाल भयो निर्माया॥
मैं पापी तुम्ह सँग न लागी। अहौ करम की सदा अभागी॥
मोहि छाड कत कत सिधारे। नैन ओट न करत बयारे॥
जब जमराज प्रान तोर लीन्हा। निठुर लाल मोहि खबर न दीन्हा॥
मैं जम ते अस करत निहोरा। लिह्यो लाल सँग प्रान सो मोरा॥
एकहु छिन न मोहि बिसारेहु। चलत बार मोहि कसन पुकारहु॥

नैन ओट कहुँ होत रहु, मोहिं ते आज्ञा लेहु।
एसै कत बितेस कहँ, मोर न खोज करेहु॥

चालिस बरस जो जोग कमावा। तब प्रीतम हम तुम कौ पावा॥
दरब अरथ सब देहु लुटाई। जोबन रूप अनूप गँवाई॥
कीन्ह दया तब अलख गोसाईं। दीन्हा रूप सोय सुख माहीं॥
तब महिमा मैं तोर न जानी। निसि-दिन रह्यों हिये अभिमानी॥
सो अब कंत कहाँ तोहि पाओं। चरन लाय सिर तोहिं मनाओं॥
तुम्ह नित करो मोर मनुहारी। मैं न करौ कुछ कान तुम्हारी॥
का अब करहुँ मनाऊँ कैसे। बिनती करहुँ कीन्ह तुम्ह जैसे॥
तुम्ह साईं मैं चेरी मोरी। का अब करहुँ अहौं मति थोरी॥

नित सिर पर राख्यो तोर चरना । का अब करहुँ दई कर करना ॥
सात बरस बँद राख्यो, लायो दोख न मोहिं ।
औगुन मोर छिपायो, कह्यो न तुम कछु मोहि ॥

सात बरस राख्यो बँद माहीं । मन महँ रोस कियो कुछ नाहीं ॥
चलत बार तोर रूप न देख्यों । बचन न सुन्यों न बयन बिसेख्यों ॥
सो लालन तजि रहे अभागी । गई लाल मैं सोय न जागी ॥
जब तोहिं का बाहर बहिराए । बैरिन नीद कहाँ ते आए ॥
देख्यों जाग मँदिर तोर सूना । नगर कोट घर भयो बिहूना ॥
आयो फूल छाँड़ फुलवारी । काँटा रह्यो बाग महँ भारी ॥
गवो कंत सो बेग सुभागा । पाछे रह्यो कलक सो लागा ॥
दिह्यो उत्तर मोहि कंत सोहाई । फाटै भुम्भ अब जाऊँ समाई ॥
यह कलंक अब दिह्यो मिटाई । उठ कै लाल लिह्यो सँग लाई ॥
ऐसो रतन मिला जग, छार समान्यो आय ।
धृक जीवन जो लाल बिन, जग माँ जियत रहाय ॥

यह घर बार सो देस तुम्हारा । भयो सून सब जग अँधियारा ॥
कवन बताइहि भेद करम था । भूझै कवन देखाइहि पंथा ॥
को तुम बिन यह भार उठाई । नेम धरम दिन-दिन अधिकाई ॥
अब तुम अस जग उपजा नाहीं । कौन सो करै दुखी परछाही ॥
तुम्ह समान जग फेरि न आई । को अस रूप ज्ञान बुध पाई ॥
भरम नीद रह्यो पिउ सोई । नार सो उत्त चेत न कोई ॥
तुम निहचिंत भयो पिव जाई । सोच हमार तज्यो सुखदाई ॥
सभै लोग हैं यह संसारा । तुम्ह बिन कोऊ न अहै हमारा ॥
केहि-क देख मन हुलसै पीऊ । तृखा बुझाय पियासै जीऊ ॥
वह बसंत वह पावस, वहै फूल फल सोय ।
सब अपने रितु देखब, तुम्हे न देखै कोय ॥

वहै मदिर औ सरवर तीरा । करहि धमार सदा वह तीरा ॥
अहै फूल फूले चहुँ ओरा । वह चातक रँग खंजन मोरा ॥

वहै पवन जो फिर फिर आवै। वहै दिवस वह रैन दिखावै ॥
एक न तुम जेहि बिन संसारा। होयगा तीन भवन अँधियारा ॥
वह तरुवर वह पात सुहावन। भाव न एक बिना मनभावन ॥
एक दिन हत्यो सो भाग सोहावा। जेहि दिन तोहि नायक लै आवा ॥
भये धूम सम मिसिर के देसा। उठ धावा सभ रग नरेसा ॥
बैठ्यो नील करै असनाना। नर-नरेस सबृह देख लोभाना ॥

यक दिन आज सो देख्यों, सो मुख छार छिपान।
का भा रूप अनूप वह, जेहि संसार लुभान ॥

सपने देख बिमोह्यो तोहीं। उपजा बिरह तेज लखि तोही ॥
आयो मिसिर कंथ तोहि लागी। कह्यों कि का गुन कीन्ह अभागी ॥
प्रेम हमार साँच बिधि कीन्हा। पाहन रूप सो हम काँ दीन्हा ॥
जब प्रीतम हम से मुख मोरा। जीवन भयो दरस लखि तोरा ॥
चालिस बरस जोग मैं कीन्हा। सुन कै नाँव सबै कुछ दीन्हा ॥
जब तोर नाउँ सुनावै कोई। पाधे लाख देऊँ जो होई ॥
बीस बरस रह्यों दरस आधारा। बीस बरस सुन नाम सँभारा ॥
अब तोर दरस हरा भुव माही। नाऊँ तुम्हार सुनब अब नाही ॥
देखहुँ दरस सुनहुँ नहि नाऊँ। केहि आधार रहौ यह ठाऊँ ॥

ना पिउ बोल सुनावहु, न अब दरसन देहु।
करहु दया पति राखहु, यह जीवन आपन लेहु ॥

अब पत रहै जो जाय पराना। धृक जिव तुम बिनपुन छिन माना ॥
जिवन भला जब लहि पिउ होई। बिना पीव धृक जीवन सोई ॥
पिव बिन सून सभै ससारा। सुख संपत सभ पिव बिन जारा ॥
बिन पिव कोई सँघाती नाही। केहि बिधि रहे प्रान घट माँही ॥
जरै जाय सुख संपत साजा। बिना पीउ आवै नहि काजा ॥
पिव लै सँग जो होय भिखारी। बिन पिउ सुख सपत बलिहारी ॥
पिव के सँगँ... ... । बिना पीव सुख बिलसै नाही ॥
तुम बिन कंत जगत अँधियारा। भयो उजार सभै संसारा ॥
निठुर प्रान जो अब लहि रह्यो। पाहन हिया निठुर दुख सह्यो ॥

खाय पछार लो छार पर, करै आह एक बार।
पंछी प्रान सो उड़ गयो, रहे छार महँ छार॥

यूसुफ निकट राख तेहि दीन्हा। बिरहिन प्रेम समापत कीन्हा॥
धन वह सती प्रेम चितलावा। आद अंत लहि प्रेम लगावा॥
जब लहि जियै प्रेम रस चाखै। पिव सँग गये प्रान पुन राखै॥
जो कुछ अहै जो जीवन माही। मरै प्रात निठुर कुछ नाहीं॥
रिखि मुनि सिद्ध तपा ओ जोगी। प्रेम पुरुष ओ बिरह बियोगी॥
पंडित कबी और सज्ञाना। मीर अमीर राव सुलताना॥
रूपवत गुनवत सोहाई। तेजवंत बलवत बनाई॥
ऐसे लोग रहै न पाये। केहि कारन यह जग माँ आये॥

सब आए यहि जगत महँ, कीन्ह सो गुन बिस्तार।
कोउ रहे पुनि आवा, खाय लीन्ह यह छार॥

उपसहार

उन लोगन कहै सँवर 'निसारा'। उठा रोय मनमहँ एकबारा॥
जब ते जनम लीन्ह जग माहीं। छुट दुख और सो देख्यों नाहीं॥
जब लहि जिऊँ पिऊँ दुख नीरा। माथहिं दीन्ह सो दुख कै पीरा॥
अवर दुःख मैं सब कुछ सहा। भयो एक दुख बाउर महा॥
पुत्र अनूप दई मोहिं दीन्हा। रूप अनूप बुध आगिर कीन्हा॥
बाइस बरस रहा जग माँही। छुट विद्या उन जान्यों नाहीं॥
नाम लतीफ अनूप सोहावा। सब गुन ज्ञान दई अधिकावा॥
बात भुलात नहि पुत्र सोहावा। सायर सुधर सो ग्रंथ बनावा॥

बाइस बरस के बयस महँ, छाड़ दीन्ह उन देह।
सुरत अनूप गुलाब से, जाय मिले पुन खेह॥

तब मैं भयऊँ सो बाउर भेसा। करे सदा अपकाल अँदेसा॥
सबहू औषध कीन्हा उपचारा। बिनति किह्यो सो बारम बारा॥

जब तें लतीफ कर मरम बिसेख्यों। तब संपुत अबिरथा देख्यों ॥
तब मैं कहा पुत्र से रोई। किरत सोहाय नही अब कोई ॥
मोहि का जान पडा जग माहीं। कोइ ठाकुर ओ सूरत नाहीं ॥
तब उन कहा कहै का ताता। हमकॉ दोख होय यह बाता ॥
अहै सो सत्त एक करतारा। वह कर खेल सो अहै अपारा ॥
तुमको दोख होब अब ताता। दइ सुखिया कहँ दोख बिधाता ॥
जो कुछ ... ... मारा। सो पुन अहै को मेटन हारा ॥

जेहि दुख ते अकुलाव तुम, करहु पिता संतोष।
बड़े लोग सब दुख सहै, होय मुगत गत दोख ॥

जेहि लहि नबी भये जग माही। छुट दुख और सो देखा नाहीं ॥
काहुँ कहै कविलास निसारे। रोवत आद बीन कै सारे ॥
काहुँ बाँध अगिन महँ डारा। काहु अँध कीन्ह अँधियारा ॥
काहु कहँ आरसी चीरा। काहु कहँ सर तज्यो सरीरा ॥
काहु मीन के मुख महँ डारा। काहू कूप डार निसारा ॥
जेहि के लाग रच्यो संसारा। तेहि का दुख वार न पारा ॥
ओ श्याम दुख सब्द जगजानी। जब लग वै सो दुख निभानी ॥
जहिं लहि भये सिद्ध अवतारा। सभ का दुख दीन्हो करतारा ॥
कोउ न यह जग दुख तें बाँचा। सहै आँच सो कुंदन साँचा ॥

रामचद्र जो दुख सह्यो, सो जान्यो सब कोइ।
मानुष देह धर सभ, दुख तें ब्याकुल होइ ॥

तेहि तें दुखित होइह जिन ताता। करहु न अब रोय अपघाता ॥
सत साधु कहँ वह दुख दई। कनक जराइ खरा कर लई ॥
अब तुम करहु मोर संतोखा। देहु असीस जो पाऊँ मोखा ॥
यह जग मा सुठ जीवन थोरा। अंत काल सुठ होइय मोरा ॥
कोउ दिन दस आगे कोउ पाछे। है नित काल सो काछे-काछे ॥
उन लोगन कै मेट न होना। होने हुए, सो हुए न होना ॥
देखउ यह जग को गत ताता। दई जनम भर मरन बिधाता ॥
जें कोइ जनस लीन्ह जग माहीं। सो जान्यो एक दिन है नाहीं ॥

जनम साथ यह मरन है, मरन साथ गत मोंख।
हिये बोल न मॉठहु, करहु पिता सतोख॥

कहि यह बात जियन मुख मोरा। गयो प्रान तजि प्रान सो मोरा॥
सब सँवरहुँ वह लाल अमोला। हिया फाट मुख आव न बोला॥
जस याकूब सो पुत्र बिछोहा। रह्यो प्रान सो निठुर बिछोहा॥
तस यह प्रान निठुर अब रहे। यूसुध बिरह नेह निर्दहे॥
यूसुफ सभ कहँ पुत्र सोहावा। कहँ अस पुत्र सो जग भा आवा॥
निसि दिन करै तपस्या जोगू। जब तप करै चहै सुख भोगू॥
जाय जोग महँ रैन बहाई। तरुन बस महँ बिरिध सोहाई॥
कई ग्रंथ अनूप बनावा। जिन देखा चख नीर बहावा॥
सँवर रूप गुन ज्ञान सोहावा। रात-दिवस जल चख बरसावा॥
हिया बजर का भयो हमारा। को लै गयो सो लाल हमारा॥

गयो लाल केहि देस कहँ, जेहि कै मिलै न खोज।
हो सोइ निहिचिन्त, सो देइ हमें दुख रोज॥

सबै गये हौं रहा अकेला। पहिले पढहि मोह पर हेला॥
तेहि पाछे मोहि छाड़ सिधारा। . . ॥
यह जग छाड़ सोइ निहचिंता। गये पैठ और सागर मीता॥
जब सँवरौ वह सभै सोहाये। छाती फाट बेहर न जाई॥
कहाँ गये औ कहाँ ते आये। जान न परे भेद निरभाये॥
सँवर सँवर वै लोग सुजाना। रोवें निस दिन होयँ अज्ञाना॥
अपने मीत्र सँवर सुख पायहु। होय बोंध मनका समुझावा॥
वै सभ गये तुम्हीं यह देसा। केहि दिन वर अक करहुँ अँदेसा॥
तुम का अंत वहै नहि जाना। तेहि का कौन सोच पछिताना॥

जेहि पंथ सिधारें, सभै बटाऊ लोग।
चलहु सुचित जेहि मारग, और न जोग न भोग॥

रोय रोय यह बिरह बखानी। कोऊ न रहा जग रहै कहानी॥
यह जग तें मन रहै उदासा। सँवरो जहाँ सदा कर बासा॥

देखि जगत कर कूकत हाला । होय सदा मन हाल बेहाला ॥
जान न परैं भेद अवगाहाँ । जग जीवन उपज्यों भुव काहाँ॥
देहु दयाल भोरहिं कर मोखू । दरद मोर अब अवगुन दोखू ॥
पैठ प्रेम कै अंबर कोई । दिहेन असीस मोहिं मन होई ॥
हम न रहे अनकर रह जाई । सँवर हियों लोग हिये सुख पाई ॥
सात दिवस महँ कथा सोहाई । कीन्ह समापत दीन्ह बनाई ॥
सभ लोकन कहे लाऊँ सीसा । लावहु दोख न देहु असीसा ॥

गुन आखर ... , ...जहाज ।
जनय .. ... , ... लाज ॥